# संचार माध्यम

भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय) की त्रैमासिक यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका

खंड–36, अंक–3 आईएसएसएन : 2321–2608 अक्टूबर-दिसंबर 2024

भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
नई दिल्ली

# संचार माध्यम

भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय) की त्रैमासिक यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका
खंड-36, अंक-3 अक्टूबर-दिसंबर 2024 आईएसएसएन: 2321-2608

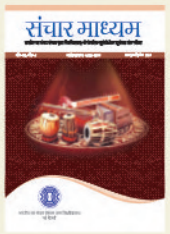


**संचार माध्यम के बारे में:**

'संचार माध्यम' (ISSN : 2321-2608) भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय), नई दिल्ली की संचार, मीडिया, पत्रकारिता और उससे संबंधित मुद्दों पर केंद्रित हिंदी में प्रकाशित सामग्री चयन में उच्च मानदंडों का पालन करने वाली अग्रणी और यूजीसी केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका है। इसका प्रकाशन 1980 में आरंभ हुआ और आज यह हिंदी भाषा में संचार, मीडिया और पत्रकारिता से संबंधित विषयों पर विभिन्न प्रकार के विचारों, टिप्पणियों, पुस्तक समीक्षा और मौलिक शोध-पत्रों के प्रकाशन का प्रतिष्ठित मंच है। इसमें मीडिया से संबंधित सभी प्रकार के विषयों पर मौलिक अकादमिक शोध और विश्लेषण प्रकाशित किए जाते हैं। अकादमिक शोध के उच्चतर मूल्यों का पालन करते हुए 'संचार माध्यम' में प्रकाशन से पूर्व सभी शोध पत्रों/आलेखों के लिए निष्पक्ष समीक्षा की एक कठोर प्रक्रिया का पालन किया जाता है। भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय) के प्रकाशन विभाग द्वारा इसका प्रकाशन किया जाता है।

**प्रधान संपादक**
डॉ. अनुपमा भटनागर
कुलपति
भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
नई दिल्ली

**संपादक**
प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार
अध्यक्ष, स्ट्रैटिजिक कम्युनिकेशन विभाग
भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
नई दिल्ली

## संपादक मंडल

**श्री अच्युतानंद मिश्र**
वरिष्ठ पत्रकार एवं पूर्व कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

**डॉ. सच्चिदानंद जोशी**
सदस्य सचिव, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली

**प्रो. ओम प्रकाश सिंह**
पूर्व प्रोफेसर एवं निदेशक, महामना मदनमोहन मालवीय हिंदी पत्रकारिता संस्थान, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

**प्रो. पवित्र श्रीवास्तव**
विभागाध्यक्ष, विज्ञापन एवं जनसंपर्क विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

**प्रो. आनंद प्रधान**
प्रोफेसर एवं क्षेत्रीय निदेशक, भारतीय जन संचार संस्थान, ढेंकनाल परिसर, ओडिशा

**प्रो. अनिल कुमार सौमित्र**
प्रोफेसर, भारतीय जन संचार संस्थान, जम्मू परिसर

**प्रो. प्रमोद कुमार**
प्रोफेसर, अँग्रेजी पत्रकारिता एवं संपादक, 'संचार माध्यम', भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

**डॉ. शुचि यादव**
अध्यक्ष, मीडिया अध्ययन केंद्र, सामाजिक विज्ञान स्कूल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

**डॉ. राजेश कुशवाहा**
सह आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, अमरावती परिसर

**डॉ. राकेश उपाध्याय**
सह आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

**डॉ. विनीत उत्पल**
सहायक आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, जम्मू परिसर

**श्री संत समीर**
एसोसिएट प्रकाशन, भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली

*भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय) की ओर से प्रो. (डॉ.) वीरेंद्र कुमार भारती द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित*

*सभी तरह के संपादकीय पत्राचार और लेख भेजने के लिए **संपादक, संचार माध्यम,** भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय), जेएनयू न्यू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110067 (भारत) को संबोधित किया जाना चाहिए (दूरभाष : 91-11-26742920, 26741357)*

***ईमेल :*** *sancharmadhyamiimc@gmail.com, drpk.iimc@gmail.com*

***जर्नल का वेब लिंक :*** *https://www.iimc.gov.in/about-journal-0*

***वेबसाईट :*** *www.iimc.gov.in*

*'संचार माध्यम' में प्रकाशित विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्ति हैं। भारतीय जन संचार संस्थान का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।*

# कुलपति की कलम से

**डॉ. अनुपमा भटनागर**
कुलपति
भारतीय जन संचार संस्थान
(सम विश्वविद्यालय)

वैदिक और उपनिषद् काल से भारत में ज्ञान की एक अत्यंत समृद्ध परंपरा रही है, जिसे सदियों तक विद्वानों और विचारकों ने अपने अनुभव और समझ से निरंतर विस्तार दिया और इसका हर दिशा में प्रसार हुआ। बौद्ध और जैन काल में यह ज्ञान परंपरा अपने चरम पर थी। इसी दौर में तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई, जिन्होंने भारत को ज्ञान प्राप्ति का एक प्रमुख केंद्र बना दिया। दुनिया भर से विद्यार्थी यहाँ अध्ययन के लिए आते थे। भारतीय ज्ञान को लेकर बनी इसी उत्सुकता का परिणाम था कि मैगस्थनीज, माकोर्पोलो, ह्वेनसांग, फाह्यान, डायोनिसियस, डाइमेकस, इत्सिंग और इब्नबतूता जैसे विश्वविख्यात ज्ञानार्थी भारत खिंचे चले आए। उन्होंने लंबे समय तक भारत में रहकर इसे समझा, जाना और इसके बारे में अपनी जानकारी को अपने-अपने ढंग से पूरे संसार में फैलाया। इसी का नतीजा था कि अपनी विशाल ज्ञान संपदा के कारण भारत विश्व भर में सम्मान का केंद्र बन गया और इसे विश्वगुरु माना जाने लगा।

लेकिन देश में ईस्ट इंडिया कंपनी की हुकूमत के दौरान शासन के सौ-डेढ़ सौ सालों में उन्होंने आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता की शिक्षा देने वाली भारतीय ज्ञान परंपरा को पूरी तरह हाशिये पर पहुँचा दिया और उसकी जगह शिक्षा के मैकाले मॉडल ने ले ली। इससे भारत का जो ज्ञान था, उसकी उपेक्षा होती गई। जिस महान् भारतीय ज्ञान परंपरा को हमने भुलाया हुआ था, पश्चिमी दुनिया खोज-खोजकर उसे हासिल कर रही थी और अपना रही थी। न सिर्फ अपना रही थी, बल्कि नये नामों के साथ उसकी रिब्रांडिंग कर उसका भरपूर व्यावसायिक फायदा भी उठा रही थी। हम आश्चर्यचकित रह जाते थे, जब हमें पता चलता था कि कोई विदेशी कंपनी हमारी नीम, हल्दी, तुलसी जैसी परंपरागत चीजों को पेटेंट कराने की कोशिश कर रही है। तब हमें समझ में आया कि अब जागने का समय है और हमें अपनी ज्ञान परंपरा को आगे बढ़ाना है।

वर्ष 2014 में माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस जरूरत को महसूस किया कि भारत को अगर उसका खोया आत्मसम्मान वापस दिलाना है, उसे फिर से विश्वगुरु बनाना है तो हमारी पुरातन और समृद्ध ज्ञान परंपरा को फिर से वापस लाना होगा। इसके लिए सरकार ने योजनाबद्ध तरीके से और बहुत तेजी से इस दिशा में काम करना शुरू कर दिया कि युवाओं के लिए पढ़ने का मतलब सिर्फ कुछ परीक्षाएँ पास कर लेने या पढ़कर नौकरी पाने तक सीमित न रहे, बल्कि वे सही मामले में सीखें। वे भारतीय परंपरा की उन विस्मृत चीजों से परिचित हों, जिन्हें विकास की आधुनिक परिभाषाओं के जाल में फँस कर हम भुला चुके हैं। वे हमारी उस प्राचीन शिक्षा प्रणाली के बारे में जानें, जो विनम्रता, सत्यनिष्ठा, अनुशासन, आत्मनिर्भरता और आत्म सम्मान जैसे मूल्यों पर जोर देती थी और व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर केंद्रित थी।

सौभाग्य से नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति इस खाई को पाटने पर विशेष ध्यान देती है। 2020 में पेश की गई यह नई शिक्षा नीति पारंपरिक ज्ञान की बात करती है, तो तकनीक को भी एक प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखने के बजाय एक सहचर के रूप में देखती है और उसकी ताकत, पहुँच और व्यापकता का उपयोग एक प्रभावशाली संप्रेषण में करती है। नई शिक्षा नीति में आधुनिकता और परंपरा के बीच एक अद्भुत सामंजस्य बैठाया गया है। इसमें एक बार फिर से बहुविषयी शिक्षण, संपूर्ण विकास, अपनी जड़ों से जुड़े रहकर विश्वस्तरीय ज्ञान की प्राप्ति पर विशेष जोर दिया गया है। लोक कलाओं, पारंपरिक हुनर, भारतीय दर्शन और प्राचीन ज्ञान परंपरा को जोड़कर बनी यह शिक्षा नीति व्यक्ति के समग्र विकास की बात करती है। उसे उसकी रुचि के विषयों का अध्ययन करने का अवसर देकर, पूरी तरह आत्मनिर्भर बनाने पर जोर देती है।

आज देश के युवाओं के सामर्थ्य से नए भारत का निर्माण हो रहा है। एक ऐसा नया भारत, जिसमें हर व्यक्ति बराबर है, हर व्यक्ति महत्वपूर्ण है। एक ऐसा नया भारत, जिसमें अवसर भी हैं और उड़ने के लिए पूरा आसमान भी। भारत की उपलब्धियाँ आज सिर्फ अपनी नहीं हैं, बल्कि ये पूरी दुनिया को प्रकाश दिखाने वाली और पूरी मानवता के लिए उम्मीद जगाने वाली हैं। भारत की आत्मनिर्भरता से ओतप्रोत विकास यात्रा पूरी दुनिया की विकास यात्रा को गति देने वाली है। आइए, हम सब नए भारत की इस यात्रा में सहभागी बनें।

# उमेश उपाध्याय : एक भविष्यद्रष्टा मीडिया गुरु का असमय महाप्रयाण

'संचार माध्यम' के जुलाई-सितंबर, 2024 अंक में जब वरिष्ठ टीवी पत्रकार, लेखक, साहित्यकार और मीडिया विश्लेषक उमेश उपाध्याय की पुस्तक 'वेस्टर्न मीडिया नैरेटिव्स ऑन इंडिया फ्रॉम गांधी टू मोदी' की चर्चा की गई, तो उस समय यह बिलकुल आभास नहीं था कि अगले ही अंक में उन्हें श्रद्धांजलि देनी पड़ेगी। 01 सितंबर, 2024 को एक दुर्घटना में उनका निधन हो गया। उस दिन वे सुबह लगभग 10:30 बजे अपने घर के नवीनीकरण कार्य का निरीक्षण कर रहे थे। निरीक्षण के दौरान, गलती से चौथी मंजिल से फिसलकर सीधे दूसरी मंजिल पर गिर गए। उस दुर्घटना में उन्हें सिर सहित शरीर के अन्य हिस्सों में गंभीर चोटें आईं। गिरने के तुरंत बाद उन्हें गंभीर हालत में अस्पताल ले जाया गया, लेकिन बचाया नहीं जा सका। वे कुछ माह पहले ही रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड के मीडिया निदेशक पद से सेवानिवृत्त हुए थे। उससे पहले वे नेटवर्क-18 समूह में समाचार निदेशक थे।

भारतीय मीडिया में अपने 25 साल के करियर के दौरान उमेश जी 'जनमत' टीवी में चैनल हेड, 'जी न्यूज' में कार्यकारी निर्माता और आउटपुट एडिटर, 'होम टीवी' में कार्यकारी निर्माता, दूरदर्शन में संवाददाता और प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया में उप संपादक रहे। उन्होंने 'सब टीवी' में भी काम किया। दिल्ली विश्वविद्यालय से एक लेक्चरर के रूप में अपना करियर शुरू करने के बाद वे ऑल इंडिया रेडियो से भी जुड़े। वे भारतीय जन संचार संस्थान की कार्यकारी परिषद् के सदस्य भी रहे। पत्रकारिता में उनके उल्लेखनीय योगदान हेतु उन्हें वर्ष 2014 के गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उनके कुशल मीडिया प्रबंधन और दूरदर्शी दृष्टिकोण के कारण उनका मीडिया जगत् में अत्यंत सम्मान था। मीडिया में उन्हें जवाबदेह पत्रकारिता के प्रति प्रतिबद्धता के लिए जाना जाता था।

26 अगस्त, 1960 को जन्मे उमेश उपाध्याय से मेरा करीब तीन दशक का निकट संपर्क था। चूँकि वे मीडिया में मुझसे वरिष्ठ थे, इसलिए उनसे बहुत कुछ सीखने को मिला। एक प्रिंट पत्रकार कैसे टेलीविजन और कॉरपोरेट में उच्च पदों पर पहुँच कर अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा सकता है, इसके वे साक्षात् उदाहरण थे। उनका एक और परिचय था। चूँकि सक्रिय पत्रकारिता में आने से पूर्व वे दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षक थे, इसलिए मीडिया शिक्षा को लेकर भी बहुत सजग थे। हालाँकि आज मीडिया शिक्षा में जो कुछ विद्यार्थियों को पढ़ाया जाता है, उससे वे नाखुश थे। वे चाहते थे कि विद्यार्थियों को विश्व स्तर की शिक्षा दी जाए, परंतु उन्हें भारतीय ज्ञान परंपरा से भी अवगत कराया जाए। इस संबंध में अपने विचार साझा करते हुए उन्होंने 'संचार माध्यम' के जुलाई-दिसंबर, 2021 अंक में एक विशेष आलेख भी लिखा था, जिसका शीर्षक था 'टुकड़ों-टुकड़ों में नहीं, समग्रता में हो मीडिया शिक्षा पर चर्चा'।

उस लेख में वे कहते हैं, "आने वाले समय में पत्रकारिता का परिदृश्य क्या होगा और उसके अनुकूल पत्रकारिता की शिक्षा कैसी होगी, इस तरफ अब हमें देखना चाहिए। पत्रकारिता में जो सबसे बड़ा बदलाव हुआ है वह है तकनीक का हस्तक्षेप। इस हस्तक्षेप ने पत्रकारिता के स्वरूप को बदल कर रख दिया है। आज जिसके पास मोबाइल फोन है वह पत्रकार है, क्योंकि वह प्रथम सूचना दे सकता है। अभी तक हम पत्रकारिता को टुकड़ों में बाँटकर देखते थे। भारत में तो अभी भी पत्रकारिता के पाठ्यक्रम को रेडियो, टीवी, प्रिंट या विज्ञापन और जनसंपर्क आदि के तौर पर पढ़ाया जाता है। ये सारे भेद नैसर्गिक नहीं हैं। तकनीक के आने के बाद ये सभी दीवारें खत्म हो गई हैं या हो रही हैं। इसलिए आज रेडियो पत्रकारिता, टीवी पत्रकारिता या प्रिंट पत्रकारिता पढ़ाना पुरानी बात करना है। कैसे? आप देखते हैं कि एक रिपोर्टर जब 'फील्ड' में जाता है तो वहाँ से जब वह रिपोर्टिंग करता है तो उसकी रिपोर्टिंग पर वीडियो भी बनता है, ऑडियो भी बनता है और उसकी ही खबर को अखबार में भी शामिल किया जाता है। इसलिए ये तीनों भेद तो मिट गए। इसलिए भारत के मीडिया शिक्षा संस्थान पत्रकारिता शिक्षा को लेकर अभी कम से कम दस साल पीछे हैं।"

**तकनीकी प्रशिक्षण संस्थानों में शुरू हो पत्रकारिता शिक्षा**

इस संबंध में भविष्य की दिशा बताते हुए उमेश उपाध्याय कहते हैं, "आज तकनीकी हस्तक्षेप के साथ सभी माध्यमों का 'कनवरजेंस' हो गया है। इसे समझना होगा। अब खाँचों में बँटे हुए पत्रकार नहीं रह सकते। पहले हम पत्रकारिता शिक्षा में सबको अलग-अलग काम जैसे कैमरामैन, स्क्रिप्ट राइटिंग, वॉइस ओवर, एंकरिंग, वीडियो संपादन आदि अलग-अलग सिखाते थे। अब तकनीकी विकास ने सारे बंधन तोड़ दिए हैं। आज हम एक फोन से ये सारे काम आसानी से कर सकते हैं। मैं अपने सिर्फ एक फोन से एडिट सॉफ्टवेयर का प्रयोग करके एक वीडियो बना देता हूँ, उसी के बारे में स्क्रिप्ट लिख देता हूँ, उसी से स्क्रीनशॉट लेकर फोटो निकालता हूँ, फिर किसी एप में जाकर उन फोटो को साफ करता हूँ, और खबर अपनी वेबसाइट पर अपलोड कर देता हूँ। अब इस युग में यदि हम खाँचों में पढ़ाएँगे तो कैसे काम चलेगा? इसलिए पत्रकारिता की शिक्षा और उसके पाठ्यक्रम को इस 'कन्वर्जेंस' के हिसाब से देखना होगा। यह कोई ऐसी चीज नहीं है जो भविष्य में होगी, जिसे हम आने वाले कल में करेंगे। यह 'हो चुकी' चीज है। तकनीक आगे-आगे भाग रही है और हमारे पाठ्यक्रम वर्षों पीछे चल रहे हैं। पढ़ाने वाले तो उससे भी कहीं पीछे चल रहे हैं। इसलिए जरूरत इस बात की है कि हमारे यहाँ पत्रकारिता की शिक्षा में गंभीर हस्तक्षेप हो। हम स्वयं वांछित हस्तक्षेप कर लें तो ठीक है, वरना मजबूरी हमसे यह जबरदस्ती कराएगी। बताता हूँ कैसे? सबसे महत्त्वपूर्ण बात है तकनीक और उसकी समझ तथा डाटा पत्रकारिता का प्रयोग। इसके अलावा आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मशीन इंटेलिजेंस की समझ भी आवश्यक है। जब तक आप इसको नहीं समझेंगे, तब तक पत्रकारिता करना मुश्किल हो जाएगा। पत्रकारिता में लीडरशिप देना तो तकरीबन असंभव हो जाएगा। ...आने वाले दिनों में जो

डाटा को नहीं समझता है, जो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की गूढ़ता को नहीं समझता है, जो मशीन इंटेलिजेंस को नहीं समझता है वह अच्छे से पत्रकारिता नहीं कर पाएगा। भविष्य की पत्रकारिता करने के लिए यह समझना जरूरी है कि सोशल मीडिया संस्थान 'एल्गोरिदम' के माध्यम से कैसे किसी कंटैंट को चलाते हैं या आगे बढ़ाते हैं। यानी 'एल्गोरिदम' और उसके व्यवहार और स्वभाव को समझना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। जो इसे नहीं समझेगा, वह अच्छी पत्रकारिता नहीं कर पाएगा। इसलिए जो पत्रकारिता विभाग अभी भाषा विभाग अथवा सामाजिक विज्ञान विभाग के विस्तार के रूप में काम कर रहे हैं वे उस रूप में चल नहीं पाएँगे। आप बहुत जल्द देखेंगे कि जो तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान हैं, वहाँ मीडिया के पाठ्यक्रम आरंभ हो गए हैं। आश्चर्य नहीं होगा कि आईआईटी में पत्रकारिता के पाठ्यक्रम प्रारंभ हो जाएँ। मैं चाहता हूँ कि ऐसा जल्द से जल्द हो, क्योंकि भारत को डाटा पत्रकारिता, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मशीन इंटेलिजेंस के क्षेत्र में आगे बढ़ाने के लिए इसकी आवश्यकता है।"

उमेश उपाध्याय
26 अगस्त, 1960 - 01 सितंबर, 2024

**तकनीक के साथ वाबस्ता हों मीडिया प्रशिक्षण संस्थान**

मीडिया प्रशिक्षण की गुणवत्ता बढ़ाने और मीडिया को बदलते वक्त की जरूरतों के हिसाब से योग्य पत्रकार उपलब्ध करने के लिए उमेश जी चाहते थे कि मीडिया प्रशिक्षण संस्थानों में उन्हीं विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाए जिनके पास स्कूल स्तर पर गणित विषय अवश्य रहा हो। बारहवीं और स्नातक स्तर पर गणित या सांख्यिकी पढ़ा हो तो और भी अच्छा है। वे कहते हैं, "भारत में अभी तक ऐसा नहीं है। यकीन मानिए, हमारे यहाँ ऐसा करना पड़ेगा। यदि आप सांख्यिकी नहीं समझते हैं तो आप तकनीक आधारित पत्रकारिता में पिछड़ जाएँगे। दूसरे, आज पत्रकारिता संस्थानों में जो बड़ी नौकरियाँ हैं वे एक चीज की पुनरावृत्ति करने वाले काम हैं। आप अँग्रेजी में सुनते हैं, उसका हिंदी या अन्य किसी भाषा में अनुवाद करते हैं। मीडिया संस्थानों में काफी समय इसमें जाता है। इसके अलावा रिपोर्ट लिखते समय 'ट्रांसक्रिप्शन' में भी काफी समय जाता है, परंतु आज हम जानते हैं कि मशीनें ये सब काम कर रही हैं। मशीनें 'ट्रांसक्रिप्शन' ही नहीं, अनुवाद भी कर रही हैं। इसलिए ट्रांसक्रिप्शन और अनुवाद के लिए आपको पत्रकारों की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। आपको ऐसे पत्रकारों की आवश्यकता पड़ेगी, जो पीछे जाकर यह देखें कि मशीन शब्दों/वाक्यों की कैसे संरचना करती है? जरूरत ऐसे लोगों की होगी, जो मशीन को समझा सकें कि अनुवाद कैसे करना है या जो मशीन को समझा सकें कि 'ट्रांसक्रिप्शन' कैसे करना है। हमें ऐसे पत्रकारों की आवश्यकता पड़ेगी, जिन्हें तकनीक की अच्छी समझ हो। इसी तरीके से वीडियो संपादन का बहुत सारा काम मशीन करने लगेगी। पहले से मशीनें ये काम कर रही हैं। संपादन का बहुत सारा काम कंप्यूटर और एल्गोरिदम्स करेंगे। ...तकनीक और 'सॉफ्ट स्किल्स' के बीच एक पुल बाँधना होगा। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि कल्पनाशीलता और लेखन की अहमियत खत्म हो जाएगी। जो ऑरिजिनल हैं वे ऑरिजिनल रहेंगे, लेकिन जो पुनरावृत्ति और आवृत्ति के कार्य हैं, मशीन उन्हें मनुष्य से कहीं अधिक योग्यता और कुशलता के साथ करेगी। इसका मतलब यह हुआ कि हमारे मीडिया संस्थानों को तकनीक के साथ वाबस्ता होना होगा। तकनीकी नवाचार करने होंगे। अपने पाठ्यक्रम को कल नहीं, बल्कि बीते हुए कल में ठीक करना होगा। तभी हम पूरी दुनिया के अंदर पत्रकारिता शिक्षण के अंदर शीर्ष स्थान प्राप्त कर सकते हैं।"

**निराशा नहीं, आशा का भाव पैदा करे मीडिया**

उमेश जी यह भी चाहते थे कि पत्रकारिता शिक्षण के लिए भारत को पूरी दुनिया के पठन-पाठन और अध्ययन-अध्यापन का केंद्र बनाया जाए। उन्होंने लिखा, "पूरी दुनिया के लोग भारत की तरफ इस आशा से देखते हैं कि वह नेतृत्व प्रदान करे। खासकर अफ्रीका और एशिया के समाज भारत की तरफ बहुत आशा से देख रहे हैं, क्योंकि पश्चिमी पत्रकारिता और अब खासकर सोशल मीडिया संगठनों द्वारा जिस तरह के 'नैरेटिव' यानी कथ्य को थोपा जा रहा है, उससे लोगों के मन में एक तरह का गुस्सा है। वे मूल्य सब पर थोपे नहीं जा सकते। हमारे आने वाले नए तरह के पाठ्यक्रमों में हमारी विरासत, हमारे पारंपरिक प्रजातांत्रिक मूल्यों, हमारे डीएनए में जो 'स्टोरी टेलिंग' का शिल्प है, उसे समाहित करते हुए और उसमें तकनीक को शामिल करते हुए पत्रकारिता के नए केंद्र और पाठ्यक्रम खड़े करने होंगे। यह हमारी सबसे बड़ी चुनौती है, और यही सबसे बड़ा अवसर भी है। इससे बेहतर अवसर भारतीय पत्रकारिता शिक्षा संस्थानों के पास पहले कभी नहीं था।" उमेश उपाध्याय जी के ये शब्द मीडिया शिक्षा में भविष्य की राह दिखाते हैं। इन शब्दों पर मीडिया शिक्षकों, प्रबंधकों सहित पत्रकारों को भी चिंतन करना चाहिए। उमेश जी मीडिया में परोसी जा रही नकारात्मकता से खुश नहीं थे। वे जोर देकर कहते थे कि मीडिया लोगों में निराशा का भाव पैदा करने के बजाय आशा का भाव पैदा करे, ताकि लोग देश और समाज के विकास में और अधिक सक्रियता से सहभागी बन सकें। उनका असामयिक निधन भारतीय मीडिया और मीडिया प्रशिक्षण संस्थानों के लिए एक अपूरणीय क्षति है। 'संचार माध्यम' सहित समस्त भारतीय जन संचार संस्थान परिवार की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि!

प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार
संपादक

**प्रकाशन विभाग**

**भारतीय जन संचार संस्थान**

**अरुणा आसफ अली मार्ग, जेएनयू न्यू कैंपस, नई दिल्ली-110 067**

# संचार माध्यम

**भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)**
**की यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका**

खंड 36 (3) | आईएसएसएन: 2321-2608 | अक्टूबर-दिसंबर 2024


## विषय सूची


1. पुष्टिमार्ग एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा के अंतर्संबंधों का अध्ययन 1
   *कुमार गौरव मिश्रा*

2. मराठी पत्रकारिता के आधार स्तंभ : कार्य और योगदान का अध्ययन 8
   *डॉ. विनोद निताळे*

3. श्री गुरु तेगबहादुर सिंह जी का जीवन दर्शन और उनकी वाणी 16
   *डॉ. नरेश कुमार और डॉ. प्रीति सिंह*

4. दीनदयाल उपाध्याय के भाषणों का अध्ययन 22
   *डॉ. आकाश दीप जरयाल*

5. दत्तोपंत ठेंगड़ी की साहित्यिक एवं पत्रकारीय दृष्टि 31
   *प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार और डॉ. आकाश दीप जरयाल*

6. अच्युतानंद मिश्र : साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंध का अध्ययन 39
   *प्रो. कृपाशंकर चौबे*

7. संवैधानिक चेतना के विकास में पत्रकार रामबहादुर राय का योगदान 48
   *आशीष द्विवेदी*

8. गोत्र परंपरा : एक सामुदायिक संवादसेतु 54
   *डॉ. जयप्रकाश सिंह, हरीश चंद्र और डॉ. रविंद्र सिंह*

9. 'मत-सम्मत' और 'दिनमान' 58
   *डॉ. मनीषचंद्र शुक्ल*

10. मेवात की पत्रकारिता के इतिहास का अध्ययन (भरतपुर-अलवर के विशेष संदर्भ में) 64
    *डॉ. ईश्वर दास बैरागी और डॉ. दीपिका विजयवर्गीय*

11. वेब सीरीज में प्रस्तुत कलुषित भाषा का अंतर्वस्तु विश्लेषण 69
    *मनोज पटेल, डॉ. शिवेंद्र मिश्रा और डॉ. गजेंद्र अवास्या*

12. सूचना संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषक महिलाओं का सशक्तीकरण 77
    *मीताली, डॉ. सुनीता मंगला और डॉ. राजकुमार फलवारिया*

13. जल संरक्षण के लिए स्वचालित जल स्तर नियंत्रक के प्रति लोगों में जागरूकता का अध्ययन 85
    *रंजीत कुमार और डॉ. लोकनाथ*

14. आंचलिक पत्रकारों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन 89
    *अंकिता पटेल*

15. पुस्तक समीक्षा-लोक की चिंता में पत्रकारिता से राजनीति तक 95
    *संत समीर*

16. पुस्तक समीक्षा-हिंदी पत्रकारिता का अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य 97
*प्रतिभा सिन्हा*

17. पुस्तक समीक्षा-वर्तमान संचारीय परिदृश्य बनाम नारदीय संचार नीति 99
*संत समीर*

18. पुस्तक समीक्षा-अज्ञेय-सहाय-भारती का पत्रकारीय अवदान 100
*संत समीर*

19. पुस्तक समीक्षा-लेखन कर्म पर कुछ जरूरी साक्षात्कार 101
*संत समीर*

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 1-7, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# पुष्टिमार्ग एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा के अंतर्संबंधों का अध्ययन

**कुमार गौरव मिश्रा**[1]

**सारांश**

श्री वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्ग की स्थापना की और श्रीनाथ जी के मंदिरों में अष्टयाम सेवा का शुभारंभ किया। उनके द्वितीय पुत्र श्री विट्ठलनाथ जी ने इस सेवा में राग, भोग और शृंगार का समन्वय किया। इसमें राग को प्राथमिकता दी गई है और राग सहित कीर्तन करने को अपरिहार्य विधान माना गया है। नित्य सेवा विधि में आठ समय के उत्सव होते हैं, जिनमें भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरानुसार, समय, पहर व ऋतु का ध्यान रखते हुए राग में निबद्ध पद गाकर कीर्तन किए जाते हैं। इनका ध्यान वर्षोत्सव सेवा की विभिन्न झाँकियों में भी रखा जाता है। अष्टछाप के कवियों के अतिरिक्त अन्य पुष्टिमार्गीय रचनाकारों ने अपने अधिकतर पदों को विभिन्न राग-रागिनियों में निबद्ध कर गाया है। पुष्टिमार्गीय गायन की मुख्य शैली ध्रुपद-धमार एवं हवेली संगीत है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य शुद्धाद्वैतवाद दर्शन पर आधारित वल्लभ संप्रदाय में संगीत की महत्ता का विश्लेषण व समीक्षा करना है। साथ ही, इसके परिप्रेक्ष्य में भारतीय दर्शन, साहित्य एवं शास्त्रीय संगीत के अंतर्संबंधों को उद्घाटित करना है। ये तीनों विषय भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। शोध पत्र इन क्षेत्रों में नई अंतर-अनुशासनात्मक दृष्टि प्रदान करेगा। इससे भारतीय संस्कृति को और उपयुक्त तरीके से समझने में सहायता मिलेगी। इसके लिए गुणात्मक शोध विधि का प्रयोग किया गया है। शोध प्रक्रिया के अंतर्गत द्वितीयक प्रदत्तों यथा पुस्तक एवं ऑनलाइन सामग्री के आधार पर वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक विधियों पर आधारित शोध चर्चा प्रस्तुत की गई है।

**संकेत शब्द :** शुद्धाद्वैतवाद दर्शन, अष्टछाप, पुष्टिमार्ग, कीर्तन, भारतीय शास्त्रीय संगीत, राग-रागिनी, ध्रुपद, धमार, वल्लभ संप्रदाय, हवेली संगीत, वैष्णव परंपरा

**प्रस्तावना**

श्री वल्लभाचार्य ने शंकराचार्य के अद्वैतवाद अथवा मायावाद को नकारते हुए शुद्धाद्वैतवाद के व्यावहारिक पक्ष के अंतर्गत जिस अवधारणा का प्रतिपादन किया उसे 'पुष्टिमार्ग' के नाम से जाना जाता है। उन्होंने कहा कि सगुण कृष्ण ही वास्तविक ईश्वर हैं और यह जगत् मिथ्या नहीं, वरन् कृष्ण की लीला है। ईश्वर तक पहुँचने का मूल मार्ग भक्ति है, न कि ज्ञान, कर्म या योग; किंतु, यह भक्ति ईश्वर के अनुग्रह द्वारा ही प्राप्त होती है। अर्थात् ईश्वर जिन जीवों पर अनुग्रह करता है, केवल उन्हें ही ईश्वर भक्ति का यह सौभाग्य प्राप्त होता है। ईश्वर एवं जीवों के मध्य पोषक-पोष्य संबंध बताया गया है। इसी संबंध को 'पुष्टि' कहा जाता है, जो पूर्णत: ईश्वरीय अनुग्रह पर आधारित है—'पोषणम् तत् अनुग्रह'। "श्री वल्लभाचार्य घोषित करते हैं, 'कृष्ण एव गतिर्मम' अर्थात् एकमात्र श्रीकृष्ण ही हमारी गति, अनन्य आश्रय या एकमात्र शरणस्थल हैं। इस निर्णय पर पहुँचकर उन्होंने शास्त्रों में वर्णित, भगवत्-प्राप्ति के साधन रूप से प्रतिष्ठित, विहित, विधि-प्रधान भक्तिमार्ग से भिन्न विशुद्ध प्रेमप्रधान स्वतंत्र भक्तिमार्ग का उपदेश दिया। इसे वे निःसाधनों का राजमार्ग कहते हैं। जिनके पास भगवत्-प्राप्ति के उपाय रूप कर्म, ज्ञान, भक्ति आदि कोई साधन नहीं हैं, ऐसे निःसाधन भक्तों के लिए भगवत्-कृपा ही भगवत्प्राप्ति का एकमात्र साधन है। श्रीमद् वल्लभाचार्य ने अपने भक्तिमार्ग का नामकरण पुष्टिमार्ग श्रीमद्भागवत के आधार पर किया है" (नाथद्वारा टेंपल, 2024)।

पुष्टिमार्गीय मान्यता के अनुसार जीव के तीन प्रकार हैं—प्रवाह जीव, मर्यादा जीव तथा पुष्टि जीव। प्रवाह जीव के अंतर्गत वे आते हैं जो संसार के सामान्य प्रवाह में शामिल हैं। ये जीव सांसारिक अथवा लौकिक सुखों को ही काम्य मानते हैं। मर्यादा जीव को प्रवाह जीव से बेहतर माना जाता है, क्योंकि इन्हें लौकिक की जगह अलौकिक सुखों की प्राप्ति की इच्छा रहती है, परंतु इसके लिए वे विभिन्न प्रकार के कर्मकांडों में ही उलझे रह जाते हैं। वहीं, पुष्टि जीव वे हैं जो संपूर्ण साधनों को निरर्थक मान, स्वयं को पूर्णत: ईश्वरीय अनुग्रह पर छोड़ देते हैं। दर्शन के कुछ विद्वानों ने पुष्टि के चार भेद किए हैं—प्रवाह पुष्टि, मर्यादा पुष्टि, पुष्टि-पुष्टि एवं शुद्ध पुष्टि। "मर्यादा जीव एवं पुष्टि जीव के संदर्भ में बंदरिया के बच्चे और बिल्ली के बच्चों का उदाहरण दिया जाता है। बंदरिया के बच्चे को उसकी माँ को स्वयं ही पकड़ कर रखना पड़ता है। इसी प्रकार मर्यादामार्गी जीव को भगवद् प्राप्ति के लिए स्वयं ही प्रयत्नशील होना पड़ता है। बिल्ली के बच्चे को अपनी ओर से कुछ भी नहीं करना पड़ता। उसकी माँ को ही उसे मुँह से पकड़कर उठाकर ले जाना पड़ता है। पुष्टिमार्गीय जीव के लिए भगवान स्वयं ही साधन बन जाते हैं, बिल्ली के बच्चे (मार्जार शावक) की भाँति। पुष्टि पर, भगवद् कृपा पर कोई भी नियम लागू नहीं होता" (नाथद्वारा टेंपल, 2024)।

पुष्टिमार्गीय परंपरा के अंतर्गत अष्टछाप की संकल्पना की गई है, जो कृष्ण काव्यधारा के आठ कवियों का समूह हुआ करता था। इसमें श्री वल्लभाचार्य के चार शिष्य—सूरदास, परमानंददास, कुंभनदास व कृष्णदास और चार शिष्य श्री विट्ठलनाथ के—नंददास, चतुर्भुजदास, गोविंदस्वामी तथा छीतस्वामी, शामिल थे। अष्टछाप के कवियों ने अपने काव्य की रचना मंदिरों में कीर्तन गाकर अष्टयाम सेवा करने हेतु की थी। अत: इनके पदों में गेयात्मकता नैसर्गिक रूप से विद्यमान है। ये कवि स्वयं पदों को रचकर, उन्हें भारतीय संगीत परंपरा के अंतर्गत स्वरबद्ध एवं रागबद्ध करते थे। वल्लभ संप्रदाय में ईश्वरीय आनंद की प्राप्ति के लिए संगीत को भक्ति का अहम साधन माना गया है। श्रीनाथ जी जिन-जिन मंदिरों में विराजमान हैं, उन मंदिरों में पूरा कार्यक्रम एक निश्चित कीर्तन-क्रम पर ही आधारित है। श्रीनाथ जी को कीर्तन से ही जगाया जाता है। शृंगार, भोग एवं अन्य दूसरी सेवाएँ भी कीर्तन के साथ ही संपन्न की जाती हैं।

[1]शोधार्थी (हिंदी विभाग), जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली. ईमेल : mishrakumargaurav92@gmail.com

**अष्टयाम सेवा एवं सांगीतिक दिनचर्या**

जिस प्रकार भारतीय शास्त्रीय संगीत की परंपरा में विभिन्न ऋतुओं एवं समयानुसार रागों को निर्मित किया गया है, उसी प्रकार पुष्टिमार्गीय मंदिरों में गायन हेतु ऋतुओं व पहरों के अनुसार रागों का चयन व नियमों का पालन किया जाता है, यथा—मंगला (जिसका समय प्रात: 5 बजे से 7 बजे तक है) में राग भैरव गाया जाता है, शृंगार सेवा (जिसका समय प्रात: 7 से 8 बजे तक का है) में बिलावल, रामकली आदि; ग्वाल (जिसका समय प्रात: 9 से 10 बजे तक का है) में तोड़ी, आसावरी आदि; राजभोग (जिसका समय सवेरे 10 से 12 बजे तक का है) में सारंग, आसावरी आदि; उत्थापन (जिसका समय दिन के 3 बजे से 4 बजे तक का है) में भीमपलासी, धनाश्री आदि; भोग (जिसका समय सायंकाल लगभग 5 बजे होता है) में राग नट, पूर्वी, गौरी आदि; संध्या-आरती (जिसका समय लगभग सांय 6 बजे होता है) में राग श्री, पूर्वी आदि तथा शयन (जिसका समय रात्रि के 7 बजे से 8 बजे तक का होता है) में केदार, बिहाग व मालव इत्यादि रागों में निबद्ध पद गाए जाते हैं।

**पुष्टिमार्ग में अष्टयाम सेवा दर्शन भावना**

ध्यातव्य है कि अष्टयाम सेवा भावना का विधान स्वयं श्री वल्लभाचार्य द्वारा किया गया, वहीं उनके द्वितीय पुत्र श्री विठ्ठलनाथ ने अष्टयाम सेवा भावना के विशेष रूप को प्राणान्वित किया।

**(1) मंगला सेवा दर्शन की भावना :** मंगला दर्शन की झाँकी से पूर्व श्रीठाकुर जी को जगाया जाता है। तत्पश्चात् विभिन्न प्रकार के मिष्ठान जैसे कि दूध, माखन, मिश्री, बासूंदी, मेवा इत्यादि का भोग लगाया जाता है। और फिर आरती की जाती है। यशोदा मैया परिसेवित श्रीठाकुर जी के मंगला दर्शन का निरूपण इस प्रकार किया जाता है—"बालक कृष्ण यशोदा मैया की गोद में बैठे हैं। माँ उनके मुखारविंद को बार-बार देख, मुख चूम रही हैं। नंदबाबा आदि भी उन्हें गोद में लेकर लाड़ कर रहे हैं। सखा बाल गोपाल गिरधर गुणों का गान कर रहे हैं और ब्रजगोपियाँ अपने रसमय कटाक्ष से उनकी सेवा कर रही हैं। नंदनंदन कलेवा कर रहे हैं, उनकी मंगला आरती हो रही है। वे मिश्री व माखन का रसास्वादन कर रहे हैं।"

परमानंद जी द्वारा रचित प्रस्तुत पद मंगला दर्शन की छटा कुछ यूँ बिखेरता है :

"सब विधि मंगल नंद को लाल
कमल नयन बलि जाय यशोदा,
न्हात खिजा जिन मेरे बाल
मंगल गावत मंगल मुरति
मंगल लीला ललित गोपाल
मंगल जस गावत परमानंद,
सखा मंडली मध्य गोपाल"

(नाथद्वारा टेंपल, 2024)।

मंगला दर्शन का एक प्रसिद्ध फुटकल पद है :

"मंगल माधो नाम उच्चार।
मंगल वदन कमल कर मंगल,
मंगल जन की सदा संभार।।
देखत मंगल पूजत मंगल,
गावत मंगल चरित उदार।।
मंगल श्रवण कथा रस मंगल,
मंगल तनु वसुदेव कुमार।।" (अग्रवाल, 2018)

**(2) शृंगार सेवा दर्शन की भावना :** माँ यशोदा द्वारा अपने बाल गोपाल का समयानुकूल ललित शृंगार किया जाता है। अच्छे से उबटन लगाकर स्नान कराया जाता है एवं पीतांबर पहनाया जाता है। ब्रजवासी व भक्तगण श्रीठाकुर जी के लावण्यपूर्ण मुख का दर्शन कर अपने-आपको धन्य मानते हैं। माँ यशोदा की गोद में बैठे, कर में वेणु तथा मस्तक पर मयूर-पंख लगाए, उनकी छवि मनोहारिणी लगती है। कृष्णलला को कहीं नजर न लग जाए, इसलिए उन्हें काजल टीका भी लगाया जाता है। सामान्य दिवसों में शृंगार प्राय: सामान्य ही होते हैं, किंतु विशेष उत्सव, महोत्सव व मनोरथ इत्यादि के मौकों पर, भारी-भारी एवं विभिन्न रत्नाभूषणों से श्रीठाकुर जी को सुसज्जित किया जाता है। शृंगार चार प्रकार की भावना के माने जाते हैं—(1) कटि पर्यंत, (2) मध्य के, (3) छेड़ा के, (4) चरणारविंदनार्थ। आभूषण भी ऋतु अनुसार ही पहनाए जाते हैं, यथा उष्णकाल में मोती, फाल्गुन में स्वर्ण तथा अन्य ऋतुओं में रत्न जड़ित इत्यादि।

कृष्णदास जी द्वारा निम्न शृंगार के पद में श्रीकृष्ण के शृंगार का मनभावन चित्रण किया गया है :

"कमल सुख देखत कोन अधाय।
सुनरी सखी लोचन अति मेरे, मुदित रहे अरूझाय॥
युक्ता माल लाल उर उपर, जनु फूली बन राय।
गोवर्धन घर अंग-अंग पर कृष्णदास बलि जाय।।" (नाथद्वारा टेंपल, 2024)

वहीं, विष्णुदास लिखते हैं :

"आवो गोपाल शृंगार बनाऊँ।
विविध सुगंधन करूँ उबटनों पाछे उष्णजल सों न्हवाऊँ ।।
अंग अंगोछ गुहूँ तेरी बेनी फूलन रच-रच भाल बनाऊँ।
सुरंग पाग जरतारी चीरा रत्नखचित सिरपेच बंधाऊँ ।।
बागो लाल सुन्हेरी छापो हरि इजार चरणन विरचाऊँ।
पटुका सरस बैंगनी रंग को हंसुली हार हमेल धराऊँ ।।
गजमोतिन के हार मनोहर वनमाला ले उर पहेराऊँ।
ले दर्पण देखो मेरे प्यारे निरख निरख उर नयन सिराऊँ ।।
मधुमेवा पकवान मिठाई अपने कर ले तुम्हें जिमाऊँ।
विष्णुदास को यही कृपाफल बाललीला निशिदिन गाऊँ।।"

(अग्रवाल, 2018)

**(3) ग्वाल सेवा दर्शन की भावना :** श्रीकृष्ण ग्वालबाल सखाओं के साथ गोचारण लीला करते हैं। गोचारण के लिए निकलने से पूर्व माँ समझाती है कि वन और जलाशय की ओर मत जाना, बालकों के साथ लड़ाई मत करना, काँटों वाली भूमि पर न चलना और दौड़ती गायों के सामने मत दौड़ना। मुरलीधर गोचारण लीला के दौरान वेणु बजाकर गायों को अपनी ओर बुलाते हैं। उनके वेणु वादन से प्रकृति के समस्त जीव मुग्ध हो जाते हैं और उनकी ओर खिंचे चले आते हैं। वेणुनाद के प्रभाव से सरोवर के सारस व हंस आदि मौन धारण कर, नयन मूँदे तल्लीन हो जाते हैं। ब्रज की लताएँ मधु धारा बरसाती हैं। ग्वाल मंडली गीत तथा नृत्य में तल्लीन होती है। अपने शृंगार रस के भावात्मक स्वरूप से श्रीकृष्ण गोपियों का धैर्य हर लेते हैं। उनकी चाल लोगों को मोहित कर लेती है। वे ब्रजवासियों का दु:ख दूर करते हैं। ध्यातव्य है कि ग्वाल दर्शन की भावना के अंतर्गत कीर्तन नहीं किया जाता है, क्योंकि सारस्वत कल्प के भावनानुसार, बालक कृष्ण

अपने बाल सखाओं के संग खेलकर पुनः घर को लौटते हैं, तब माता यशोदा उन्हें पीने को दूध देती हैं :

"ततस्तु भगवान कष्णों वयस्यैब्रज बालकः।
सहरामों ब्रज स्त्रीणं चिके है जनयम् मुदम।।" (नाथद्वारा टेंपल)

छीतस्वामी कृत ग्वाल दर्शन के पद अति मनोनुकूल प्रतीत होते हैं :

"आगे गाय पाछे गाय इत गाय उत गाय,
गोविंद को गायन में बसबोई भावे।।
गायन के संग धावे गायन में सचु पावे,
गायन की खुरेरेणु अंग लपटावे।।
गायन सों ब्रज छायो बैकुंठ बिसरायो,
गायन के हेत कर गिरि ले उठावे।।
छीतस्वामी गिरिधारी विठ्ठलेश वपुधारी,
ग्वारिया को भेष धरें गायन में आवे।।" (अग्रवाल, 2018)

**(4) राजभोग सेवा दर्शन की भावना :** गोपाल के गोचारण के लिए प्रस्थान करने के बाद, पीछे माँ यशोदा घर पर यह सोच कर चिंता करती हैं कि लल्ला को भूख लगी होगी, वह अपने सखाओं के साथ वन प्रांत में खेलकर थक गया होगा। अपने इस वात्सल्य प्रेम के कारण वह व्याकुल हो, कृष्ण-कन्हैया के लिए तरह-तरह के व्यंजन और मीठे पकवान बना कर स्वर्ण और रजत पात्रों में सजा कर रखती हैं तथा गोपियों के हाथों उन्हें सावधान कर भिजवाती हैं कि भोजन सामग्री कहीं दूसरे में न मिल जाए। गोपियाँ यशोदानंदन के समक्ष भोजन परोसती हैं और श्रीठाकुर कालिंदी के तट पर बैठकर भोजन ग्रहण करते हैं। यह दर्शन स्वयं नारायण का राजाधिराज स्वरूप में ब्रजभूमि में अवतरित होने के भाव से है। इसमें उनकी झाँकी के अद्भुत दर्शन होते हैं, क्योंकि देवगण, गंधर्वगण व अप्सराएँ आदि ब्रज में पधारती हैं। गोप-गोपियों द्वारा फल, कंद-मूल इत्यादि भोग चढ़ाए जाते हैं, जिसे कृष्ण आरोगते हैं।

गोविंददास रचित यह पद गोचारण दर्शन की भावना को उद्घाटित करता है :

"छबिले लाल की यह बानिक बरनत बरनि न जाई।
देखत तनमन कर न्योछावर, आनंद उर न समाई।।
कंद, मूल फल आगे धरिके, रही सकल सिर नाई।
गोविंदी प्रभु पिय सौ रति मान, पठई रसिक रिझाई।।" (नाथद्वारा टेंपल)

सूरदास का यह पद राजभोग सेवा दर्शन का अत्युत्तम बिंब बनाता है :

"वृंदावन वन में स्याम चरावत गैया।
वृंदावन में बंसी बजाई बैठे कदम्ब की छैया।।
भाँति भाँति के भोजन कीनै पठये यशोमति मैया।
सूरदास प्रभु तुम चिरजीवो मेरे कुंवर कन्हैया।।" (अग्रवाल, 2018)

**(5) उत्थापन सेवा दर्शन की भावना :** राजभोग सेवा के उपरांत श्रीकृष्ण दोपहर के समय कुंज में शयन करते हैं। छह घड़ी दिन शेष रहने पर, जब उन्हें निद्रा से जगाया जाता है तो उसे उत्थापन दर्शन का नाम दिया जाता है। सखियाँ कुंज-भवन के सामने प्रस्तुत हो, श्रीकृष्ण को उनकी लीलाओं का वर्णन सुना, उन्हें जगाती हुई कहती हैं, "हे राधिकाकांत! आपके जागने का समय हो गया है। गायों के साथ ग्वाल बाल ब्रज प्रस्थान करने के लिए, आपकी बाट जोह रहे हैं। गोवर्धन पर पुलंदियों (भीलनियों) के साथ गोपियाँ वनप्रांत के विभिन्न प्रकार के कंद-मूल व फलों को लिए आपकी राह निहार रही हैं। आप वहाँ पधारकर उनकी मनोकामना पूर्ण कीजिए।"

परमानंददास रचित उत्थापन दर्शन के पद मनोहारी हैं :

"ग्वाल कहत सुनों हों कन्हैया।।
घर जेवे की भई है बिरीयाँ दिन रह्यो घड़ी छैयाँ।।
शंखधुन सुन उठे हैं मोहन लावो मुरली कहाँ धरैया।।
गैया सगरी बगदावो रे घर को टेर कहत बलदाऊ भैया।।"
(अग्रवाल, 2018)

**(6) भोग सेवा दर्शन की भावना :** सखियों के ऐसा आह्वान एवं प्रार्थना करने पर लीलाधारी श्रीकृष्ण शय्या से उठकर गिरिराज की ओर प्रस्थान करते हैं और वहाँ कंद-मूल एवं फल आदि आरोगते हैं। तत्पश्चात् बाट जोहती माँ की व्याकुलता का स्मरण होने पर, सांयकाल में घर की ओर अग्रसर होते हैं।

परमानंददास भोग सेवा दर्शन के बारे में लिखते हैं :

"कंदमूल फल तरमेवा धरी ओटि किये मुरकैया।
आरोगत व्रजराय लाडिलो झूठन देत लरकैया।।
उत्थापन भयो पहोर पाछलो व्रजजन दरस दिखैया।
परमानंद प्रभु आये भवन में शोभा देख बलजैया।।" (अग्रवाल, 2018)

**(7) संध्या-आरती सेवा दर्शन भावना :** मैया यशोदा पुत्रमुख को निहारने की चाह में व्याकुल होकर उनकी राह देखती हैं। श्रीकृष्ण सांयकाल में वेणु की मधुर तान छेड़ते हुए, गायों को चराते हुए वापस घर लौटते हैं। गोधूलि बेला में उनकी छवि रमणीय प्रतीत होती है। गोपियाँ उनके चरणारविंद निहारती हैं, वेणु वादन सुनती हैं और सागर में निमग्न हो जाती हैं। माँ यशोदा उनकी आरती उतारती हैं। उनके हृदय में वात्सल्य प्रस्फुटित होता है तथा उनके सभी अंगों में स्वेद, रोमांच, कंप और स्तंभ दिख पड़ते हैं। वे कपूर, घी, कस्तुरी इत्यादि से सुगंधित वर्तिका युक्त आरती अपने लाल पर वार रही हैं। श्रीकृष्ण उनके इस भाव से मुग्ध हो रहे हैं।

"लाल के बदन कमल पर आरती वारूँ।
चारु चितवन करों साज नीकी युक्ति सों,
बाती अनगित घृत कपूर की बारूँ।।" (अग्रवाल, 2018)

**(8) शयन सेवा दर्शन की भावना :** यह दर्शन संझा-आरती के बाद होता है। माँ यशोदा द्वारा अपने लल्ला को शयन से पूर्व भोग ग्रहण करने के लिए मनुहार करके बुलाया जाता है। वे कहती हैं, "हे पुत्र! मैंने तुम्हारे लिए विभिन्न प्रकार के पकवान बनाए हैं। साथ ही, सोने के कटोरे में नवनीत एवं मिश्री भी रखे हैं।" श्रीठाकुर सहर्ष उन पकवानों को ग्रहण करते हैं। तत्पश्चात् दुग्ध धवल शय्या पर शयन के लिए जाते हैं। माता यशोदा वात्सल्य भाव से उनकी पीठ पर हाथ फेर कर सोने के लिए कहती हैं। वे उन्हें निद्रा के आगोश में जाते देख एक गोपी को वहाँ बैठाकर अपने कक्ष की ओर प्रस्थान करती हैं। सखियों का समूह उनका दर्शन करने के उपरांत उनसे निवेदन करता है कि श्रीस्वामिनी (श्रीराधा जी) शय्या आदि सजाकर आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। उनकी विरह वेदना का वर्णन सुन, वे शय्या त्याग कर तुरंत मंद गति से चल पड़ते हैं। वे मधुर स्वर में धीरे-धीरे वेणु बजाते हुए केलि मंदिर में प्रविष्ट करते हैं। यह झाँकी बड़ी दिव्य मानी जाती है।

शयन दर्शन की भावना पर गोविंददास के पद अति मनभावन हैं :

"लट पटि प्राण छुट अलकावली,
घूमन नयन सोहें अरूनबरन।
कहा कहुँ अंग अंग की शोभा,
निरखत मन मुरझन।

गोविंद प्रभु की यह छवि निरखत,
रति पति भये सरन।" (नाथद्वारा टेंपल)

सूरदास शयन सेवा दर्शन पर लिखते हैं :

"दोउ मिल पोढ़े ऊँची अटा हो।
श्यामघन दामिनी मानो उनयी घटा हो।।
अंगसों अंग मिले तनसों तन ओढे पीतपटा हो।
देखत बने कहत नही आवे सूर स्याम छटा हो।।" (अग्रवाल, 2018)

**अष्टयाम सेवा भावना का महात्म्य**

1. मंगला दर्शन करने से मनुष्य कभी दरिद्र नहीं होता है।
2. श्रीकृष्ण के शृंगार दर्शन करने से मनुष्य स्वर्गलोक को प्राप्त करता है।
3. ग्वाल सेवा के दर्शन करने से मनुष्य की मान-प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है।
4. राजभोग दर्शन करने से मनुष्य भाग्यवान होता है।
5. उत्थापन दर्शन करने से मनुष्य उत्साही बना रहता है और उसकी अकर्मण्यता दूर होती है।
6. भोग दर्शन करने से मनुष्य की भगवान के चरणकमलों में प्रीति बनी रहती है।
7. संध्या-आरती के दर्शन से मनुष्य की दूषित भावनाएं यथा स्वार्थीपन, वासना व नकारात्मकता इत्यादि समाप्त हो जाती है।
8. शयन दर्शन करने से मनुष्य के मन में शांति एवं भगवान के प्रति लगाव बना रहता है।

**वर्षोत्सव सेवा एवं सांगीतिक परंपरा**

पुष्टिमार्गीय गायन में उपर्युक्त वर्णित इसी भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा के नियमों का पालन वर्षोत्सव सेवा के आठों उत्सवों की झाँकियों में भी किया जाता है। जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में श्रीकृष्ण के प्राकट्य, बधाई, पालना, अन्नप्राशन, कर्ण-छेदन, ऊखल-बंधन, बाल-लीला इत्यादि से संबंधित पद सभी राग-रागिनियों में गाए जाते हैं। साँझी में पूर्वी, गौरी, नट, बिलावल, सारंग, रामकली, कान्हड़ा, अडाना इत्यादि रागों में राधा का साँझी पूजन, राधा-कृष्ण मिलन आदि से संबंधित पदों को प्रस्तुत किया जाता है। रास में रासलीला से संबंधित पदों का गायन विजयदशमी से शरद पूर्णिमा तक भैरव, बिलावल, सुधराई, विभास, रामकली, आसावरी, टोडी, खट्, जैजैवंती, पूर्वी, मालव, सारंग, कल्याण, नट, मारू, गौडी, यमन, अडाना व कान्हड़ा इत्यादि रागों में होता है, तो वहीं हिंडोला में सभी रागों में पदों का प्रस्तुतीकरण होता है। फागुन पूर्णिमा में होली के अवसर पर मारू, मल्हार, रायसा, जंगला इत्यादि रागों में ब्रजमंडल के लोक-जीवन का अनुपम दृश्य उद्घाटित किया जाता है और बसंत पंचमी के अवसर पर मुख्यत: राग बसंत का आह्वान कर वसंत ऋतु वर्णन, राधा-कृष्ण-गोपिकाओं के मिलन के पद गाए जाते हैं। स्नान-यात्रा से रथयात्रा के मौके पर राग मल्हार में निबद्ध कुंज, पनघट, नाव, रथयात्रा आदि के पदों को गाकर ऋतुओं के साथ सामंजस्य बैठाया जाता है। रक्षाबंधन में भी राग मल्हार की ही प्रधानता रहती है।

**सूरदास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

सूरदास अपने पदों में राग-रागिनियों की ओर संकेत करते हुए कहते हैं, "छहों राग छतीसों रागिनि, इक इक नीके गावेंरी" (गुप्ता, 1959, पृ.126)। उन्होंने मुख्यत: "ललित, पंचम, खट, मालकोष, हिंडोल, मेध, मालव, सारंग, नट, सांवत, भूपाली, ईमन, कान्हरौ, अडाना, नायकी, केदारौ, सोरठ, गौड मल्हार, भैरव, विभास, बिलावल, देव गिरि, देशख, गौरी, श्री, जैत श्री, पूर्वी, गोडी, आसावरी, रामकली, गुन कली, सुधराई, जैजैवंती, सूहा, सिंधूरा, प्रभाती" (गुप्ता, 1959, पृ.127) आदि रागों में अपने पदों की रचना की है। सूर के निम्न विनय के पद राग 'खंबावती तिताला' में रचित है, जिसमें वे अपने आराध्य श्रीकृष्ण से अपने अवगुणों का ध्यान नहीं रखने की प्रार्थना करते हैं :

(राग खंबावती तिताला)
"हमारे प्रभु औगुन चित न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारी सोई पार करौ।।
इक लोहा पूजा मैं राखत इक घर बधिक परौ।
सो दुविधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरौ ।।
इक नदिया इक नार कहावत मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक बरन है गंगा नाम परौ।।
तन माया ज्यौं ब्रह्म कहावत सूर सु मिलि बिगरौ।
कै इनकौ निरधार कीजियै कै प्रन जात टरौ।।"(सत्यकाम, 2016, पृ.99)

सूर का ये प्रसिद्ध पद राग 'रामकली' में निबद्ध है, जिसमें बालक कृष्ण को मक्खन चुराते व पकड़े जाने पर अपनी माँ यशोदा को पट्टी पढ़ाने के दृश्यों को वाणी दी गई है :

(राग रामकली)
"मैया मैं नहि माखन खायौ।
ख्याल परै ये सखा सबै मिलि मेरै मुख लपटायौ।।
देखि तुही सींके पर भाजन ऊँचै धरि लटकायौ।
तुही निरखि नान्हे कर अपनै मैं कैसै करि पायौ।।
मुख दधि पोंछि बुद्धि इक कीन्ही दोना पीठि दुरायौ।
डारि साँटि मुसुकाइ जसोदा स्यामहिं कंठ लगायौ।।
बाल बिनोद मोद मन मोह्यौ भक्ति प्रताप दिखायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सूख सिब बिरंचि नहि पायौ।।"
(सत्यकाम, 2016, पृ.110)

'भ्रमरगीत' 'सूरसागर' का अंश है जो सूरदास की रचना है। यद्यपि भ्रमरगीत परंपरा का मूल स्रोत तो श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध के 46वें और 47वें अध्याय में है, पर मध्यकालीन जनभाषाओं की काव्यपरंपरा में इसका सूत्रपात सबसे पहले सूरदास ने ही किया था। भागवत से प्रेरणा लेने के बावजूद, सूरदास ने भ्रमरगीत में अपनी ओर से नयी-नयी उद्भावनाएँ की है, नये प्रसंग जोड़े हैं और मौलिक काव्य-प्रतिभा का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है। श्रीमद्भागवत में उद्धव को श्रीकृष्ण ने सिर्फ यही काम सौंपा था कि ब्रजवासियों को सांत्वना दे आओ, धैर्य धारण करने का संदेश दे आओ। उद्धव के ज्ञानमार्गी होने, उनके ज्ञानगर्व को दूर करने के अभिप्राय से उन्हें गोकुल भेजने का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। यह नयी मौलिक सूझ सूरदास की है। गोचर लौकिक जीवन की रूप विभूति, लीला, दैनंदिन जीवन के क्रिया-कलाप, पारिवारिक सामाजिक संबंधों के राग-विराग आदि की महत्ता स्थापित कर सूरदास सगुणभक्ति का औचित्य प्रतिपादित करते हैं। भ्रमरगीत से उद्धृत ये पद क्रमश: राग सारंग और राग केदार में हैं :

(राग सारंग)
"निर्गुन कौन देस को बासी?
मधुकर! हँसि समुझाय, सौंह दै बूझति साँच, न हाँसी ।।
को है जनक, जननि को कहियत, कौन नारि, को दासी?
कैसो बरन भेस है कैसो केहि रसै में अभिलासी।।
पावैगो पुनि कियो आपनो जो रे ! कहैगो गाँसी।
सुनत मौन है रह्यो ठग्यो सो सूर सबै मति नासी।।"
(सत्यकाम, 2016, पृ.116)

(राग केदार)
"नाहिन रह्यौ मन में ठौर।
नंदनंदन अछत कैसे आनिए उर और?
चलत, चितवत, दिवस जागत, सपन सोवत राति।
हृदय ते वह स्याम मूरति छन न इस उत जाति।।
कहत कथा अनेक ऊधो लोकलाभ दिखाय।
कहा करौ तन प्रेम पूरन घट न सिंधु समाय।।
स्याम गात सरोज आनन ललित अति मृदु हास।
सूर ऐसे रूप कारन मरत लोचन प्यास।।"
( सत्यकाम, 2016, पृ.116)

अपनी पुस्तक 'सूर सारावली' में सूरदास ने 26 प्रकार के वाद्यों का उल्लेख किया है—रुंज, मुरज, डफ, ताल, बांसुरी, झालर, बीन, रवाब, किन्नरी, अमत कंडली, यंत्र, स्वर मंडल, जल तरंग, पखावज, आवज, उपंग, शहनाई, सारंगी, कांस्य ताल, कठताल, शृंगी, मुखचंग, खंजरी, प्रणव, पटह, नफीर" (पाठक, पृ.207)।

**कृष्णदास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

कृष्णदास ने अपने पदों को अधिकांशत: निम्न रागों में गाया है—भैरव, रामकली, ललित, मालकौस, खट, रामग्री, देव गंधार, विभास, हिंडोल, वसंत, पंचम, बिलावल, सूहा, गूर्जरी, टोडी, घनाश्री, आसावरी, सारंग, सोरठ, मेघमल्हार, मल्हार, नट नारायण, मालव गौड, नट, गौरी, मालव, पूर्वी, श्री, मारु, काफी, ईमन, कल्याण, हमीर, केदारो, कान्हारो, सुघराई, नायकी, अडाना, जैजैवंती, रायसा, विहाग, विहागरो" (गुप्ता, 1959, पृ.191) इत्यादि। राग सारंग में इनका एक गाया हुआ डोल कुछ इस प्रकार है :

(राग सारंग)
"डोल झूलत हैं पिय प्यारी।
नंदनंदन वृषभानु दुलारी।।
कमल नैन पर केसरि डारि।
अबीर गुलाल करी अँधियारी।।
झूलत श्याम झूलावती नारी।
हँसि हँसि देत परस्पर गारी।।
आवति गीत दै दै कर तारि।
बाजत वेणु परम रूचिकारी।।
गीज लगी वन तब सुख सारी।
खेल नच्यो वृंदावन भारी।।
रसिक सिरोमनि कुंजबिहारी।
'कृष्णदास' प्रभु गिरिधरवारी।।" (नाथ, पृ.29)

साथ ही इन्होंने अपने पदों के माध्यम से विभिन्न वाद्यों के नाम भी बताये हैं यथा—बीन, रवाब, किन्नरी, अमृत कण्डली, यंत्र, बाँसुरी, स्वर राय गिड गिडी मंडली, पिनाक, महुवरि, जलतरंग, मदन भेरी, शहनाई, कठताल, ताल, झांझ, खंजरी, झालर, शृंगी, शंख, मुखचंग, डफ, डिमडिम, ढोल, मृदंग, निशान, नगाडा, दुंदुभि।" (पाठक, पृ.207)

**कुंभनदास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

कुम्भनदास द्वारा अपने पदों को मुख्यतः निम्न रागों में गाया गया है—श्री, धनासिरी, रामकली, सारंग, गौरी, नट, केदारो, देव गंधार, बिलावल, नट नारायण, कनारो, विभास, कल्याण, आसावरी, मल्हार, वसंस, मावलगोडी, पीलों, भैरव, ललित, मालकोस, विहागरो" आदि (गुप्ता, 1959, पृ.191)।

**परमानंद दास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

परमानंद दास ने अपने पदों को मुख्यतः ललित, मालकोंस, भैरव, रामकली, रामग्री, दैव गंधार, विभास, खट, वसंत, परज, पंचम, बिलावल, सूहा, गुर्जरी, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सामेरी, सारंग, सोरठ, मल्लार, देसाख, नट, गौरी, मालव, पूर्वी, श्री, जेत श्री, मालश्री, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, जैजैवंती, कानसे, नायकी, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो" आदि रागों में गाया है (गुप्ता, 1959, पृ.190)। एक बार उन्होंने रास की अद्भूत शोभा देखकर राग मालव में बद्ध एक कीर्तन गाया :

(राग मालव)
"वजबनिता मध्य रसिक राधिका
बनी शरद की राति हो ।।
निरतत ततथेई गिरधर नागर
गौरस्याम अंग कांति हो।।
द्वै द्वै गोपी बिच बिच माथो
बनौ अनुपम भांति हो।।
जय जय शब्द उच्चारत सुरमुनि
कुसुमन बरख अघाति हो।।
निरखी थक्यो शशि आयो
शीश पर क्यों हूं न होत प्रभात हो।।
परमानंद मिले यह अवसर
बनी है आज की बात हो।।" (नाथ, पृ.48)

**छीतस्वामी के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

छीतस्वामी के पदों में मुख्यतः निम्न राग द्रष्टव्य हैं –भैरव, रामकली, विभास, दैवगंधार, ललित, वसंत, बिलावल, गुर्जरी, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, सोरठ मल्हार, देसाख, नट, पूर्वी, श्री, जेत श्री, माली गौरा, माल श्री, जोनपुरी, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, नायकी, हमीर कल्याण, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो" इत्यादि (गुप्ता, 1959, पृ.195)।

**गोविंद स्वामी के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

गोविंद स्वामी ने मुख्यतः निम्न रागों में पद गान किया है—भैरव, रामकली, विभास, ललित, मालकोंस, रामग्री, दैव गंधार, बिलावल,

टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, वसन्त, सोरठ, मल्हार, नट, पूर्वी, श्री, जेत श्री, माली गौरा, गौरी मालव, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, अडानो, रायसो, बिहाग, बिहागरो" इत्यादि (गुप्ता, 1959, पृ.195)। इनका एक हिंडोर का पद राग मलार में कुछ इस प्रकार है :

(राम मलार)
"राधा मोहन झूलत सुरंग हिंडोरें।
धरनवरन की धूनरि पहरें बज वधू चहुँ ओरे।।
राग मलार अलापत सप्तसुरन तीन याम जोरें।
मदन मोहन जू की या छवि उपर गोविंद बलि तृन तोरे।।" (नाथ, पृ.37)

**नंददास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

नंददास के पदों में मुख्यतः निम्न राग मिलते हैं—ललित, मालकोंस, भैरव, रामकली, दैव गंधार, विभास, खट, वसंत, पंचम, बिलावल, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, मल्हार, मालव गौरी, खय सुघराई, देसाख, नट, गौरी, पूर्वी, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, जैजैवंती, कानरो, नायकी, अडानो, बिहाग, बिहागरो, स्याम कल्याण, बडहंस" इत्यादि (गुप्ता, 1959, पृ.193)।

**चतुर्भुजदास के पद एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा**

चतुर्भुजदास के गाए पदों में मुख्यतः निम्नलिखित राग मिलते हैं—भैरव, माली गौरी, माल श्री, ललित, रामकली, रामग्री, दैव गंधार, विभास, वसंत, पंचम, बिलावल, सूहा, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सामेरी, सारंग, सोरठ मल्हार, नट, नट नारायण, गौरी, मालव, पूर्वी, जेत श्री, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो" इत्यादि (गुप्ता, 1959, पृ.177)। इनका एक भोर पहर का पद, राग भैरव में गाया हुआ बहुत प्रसिद्ध है :

(राग - भैरव)
"श्री गोवर्द्धन गिरि सधन कंदरा,
न निवास कियोपियप्यारी।।
उठ चलजें भोर सुरत रंगभीने,
नंदनंदन वृषभान दुलारी।।
इति विगलित कवमाल मरगजी,
अटपटे भूषन, रगमगी सारी।।
उतही अधर मसि पाग रही धसि
दुहुँ दिस छबि बाढो अति भारी।।
घूमत आवत रतिरन जीते
करनी संग गज गिरिवरधारी।।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छवि
तन मन धन कीजो बलिहारी।।" (नाथ, पृ.4)

इन्होंने 'खट ऋतु की वार्ता' में 36 तरह के वाद्यों के नाम बताए हैं—बीनाचीन, मुरली, अमृत कुंडली, जलतरंग, मदनभेरी, धौसा, दुंदुभि, निशान, नगाडा, शंख, घंटा, मुखचंग, शृंगी, खंजरी, ताल, कठताल, मँजीरा, मुहवारी, थाली, झालर, ढोल, डफ, डिमडिम, झाँझ, मृदग, गिड गिड, पिनाक, रखाब, यंत्र, स्वर मंडल, शहनाई, सारंगी, दुतारी, करताल, तुरही, किन्नरी" (पाठक, पृ.207)।

**ध्रुपद-धमार गायन शैली**

अष्टछापीय कवि साहित्य के पुरोधा होने के साथ ही उत्कृष्ट संगीतज्ञ भी थे। उनकी गायन शैली मुख्यत: भारतीय शास्त्रीय संगीत के ध्रुपद-धमार विधा पर आधारित थी। ध्रुपद गायन शैली ब्रज के सभी भक्ति संप्रदायों में और धमार शैली विशेष तौर पर वल्लभ संप्रदाय में प्रचलित थी। साथ ही, उस समय के मुस्लिम शासक एवं हिंदू राजाओं के दरबार में भी ध्रुपद गायन का चलन था, किंतु दरबारी गायकों ने उसे कुछ विकृत कर दिया, जबकि अष्टछाप कवियों ने इस गायन शैली को अक्षुण्ण बनाए रखा एवं शुद्ध रूप में गायन किया।

ध्रुपद 'ध्रुव' एवं 'पद' शब्दों के योग से निर्मित है, जिसका अर्थ क्रमश: अचल/स्थिर/अटल/निश्चित एवं साहित्यिक पक्ष अथवा बोल होता है। नाट्यशास्त्र में कहा गया है कि जिस गीत में वर्ण, अलंकार, गान-क्रिया, यति, वाणी, लय आदि का जहाँ ध्रुव रूप में योग हो, वही ध्रुपद है। पंडित भावभट्ट के अनुसार, "जिसमें गीर्वाण और मध्य प्रदेश की भाषा का साहित्य हो, दो चार वाक्य हों, नर नारी की कथा हो, शृंगार रस भाव हो, पादान्तानुप्रासा तथा पादांत यमक युक्त चार पाद और उद्याह, ध्रुव सहित उत्तम आभोग भी हो, उसे ध्रुपद कहते हैं।" (नायक, पृ.38)। अष्टछापीय एवं अन्य पुष्टिमार्गीय कवियों के पदों पर दृष्टिपात करने पर यह ज्ञात होता है कि उनके हजारों पदों पर इन नियमों का पालन किया गया। इनके पदों की भाषा में गीर्वाण (अर्थात् संस्कृत) तथा ब्रजभाषा का सम्मिश्रण है एवं राधा-कृष्ण-गोपियों की कथा है। साथ ही, शृंगार भाव, चार पाद, अनुप्रास व उत्तम आभोग अंतर्निहित है। इसके उद्गम एवं विकास को लेकर विद्वानों के मतों में भिन्नता है। कुछ विद्वान् मानते हैं कि ध्रुपद की रचना तेरहवीं सदी सी.ई में पंडित शारंगदेव के समय में हुई और कुछ विद्वान् मानते हैं कि इसकी रचना पंद्रहवीं-सोलहवीं सदी सी.ई के ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर ने की। किंतु, अधिकांश विद्वानों के और संगीत के प्रकांड ज्ञाता पंडित भातखंडे जी के मत को देखते हुए राजा मानसिंह तोमर के ऊपर सहमति बन चुकी है। उन्होंने न केवल इस विधा को प्रोत्साहन दिया, अपितु अपने ग्रंथ 'मानकुतूहल' में उन्होंने इसकी विशेष रूप से चर्चा भी की है। इस ग्रंथ में उनके द्वारा एक भव्य संगीत सम्मेलन कराए जाने का उल्लेख भी मिलता है।

अबुल फजल कृत् प्रसिद्ध पुस्तक 'आइन-ए-अकबरी' में जिक्र है कि राजा मानसिंह द्वारा आयोजित किए गए सम्मेलन में राजदरबार के कलाकारों द्वारा ऐसे गीतों का संकलन किया गया, जो भारतीय संस्कृति की गंगा-जमुनी तहजीब के परिचायक थे। उनके राजदरबार के महान संगीताचार्यों बैजू बावरा, कर्ण और महमूद आदि के सहयोग से संगीत की ध्रुपद गायकी का आविष्कार और वृहद् स्तर पर प्रचार हुआ था। ध्रुपद गायक को 'कलावंत' कहा जाता था। एक तरफ भारतीय संगीत की इस शैली का विकास राज्याश्रय में हो रहा था, तो दूसरी ओर वल्लभाचार्य के निर्देशन में सूर, कुंभन, परमानंद आदि अष्टछाप कवियों द्वारा मंदिरों में। ध्रुपद गायन में भक्ति रस, वीर रस, शांत रस और शृंगार रस की प्रधानता होती है। इसका गायन चौताल, सूलताल, मत्ताल, तीव्राताल, ब्रह्मताल, लक्ष्मीताल आदि में पखावज के साथ होता है। ख्याल गायकी की तरह इसमें तान पलटे नहीं गाए जाते हैं। वहीं धमार गायन सदैव चौदह मात्रा में युक्त धमार ताल में होता है। संगीतज्ञों के अनुसार, ध्रुपद गाने से कंठ और

फेफड़ों पर अधिक जोर पड़ता है इसलिए इसे मर्दाना गायकी भी कहते हैं। ध्रुपद का काव्य उच्च प्रकार का होता है। इसके गायन से पूर्व ताल रहित नोम् तोम् में आलाप करते हैं। तानों को न गाकर लयकारियों का सुंदर रूप प्रस्तुत किया जाता है। दुगुन, तिगुन, चौगुन, अठगुन, आड़, सम द्वारा इसकी शोभा बढ़ायी जाती है। ध्रुपद के चार भाग माने जाते हैं—स्थायी, अंतरा, संचारी व आभोग। परंतु, वर्तमान में ध्रुपद में स्थायी और अंतरा केवल दो भाग ही पाए जाते हैं।

ध्रुपद गायन का प्रचार मध्यकाल में बहुत था। वर्तमान में इसे ख्याल गायकी ने प्रतिस्थापित कर दिया है, किंतु फिर भी यह अब भी प्रचलन में है। आधुनिक ध्रुपद गायकों में रहीम फहीमुद्दीन डागर, वसीफुद्दीन डागर, बहउद्दीन डागर, फैयाज वसीफुद्दीन डागर, पंडित विदुर मल्लिक, पंडित प्रेम कुमार मल्लिक, पंडित अभय नारायण मल्लिक, पंडित रामसेवक मल्लिक, पंडित रामकुमार मल्लिक, गुंदेचा बंधु इत्यादि नाम अग्रगण्य हैं। वहीं प्राचीन ध्रुपद गायकों में बहराम खाँ, नसीरुद्दीन खाँ, जदुभट्ट, गोपेश्रर बैनर्जी, रहीमुद्दीन खाँ डागर, नसीर मोइनुद्दीन खाँ डागर, अमीनुद्दीन खाँ डागर, जहीरुद्दीन खाँ डागर, फैयाजुद्दीन खाँ डागर, पंडित रामचतुर मल्लिक, पंडित सियाराम तिवारी इत्यादि नाम प्रमुख हैं।

### हवेली संगीत

पुष्टिमार्ग के उद्भव के समानांतर ही भारतीय संगीत परंपरा में एक नई शैली का प्रार्दुभाव हुआ, जिसे हवेली संगीत के नाम से जाना जाता है। अपने धार्मिक उन्माद एवं कट्टरता के फलस्वरूप जब मुगल बादशाह औरंगजेब का अत्याचार अपने चरम स्तर पर पहुँच गया और उसने हिंदू एवं अन्य मंदिरों को निशाना बनाना प्रारंभ किया एवं मूर्तिभंजक बन बैठा, तब श्री विट्ठलनाथ जी अपने अवलंब श्रीनाथजी के बाल स्वरूप की मूर्ति को लेकर राजस्थान के नाथद्वारा गए एवं उन्हें हवेली में स्थापित किया। मंदिरों और मूर्तियों को बचाने के लिए मूर्तियों को मंदिरों से हटाकर हवेलियों में सुरक्षित रखा जाने लगा तथा वहाँ पर उसी विधान से श्रीनाथजी की सेवा की जाने लगी जैसे मंदिरों में की जाती थी। इस प्रकार से श्री विट्ठलनाथ जी के प्रयत्न से प्रत्येक वैष्णव एवं कृष्णभक्त के घर-घर में श्रीकृष्ण अपने बालरूप में विराजने लगे। एक प्रकार से हर घर मंदिर हो गया। इसकी शुरुआत प्रथमत: बड़े-बड़े भवनों से हुई, जो कि हवेलीनुमा होने के कारण हवेली कहे जाते थे, तत्पश्चात् यह धीरे-धीरे सामान्य घरों तक भी विस्तारित हो गया। इन घरों एवं हवेलियों में श्रीनाथजी के कीर्तन-भजन भारतीय शास्त्रीय सांगीतिक परंपरा के तहत से किए जाने लगे। इन्हीं को 'हवेली संगीत' का नाम दिया गया। हवेली संगीत में जो बंदिश या पद गाए जाते थे, वे अष्टछाप कवियों द्वारा रचित होते थे। इस वजह से इसे अष्टछाप संगीत भी कह दिया जाता है। हवेली संगीत के गायकों में स्वामी गोकुलोत्सव जी महाराज एवं संगीत मार्तंड पंडित जसराज का नाम अग्रगण्य है।

### निष्कर्ष

इस प्रकार पुष्टिमार्ग के उद्भव से लेकर इसके पूरे विकास क्रम तक न केवल भारतीय शास्त्रीय संगीत अपरिहार्य रहा है, बल्कि अष्टछाप कवियों एवं अन्य पुष्टिमार्गीय कृष्णभक्तों की भूमिका भी भारतीय शास्त्रीय संगीत को एक नया आयाम प्रदान करने में अविस्मरणीय रही है। दोनों गाड़ी के दो पहियों की तरह साथ-साथ आगे बढ़ते रहे हैं और एक-दूसरे को विकसित करने में सहयोग करते रहे हैं। पुष्टिमार्गीय संप्रदाय में रचे हजारों रागबद्ध पद हिंदी साहित्य के साथ-साथ संगीत के क्षेत्र में अमूल्य धरोहर हैं। वर्तमान समय में, ध्रुपद-धमार एवं हवेली संगीत जैसी संगीत शैलियों को सहेजने की आवश्यकता है, क्योंकि इनमें भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रचुर भंडार के साथ-साथ परंपरा, अध्यात्म एवं संस्कृति के बीज छिपे हुए हैं।

### संदर्भ


अग्रवाल, ए. (2018). वल्लभ संप्रदाय में श्रीकृष्ण की वात्सल्यपूर्ण अष्टयाम सेवा. https://aaradhika.com/krishna/vallabh-sampradaya-krishna-seva/?amp से दिनांक 26.08.2024 को पुन:प्राप्त.

गुप्ता, यू. (1959). हिंदी के कृष्ण भक्तिकालीन साहित्य में संगीत. लखनऊ : लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन.

नाथद्वारा टेंपल. (2024). पुष्टिमार्ग. https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&opi=89978449&url=https://www.nathdwaratemple.org/pushtimarg/pushtimarg&ved=2ahUKEwiNIPPiJKIAxXkTmwGHYG8M0cQFnoECDgQAQ&usg=AOvVaw2Zh3jDEASTNBLl964zYFUu से दिनांक 26.08.2024 को पुन:प्राप्त.

नाथद्वारा टेंपल. (2024). पुष्टिमार्ग : दर्शन सेवा भावना. https://www.google.com/rl?sa=t&source=web&rct=j&opi=89978449&url=https://www.nathdwaratemple.org/pushtimarg/pushtimarg-darshan-sewabhavana&ved=2ahUKEwiNIPPiJKIAxXkTmwGHYG8M0cQFnoECDcQAQ&usg=AOvVaw2Kk37Ko_M-EWYIM2qEpezk से दिनांक 26.08.2024 को पुन:प्राप्त.

नाथ, श्री गोकुलनाथ जी. (एन.डी.). खट ऋतु की वार्ता. पृ.सं-29. https://www.google.com/rl?sa=t&source=web&rct=j&opi=89978449&url=https://archive.org/download/Pushtimarg/KhatRituKiVaartavaartaSahitya.pdf&ved=2ahUKEwjy2fTnir2FAxUboGMGHdw6D14QFnoECCEQAQ&usg=AOvVaw3bTqhX3wmmx0hZcEtw9dQ9 से दिनांक 26.08.2024 को पुन:प्राप्त.

नायक, सी.सी. (एन.डी). अष्टछापीय भक्ति संगीत : उद्धव और विकास -(II). पृ.सं-38.

पाठक, वी. (एन.डी.). अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्य यंत्र. जयपुर : हीरक जयंती ग्रंथ.

सत्यकाम. (सं). (2016). हिंदी काव्य विविधा (एम.एच.डी-1). नई दिल्ली : एम.पी.डी डी इग्नू.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 8-15, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# मराठी पत्रकारिता के आधार स्तंभ : कार्य और योगदान का अध्ययन

**डॉ. विनोद निताळे**[1]

**सारांश**

मराठी पत्रकारिता को नया स्वरूप देने और आगे बढ़ाने में कई महान् विभूतियों का योगदान रहा है। उन विभूतियों यानी पत्रकारों और संपादकों में बाळशास्त्री जांभेकर, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, तानुबाई बिर्जे, स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर और ना. भि. परुळेकर का नाम अग्रणी है। इनके कार्य और योगदान के कारण ही उन्हें मराठी पत्रकारिता का आधार स्तंभ माना जाता है। इन महान् संपादकों ने अपनी लेखनी के माध्यम से मराठी पत्रकारिता को नई दिशा देकर सम्मान दिलाया। इनकी पत्रकारिता में स्वतंत्रता संग्राम, सामाजिक बदलाव और आधुनिक भारत का विचार तथा उसका प्रभाव स्पष्ट होता है। इनकी पत्रकारिता से यह मूलमंत्र मिलता है कि देश, समाज और जनमानस के लिए कैसे कार्य करें। बाळशास्त्री जांभेकर ने मराठी का प्रथम समाचार पत्र शुरू कर मराठी पत्रकारिता का शुभारंभ किया। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने पत्रकारिता के माध्यम से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अलौकिक योगदान दिया। उन्होंने पत्रकारिता में राजनैतिक पत्रकारिता का नया अध्याय शुरू किया। डॉ. बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर ने समाचार पत्र के माध्यम से दलित समाज को जागरूक कर उनमें नव चेतना का संचार किया। उन्होंने सामाजिक पत्रकारिता के नए सिद्धांत भारत में स्थापित किए। तानुबाई बिर्जे भारत की पहली महिला संपादक बनीं। तानुबाई ने एक संपादक के रूप में समाज में व्याप्त असमानता पर प्रहार कर उसे नष्ट किया। उन्होंने बहुजन शिक्षा का विचार प्रस्तुत कर उसे आगे बढ़ाया। स्वातंत्र्यवीर सावरकर के जीवन का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पहलू उनकी पत्रकारिता थी। उन्होंने पत्रकारिता के माध्यम से क्रांतिकारी विचारों को जनमानस तक पहुँचाया। परिस्थितियों के कारण अपना स्वयं का समाचार पत्र प्रकाशित नहीं कर सके, लेकिन समय-समय पर कई समाचार पत्रों में उन्होंने अपने आलोचनात्मक और दूरदर्शी विचार प्रस्तुत किए। ना. भि.परुळेकर ने मराठी का पहला आधुनिक दैनिक समाचार पत्र शुरू किया। उन्होंने आम लोगों को जटिल विषय आसान भाषा में समझाने पर जोर दिया। उन्होंने समाचार पत्र में आसान शब्दों का चलन शुरू किया तथा जनमानस के रोजमर्रा के विषयों पर सामग्री प्रकाशित की। सब्जी मंडी के भाव, हॉकरों की समस्या, मौसम की जानकारी 'सकाळ' में छापकर परुळेकर ने आधुनिक पत्रकारिता का प्रारंभ किया। नयापन, नई दिशा और जनमानस का अंतर्मन ध्यान में रखना उनकी मराठी पत्रकारिता का मूलमंत्र है।

**संकेत शब्द :** मराठी पत्रकारिता, बाळशास्त्री जांभेकर, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, तानुबाई बिर्जे, स्वातंत्र्यवीर सावरकर, ना. भि.परुळेकर

## प्रस्तावना

मराठी पत्रकारिता भारतीय समाज की समृद्धि और प्रगति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। यह न केवल समाज की जानकारी और जागरूकता को बढ़ाने में सहायक है, बल्कि लोगों को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक मुद्दों पर सोचने और विचार करने के लिए प्रेरित भी करती है। मराठी पत्रकारिता को आगे बढ़ाने और विकसित करने में कई लोगों ने अहम भूमिका निभाई है। आज मराठी पत्रकारिता का जो बढ़ता प्रभाव दिखाई देता है, उसके पीछे कई पत्रकारों और संपादकों का योगदान रहा है। मात्र शुरुआती दौर में कुछ पत्रकार और संपादक हुए हैं, जिनके कार्य और योगदान का अध्ययन किए बिना मराठी पत्रकारिता के इतिहास को नहीं समझा जा सकता है। मराठी पत्रकारिता का इतिहास अत्यंत वृहद् एवं समृद्ध है। आज मराठी पत्रकारिता विभिन्न रूपों में जन मानस की सेवा में संलग्न है। समाचार पत्र—यथा पत्रिका, टीवी चैनल, रेडियो, वेबसाइट, ब्लॉग, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म तथा अन्य डिजिटल माध्यमों पर मराठी पत्रकारिता ने नई ऊँचाई प्राप्त की है।

मराठी पत्रकारिता को नया स्वरूप देने और उसे आगे बढ़ाने में कई महान् विभूतियों का योगदान रहा है। इस शृंखला में कुछ ऐसे व्यक्ति हैं, जिनको जाने बिना मराठी पत्रकारिता का अध्ययन अधूरा है। उन महान् पत्रकारों और संपादकों में बाळशास्त्री जांभेकर, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, तानुबाई बिर्जे, स्वातंत्र्यवीर सावरकर और ना. भि.परुळेकर का नाम अग्रणी है। इन लोगों के कार्य और योगदान के कारण ही उन्हें मराठी पत्रकारिता का आधार स्तंभ माना जाता है। इन महान् लोगों ने अपनी लेखनी के माध्यम से मराठी पत्रकारिता को नई दिशा दी। इनकी पत्रकारिता में स्वतंत्रता संग्राम, सामाजिक बदलाव और आधुनिक भारत का विचार तथा प्रभाव स्पष्ट होता है। पत्रकारिता के माध्यम से देश, समाज और सामान्य व्यक्ति के लिए कैसे कार्य करें, इसका मूलमंत्र इनकी पत्रकारिता से मिलता है। मराठी पत्रकारिता ने कई संघर्ष देखे हैं, कई बदलाव लाए हैं और उन्नत समाज के निर्माण के लिए कार्य किया है। इन संघर्षों और बदलावों को निकटता से समझने के लिए मराठी पत्रकारिता के मूल आधार को जानना जरूरी है। प्रस्तुत शोध पत्र में मराठी पत्रकारिता के कुछ संपादकों और पत्रकारों के कार्य और योगदान का अध्ययन किया गया है।

## मराठी पत्रकारिता के पितामह : आचार्य बाळशास्त्री जांभेकर

आचार्य बाळशास्त्री जांभेकर मराठी पत्रकारिता के पितामह माने जाते हैं। जांभेकर ने 6 जनवरी, 1832 को मराठी भाषा का प्रथम समाचार पत्र 'दर्पण' मुंबई से प्रकाशित किया। प्रथम समाचार-पत्र के प्रकाशन को 192 वर्ष हो रहे हैं। महाराष्ट्र में समाचार पत्र के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन का नया प्रयोग जांभेकर ने किया। अपनी 14 वर्ष की पत्रकारिता में बाळशास्त्री ने 'दर्पण' के माध्यम से देश की जनता को उन्नत एवं विकसित

[1]सहायक आचार्य, भारतीय जन संचार संस्थान, पश्चिम क्षेत्रीय परिसर, अमरावती, महाराष्ट्र. ईमेल : nitalevinod@gmail.com

करने का संदेश दिया। उनके समाचार पत्र में देश-विदेश की घटनाओं के अतिरिक्त लोगों के बौद्धिक जागरण के लिए भी पर्याप्त सामग्री रहती थी। जांभेकर जी को समाज में व्याप्त अज्ञानता, गरीबी, रुढियाँ और कुप्रथाएँ व्यथित करती थीं। गुलामी से संघर्षरत देश में ये समस्याएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थीं। उनका विचार था कि इन समस्याओं से उबरने के लिए लोगों को प्रबुद्ध करना होगा, जिसका प्रमुख माध्यम है समाचार पत्र। जांभेकर ने समाचार पत्र के महत्त्व को समझते हुए अपने सहयोगी गोविंद विठ्ठल कुंटे उर्फ भाऊ महाजन की सहायता से मराठी भाषा का पहला समाचार पत्र 'दर्पण' प्रकाशित किया।

बाळशास्त्री जांभेकर का जन्म 20 फरवरी, 1812 को कोंकण के सिंधुदुर्ग जनपद के पोंभुर्ले ग्राम में हुआ। जांभेकर को 33 वर्ष की अल्पायु में ही 17 मई, 1840 को नियति के क्रूर हाथों ने छीन लिया। युवा बाळशास्त्री ने 21वें वर्ष में ही 'दर्पण' समाचार पत्र को प्रकाशित कर अपनी अलौकिक योग्यता का प्रमाण दिया। उन्होंने 'दर्पण' के साथ 'दिग्दर्शन' नामक मैगजीन भी प्रकाशित की। 'दर्पण' मराठी एवं अँग्रेजी भाषा में एक साथ प्रकाशित होता था। दो कॉलम में प्रकाशित 'दर्पण' में एक कॉलम में मराठी और उसी पृष्ठ पर दूसरे कॉलम में अँग्रेजी भाषा में उसी समाचार का अनुवाद छपता था। समाचार पत्र के प्रकाशन का अनुभव होने के आठ वर्ष पश्चात् उन्होंने 1840 में 'दिग्दर्शन' नामक मराठी भाषा की पहली मैगजीन शुरू की। 'दिग्दर्शन' मैगजीन में वैचारिक एवं ज्ञानवर्धक लेख प्रकाशित होते थे। 'दिग्दर्शन' में जांभेकर के कुल 212 निबंध प्रकाशित हुए, जिनमें ऐतिहासिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक और सूचनावर्धक लेख सम्मिलित हैं। 'दिग्दर्शन' के संदर्भ में जांभेकर ने पहले अंक में स्पष्ट किया है कि "दिग्दर्शन मराठी भाषा में सभी विषयों का एक संग्रह है, जिसकी एक लघु पुस्तिका हर महीने छपेगी" (जांभेकर, 1950)। लोगों को रसायनशास्त्र, पदार्थविज्ञान, भूगोल आदि वैज्ञानिक विषयों का ज्ञान मराठी भाषा में संप्रेषित करने का प्रथम माध्यम 'दिग्दर्शन' था। इस कारण जांभेकर को वैज्ञानिक पत्रकारिता का भी अग्रदूत माना जाता है।

जांभेकर ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से समाज में नवचेतना का प्रसार किया। 'दर्पण' समाचार पत्र शुरू करने से पूर्व इसके प्रकाशन के संदर्भ में जांभेकर 12 नवंबर, 1831 को ही अपनी भूमिका स्पष्ट करते हैं। वे कहते हैं, "...असे एक वर्तमानपत्र पाहिजे, की ज्यात मुख्यत्वे करून एतद्देशीय लोकांचा स्वार्थ होईल। त्यापासून ज्यांची इच्छा व मनोगते कळतील....." (लेले, 2009)। अर्थात् हमें एक ऐसा समाचार पत्र चाहिए, जो मुख्य रूप से देशवासियों के हित का हो, जिसके माध्यम से हम लोगों की इच्छाओं एवं भावनाओं को समझ सकें। 'दर्पण' शुरू करने से दो महीने पूर्व ही जांभेकर समाचार पत्र की भूमिका को सार्वजनिक करते हैं, साथ ही जनमानस में समाचार पत्र की उपयुक्तता को भी रेखांकित करते हैं। जांभेकर समाचार पत्र की स्वतंत्रता की बात उठाते हैं और लोगों से अच्छे विचार, भावनाएँ और राष्ट्रप्रेम की अपेक्षा करते हैं। 24 अगस्त, 1832 के 'दर्पण' अंक में जांभेकर पत्रकारिता के कार्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं, "...वाईट वर्तणूक करणार्यांवर धाक, चांगल्या कामाची प्रसिद्धी आणि कोणाविषयी भय व प्रीती न बाळगता निष्पक्षपणे सार्वजनिक व लोकहितासाठी पत्रकारिता करण्याचे कर्तव्य ते सांगतात" (जांभेकर,1832 ) अर्थात् गलत बरताव करने वालों पर नियंत्रण, अच्छे कार्य की प्रसिद्धि और किसी के प्रति प्रीति या प्रेम न रखते हुए निष्पक्ष रूप से सार्वजनिक एवं लोकहित में कार्य का निर्वहन ही पत्रकारिता का कर्तव्य है। वे पत्रकारिता के माध्यम से सशक्त समाज की नींव रखना चाहते हैं। इसी रूप में वे अविरत कार्य करते हुए नजर आते हैं। पत्रकारिता समर्पण है, समाज सेवा है, राष्ट्रहित है। इन्हीं मूल्यों को जांभेकर आज से 192 वर्ष पूर्व रेखांकित करते हैं, जो आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं।

"जांभेकर को देश-विदेशी मिलाकर कुल दस भाषाओं का ज्ञान था, जिनमें मराठी, संस्कृत, बंगाली, गुजराती, कन्नड़, तेलुगू, फारसी, फ्रेंच, लैटिन व ग्रीक भाषा सम्मलित हैं। नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र, साहित्य, इतिहास, भूगोल, गणितशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, रसायनशास्त्र, शिक्षणशास्त्र, पदार्थविज्ञान, मनोविज्ञान, अंतरराष्ट्रीय अध्ययन ऐसे कई विषयों में जांभेकर को महारथ हासिल थी" (गव्हाणे, 2008)। इसी कारण उन्हें 'पंडित' की उपाधि से सम्मानित किया गया। जांभेकर गणित विषय के प्रोफेसर भी थे। उन्होंने 1834 में मुंबई स्थित एल्फिंस्टन कॉलेज में अध्यापक के रूप में भी कार्य किया। जांभेकर बहुआयामी, बहुभाषिक और निष्ठावान थे।

### ओजस्वी संपादक : लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

बाल गंगाधर तिलक तिलक की पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य भारतीय जनता को जाग्रत कर उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में सहभागी बनाना था। उनकी राजनीतिक लेखनी ने भारतीय समाज को जाग्रत कर ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ एक मजबूत आंदोलन की आवश्यकता की बात की। तिलक ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से ब्रिटिश शासन की नीतियों और उसके खिलाफ उठाए जाने वाले प्रश्नों पर जनता को जागरूक किया। तिलक ने अँग्रेजी शासन के विरुद्ध जनता में आजादी की चाह जगाने के लिए दो समाचार पत्र चलाए। अँग्रेजी भाषा में 'मराठा' और मराठी में 'केसरी' नामक दैनिक समाचार पत्र। इन पत्रों को छापने के लिए एक प्रेस खरीदा गया, जिसका नाम 'आर्य भूषण प्रेस' था। वर्ष 1881 में 'केसरी' (4 जनवरी, 1881) और 'मराठा' (2 जनवरी, 1881) का पहला अंक प्रकाशित हुआ। इन अखबारों में तिलक के लेख ब्रिटिश शासन की क्रूर नीतियों और अत्याचारों का खुलकर विरोध करते थे। इन पत्रों को जनता ने खूब सराहा। सत्ता के विरुद्ध पत्रकारिता करने की वजह से तिलक को कई बार जेल भी जाना पड़ा।

बाल गंगाधर तिलक समाज सुधारक, स्वतंत्रता सेनानी, गणितज्ञ, खगोलशास्त्री, पत्रकार और भारतीय इतिहास के विद्वान् थे। वे 'लोकमान्य' नाम से मशहूर थे। तिलक का जन्म 23 जुलाई, 1856 को महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले के चिखली गाँव में हुआ था। गणित उनका प्रिय विषय था। तिलक का मानना था कि अच्छी शिक्षा व्यवस्था ही अच्छे नागरिकों को जन्म दे सकती है। लोकमान्य तिलक ने पत्रकारों के प्रथम कर्तव्य के बारे में कहा कि, पत्रकारों को लोक शिक्षक की भूमिका निभानी चाहिए। एक पत्रकार का पहला कर्तव्य लोगों को राजनीतिक रूप से शिक्षित करना, जागरूक करना और लोगों को लोकतंत्र के प्रति जागरूक पाठक बनाना है। उनका मानना था कि पत्रकार 'राजनीतिक शिक्षक' होते हैं। 13 मार्च, 1917 को प्रकाशित 'केसरी' के अग्रलेख में वे कहते हैं, "गुळगुळीत कागदावर रंगीबेरंगी बुळबुळीत मजकूर छापून लोकांचे रंजन करणे हे काही वर्तमानकर्त्यांचे मुख्य कर्तव्य नाही. देशाची राजकीय स्थिती काय, राजकीय लोक कोणत्या अवस्थेत आहेत, त्यांचे हक्क कोणते, लोकांनी राजकीयदृष्ट्या बाल्यावस्थेतून निघून प्रौढावस्थेत कसे यावे, हे सांगणारे

लोकांचे राजकीय शिक्षक म्हणून स्वतंत्र देशाचे वजनदार वर्तमानपत्रे प्रयत्न करीत असतात" (टिळक 1917)। अर्थात् चिकने कागज पर रंगीन चुलबुली सामग्री छापकर लोगों का मनोरंजन करना अखबारवालों का मुख्य कर्तव्य नहीं है। एक स्वतंत्र देश के वजनदार अखबार लोगों के राजनीतिक शिक्षक के रूप में कार्य करते हैं, उन्हें बताते हैं कि देश की राजनीतिक स्थिति क्या है, उनके अधिकार क्या हैं, लोगों को राजनीतिक शैशव से वयस्कता तक कैसे जाना चाहिए। यह बताने वाले राजनीतिक शिक्षक की भूमिका वजनदार समाचार पत्र निभाते है"। साफ है कि उनका मानना था कि लोगों की राजनीतिक शिक्षा की ज़िम्मेदारी अखबारों की है। उनका विचार था कि लोगों में राजनीतिक जागरूकता पैदा करना, लोगों को उनके लोकतांत्रिक अधिकारों और राजनीतिक अधिकारों के बारे में सूचित करना और उन्हें बुद्धिमान बनाना और इस प्रकार प्रबुद्ध और प्रगतिशील नागरिक बनाना समाचार पत्र के कर्तव्यों में से एक है, लेकिन यह मुख्य कर्तव्य नहीं है।

बाल गंगाधर तिलक भारतीय पत्रकारिता के आदर्श थे। उनकी पत्रकारिता भारत की आजादी एवं नए भारत के निर्माण की पत्रकारिता थी। वे राष्ट्रीयता, निष्पक्षता एवं निर्भयता की पत्रकारिता के जनक थे। सन् 1881 में गोपाल गणेश आगरकर और विष्णु शास्त्री चिपलूणकर के साथ मिलकर तिलक ने 'केसरी' और 'मराठा दर्पण' नामक साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू किया था। केसरी में तिलक ने लिखा, "ब्रिटिश शासन की चापलूसी करने की जो प्रवृत्ति आज दिखाई देती है, वह राष्ट्रहित में नहीं है" (तिलक, 1881)। उस समय जो छोटे-मोटे अखबार निकल रहे थे, उनमें ब्रिटिश सरकार की चाटुकारिता साफ दिखाई देती थी। उसे देखकर तिलकजी व्यथित हुए। 'केसरी' के तेवर को समझने के लिए तिलक जी की एक पंक्ति अपने आप में पर्याप्त है, जिसमें वे कहते हैं 'केसरी के लेख इसके नाम को सार्थक करेंगे'(लेले 2009)। उनका आशय यही था कि जिस तरह से शेर गरजता है, उसी तरह से केसरी की पत्रकारिता भी गरजेगी। यही हुआ भी। बहुत जल्दी तिलक जी ब्रिटिश शासकों की आँखों की किरकिरी बन गए। तिलक के विचारों से अँग्रेजी हुकूमत के खिलाफ समाज में वैचारिक वातावरण भी बनने लगा। आजादी के लिए संघर्ष करने वालों को एक बल मिला, दृष्टि मिली एवं दिशा मिली।

तिलक की पत्रकारिता के चार आयाम थे—स्वदेशी अपनाओ, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करना और स्वराज आंदोलन को निरंतर गति प्रदान करना। तिलक सिर्फ आजादी के पक्षधर नहीं थे, वह इस देश में स्वदेशी आंदोलन को भी व्यापक बनाना चाहते थे। वे चाहते थे, देश के कुटीर उत्पादों को महत्त्व मिले, लोग स्वदेशी उत्पादों का ही अधिकतम उपयोग करें। "मैकाले ने अपनी शिक्षा नीति के बल पर इस देश को भ्रष्ट करने की नीति अपनाई, जिसे देखकर तिलक विचलित हुए और राष्ट्रीय शिक्षा की वकालत करने लगे" (गव्हाणे, 2008)। उन्होंने अपने अखबारों के माध्यम से विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आह्वान किया और जल्दी-से-जल्दी स्वराज मिले, इसके लिए अँग्रेजों के खिलाफ लगातार लिखने का सिलसिला भी शुरू कर दिया।

**निर्भीक संपादक: डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर**

आधुनिक भारत के निर्माण में समाचार पत्र की तत्कालीन भूमिका से डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर भलीभाँति परिचित थे। दलित-शोषित वर्ग में जागरूकता लाने के लिए समाचार पत्र से बढ़कर दूसरा कोई प्रभावी साधन नहीं है। डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर इस बात से भलीभाँति परिचित थे। इसलिए उन्होंने पाँच मराठी समाचार पत्रों का संपादन किया। डॉ. अंबेडकर ने 65 वर्ष, 7 महीने, 22 दिन के अपने जीवन में करीब 36 वर्ष तक पत्रकारिता की। हाँ, बीच-बीच में कुछ अंतराल आते रहे। उनकी पत्रकारिता का काल 1920 से 1956 तक है। डॉ. अंबेडकर बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। वे गंभीर चिंतक, लेखक, साहित्यकार, दार्शनिक, अछूतोद्धारक, प्रखर राजनीतिज्ञ व समाजसुधारक के साथ-साथ एक उच्चकोटि के पत्रकार भी रहे। डॉ. अंबेडकर ने अपने समाज सुधार के प्रयासों, अछूतोद्धारक कार्यों, नारी जाति के उद्धार में पत्रकारिता के अच्छे व सार्थक प्रयोग किए। "समाज जागरण हेतु उन्होंने पत्रकारिता का सहारा लिया। संसाधनों के अभाव के बावजूद उन्होंने पाँच पत्रों का प्रकाशन किया। भले ही उन समाचार पत्रों का जीवनकाल छोटा रहा हो, परंतु उनका असर बहुत गहरा हुआ।" (कुमार, 2023)। डॉ. अंबेडकर ने 'मूकनायक' से पत्रकारिता आरंभ की। इसी तरह दलितों को जागरूक करने हेतु पाक्षिक पत्र 'बहिष्कृत भारत' का प्रकाशन शुरू किया। इसके अलावा डॉ. अंबेडकर ने 'समता', 'जनता' तथा 'प्रबुद्ध भारत' जैसे मराठी समाचार पत्रों के माध्यम लोगों में आत्मविश्वास पैदा किया। इससे उनमें नवजागृति आई और वे संगठित हुए।

'मूकनायक' का पहला अंक 31 जनवरी, 1920 को निकला, जबकि अंतिम अखबार 'प्रबुद्ध भारत' का पहला अंक 4 फरवरी, 1956 को प्रकाशित हुआ। इस बीच 'बहिष्कृत भारत' का पहला अंक 3 अप्रैल, 1927 को, 'समता' का पहला अंक 29 जून, 1928 को और 'जनता' का पहला अंक 24 नवंबर, 1930 को प्रकाशित हुआ। 'मूकनायक' से 'प्रबुद्ध भारत' तक की यात्रा उनकी जीवन-यात्रा, चिंतन-यात्रा और संघर्ष-यात्रा का भी प्रतीक है। बाबासाहेब अपने समाचार पत्र के माध्यम से 20वीं शताब्दी के भारत को प्रबुद्ध बनाना चाहते थे। उनके समाचार पत्र दलित-शोषित वर्ग के उत्थान के लिए शुरू हुए थे। समाज में समाचार पत्रों का क्या स्थान है, इस विषय में डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर स्पष्ट कहते हैं कि मूक समाज से बात करना और उनमें जागरूकता लाना ही पत्रकारिता करना है। बाबासाहेब अपने समाचार पत्र के मिशन को स्पष्ट करते हुए महाराष्ट्र के महान् संत तुकाराम महाराज जी की पंक्तियों को मूकनायक पत्र में अंकित करते हैं। "काय करू आता धरूनिया भीड! निःषंक जे तोंड वाजविले!! नव्हे जगी कोणी मुक्की यांचा जाण! सार्थक लाजून नव्हे हित!!" (अंबेडकर, 1920)। अर्थात्, अब संकोच करने का कोई कारण नहीं है। अब नि:शंक होकर बात करूँगा। मूक होकर जीने में कोई मतलब नहीं है, लाज-संकोच से किसी का हित नहीं होता। तुकाराम महाराज की इन अत्यंत सार्थक पंक्तियों को विरुदावली (स्लोगन) के रूप में प्रस्तुत कर बाबासाहेब मूक समाज के अंतरतम हृदय को पाठकों के समक्ष प्रकट करते हैं।

भारतरत्न डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महाराष्ट्र की सैन्य छावनी महू कैंट (अब मध्य प्रदेश में) हुआ, जिसे अब डॉ. अंबेडकर नगर के रूप में जाना जाता है। डॉ. अंबेडकर 64 विषयों में मास्टर थे। उन्हें 9 भाषाओं का ज्ञान था। इसके अलावा, उन्होंने लगभग 21 वर्षों तक दुनिया के सभी धर्मों का तुलनात्मक तरीके से अध्ययन किया। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने 1920 में अपना पहला समाचार पत्र

प्रकाशित किया। इससे पूर्व वे कई पत्र-पत्रिकाओं में लिखते रहे। उन्होंने अपनी पत्रकारिता क्षेत्रीय भाषा मराठी में शुरू की। उस समय भारतीय पत्रकार क्षेत्रीय तथा स्थानीय भाषाओं में समाचार पत्रों का प्रकाशन करते थे, ताकि लोगों तक अपनी बात पहुँचाने में असानी रहे और वे विदेशी शासन के खिलाफ जागरूक हों।

डॉ. अंबेडकर ने भारतीय समाज को जागरूक बनाने के लिए पत्रकारिता का उपयोग किया। उन्होंने विभिन्न अखबारों, पत्रिकाओं और अन्य मीडिया के माध्यम से लोगों को संबोधित किया। उन्होंने अपने लेखों में विभिन्न सामाजिक मुद्दों को उठाया, जैसे अंतर-जाति विवाह, शिक्षा और समानता। अंबेडकर के लेखों ने लोगों में जागरूकता और आत्मविश्वास का संचार किया और उन्हें समाज में अपनी अहमियत समझने में मदद की। अंबेडकर ने अपने लेखों के माध्यम से समाज के महत्त्वपूर्ण मुद्दों को उठाया और उन्हें सार्थक और प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया। "आमच्या या बहिष्कृत लोकांवर होत असलेल्या व पुढे होणा–या अन्यायावर उपाययोजना सुचविण्यास तसेच त्यांची भावी उन्नती व तिचे मार्ग यांच्या ख-या स्वरूपाची चर्चा होण्यास वर्तमानपत्र सारखी अन्य भूमीच नाही" (अंबेडकर, 1920)। हमारे बहिष्कृत लोगों पर हो रहे व भविष्य में होने वाले अन्याय का उपाय सुझाने और भावी उन्नति व उसके मार्ग के सच्चे स्वरूप की चर्चा के लिए समाचार पत्र जैसा अन्य क्षेत्र नहीं।

हमें समाचार पत्र क्यों चलाना चाहिए और उनमें किन विषयों को महत्त्व देना चाहिए, इस विषय में डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर जी के विचार स्पष्ट थे। उनका मानना था कि अन्याय से पीड़ित समाज के उत्थान के लिए पत्रकारिता करनी चाहिए। जिसके साथ अन्याय हुआ है, प्रगति के पथ पर रोक लगा दी गई है, जो दुःखी हैं, उनके लिए पत्रकारिता करनी चाहिए। जिनका जीवन सुखी है, ऐसे लोगों के लिए पत्रकारिता करना अपराध होगा। मूक समाज को बोलने के लिए पत्रकारिता करनी चाहिए। बंद दरवाजों को नई प्रगति के लिए खोलना चाहिए। उन तक तेजोमय किरण पहुँचने के लिए पत्रकारिता करनी चाहिए। पत्रकारिता के आधुनिक रूप को देखकर यह देखा जा सकता है कि सामाजिक रूप से उन्मुख पत्रकारिता की उपेक्षा की जा रही है। डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर पत्रकारिता को समाज सुधार का एक साधन मानते हैं। "बाबासाहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर ने पत्रकारिता के माध्यम से हिंदू समाज में मौजूद अस्पृश्यता की कुप्रथा को दूर करने और सदियों से अन्याय और अपमान का जीवन जी रहे समाज को उसका प्राचीन गौरव स्मरण कराकर अपना उधार स्वयं करने हेतु प्रेरित किया" (कुमार, 2023)। डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर सामाजिक प्रतिबद्धता के सिद्धांत को अपनी पत्रकारिता के माध्यम से अंकित करते हैं।

पुनीत पांडियन डॉ. अंबेडकर जी की पत्रकारिता के बारे में कहते हैं : "Ambedkar strongly believed that newspapers could bring about a change in the lives of millions of oppressed people. Dr. Ambedkar's Marathi newspapers announced a new politics and ethics and anticipated a just social order" (पांडियन, 2005)। डॉ. अंबेडकर के समाचार पत्रों ने एक नई राजनीति और नैतिकता की शुरुआत की और एक न्यायोचित सामाजिक व्यवस्था की आशा की। 'बहिष्कृत भारत' के एक अंक में बाबासाहेब कहते हैं, "प्रस्तुत लेखक ने सामाजिक कार्य करने में जितना स्वार्थ हो सकता है, त्याग दिया है। वह न तो कोई सांस्थानिक है और न ही जागीरदार। उसके बारे में किसी का यह कहना कि वह जंगल में नहीं है, खेत में नहीं है और गाँव में नहीं है, सत्य है। रूढ़िवादी नैतिकता और नैतिकता के दोषों को निर्भीक रूप से उजागर करने का दुर्जेय कार्य करने के साथ-साथ वह तथाकथित देशभक्ति और पवित्र पत्रों द्वारा अपने ऊपर फेंके गए अपमान और शापों की बौछार से भी उतना ही सहज है" (अंबेडकर, 1928)। बाबासाहेब 'बहिष्कृत भारत' समाचार पत्र चलाने में आने वाली कठिनाइयों के बारे में अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं। ये भावनाएँ उनके पत्रकारिता के दृष्टिकोण को स्पष्ट करती हैं।

डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर की पत्रकारिता में निहित सामाजिक उत्तरदायित्व की दृष्टि आज भी उतनी ही उपयुक्त है। "बाबासाहेब ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से बहिष्कृत समाज में स्वगौरव का भाव जगाया और साथ ही बृहद हिंदू समाज को आईना दिखाया। उन्होंने समतायुक्त और जातिविहीन समाज का जो सपना देखा, वह अब बहुत हद तक साकार हुआ है" (कुमार, 2023)। सामाजिक प्रश्नों का सिलसिला समाप्त नहीं हुआ है। समय बदल रहा है। तदनुसार, प्रश्न की प्रकृति भी बदल रही है। हालाँकि, कुछ सामाजिक मुद्दों की गंभीरता अभी भी उतनी ही अधिक है। हम डॉ. बाबासाहेब जी की पत्रकारिता के दृष्टिकोण को समझें तो वहाँ हमें सामाजिक प्रतिबद्धता की पत्रकारिता नजर आती है। इसी माध्यम से हम सामाजिक सरोकार की पत्रकारिता कर पाएँगे । पत्रकारिता लोकतंत्र का एक मजबूत स्तंभ बनेगा।

**प्रथम महिला पत्रकार-संपादक : तानुबाई बिर्जे**

बीसवीं सदी की शुरुआत में महाराष्ट्र में समाज जागरण में अहम भूमिका निभाने वाली तानुबाई बिर्जे ने 1908 से 1912 तक 'दीनबंधु' समाचार पत्र का संपादन किया। इस समाचार पत्र को 1 जनवरी, 1877 में कृष्णाजी भालेकर ने शुरू किया था। तानुबाई बिर्जे न केवल महाराष्ट्र, बल्कि भारत की पहली महिला संपादक बनीं। महात्मा फुले के विचारों से प्रभावित होकर तानुबाई ने एक संपादक के रूप में समाज में व्याप्त असमानता पर प्रहार किया और उसे नष्ट करने का अथक प्रयास किया। बहुजन शिक्षा का विचार प्रस्तुत कर उसे आगे बढ़ाया। नवोन्वेषी विषयों पर प्रकाश डाल जनमानस में इन विषयों पर चर्चा की। तानुबाई बिर्जे नाम महाराष्ट्र में अपरिचित नहीं है, हालाँकि उनके पत्रकारिता के कार्य को बहुत कम लोग जानते हैं। अखबार उद्योग के इतिहास में तानुबाई और उनके 'दीनबंधु' अखबार पर किसी का ध्यान नहीं गया। हालाँकि, ऐसे समय में जब महिलाओं को घर-गृहस्थी और बच्चे से परे नहीं देखा जाता था, तानुबाई ने खोजी पत्रकारिता का जिम्मा उठाया और इसे बखूबी निभाया। 1877 में 'दीनबंधु' के पहले संस्थापक-संपादक कृष्णाजी भालेकर द्वारा शुरू किए गए इस समाचार पत्र का संपादन बाद में तानुबाई बिर्जे ने किया। वे भारत की पहली महिला संपादक बनीं। यह निष्कर्ष निकाला जा रहा है कि वे न केवल भारत की बल्कि दुनिया की भी पहली महिला संपादक थीं। अगर पत्रकारिता के इतिहास ने तानुबाई को ठीक से पहचाना होता और उन्हें सुर्खियों में रखा होता तो आज हजारों महिलाएँ पत्रकारिता के क्षेत्र में आगे आतीं।

तानुबाई का जन्म 1876 में पुणे में हुआ। उनकी शिक्षा वेतालपेठ में महात्मा फुले के स्कूल में हुई और 26 जनवरी, 1893 को पुणे में वासुदेव लिंबाजी बिर्जे से उनका विवाह हुआ। वासुदेव बिर्जे 1894 से 1905 तक

ग्यारह वर्ष बड़ौदा सरकार में लाइब्रेरियन थे। मराठा समाज के मतप्रचार के लिए उन्होंने लाइब्रेरियन की नौकरी से इस्तीफा दिया और मुंबई आकर 1897 में 'दीनबंधु' अखबार दोबारा शुरू किया। कृष्णाजी भालेकर ने दीनबंधु पत्र 30 वर्ष पूना शहर से चलाया। 1877 के अकाल के कारण आर्थिक विवेचना में उन्हें अपना प्रकाशन कार्य बंद करना पड़ा। भालेकर के बाद नारायण लोखंडे ने 1880 से 1897 तक मुंबई से बड़ी लगन से 'दीनबंधु' का संपादन किया। यह समाचार पत्र मराठा समाज के हित में प्रकाशित होता था। नारायण लोखंडे के देहांत के बाद 'दीनबंधु' का संपादन वासुदेव बिर्जे ने किया। "मराठा समाज का शिक्षण और सुधारणा' नाम से एक लेखमाला बिर्जे ने 'दीनबंधु' में चलाई। इस लेखमाला के कारण 'मराठा शिक्षण परिषद्' का जन्म हुआ। (लेले 2009) महामारी के चलते 1908 वासुदेव बिर्जे का देहांत हुआ। लेकिन 'दीनबंधु' का प्रकाशन रुका नहीं, उनकी पत्नी तानुबाई ने यह कार्य बड़ी लगन और निष्ठा के साथ आगे बठाया। जब 'दीनबंधु' आर्थिक संकट में था, तो उन्होंने अपने गहने बेच दिए, लेकिन इसे बंद नहीं होने दिया (लोकसत्ता टीम, 2016).

अपने संपादन काल में तानुबाई ने 'दीनबंधु' में सत्य शोधक आंदोलन की खबरों पर ध्यान केंद्रित किया। समाज को आत्म-जागरूक बनाने के लिए जगद्गुरु संत तुकाराम महाराज के वचनों को 'दीनबंधु' के प्रथम पृष्ठ के शीर्ष पर अंकित किया। तुकाराम महाराज के अभंग के माध्यम से तानुबाई ने 'दीनबंधु' के उद्देश्य को बताया था। "दीनबंधु' में शिक्षा, कृषि, राजनीति, समारोह, सत्यशोधक समाज, मराठा और अन्य जातियों की शिक्षा परिषदों पर विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित की गई। तानुबाई सत्यशोधक आंदोलन की खबरों पर विशेष जोर देती थीं" (लोकसत्ता टीम, 2016)। वासुदेवराव बिर्जे ने बहुजनों के सर्वांगीण उत्थान के लिए शिक्षा के क्षेत्र में लगातार विचार रखे, जबकि तानुबाई ने बहुजन शिक्षा पैटर्न सहित विभिन्न विषयों पर लिखा। 1912 में 'दीनबंधु' में सामाजिक जागरूकता के उद्देश्य से एक अभिनव विषय पर विचार किया गया। देश की आजादी की शुरुआत से बहुत पहले, उन्होंने एक विद्वत्तापूर्ण लेख प्रकाशित किया था, जिसमें यह सवाल उठाया गया था कि क्या भारत जैसे देश में लोकतांत्रिक शासन लागू करने के लिए उपयुक्त वातावरण है। इससे पता चलता है कि तानुबाई की प्रतिभा कितनी बड़ी थी। फुले, भालेकर, लोखंडे और बिर्जे के विचारों का तानुबाई के समग्र लेखन पर प्रभाव नजर आता है। 27 जुलाई, 1912 अंक में 'बॉम्बे टेरिटरी में विधान परिषद् और बहुजन समाज' तानुबाई का एक और असाधारण ऐतिहासिक, राजनीतिक और तीखा संपादकीय है। इस संपादकीय में तानुबाई कहती हैं, "विधि परिषद् बहुजन समाज के हितों के प्रति अरुचि दिखा रही है। इस उदासीनता का कारण ढूँढ़ने के लिए ज्यादा दूर मत जाइए" (बिर्जे, 1912)।

'दीनबंधु' में स्थानीय से लेकर अंतराष्ट्रीय घटना पर आधारित समाचार पढ़ने को मिलते थे। "विभिन्न स्थानों पर आयोजित सभा, सम्मेलनों तथा बैठकों की विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित करते थे। तानुबाई हमेशा नई प्रकाशित पुस्तक या नाटक की समीक्षा को भी स्थान देती थीं। टाइटैनिक जहाज के डूबने की खबर 'दीनबंधु' में भी थी"(आवटी 2016)। तानुबाई ने अपने समाचार पत्र में समाज में व्याप्त असमानता पर प्रहार किया और उसे छिन्न-भिन्न कर दिया। तानुबाई ने सामाजिक चेतना, बहुजनों के उत्थान की चाहत और देश में सामाजिक सुधारों के लिए समाचार पत्र के माध्यम से जागृति का कार्य किया। एक अत्यंत सफल एवं योग्य संपादक के रूप में उनका नाम मराठी पत्रकारिता के इतिहास में अवश्य ही स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाएगा।

**ओजस्वी पत्रकार : स्वातंत्र्यवीर सावरकर**

विनायक दामोदर सावरकर (स्वातंत्र्यवीर सावरकर) के जीवन का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पहलू उनकी पत्रकारिता थी। सावरकर की पत्रकारिता कोई साधारण पत्रकारिता नहीं थी, बल्कि क्रांतिकारी पत्रकारिता थी। परिस्थितियों के कारण वे अपना स्वयं का समाचार पत्र प्रकाशित नहीं कर सके। लेकिन चुप रहने के बजाय उन्होंने समय-समय पर कई समाचार पत्रों में अपने आलोचनात्मक और दूरदर्शी विचार प्रस्तुत किए। कुछ अवसरों पर उन्होंने पुस्तिकाएँ प्रकाशित करके अपने विचार व्यक्त किए हैं। सावरकर के द्वारा समय-समय पर प्रकाशित किए गए पत्रक उनकी पत्रकारिता के ही साधन थे।

स्वातंत्र्यवीर सावरकर का जन्म 28 मई, 1883 को नासिक (महाराष्ट्र) के पास 'भगुर' गाँव में हुआ। उनकी प्राथमिक शिक्षा वहीं हुई। अपने सशक्त विचारों को व्यक्त करने के लिए सावरकर ने अल्प आयु में कलम का सहारा लिया। "महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक के समाचार पत्र केसरी की भारी धूम थी। सावरकर उसे पढ़ते थे, जिसके कारण उनके मन में भी क्रांतिकारी विचार आने लगे। केसरी के लेखों से प्रभावित होकर उन्होंने भी कविताएँ तथा लेख आदि लिखने प्रारंभ कर दिए" (दीक्षित, 2023)। नासिक माध्यमिक विद्यालय में पढ़ते समय उन्होंने 'नासिक वैभव' समाचार पत्र में 'हिंदू संस्कृति की महिमा' शीर्षक से दो अंकों में और दो भागों एक लेख लिखा। यहीं से उनकी पत्रकारिता आरंभ होती है। सावरकर ने दिसंबर 1901 में मैट्रिक पास किया और जनवरी 1902 में पुणे के फर्ग्युसन कॉलेज में दाखिला लिया। इस कॉलेज में उन्होंने समान विचारधारा वाले युवाओं का एक प्रभावी समूह बनाया। समूह ने 'आर्यन विकलि' नामक हस्तलिखित साप्ताहिक शुरू किया। सावरकर ने इस साप्ताहिक में देशभक्ति, साहित्य, इतिहास, विज्ञान जैसे कई विषयों पर कई स्टाइलिश और ज्ञानवर्धक लेख लिखे। उनके विचार उत्तेजक लेखों को पुणे के समाचार पत्रों में स्थान मिला। उनके सर्वश्रेष्ठ लेखों में से एक है 'सप्तपदी'। इस लेख में, उन्होंने 'एक स्वतंत्र राष्ट्र अपने विकास में किन चरणों से गुजरता है' इस पर चर्चा की (भुजबल, 2014)। सावरकर ने 'काळ' मराठी समाचार पत्र (संपादक शिवरामपंत परांजपे) में उप-संपादक के रूप में काम करने की इच्छा व्यक्त की, बल्कि एक प्रिंटिंग प्रेस में नौकरी करने वाले के रूप में भी काम करने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन इस अनुरोध पर कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं मिली। 1902 में, सावरकर ने समाचार पत्र 'काळ' में एक आलेख में लिखा, "हिंदुस्तान में गरीबी और सभी प्रकार के दुखों का कारण हिंदू हैं, लेकिन अगर वे कभी गौरवशाली दिन चाहते हैं, तो उन्हें हिंदू ही रहना होगा" (भुजबल, 2014)। दिसंबर 1905 में उन्होंने मराठी साप्ताहिक 'विहारी' में लेख लिखना शुरू किया और अखबार को अभिनव भारत का मुखपत्र बनाया। "इंडियन सोशियोलाजिस्ट और तलवार नामक पत्रिकाओं में उनके लेख प्रकाशित हुए। यह बाद में कलकत्ता के युगांतर पत्र में भी छपे" (धमोरा 2023)। "सावरकर के लेखन के कारण विहारी अभिनव भारत का मुखपत्र बना। 1906 में बंगाल में प्रकाशित साप्ताहिक 'युगांतर' की तरह 'विहारी' की खपत भी तेजी से बढ़ने लगी" (कीर, 1972)।

स्वातंत्र्यवीर सावरकर विदेश में भी मुक्त पत्रकार के रूप में नजर आते है। उच्च शिक्षा के लिए सावरकर 9 जून, 1906 को छात्रवृत्ति लेकर यूरोप गए। उन दिनों अन्य क्रांतिकारी भी भारत से लंदन उच्च शिक्षा के लिए जाते थे, उनमें एक सेनापति बापट थे। लंदन में पढ़ाई करने के लिए सेनापति बापट को बॉम्बे विश्वविद्यालय द्वारा सर मंगलदास नाथूभाई छात्रवृत्ति दी जाती थी। सेनापति बापट ने लंदन में भारत के लिए होमरूल की माँग करने वाली एक पुस्तिका प्रकाशित की, इस कारण उनकी छात्रवृत्ति बंद कर दी गई। इस पर सावरकर ने अपने 'लंदन समाचार पत्र' में तीखा प्रश्न पूछा, "क्या मंगलदास नाथूभाई ने छात्रवृत्ति देते समय यह शर्त रखी थी कि यदि देश गुलामी में जाना चाहता है तो ही उसे मेरी छात्रवृत्ति दी जाए" (भुजबल, 2014)। मुक्त पत्रकार के रूप में सावरकर पक्ष लेते हुए नजर आते हैं। "सावरकर ने न्यूयॉर्क के 'गैलिक अमरीका' में भारतीय मामलों से संबंधित लेख लिखे तथा इन्हें फ्रेंच, जर्मन, इतालवी, पुर्तगाली और रूसी भाषाओं में अनुवाद करवाकर प्रकाशित करवाया" (लोकसभा सचिवालय, 2019)।

स्वातंत्र्यवीर सावरकर खोजी पत्रकार भी थे। उन्होंने मदनलाल ढींगरा केस में समाचार पत्रों में ढींगरा का बयान प्रकाशित कर तथ्य को ब्रिटिश सरकार के सामने रखा। "1 जुलाई, 1909 को मदनलाल ढींगरा द्वारा विलियम हट कर्जन वायली को गोली मार दिए जाने के बाद सावरकर ने 'लंदन टाइम्स' में एक लेख भी लिखा" (धमोरा, 2023)। मदनलाल ढींगरा ने भारत में ब्रिटिश सरकार द्वारा किए गए अत्याचारों का बदला लेने के लिए 1 जुलाई, 1909 को सर विलियम कर्जन वाइली की हत्या कर दी। सेशन कोर्ट में ढींगरा के खिलाफ प्रस्तुत करने के लिए पुलिस ने गलत बयान तैयार किया था, लेकिन सावरकर ने पुलिस द्वारा बताया गया ढींगरा का मूल बयान प्रकाशित किया। सावरकर ने ढींगरा के मूल बयान की एक प्रति अपने मित्र डेविड गार्नेट को दी। उन्होंने डेली न्यूज में 16 अगस्त को इस बयान को प्रकाशित किया और पूरा इंग्लैंड हैरान रह गया। कड़ी सुरक्षा में रखे गए मूल बयान को जारी होते देख पुलिस भी निराश हो गई। सावरकर की खोजी पत्रकारिता का यह एक प्रभावी उदाहरण है।

अंदमान जेल में शारीरिक एवं मानसिक कष्ट और अत्यधिक यातनाएँ सहने के बावजूद सावरकर ने हार नहीं मानी। फिर भी उन्होंने गुप्त रूप से अपनी पत्रकारिता जारी रखी। सावरकर द्वारा एक बार समाचार पत्र के लिए लिखा गया एक नोट पकड़ा गया। इसलिए उन्हें हथकड़ी लगाने की सजा सुनाई गई। तभी जेलर बारी ने उनसे पूछा, "यह किसलिए है?" इस पर सावरकर ने कहा, "यह समाचार के लिए भुगतान किया गया डाक शुल्क है", जिस पर बारी ने कहा, "आपको कहना चाहिए कि समाचार बहुत महँगा हो गया है!" इस पर सावरकर ने कहा, "नहीं, बिल्कुल नहीं!" आपको समाचार के लिए समाचार पत्र की सदस्यता के ऊपर भुगतान करना होगा। हमें मुफ्त में समाचार मिलते हैं! लेकिन यह डाक शुल्क साल में एक या दो बार देना पड़ता है" (भुजबल, 2014)। पत्रकारिता के माध्यम से सूचना का प्रसार करने के लिए सावरकर द्वारा किया गया संघर्ष रोंगटे खड़ा करने वाला है।

सावरकर अलग अलग पत्र-पत्रिकाओं में अपने विचार प्रकट करते थे। उन्होंने 1935 में किर्लोस्कर पत्रिका में मूर्तिपूजा पर एक विशेष लेख लिखा था। इस लेख में वे कहते हैं, "जिस प्रकार धार्मिक मूर्तिपूजा होती है, उसी प्रकार बौद्धिक मूर्तिपूजा भी होती है। यह बुद्धिवाद की कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरता है" (भुजबल, 2014)। इस लेख के माध्यम से सावरकर का विज्ञानवादी दृष्टिकोण प्रकट होता है। समाज सुधार के अपने महान् कार्य के पूरक के रूप में सावरकर ने मुंबई से 'श्रद्धानंद' नामक साप्ताहिक पत्र शुरू किया। "10 जनवरी, 1927 में सावरकर ने मुंबई से 'श्रद्धानंद' समाचार पत्र शुरू किया। उन्होंने इसे चार साल तक चलाया। सावरकर के छोटे भाई डॉ. ना. दा. सावरकर इस पत्र के संपादक थे" (तुंगार, 2007)। इस पत्र में सावरकर के अनेक प्रेरक लेख प्रकाशित हुए। हालाँकि लेख उनके नाम से प्रकाशित नहीं हुए थे, लेकिन उनके समग्र स्वर और शैली से महाराष्ट्र को पता चल गया कि वे किससे संबंधित हैं। यह साप्ताहिक थोड़े ही समय में बहुत लोकप्रिय हो गया और इसकी खपत तेजी से बढ़ी।

सावरकर की अटूट देशभक्ति और दूरदर्शिता का परिचय इसी बात से मिलता है कि सावरकर ने अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में भी समय-समय पर विदेश में रहकर, जेल में रहकर, कष्ट सहते हुए ओजस्वी पत्रकारिता की। निडर होकर अपने विचार व्यक्त किए, समाज को जाग्रत करने का सतत प्रयास किया।

**आधुनिक संपादक ना. भि.परुळेकर**

मराठी समाचार पत्र उद्योग में 'सकाळ' एक दूरदर्शी समाचार पत्र के रूप में जाना जाता है। डॉ. ना. भि. परुळेकर ने इस समाचार पत्र को शुरू किया था। उनका अलिखित मीडिया कोड वर्तमान की सटीक समझ, समाज की समग्र भलाई के लिए ली गई भूमिका और भविष्य पर नजर रखता था। देश में आने वाले संकट की सूचना देने के लिए किसी से भी न डरते हुए, निडर पत्रकारिता करने का मंत्र डॉ. परुळेकर ने दिया। लोकप्रबोधन के लिए समाचार पत्र के माध्यम से लोगों का आंदोलन खड़ा कर उसे आगे बढ़ाने के लिए डॉ. परुळेकर ने 1 जनवरी 1932 में 'सकाळ' की महाराष्ट्र के पुणे शहर से शुरुआत की। उन्होंने आम लोगों को ध्यान में रखते हुए 'सकाळ' का निर्माण किया। उन्होंने आम लोगों को जटिल विषयों को उनकी ही भाषा में समझाने पर जोर दिया। चाहे विषय 'जीडीपी' हो या अंतरराष्ट्रीय संबंध; या नगरपालिका-ग्राम के शासन का हो। "लोगों की चिंता, चर्चा, आशा-आकांक्षा के जो विषय थे, वह सभी सामग्री सकाळ में छपती थी। इस कारण समाचार में विविधता आई और जनमानस को समाचार पत्र अपना लगने लगा (लेले, 2009)। 'सकाळ' द्वारा प्रदान की गई सामग्री आम आदमी के लिए है; आम आदमी का मंगल ही 'सकाळ' की भूमिका है। इस बात पर डॉ. परुळेकर अटल थे।

20 सितंबर, 1898 को जन्मे नारायण भिकाजी परुळेकर, जिन्हें नानासाहेब परुळेकर के नाम से जाना जाता है, एक प्रसिद्ध पत्रकार और मराठी समाचार पत्र 'सकाळ' के संस्थापक संपादक थे। पुणे के अनाथ विद्यार्थी गृह में अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के बाद, वे संयुक्त राज्य अमेरिका चले गए और कोलंबिया विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। 1929 में भारत लौट आए। कुछ ही समय बाद, 1932 में उन्होंने 'सकाळ' नामक समाचार पत्र की स्थापना की, जिसे कई लोग भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए राष्ट्रवादी आदर्शवाद के उत्पाद के रूप में देखते थे। परुळेकर का समाचार पत्र शुरू करने का कोई विचार प्रारंभ में नहीं था। वे स्वतंत्रता आंदोलन में हिंसा लेना चाहते थे।

परुळेकर कहते थे, "किसी भी विषय की पढ़ाई करने के बाद उसका अंत लोक शिक्षा में करना चाहिए। यह बात मैंने मन में ठान ली थी। समाचार पत्र लोक शिक्षा के सबसे बड़े और प्रभावी माध्यम हैं। देश सेवा के लिए समाचार पत्र एक सही माध्यम है, इस कारण मेरा मन पत्रकारिता की दिशा में खिंचा चला गया (परुळेकर, 1957)। बाल गंगाधर तिलक के जीवन और कार्य से भी परुळेकर काफी प्रभावित थे। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान परुळेकर द्वारा पत्रकार बनने का विकल्प चुनने का मुख्य कारण तिलक भी थे।

उनको पत्रकारिता का अनुभव कोलंबिया से स्नातक होने के बाद अमेरिकी समाचार पत्रों के साथ काम करने से प्राप्त हुआ। "उन्हें अमेरिका, फ्रेंच और जर्मन समाचार पत्र की रिपोर्टिंग करने का अवसर मिला" (लेले, 2009)। सकाळ के लॉञ्च होने तक, न्यूज स्टैंड पर समय-समय पर अभिप्राय वाले लेखों का वर्चस्व था। परुळेकर ने अपने समाचार पत्र के माध्यम से मराठी में डेली न्यूज पेपर की शुरुआत की। उनका लक्ष्य उन कहानियों के माध्यम से जनता तक पहुँचना था, जो लोगों के लिए महत्त्व रखती थीं, बजाय इसके कि अखबार को अभिजात्य राजनीतिक विचारों के लिए एक चर्चा बोर्ड तक सीमित कर दिया जाए। 'सकाळ' की विशेषता थी कि वह समकालीन दैनिक समाचार पत्र से बिलकुल अलग था। 'ज्ञानप्रकाश' मराठी का पहला दैनिक पत्र माना जाता है। लेकिन 'ज्ञानप्रकाश' और 'केसरी' की भाषा थोड़ी कठिन थी। "सकाळ के माध्यम से परुळेकर ने सामान्य व्यक्ति की भाषा समाचार जगत् को दी" (अकलूजकर, 2010)। उन्होंने 1933 में 'सकाळ' के साथ-साथ 'तेज' नामक साप्ताहिक की भी स्थापना की। हालाँकि, वित्तीय समस्याओं के कारण उसे जल्द ही बंद कर दिया।

समाचार-पत्रों पर सरकार द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों के विरुद्ध डॉ. परुळेकर की लड़ाई भारतीय मीडिया की आजादी का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। 1950 के दशक में केंद्र सरकार ने कानून बनाकर अखबारों पर प्रतिबंध लगा दिया कि कितने पन्नों के अखबार छापने चाहिए और कितनी कीमत पर छापने चाहिए। "डॉ. परुळेकर ने 'सकाळ' की ओर से सुप्रीम कोर्ट में लड़ाई लड़ी। समाचार पत्र अधिनियम के तहत केंद्र सरकार द्वारा पारित दो आदेशों अर्थात् दैनिक समाचार पत्र (मूल्य और पन्ने) आदेश, 1956, 1960 (समाचार पत्र आदेश) को चुनौती दी गई। 'सकाळ' ने मुद्दा उठाया कि यह आदेश संविधान द्वारा भारतीयों को दी गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन है और सुप्रीम कोर्ट ने इसे स्वीकार कर लिया" (फडणीस, 2020)। किसी भी व्यवस्था के खिलाफ रुख अपनाते हुए डॉ. परुळेकर की भूमिका आम लोगों के भविष्य के बारे में साफ-सुथरी सोच रखने की थी। उन्होंने जोर देकर कहा कि कोई भी सरकार संवैधानिक मूल्यों को कमजोर नहीं कर सकती। अगर वे आज सरकार की बात सुनते हैं, तो उन्हें पता होना चाहिए कि कल सरकार संविधान को न मानते हुए अन्य कानून लाएगी। इसलिए उन्होंने सुप्रीम कोर्ट में भी लड़ाई लड़ी। हालाँकि उनकी भूमिकाएँ सफल रहीं, फिर भी डॉ. परुळेकर ने इसका घमंड नहीं किया और इन भूमिकाओं के लिए आलोचना स्वीकार करने में संकोच नहीं किया।

भारत में पत्रकारिता के क्षेत्र में अग्रणी के रूप में परुळेकर ने कई नई चीजें शुरू कीं, जिनका भारतीय समाचार घराने आज तक पालन करते हैं। भारत सरकार ने पत्रकारिता, साहित्य और शिक्षा में उनके योगदान को पहचाना और उन्हें 1969 में पद्म भूषण से सम्मानित किया। उन्होंने लगभग 40 वर्ष तक पत्रकारिता के माध्यम से आम लोगों के हित में कार्य किया। 92 वर्ष पूर्व शुरू हुआ 'सकाळ' समाचार पत्र अब एक मल्टीमीडिया समूह बन गया है।

## निष्कर्ष

मराठी पत्रकारिता के 192 वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। इस सफर में मराठी पत्रकारिता ने कई उतार-चढ़ाव देखे, लेकिन पत्रकारिता का मूल शिरोधार्य मानकर यह सफर आज भी बड़ी गरिमा के साथ ऊँचाइयाँ छू रहा है। महाराष्ट्र में प्रिंट मीडिया का प्रभाव आज भी गहरा है। समाचार पत्र नए रंग और रूप में पाठक की अभिरुचि ध्यान में रखते हुए आगे बढ़ रहे है। नींव अगर मजबूत हो तो इमारत और मजबूत होती है। मराठी पत्रकारिता की नींव इतनी मजबूत है कि उसने स्वतंत्रता आंदोलन, सामाजिक आंदोलन, राजकीय संग्राम और आधुनिक भारत के निर्माण में बढ़चढ़कर हिस्सा लिया। नए प्रगट भारत के विकास में जनजन को जोड़कर अखंड भारत का संदेश दिया। यह महान् कार्य केवल एक या दो व्यक्ति द्वारा पूर्ण नहीं हुए। इस कारवाँ में समय-समय पर लोग जुड़ते गए। लेकिन इन सभी में कुछ ऐसे भी पत्रकार और संपादक थे, जिनके कार्य एवं योगदान की चर्चा किए बगैर मराठी पत्रकारिता अधूरी है। उनमें बाळशास्त्री जांभेकर, लोकमान्य तिलक, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, तानुबाई बिर्जे, स्वातंत्र्यवीर सावरकर और ना. भि. परुळेकर के नाम अग्रगण्य हैं। इन लोगों के कार्य और योगदान के कारण ही उन्हें मराठी पत्रकारिता के आधार स्तंभ माना जाता है। इन महान् लोगों ने अपनी कलम के माध्यम से मराठी पत्रकारिता को नई दिशा, नया विचार और सम्मान दिलाया। इनकी पत्रकारिता में स्वतंत्रता संग्राम, सामाजिक बदलाव और आधुनिक भारत का विचार तथा प्रभाव स्पष्ट होता है। पत्रकारिता के माध्यम से देश, समाज और जनमानस के लिए कैसे कार्य करें, इसका मूलमंत्र मिलता है। बाळशास्त्री जांभेकर ने मराठी का प्रथम समाचार पत्र शुरू कर मराठी पत्रकारिता का शुभारंभ किया। लोकमान्य तिलक ने पत्रकरिता के माध्यम से भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अलौकिक योगदान दिया। राजनैतिक पत्रकारिता का नया अध्याय शुरू किया। डॉ. बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर ने समाचार पत्र के माध्यम से मूक समाज को जागरूक कर उनमें नव चेतना का संचार किया। उन्होंने सामाजिक पत्रकारिता के नए सिद्धांत भारत में स्थापित किए। तानुबाई बिर्जे भारत की पहली महिला संपादक बनीं। तानुबाई ने एक संपादक के रूप में समाज में व्याप्त असमानता पर प्रहार कर उसे नष्ट किया। बहुजन शिक्षा का विचार प्रस्तुत कर उसे आगे बढ़ाया। विनायक दामोदर सावरकर (स्वातंत्र्यवीर सावरकर) ने पत्रकारिता के माध्यम से क्रांतिकारी विचारों को जनमानस तक पहुँचाया। परिस्थितियों के कारण अपना स्वयं का समाचार पत्र प्रकाशित नहीं कर सके, लेकिन समय-समय पर कई समाचार पत्रों में उन्होंने अपने आलोचनात्मक और दूरदर्शी विचार प्रस्तुत किए। ना. भि.परुळेकर ने मराठी का पहला आधुनिक दैनिक समाचार पत्र शुरू किया। उन्होंने आम लोगों को जटिल विषय आसान भाषा में समझाने पर जोर दिया। समाचार पत्र में आसान शब्दों का चलन तथा जनमानस के रोजमर्रा के विषयों पर सामग्री दी। सब्जी मंडी के भाव, हॉकरों की

समस्या, मौसम की जानकारी 'सकाळ' में छापकर परुळेकर ने आधुनिक पत्रकारिता का प्रारंभ किया। नयापन, नई दिशा और जनमानस का अंतर्मन ध्यान में रखना मराठी पत्रकारिता का मूलमंत्र है। वह आज भी अटूट है।

**संदर्भ सूची**


अकलूजकर, पी.के. (2010). मराठी वृत्तपत्रसृष्टीचे अंतरंग. पुणे : श्री विद्या प्रकाशन. पृष्ठ 123.

अंबेडकर, बी.आर. (1920). 'बिरुदावली' मूकनायक, अंक 1, 31 जनवरी 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1920) 'मनोगत' संपादकीय, मूकनायक, अंक 1, 31 जनवरी 1920.

अंबेडकर, बी.आर. (1928). बहिष्कृत भारताचे ऋण हे लौकिक ऋण नव्हे काय? बहिष्कृत भारत, अंक 12, 3 फरवरी 1928.

आवटी, ए. (2016). पहिल्या स्त्री संपादक तानुबाई बिर्जे ,नवरत्ने', बाइट्स ऑफ इंडिया , https://goo.gl/T9ihBw , अक्टूबर, 2016

कीर, डी. (1972). स्वातंत्र्यवीर सावरकर. मुंबई : पॉपुलर प्रकाशन. पृष्ठ 72.

कुमार, पी. (2023). अस्पृश्यता निवारण और बाबासाहेब डॉ बी. आर. अंबेडकर : मूकनायक और बहिष्कृत भारत के संदर्भ में एक अध्ययन. नई दिल्ली : संचार माध्यम, पृष्ठ 95.

कुमार, पी. (2023). अस्पृश्यता निवारण और बाबासाहेब डॉ बी. आर. अंबेडकर : मूकनायक और बहिष्कृत भारत के संदर्भ में एक अध्ययन. नई दिल्ली : संचार माध्यम, पृष्ठ 100.

कुमार, पी. (2023). अस्पृश्यता निवारण और बाबासाहेब डॉ बी. आर. अंबेडकर : मूकनायक और बहिष्कृत भारत के संदर्भ में एक अध्ययन. नई दिल्ली : संचार माध्यम, पृष्ठ 101.

गव्हाणे, एस. (2008). पत्रकारिता शोध व बोध. औरंगाबाद : विश्वक्रांति प्रकाशन. पृष्ठ 76.

गव्हाणे, एस. (2008). पत्रकारिता शोध व बोध. औरंगाबाद : विश्वक्रांति प्रकाशन. पृष्ठ 28.

जांभेकर जी.जी. (संपा). (1950). बाळ गंगाधर शास्त्री जांभेकर यांचे जीवन वृत व लेखसंग्रह. पुणे. खंड 3, पृष्ठ 201.

जांभेकर, बी.एस. (1832). दर्पण साप्ताहिक, वर्ष 1, अंक 32, 24 अगस्त 1832, मुंबई.

तिलक, बी. जी. (1917). कोळसा उजळला तरी तो काळा, संपादकीय, केसरी,13 मार्च 1917, पुणे.

तिलक, बी. जी. (1881). केसरी, अंक 1, 4 जनवरी 1881, पुणे.

तुंगार, डी. (2007). श्रद्धानंदचे संपादक वीर सावरकर, महाराष्ट्रातील पत्रमहर्षी. औरंगाबाद : विश्वक्रांति प्रकाशन. पृष्ठ 72.

दीक्षित, एम. (2023). स्वातंत्र्यवीर सावरकर, प्रेरणा संवाद, 28 मई 2023, https://prernasamvad.in/story/Swatantryaveer-Savarkar से पुन:प्राप्त.

धमोरा, आर. (2023). स्वातंत्र्यवीर सावरकर और हिंदू, हिंदी, हिंदुस्तान, अग्निबाण, इ पेपर , 28 मई 2023 , https://www.agniban.com/swatantryaveer-savarkar-and-hindu-hindi-hindustan/ से पुन:प्राप्त.

परुळेकर एन. बी. (1957). स्वालंबनाची कथा, सकाळ रौप्य महोत्सव अंक, 1 जनवरी 1957, पृष्ठ 2.

पांडियन पी. (2005). प्रक्टिसिंग जर्नलिज्म : वैल्यूज, कंस्ट्रेंट्स, इंप्लीकेशंस. सेज पब्लिकेशन.

फडणीस, एस. (2020). सर्व सामन्याना दूरदृष्टि देणारी पत्रकारिता, संपादकीय, सकाळ, 20 सितंबर 2020.

बिर्जे, टी.बी. (1912). मुंबई इलाख्यात लेजिस्लेटिव्ह कौन्सिल आणि बहुजन समाज', संपादकीय , दीनबंधु, 27 जुलाई, 1912.

भुजबळ, डी. (2014). स्वातंत्र्यवीर सावरकर यांची ज्वाजल्य पत्रकारिता, मुंबई लाइव, https://www.mumbailive.com/mr/culture/vinayak-damodar-savarkars-fearless-journalism-12131 से पुन:प्राप्त.

लेले, आर. के. (2009). मराठी वृत्तपत्रांचा इतिहास, पुणे : कॉण्टिनेंटल प्रकाशन. पृष्ठ 61.

लेले, आर.के. (2009). मराठी वृत्तपत्रांचा इतिहास. पुणे : कॉण्टिनेंटल प्रकाशन. पृष्ठ 279.

लेले, आर.के. (2009). मराठी वृत्तपत्रांचा इतिहास. पुणे : कॉण्टिनेंटल प्रकाशन. पृष्ठ 206.

लेले, आर. के. (2009). मराठी वृत्तपत्रांचा इतिहास. पुणे : कॉण्टिनेंटल प्रकाशन. पृष्ठ 748.

लेले, आर. के. (2009). मराठी वृत्तपत्रांचा इतिहास. पुणे : कॉण्टिनेंटल प्रकाशन. पृष्ठ 748.

लोकसत्ता टीम. (2016). लोकरंग पुरवणी, दैनिक लोकसत्ता, 6 मार्च 2016, https://www.loksatta.com/lokrang/lekha/tanubai-birje-woman-editor-in-marathi-1211612 से पुन:प्राप्त.

लोकसत्ता टीम. (2016). लोकरंग पुरवणी, दैनिक लोकसत्ता, 6 मार्च 2016, https://www.loksatta.com/lokrang/lekha/tanubai-birje-woman-editor-in-marathi-1211612 से पुन:प्राप्त.

लोकसभा सचिवालय. (2019). स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर,लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली 2019, पृष्ठ 2 , https://loksabhadocs.nic.in/Refinput/eprofiles/Hindi/04022022_163843_1021206200.pdf से पुन:प्राप्त.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 16-21, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# श्री गुरु तेगबहादुर सिंह जी का जीवन दर्शन और उनकी वाणी

**डॉ. नरेश कुमार[1] और डॉ. प्रीति सिंह[2]**

**सारांश**

श्री गुरु तेगबहादुर जी दशम गुरु परंपरा के नवम गुरु थे, जिन्होंने अपनी वाणी एवं अपने कर्मठ व्यक्तित्व से समाज में अनेक परिवर्तन किए। उनकी वाणी एवं जीवन के विविध आयामों को उनके जीवन वृत्तांत के माध्यम से ही समझा जा सकता है। श्री गुरु नानक देव जी ने संघर्ष की जो नींव रखी और जिस परंपरा को गुरु श्री अर्जन देव जी और गुरु श्री हरगोबिंद जी ने आगे बढाया, उसे पल्लवित, पुष्पित व संरक्षित करने का श्रेय श्री गुरु तेगबहादुर जी को जाता है। दशम गुरु परंपरा के उपदेशों और वाणियों ने न केवल पंजाब को प्रभावित किया, वरन् संपूर्ण भारतवर्ष को एकता के सूत्र में पिरोने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया है। श्री गुरु तेगबहादुर जी ने जहाँ-जहाँ अन्याय होते हुए देखा उस अन्याय, अत्याचार को रोकने का उन्होंने अथक प्रयास किया। अपनी गौरवमयी भारतीय संस्कृति को सुरक्षित और संरक्षित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य श्री गुरु साहिब की तत्कालीन जनमानस को विशिष्ट देन है। उनका जीवनकाल अनेक संघर्षों से परिपूर्ण था। वे अत्यंत वीर तथा कुशाग्र बुद्धि से समृद्ध थे। इस कारण उनके पिता ने उनका नाम त्यागमल से तेगबहादुर (अर्थात् तलवार के धनी) रख दिया। श्री गुरु तेगबहादुर ने धर्म के प्रसार के लिए अनेक स्थानों का भ्रमण किया। उन्होंने प्रयाग, काशी, पटना, असम आदि क्षेत्रों में आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक उन्नयन के लिए अनेक रचनात्मक कार्य किए, जिसके कारण उनकी वाणी और जीवन दर्शन में भारतीय एकात्मकता का स्वर पूर्ण रूप से विद्यमान है।

**संकेत शब्द :** श्री गुरु तेगबहादुर, गुरु नानक देव, गुरुवाणी, जीवन दर्शन, दशम गुरु परंपरा, मुगल शासन, औरंगजेब, भारतीय एकात्मता, भारतीय संस्कृति

## प्रस्तावना

मुगल राज ने भारत की जनता को धर्मांतरण करने पर विवश कर दिया था। इस्लाम, जो 21 जून, 712 ईसवी को सप्तसिंधु के महाराजा दाहिर सेन, उनकी पत्नी और पुत्र के बलिदान के साथ मोहम्मद बिन कासिम के अत्याचारों के साथ भारत में प्रवेश करता है, इसके साथ ही प्रारंभ होता है भारत को इस्लाम धर्म के आवरण में बाँधने का। आतताइयों की क्रूरता और अत्याचारों ने उस समय सभी हदों को पार कर दिया था। ललितादित्य कश्मीर में और बप्पा रावल सिसोदिया नागौर राजस्थान ने 736 ईसवी तक इस्लाम को एक बार के लिए तो भारत से बाहर कर दिया था, किंतु उनके अथक प्रयास के पश्चात् भी इस्लामिक सत्ता पुनः भारत में स्थापित हो गई। इन बाहरी आक्रांताओं के विरुद्ध यदि 750 वर्षों में पहली बार कोई प्रतिकार होता है, तो उसके जन्मदाता गुरु नानक देव जी थे। गुरु नानक देव जी ने भारतीय जनता को इस्लामिक सत्ता के द्वारा किए जा रहे अत्याचारों के विरुद्ध खड़ा ही नहीं किया, अपितु अत्याचारों का प्रतिकार करने के लिए नए बीजारोपण और वातावरण को निर्मित भी किया। साथ-ही-साथ जाति, गोत्र और मजहब के भेदभाव में उलझी भारतीय जनता को इस तुच्छ मानसिकता से निकलने का कार्य भी गुरु साहब ने किया। गुरु नानक देव जी लिखते हैं :

'नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु।
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस।
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस'।

(अग्निहोत्री, 2019, पृष्ठ 83)

गुरु नानक देव जी का स्पष्ट कहना है कि मुझे इन ऊँची जाति के लोगों से कुछ लेना-देना नहीं है, मैं तो उनके साथ हूँ जिनको समाज नीची जाति से भी नीचा मानता है। समरसता एवं समन्वय का विराट् भाव गुरु नानक देव जी की वाणी में परिलक्षित होता है। इसी परंपरा का निर्वाहन गुरु तेगबहादुर जी की वाणी में दिखाई देता है।

## शोध प्रविधि और उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य गुरु तेगबहादुर जी के जीवन दर्शन और उनकी वाणी में व्याप्त समरसता के भाव को प्रस्तुत करना है, जिसके अंतर्गत आधारभूत शोध प्रविधि, विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि के साथ ऐतिहासिक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। इस शोध पत्र के माध्यम से गुरु तेगबहादुर जी के जीवन संबंधी विविध आयामों का परिचय देने का प्रयास किया गया है। साथ ही जन मानस के लिए उन्होंने जो अपने प्राणों की आहुति दी, उससे जुड़े तथ्यों को भी समेटने का प्रयास किया गया है। इसके साथ दश गुरु परंपरा में गुरु नानक देव जी के द्वारा किए गए महत्त्वपूर्ण कार्यों का भी वर्णन है। गुरु नानक देव जी भारतीय समाज के रोग के मूल (जाति व्यवस्था) पर प्रहार कर रहे थे। उच्च वर्गों द्वारा निम्न वर्ग से और दलित वर्ग से आपसी भेदभाव को गुरु साहिब ने समाप्त करने के लिए गुरु दरबार में सभी को समानता का स्थान प्रदान किया। ये सभी सामाजिक सुधार गुरु साहब की शिक्षा के कारण ही भारतीय जनमानस में स्वीकार किए गए। इस्लामिक सत्ता के विरुद्ध संघर्ष हो या फिर उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के लिए उनकी सोच में आया परिवर्तन गुरुओं की शिक्षाओं के कारण था। इस्लामिक सत्ता द्वारा जो अत्याचार जनमानस पर हो रहा था, उसमें उच्च और निम्न वर्ग के लिए कोई भेद नहीं था। सभी उन अत्याचारों को झेल रहे थे। उसका वर्णन करते हुए गुरु नानक जी लिखते हैं :

'साहिब के गुण नानकु गावे,
मास पुरी विचि आखु मसोला।।
जिनि उपाई रंगि खाई बैठा वेखे वखि इकेला।।
सचा सो साहिबु सचु तपावसु सचड़ा निआउ करेगु मसोला।'

(अग्निहोत्री, 2019, पृष्ठ 145)

यही शिक्षा इस समाज को इस्लामी अत्याचारों की दुनिया से निकाल कर प्रेम, सौहार्द के रंगों में रँग सकती है। दशम गुरु परंपरा के प्रथम गुरु, गुरु

[1]सहयोगी प्रोफेसर, पंजाबी एवं डोगरी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : nareshaman2002@hpcu.ac.in
[2]सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : drpreetisingh10001@gmail.com

नानक देव से लेकर दशम गुरु गोबिंद सिंह जी तक यह अभियान निरंतर गतिमान रहा है। गुरु तेगबहादुर जी ने गुरु नानक देव जी द्वारा दिखाए रास्ते को सामान्य जनता तक ले जाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया और स्वयं इस मार्ग पर चलते हुए अपना बलिदान भी दे दिया।

**परिचय**

नवम गुरु श्री तेग बहादुर जी की शहादत आज भी अविस्मरणीय है। इसलिए गुरु तेगबहादुर जी को 'हिंद की चादर' कहा जाता है। गुरु तेगबहादुर जी का जीवन दर्शन और उनकी वाणी पर विभिन्न भाषाओं में अनेकों कार्य हो चुके हैं। खासकर उनकी शहादत के संबंध में विभिन्न भाषाओं में अनेकानेक मत मिलते हैं। कुछ लोग मात्र दिखावे के लिए श्रद्धा प्रकट करते हैं और कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इस्लामिक राज के खिलाफ उनकी शहादत को ठीक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत नहीं करते। इस संबंध में डॉ. प्यारा सिंह अपनी पुस्तक श्री गुरु तेग बहादुर (फारसी स्रोत) की भूमिका में लिखते हैं :

'गुरु साहिब के जीवन के बारे में जानने के लिए किसी भी जरिये को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। गुरु साहिब की शहादत का एक पक्ष इससे ही मिल सकता है, इसलिए इस पुस्तक की अहम भूमिका है।' (सिंह, पी. 1976, पृष्ठ 08)

गुरु तेगबहादुर जी ने अनेक यात्राएँ कीं और अपनी वाणी के द्वारा सभी में ज्ञान के प्रकाश की ज्योति को प्रज्वलित किया। उनकी यात्राओं का वर्णन गुरु गोविंद सिंह जी के ' बिचित्र नाटक' में भी मिलता है।

'मुर पित पूरब कीयसि पयाना।
भाँति भाँति के तीरथ नाना।
जब ही जाति त्रिबेदी भए।
पुन्न दान दिन करत बिताए।
तही प्रकाश हमारा भयो।
पटना शहर बिरावे भव लयो।'

(धालीवाल, 2016, पृष्ठ 02)

यहाँ गुरु गोविंद सिंह जी के द्वारा पता चलता है कि मेरे पिता गुरु तेगबहादुर जी ने पूर्वी भारत की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में भाँति-भाँति के नाना तीर्थों की यात्रा करते हुए जब वे त्रिवेणी संगम प्रयाग पहुँचे, तो वहाँ पुण्य-दान करते हुए कई दिन व्यतीत हो गए। वहीं पूर्व में ही पटना नगर में मेरा जन्म (भव) हुआ और वहीं हमारा प्रकाश हुआ।

**वृत्तांत और जीवन यात्राएँ**

गुरु तेगबहादुर जी के जीवन के अनेक महत्त्वपूर्ण पक्ष रहे हैं, परंतु उनके जीवन और उनकी वाणी के परिप्रेक्ष्य को यहाँ वर्णित करने का प्रयास किया गया है। गुरु तेगबहादुर जी गुरु नानक देव जी के बाद दूसरे बड़े यात्री हैं, जो संपूर्ण भारतवर्ष की यात्राएँ करते हैं तथा अपनी वाणी के द्वारा सद्भावना का प्रचार-प्रसार भी करते हैं। गुरु तेगबहादुर सिंह जी की यात्राओं के सकारात्मक परिणाम के विषय में पता चलता है :

'प्रवास के दौरान भारतीय जनमानस से संवाद रखते हैं। लगभग 175 स्थान पर वे जाते हैं और अपने उपदेशों के द्वारा लोगों को धार्मिक और नैतिक जीवन जीने का संदेश देते हैं। यह भी विलक्षण बात है कि जहाँ-जहाँ भी नवम गुरु गए, लोगों ने नशा छोड़ दिया। आज भी भारत के कई नगर, कस्बे अपने पर यह कहते हुए गर्व करते हैं कि हमारे गाँव में नवम गुरु आए थे हमने उनको नमन किया, हमें उनका आशीर्वाद मिला, हमारा गाँव नशा मुक्त हुआ, इसलिए आज घर-घर से यह स्वर निकलता है :

धनं धनं गुरु तेग बहादर,
धनं नवम गुरु की वाणी और
धन गुरु तेग बहादर की कुर्बानी।'

(बेदी, 2023, पृष्ठ 09)

गुरु तेगबहादुर जी के जीवन काल की परिस्थितियों का अवलोकन करते हुए उनकी वाणी को तत्कालीन और समकालीन संदर्भ में देखने का प्रयास किया गया है। श्री गुरु तेगबहादुर जी की जीवन यात्रा के अनेक ऐसे पड़ाव हैं, जिनका अनुसरण करने मात्र से मानव जीवन में आशा का सकारात्मक संचार हो सकता है।

'नवम सिक्ख गुरु के रूप में गुरु तेगबहादुर सिंह का नाम विख्यात है, जिनके शौर्य एवं बलिदान से सनातन धर्म की रक्षा हुई है। इनका जन्म 1 अप्रैल, 1621 ई. को अमृतसर में हुआ था। इनके पिता गुरु हरगोबिंद जी छठे सिख गुरु थे, जिन्होंने सर्वप्रथम सिख सैन्य को तैयार करके हिंदू धर्म की रक्षा के लिए मुगलों से अनेकानेक युद्ध किए। गुरु तेगबहादुर जी ने अपने पिता एवं सिख धर्म का अनुसरण किया (मणि, 2018, पृष्ठ 27)।

गुरु तेगबहादुर जी के चार बड़े भाई थे। बाबा गुर्दत्ता जी, बाबा सूरजमल जी, बाबा अनिराय जी और बाबा अटल जी। उनकी एक बड़ी बहन भी थीं, जिनका नाम वीरो जी था। वे परिवार में सबसे छोटे थे। आपका विवाह माता गुजरी जी के साथ संपन्न हुआ, जो करतारपुर की रहने वाली थीं। उनके पिताजी का नाम लालचंद खत्री था और उनकी माता का नाम बिशन कौर था।

'गुरु तेगबहादुर अपने बचपन में बहुत शांतप्रिय थे। कहा जाता है कि जब ये पाँच वर्ष के थे, तभी अपने विचारों की धुन में लगे रहते थे और उस दशा में किसी से भी बोलते न थे। कुछ और बड़ा होने पर इनका विवाह जालंधर जिले के करतारपुर नगर की गुजरी नामक स्त्री के साथ हुआ। गुरु हरगोबिंद जी के परलोक सिधार जाने के अनंतर गुरु तेग बहादुर जी अपनी माता एवं पत्नी के साथ बतला नामक स्थान पर रहने के लिए चले गए' (चतुर्वेदी, 2019, पृष्ठ 230)।

गुरु हरगोबिंद जी मार्च 1644 में स्वर्ग सिधार गए और उन्होंने गुरुगद्दी अपने पोते बाबा गुरदत्ता जी के पुत्र गुरु हरराय जी को दी। श्री गुरु हरराय जी का जीवनकाल वर्ष 1630 से 1661 रहा। गुरु हरराय जी के बाद गुरुगद्दी उनके सुपुत्र गुरु हरकृष्ण जी के पास चली गई। उनका जीवनकाल भी बहुत अल्प रहा, 1656 से 1664 तक ही। बाल्यावस्था में ही वे भी स्वर्ग सिधार गए। यह समय विषम परिस्थितियों से भरा हुआ था, जब पंजाब को गुरुओं का साथ प्राप्त नहीं हुआ और भारतीय जनता के इस्लाम के एक और क्रूर शासक औरंगजेब को सहना पड़ा। इस तरह की विषम परिस्थितियों का सामना गुरु तेगबहादुर जी को अपने जीवन काल में देखना पड़ा। गुरुगद्दी इस समय से होते हुए दादा की तरफ आती है। गुरु तेगबहादुर जी गुरु हरकृष्ण जी के दादा के छोटे भाई थे। इस तरह गुरु तेगबहादुर जी के गुरु हरकृष्ण जी के साथ दादा के संबंध बनते हैं। गुरु तेगबहादर जी के गुरुगद्दी प्राप्त करने के संबंध में विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रदान किए हैं।

'ये भक्त, कवि और योद्धा भी थे। 33 वर्ष की अवस्था में इन्हें हरकिशन जी ने गुरुपद प्रदान किया था। भारतीय जनता में देशभक्ति का उन्मेष करने के लिए इन्होंने देश के विभिन्न कोनों में भ्रमण किया।' (मणि, 2018, पृष्ठ 27)

इस तरह से गुरु तेगबहादुर सिंह जी को गुरुगद्दी प्रदान की गई, जिस पर रहते हुए गुरु साहब ने धर्म के उत्थान को बढ़ाने के साथ-साथ समाज में व्याप्त अन्य विसंगतियों को दूर करने का भी सफल प्रयास किया।

**गुरु वाणी और शहादत**

गुरु तेगबहादुर जी ने गुरु नानक देव जी की उदासियों एवं भक्ति भावना की परंपरा को निरंतर गति प्रदान करते हुए भारतीय जनमानस में पुनः स्थापित किया और धर्मांतरण एवं मुस्लिम अत्याचारों का विरोध किया। इसके साथ ही अपने शिष्यों का मनोबल भी बढ़ाया। भारतीय जनता को जुल्मों और अत्याचारों के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार करना ही गुरु नानक देव जी और गुरु तेगबहादुर जी द्वारा दी गई मूल शिक्षा थी। किरतपुर से कैथल, कुरुक्षेत्र, दिल्ली, मथुरा, वृंदावन, आगरा, फतेहपुर, प्रयागराज, बंगाल, असम, बनारस और अयोध्या आदि विभिन्न स्थानों पर जाकर लोगों को आने वाली विषम परिस्थितियों के अनुकूल तैयार किया। मानवीय अधिकारों की बात भी गुरु तेगबहादुर जी ने उठाई। उनके विषय में सही ही लिखा गया है :

'सब मर्यादा में अनुशासन में कहीं और घट रहा है साक्षात् बनाकर
वह जानता है रास्ते में क्या है, मंजिल की तंग गली
न वहाँ रोशनी, अंधकार की मशाल गढ़ी
देख रहा है, अँधेरे से रिश्ते को, नूर के बीज भी व्याकुल हैं,
धरती भी व्याकुल.....अँधेरे युग की बात नहीं,
नूर के युग की बात है, यहीं पर वह देख रहा, वरदपाठ ।
अपनी कैसी कायनात। धन्न गुरु तेगबहादुर कायनात की चादर।
पर्दा नहीं, आवरण उठने वाला है।' (बेदी, 2023, पृष्ठ 19)

गुरु तेगबहादुर सिंह ने धर्म की रक्षा और धार्मिक स्वतंत्रता के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर दिया और सही अर्थों में 'हिंद की चादर' कहलाए। तत्कालीन समय में मुगल शासक जबरन लोगों का धर्मांतरण कर रहे थे। स्त्रियों के साथ अलग अत्याचार कर रहे थे। जब से भारत में मुगल साम्राज्य की नींव पड़ी, तब से (बाबर से औरंगजेब तक) लेकर अंतिम इस्लामी राज तक यह अत्याचारों की परंपरा चलती रही। बाबर के समय स्त्रियों पर किए जा रहे अत्याचारों का भी वर्णन मिलता है :

'मुसलमानिआ पड़हि कतेबा
कसट महि करहि खुदाइ वे लालो।।
जाति सनाती होरि हिदवाणीआ
एहि भी लेखे लाइ वे लालो।।
खून के सोहिले गावीअहि नानक
रतु का कुंगू पाइ वे लालो।।'
(अग्निहोत्री, 2019, पृष्ठ 144)

बाबर के इस हमले में सबसे ज्यादा दुर्दशा स्त्रियों की हुई। श्री गुरु तेगबहादुर जी की शहादत इतिहास में अतुलनीय और अविस्मरणीय है। वे एक महान् विचारक, योद्धा, पथिक एवं आध्यात्मिक व्यक्तित्व के धनी थे, जिन्होंने धर्म, मातृभूमि और जनता के अधिकारों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की भी आहुति दे दी। गुरु तेगबहादुर जी के जीवन का अवलोकन करते हुए कहा जा सकता है कि जो कार्य उन्होंने अपने जीवनकाल में किया, वह मानवीय अधिकारों के संबंधों को लेकर बिल्कुल स्पष्ट थे। गुरु तेगबहादुर की शहादत के विषय में गुरु गोबिंद सिंह जी लिखते हैं :

'ठीकर फोर दिलीस सिर प्रभु पुर कियो पयान।
तेग बहादर सी क्रिया करी न किनहूँ आन।
तेग बहादर के चलत भयो जगत में सोक।
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुरलोक।'
(धालीवाल, 2016, पृष्ठ 05)

अर्थात् दिल्ली के मुगल सम्राट औरंगजेब के सिर पर ठीकरा फोड़कर आत्म बलिदान करके श्री गुरु तेगबहादुर जी ने अकाल पुरुष के धाम प्रभु पुर की ओर प्रस्थान किया। गुरु तेगबहादुर जैसी लोक-रक्षार्थ स्वैच्छिक आत्म-बलिदान की क्रिया अर्थात् अद्भुत कारनामा किसी अन्य पुरुष ने नहीं किया। गुरुजी के इस मृत्युलोक से चले जाने पर इस जगत् में शोक ही शोक छा गया। परिणामत: सारा जगत् हाय-हाय कर रहा था और सुरलोक अर्थात् देवलोक जय-जयकार कर रहे थे।

गुरु तेगबहादुर जी की लोकप्रियता को देखकर तत्कालीन इस्लामिक सत्ता के मन में भी आशंका का बीजारोपण हुआ। गुरु तेगबहादुर जी से पहले 'सोलवीं सदी के आरंभ में ही सिख दुश्मनों के सीने में खटकने लगे थे। उस समय की जरूरत को देखते हुए श्री गुरु हरगोबिंद जी ने मीरी और पीरी की दो तलवारें धारण कीं। इसका यह भाव था कि हमने पीरी का त्याग नहीं किया, बल्कि इसकी सुरक्षा के लिए मीरी राजनीतिक सत्ता भी धारण कर ली है' (पदम,1971, पृष्ठ 17)।

अब गुरु तेगबहादुर जी की वाणी पर विचार किया जा सकता है कि तत्कालीन विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने अपनी वाणी से जनमानस में ज्ञान का संचार किया। तेग बहादुर जी की वाणी के 59 शब्द और 57 श्लोक श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज हैं। यह वाणी 16 रागों में है। गुरु तेगबहादुर जी की वाणी के रागों का विवरण इस प्रकार है :

राग गौरी में नौ शब्द
राग आसा में एक शब्द
राग देव गांधारी में तीन शब्द राग बिहागड़ा में एक शब्द
राग सोरठ में बारह शब्द
राग धनासरी में चार शब्द
राग जैतसरी में तीन शब्द
राग तोड़ी में एक शब्द
राग तिलंग में तीन शब्द
राग बिलावल में तीन शब्द
राग रामकली में तीन शब्द
राग मारू में तीन शब्द
राग बसंत हिंडोल में एक शब्द
राग बसंत में चार शब्द
राग सारंग में चार शब्द
राग जैजैवंती में चार शब्द

गुरु तेगबहादुर जी के जीवन फलसफे और वाणी में भक्ति भाव के

साथ वैराग और त्याग का विशेष महत्त्व है। उन्होंने कभी भी अपने जीवन से निराशा पैदा नहीं की, बल्कि उन्होंने कर्मयोगी बनकर अपने जीवन को सार्थक सिद्ध किया है' (घुम्मन, 2023, पृष्ठ 35)।

गुरु तेगबहादुर जी की वाणी में वाणीकारों की तरह भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रचलित प्रतीक और बिंबों की उपस्थिति है। इसके साथ ही गुरु तेगबहादुर जी ने उन विषयों की पहचान भी की, जो भारतीय संस्कृति में सकारात्मक विषय हैं और उन विषयों की भी, जो नकारात्मक हैं। कहा जाए तो समरसता और समन्वय रूपी वाणी को प्रस्तुत किया। गुरु तेगबहादुर जी के जीवन में संगत, गुरु स्मरण और सद्कर्मों का विशेष स्थान रहा है।

'भक्ति काव्य पुनरसंवाद नवम गुरु तेगबहादुर जी की वाणी में उपलब्ध होता है। गुरुजी अपनी वाणी में नई सृजनात्मक अनुभूति को गुरुवाणी में रखकर इस तरह से रेखांकित करते हैं कि उस समय के पंजाब का साहित्य नए सामाजिक, सांस्कृतिक, मौलिक सरोकारों से जुड़ जाता है। यह सब कुछ नवम गुरु की कृपा से नए क्षितिज को छूता है। उत्तर मध्यकाल में रचित ब्रजभाषा के काव्य में नवम गुरु की वाणी (59 शबद और 57 श्लोक) एक नए भाषा संसार को जन्म देती हैं। ब्रजभाषा का यह नव संवाद था। उत्तरी भारत की संत परंपरा में गुरु तेगबहादुर साहिब जिस काव्य भाषा का सृजन करते हैं, वह बाद में गुरु गोबिंद सिंह जी के विद्या दरबार की प्रमुख भाषा के रूप में स्थापित हुई' (बेदी, 2023, पृष्ठ 19)।

गुरु साहिब ने मोह माया को सदैव नकारा है। उनके जीवन में कर्मशीलता और परमात्मा की भक्ति का प्रमुख स्थान है :

'मन रे कहाँ भएओ तैं बउरा
अहिनिस अउद घटे नहीं जानै
भएऔ लोभ संगि हउरा।.....
बलु सूटकेओ बंधन परे कछु ना होत उपाय
कहो नानक अब ओट हरि गज जिऊं होऊ सहाय
बलु होआ बंधन छूटे सब किछ होत उपाए
नानक सबु किछ तुम्हारे हाथ मैं तुम ही होत सहाए।'
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ 925 और पृष्ठ1429)

उपर्युक्त पंक्तियों से आशय है कि गुरु तेगबहादुर जी की वाणी आत्मा से संवाद करती है। आत्मा से भी आगे जाकर यह संवाद समाज से होता है। इस प्रकार गुरु तेगबहादुर जी की वाणी शास्त्र और शस्त्र का समन्वय प्रस्तुत करती है। कहा जाए तो शास्त्र वही है जो प्राणी के मन मस्तक को मुक्त करता है, इस तरह से शस्त्र सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है। संतों की वाणी का वर्णन श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी मिलता है।

'The saint-language is closely related to Bhakti movement. It came into existence with the origin of the movement and continued upto the time till its after effects were felt. It may be made clear that all the saints of the time did not use the saint language. Only those saint used sant-Bhasha, who came into contact with the saints of different sets and areas for example, Guru Nanak and Guru Arjan wrote most of their verses in sant-basha, while Guru Angad, Guru Amar Das and Guru Ramdas preached only in the language of the area.' (कोहली, 1981, पृष्ठ 50)

गुरु तेगबहादुर जी की वाणी का ज्ञानात्मक प्रसार अत्यंत व्यापक है। उनकी वाणी में वेद, पुराण, स्मृतियाँ और उपनिषदों की भी शिक्षाएँ प्राप्त होती हैं। उनकी वाणी की सार्थकता लोक जनमानस में आज भी व्याप्त है। काव्य जीवन और जगत् की रागात्मक व्याख्या है। स्वाभाविक अनुभूतियों को अभिव्यंजित करने का यह कलात्मक माध्यम काव्य, मानव की अमोघ वाणी है। मानव परिस्थितिजन सुख-दुख, आशा-निराशा, आह्लाद-अवसाद आदि शत-शत भावों को काव्य कला के माध्यम से अधिक सहजता के साथ अभिव्यक्त कर पाता है। गुरु तेगबहादुर जी की वाणी में ये सभी गुण सहजता के साथ विद्यमान थे। उदाहरण :

'कोऊ माई भूलेगो मनु समझावे
वेद, पुराण साध मग सुनि करि निमक न हरि गुण गावे।।
.....साध
साधो रामशरण विश्रामा
वेद, पुराण पडे को यह गुण से सिमरो हर को नामा।।....
नर अचेत पाप ते डरू रे।
दीन दयाल सगल मै भजन सरनि ताहि तुम पर रे।
वेद, पुराण जास गुण गावत ता को नामु हीया मो धर रे।'
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ 22)

भारतीय संस्कृति से संवाद स्थापित करना और उसमें से भी सकारात्मक मूल्यों को स्वीकार करना और रूढ़ियों, भ्रांतियाँ को नकारना गुरु तेगबहादुर जी की वाणी का विशेष लक्षण रहा है। भारतीय ज्ञान परंपरा में संवाद की यह धारा गुरु तेगबहादुर साहब में भी देखने को मिलती है। तत्कालीन इतिहास से स्पष्ट होता है कि भारत में औरंगजेब का अत्याचार बढ़ता ही जा रहा था। उसके अत्याचार और धर्मांतरण को रोकने के लिए गुरु तेगबहादुर ने कश्मीरी पंडितों तथा अन्य हिंदुओं को बलपूर्वक मुसलमान बनाने का विरोध किया। भारतीय संस्कृति और धर्म की रक्षा के लिए गुरु तेगबहादुर जी ने जीवनपर्यंत संघर्ष किया। उन्होंने 'जिस देश-जाति पर जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जाएँ' युक्ति को चरितार्थ करने का पूर्ण प्रयत्न किया।

डॉ. जगबीर सिंह लिखते हैं : 'मध्यकालीन धर्म प्रवर्तकों ने सद्भावना सुधार तथा गौरव का ऐसा वातावरण तैयार किया, जिसने अलग-अलग संस्कृतियों को समन्वित और सुमेलित करने का संदेश दिया। इस जागृति को सामाजिक और सांस्कृतिक तौर पर क्रांतिकारी घटना कहा जा सकता है, क्योंकि इस घटना ने न केवल विरासत के असली गौरव को जीवित करके हमारे बोध को प्रभावित किया, बल्कि जीवन शैली के विभिन्न पहलुओं को परिवर्तित भी कर दिया। गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी का प्रवचन इसी सांस्कृतिक क्रांति का दस्तावेज है' (सिंह, जे. 2012, पृष्ठ 17)।

गुरु तेगबहादुर जी की वाणी में समन्वय की विराट् चेष्टा अभिव्यक्त हुई है। उनके अनुसार समरसता सहज जीवन जीने का सबसे सशक्त आधार है। आशा-तृष्णा, काम-क्रोध को त्याग कर मनुष्य को ऐसा जीवन जीना चाहिए, जिसमें मान-अपमान, निंदा-स्तुति, हर्ष-शोक आदि समस्त भावों को एक समान रूप से स्वीकार करने का भाव उपस्थित हो। अपने सिद्धांतों के लिए आत्मबलिदान करना बहुत बड़ी बात है। गुरु तेगबहादुर ऐसे ही अद्वितीय, अतुलनीय आत्मबलिदानी थे।

'गुरु तेगबहादर की बानी का पाठ और प्रवचन मानव को उसके समय

की ऐतिहासिक चुनौतियों के साथ लड़ने का विचार धारण करने का आधार प्रदान करता है। यह दहशत, दमन और अत्याचार के खिलाफ लड़ने वाले व्यक्तित्व को तैयार करता है' (सिंह, जे. 2006, पृष्ठ 87)।

अगर कहा जाए तो गुरु तेगबहादुर जी की दृष्टि सिर्फ किसी एक भूखंड पर केंद्रित नहीं थी। वे पूरी सृष्टि की व्यथा को आत्मसात् कर मानवीय दुख-दर्द को समाप्त कर देना चाहते थे। गुरु तेगबहादुर जी के अनुसार धर्म एक मजहब नहीं, धर्म एक कर्तव्य है। आदर्श जीवन का पथ है। गुरु तेगबहादुर जी की शिक्षाएँ उनका त्याग व बलिदान एक धरोहर है, जिसे आज बचाना और सहेज कर रखना अति आवश्यक है। गुरु तेगबहादुर जी के जीवन के कई पदचिह्न रहे, जिनमें उनके बाल्यकाल, आध्यात्मिक जीवन, कश्मीरी पंडितों का संघर्ष और औरंगजेब की घटना, गुरु तेगबहादुर जी की शहादत/बलिदान उनके जीवन से ग्रहण करने के अनुकरणीय तथ्य हैं। कश्मीरी पंडितों पर हो रहे अत्याचार और गुरु तेगबहादुर जी के पास उनका जाना एक बड़ी घटना मानी जा सकती है।

जब औरंगजेब ने धर्म परिवर्तन की नीति को जोरों से चलाना चाहा, तब कश्मीर के कुछ पंडित धर्म पर आई हुई विपत्ति की कष्ट कथा लेकर गुरु तेगबहादुर के पास पहुँचे। गुरु ने कहा : 'किसी महापुरुष के बलिदान के बिना हिंदू धर्म की रक्षा असंभव है। कहते हैं, गुरु तेगबहादुर के पुत्र बालक गोबिंद सिंह वहीं खड़े थे। पिता की बात सुनते ही वे बोल उठे कि पिताजी! तो आपसे बढ़कर दूसरा महापुरुष कौन होगा? गुरु को बेटे की बात लग गई। उन्होंने आनन-फानन अपने बलिदान की राह सोच निकाली।' (दिनकर, 2019, पृष्ठ 376)

गुरु तेगबहादुर ने कश्मीरी पंडितों से कहा कि आप जाकर औरंगजेब से कह दें कि यदि गुरु तेगबहादुर ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया तो उसके बाद हम भी इस्लाम ग्रहण कर लेंगे और अगर उन्होंने नहीं किया तो हम भी नहीं ग्रहण करेंगे। इससे औरंगजेब ने क्रोधित होकर गुरु तेगबहादुर जी को बंदी बनाने के आदेश दे दिए।

गुरु तेगबहादुर जी ने अपना संपूर्ण जीवन सद्मार्ग पर चलने में बिताया और कर्तव्यों का पालन करते हुए देश के सम्मान के लिए अपने प्राणों को निछावर कर दिया। नवंबर सन् 1675 ई. को दिल्ली के चाँदनी चौक में गुरु तेगबहादुर जी ने अपने प्राणों की आहुति दे दी।

'भारतीय संस्कृति में बलिदान की परंपरा का आरंभ श्री गुरु अर्जन देव जी की शहीदी से शुरू होता है और गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान के साथ धधकती यह अग्नि विकराल रूप धारण कर जाती है और फिर सिख धर्म में शहादत की दीर्घ परंपरा का विकास होता है' (जग्गी, 2011, पृष्ठ 03)।

गुरु तेगबहादुर जी का जीवन भारतीय दर्शन से परिपूर्ण है। उनका बलिदान सोए हुए भारतवासियों के मन में अपने देश, धर्म और आत्मसम्मान की रक्षा के लिए स्वयं को निछावर करने की नवीन चेतना के विकास का महान् कारक माना जा सकता है।

गुरु तेगबहादुर जी ने अनेक यात्राएँ कीं, जिस कारण से उनकी वाणी में भारतीय संस्कृति की अखंडता और अक्षुण्णता की सुदृढ़ परंपरा परिलक्षित होती है। उनकी वाणी में समरसता का भाव दिखाई देता है। गुरु तेगबहादुर जी ने आध्यात्मिक स्तर पर धर्म का सच्चा ज्ञान बाँटा और अनेक जनकल्याण से जुड़े आदर्श और प्रतिमान स्थापित किए, जो आज भी अविस्मरणीय हैं। मध्ययुगीन हिंदी साहित्य के कवि सेनापति ने अपने काव्य में गुरु तेगबहादुर जी के विराट् व्यक्तित्व को सृष्टि के संरक्षक के रूप में स्मरण किया है :

'प्रगट भयो गुरु तेगबहादुर।
सकल सृष्टि पै ढापी चादर।।
करम धरम जिनि पति राखी।
अटल करी कलजुग मै साखी।।
सकल सृष्टि जाका जस भयो।
जिह ते सरब धर्म वचियो।।'

(उपाध्याय, 2018)

## निष्कर्ष

गुरु तेगबहादुर जी का जीवन दर्शन और उनकी वाणी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक है। उनकी वाणी को आत्मसात् करने मात्र से जीवन में आने वाली विषम परिस्थितियों में भी जनमानस सकारात्मक तत्त्व को खोज सकता है। गुरु तेगबहादुर के जीवन अध्ययन से भारतीय जनमानस में एक नवीन ऊर्जा और आशा का संचार होता हुआ देखा जा सकता है। तत्कालीन समाज ने उत्पीड़न का विरोध करने की अपनी दिशा और इच्छा शक्ति को खो दिया था, परंतु गुरु तेगबहादुर जी ने दीन और दुखी जनमानस को सिख दर्शन का पालन करते हुए निर्माता में पूर्ण विश्वास के माध्यम से खुद को मुक्त करने का रास्ता दिखाया। वास्तव में देखा जाए तो विश्व इतिहास में धर्म एवं मानवीय मूल्यों, आदर्शों एवं सिद्धांतों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वालों में गुरु तेगबहादुर साहब का स्थान अद्वितीय है। गुरु तेग बहादुर सिंह जी का बलिदान न केवल धर्म पालन के लिए ही था, अपितु समस्त मानवीय सांस्कृतिक विरासत की रक्षा के लिए माना जा सकता है। गुरु तेगबहादुर जी के लिए धर्म, सांस्कृतिक मूल्यों और जीवन विधान का नाम था, जिन मूल्यों को शाश्वत रखने के लिए गुरु तेगबहादुर साहब ने अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। गुरु तेगबहादुर जी आध्यात्मिक गुरु और सांसारिक योद्धा, विद्वान् एवं मार्गदर्शक रहे। उनके व्यक्तित्व में भक्ति, ज्ञान और शक्ति का अद्भुत समन्वय परिलक्षित होता है। गुरु तेगबहादुर जी ने वर्ण व्यवस्था के सिद्धांत को नकारते हुए समरसता के वातावरण का निर्माण किया।

गुरु तेगबहादुर की शहादत ने वह कर दिखाया, जो शस्त्र और तलवारें नहीं कर सकीं। उन्होंने अपनी कुर्बानी देकर हिंदुस्तान में हिंदू धर्म के अस्तित्व को मिटने से बचा लिया। इसलिए गुरु तेगबहादुर को 'हिंद की चादर' कहा गया। वर्तमान में भारतीय जनमानस युगपुरुष गुरु तेगबहादुर जी के जीवन चरित्र एवं बलिदान से प्रेरणा लेकर मानवीय एवं नैतिक मूल्य के साथ जीवन में संस्कारों को आत्मसात् कर आगे बढ़ सकता है, जिससे भारतवर्ष पुन: विश्वगुरु के पद पर अग्रसर हो सकेगा।

## संदर्भ

अग्निहोत्री, के.सी. (2019). लोकचेतना के वाहक : श्री गुरुनानक देव जी. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-83.

अग्निहोत्री, के.सी. (2019). लोकचेतना के वाहक : श्री गुरुनानक देव जी. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-145.

अग्निहोत्री, के.सी. (2019). लोकचेतना के वाहक : श्री गुरुनानक देव जी,

नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-144.

उपाध्याय, एल.एम. (2018). श्री तेग बहादुर जी की वाणी में समायी है राम नाम की महिमा. प्रभात खबर. https://www.prabhatkhabar.com/vishesh-aalekh/1230579 से पुन:प्राप्त.

कोहली, एस.एस. (1981). श्री गुरु ग्रंट साहब एन एनालिटिकल स्टडी. अमृतसर : सिंह ब्रदर्स. पृष्ठ-50.

घुम्मन, वी.एस. (2023). श्री गुरु तेगबहादुर जी जीवन, चिंतन और बानी, अमृतसर : वारिस शाह फाउंडेशन. पृष्ठ-35.

दिनकर, आर.एस. (2019). संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद : लोक भारती प्रकाशन. पृष्ठ-376.

धालीवाल, पी.पी.एस. (2016). गुरु गोबिंद सिंह व्यक्तित्व और कृतित्व, पटियाला : मदान पब्लिशिंग हाउस. पृष्ठ-05.

धालीवाल, पी.पी.एस. (2016). गुरु गोबिंद सिंह व्यक्तित्व और कृतित्व, पटियाला : मदान पब्लिशिंग हाउस. पृष्ठ-02.

चतुर्वेदी, पी.आर. (2019). उत्तरी भारत की संत परंपरा, लोकभारती प्रकाशन. पृष्ठ-230.

जग्गी, आर. एस. और जग्गी, जी. के. (2011). गुरु तेगबहादुर बानी विश्लेषण. पटियाला : गुरुमत प्रकाशन. पृष्ठ-03.

पदम, पी.पी.एस. (1971). श्री गुरु तेगबहादुर, पटियाला : कलम मंदिर, लौकयार माल. पृष्ठ-17.

बेदी, एच.एम.एस. (2023). नवम गुरु को नमन, दिल्ली : समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा. पृष्ठ-19.

बेदी, एच.एम.एस. (2023). नवम गुरु को नमन, दिल्ली : समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा. पृष्ठ-09.

बेदी, एच.एम.एस. (2023). नवम गुरु को नमन, दिल्ली : समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा. पृष्ठ-07.

मणि, आर.के.यू. (2018). सिक्ख गुरुओं का प्रदेय, नई दिल्ली : वैदिक पब्लिशर. पृष्ठ-27.

मणि, आर.के.यू. (2018). सिक्ख गुरुओं का प्रदेय, नई दिल्ली : वैदिक पब्लिशर. पृष्ठ-27.

श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ-925. पृष्ठ-1429.

श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ-22.

सिंह, जे. (2012). श्री गुरु ग्रंथ साहिब दी समकालीन प्रासंगिकता, पटियाला : पंजाबी यूनिवर्सिटी. पृष्ठ-17.

सिंह, जे. (2006). मध्यकालीन पाठ: वर्तमान परिप्रेक्ष्य, नई दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया. पृष्ठ-87.

सिंह, पी. (1976). श्री गुरु तेगबहादुर (फारसी स्रोत), अमृतसर : गुरुनानक देव विश्वविद्यालय. पृष्ठ-08.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 22-30, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# दीनदयाल उपाध्याय के भाषणों का अध्ययन

**डॉ. आकाश दीप जरयाल**[1]

**सारांश**

दीनदयाल उपाध्याय देखने में तो अति सामान्य व्यक्ति प्रतीत होते थे, परंतु वे अन्य हर प्रकार से—मौलिक कल्पनाएँ करने की दृष्टि से, अपने शब्दों की सार्थकता की दृष्टि से, अथक रूप से अनवरत कार्य करने की क्षमता की दृष्टि से एवं जीवन की सरलता व निर्मलता की दृष्टि से—एक असाधारण व्यक्तित्व थे। कहा जा सकता है कि उनकी जीवन-यात्रा 'अतिसाधारण से महामानव की ओर' जैसी रही है, जिनके इशारे पर एक इतिहास का निर्माण हुआ है। वे एक विलक्षण जनसंचारक थे, जो उनके लेखन, पुस्तकों, पत्रों और भाषणों आदि से स्पष्ट है। देश के जन सामान्य से संवाद हेतु उन्होंने तीन समाचार पत्र आरंभ किए, जो आज भी प्रकाशित हो रहे हैं। उनमें प्रमुख हैं लखनऊ से प्रकाशित हिंदी मासिक 'राष्ट्रधर्म' (1947), लखनऊ से ही आरंभ हिंदी साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' (1948) और लखनऊ से आरंभ हिंदी दैनिक 'स्वदेश' (1950)। प्रस्तुत शोध आलेख में यह समझने का प्रयास किया गया है कि दीनदयाल उपाध्याय अपने भाषणों के माध्यम से किस प्रकार पार्टी कार्यकर्ताओं और देशवासियों से संवाद करते थे। हालाँकि उनके भाषण विडियो और ऑडियो स्वरुप में आज उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन उनके भाषणों के जो अंश खासतौर से 'पाञ्चजन्य' में समय-समय पर प्रकाशित हुए उनके आधार पर एक आकलन इस शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है। उनके भाषणों के कुछ अंश उनकी पुस्तक 'राष्ट्र जीवन की दिशा' में भी संकलित किए गए हैं। प्रस्तुत अध्ययन हेतु उनमें से भी कुछ भाषणों का उपयोग किया गया है। दीनदयाल उपाध्याय के संचारक पक्ष को समझने के लिए उनके भाषणों पर और अधिक शोध की आवश्यकता है।

**संकेत शब्द :** दीनदयाल उपाध्याय, भाषण, 'पाञ्चजन्य', 'राष्ट्र धर्म', 'स्वदेश'

## प्रस्तावना

दीनदयाल उपाध्याय के संचारक पक्ष को समझने के लिए उनके द्वारा समय-समय पर दिए गए सार्वजनिक भाषणों को समझना आवश्यक है। ये भाषण व्यक्ति, व्यक्ति-निर्माण, समाज, समाज-निर्माण, राष्ट्र एवं राष्ट्र-निर्माण, सामाजिक कुरीतियों, परंपराओं, संस्कार और शिक्षा आदि महत्त्वपूर्ण विषयों पर दिए गए हैं। दीनदयाल उपाध्याय के निधन के बाद वर्ष 1971 में 'राष्ट्र जीवन की दिशा' नाम से प्रकाशित पुस्तक में उनके ऐसे ही बीस भाषणों का संग्रह किया गया। पुस्तक में शामिल प्रमुख भाषण हैं: परम सुख का मार्ग; राष्ट्र की जीवनदायिनी शक्ति; राष्ट्र और राज्य; राष्ट्र का स्वरूप-चिति; राष्ट्र : प्रकृति और विकृति; परं वैभवं नेतुमेतत्स्वराष्ट्रम्; संगठन का आधार : राष्ट्रवाद; व्यक्ति और समाज का संबंध; सामंजस्यपूर्ण समाज व्यवस्था; दोउन राह न पाई; हमारा राष्ट्रध्वज; विजय-आकांक्षा; लोकमत-परिष्कार; 'त्रिभाषा फार्मूला' नहीं 'द्विभाषा सूत्र' चाहिए; पश्चिमी वादों से मुक्त एक नए आर्थिक दर्शन की खोज; साधन को साध्य न बना लें; हमारे राष्ट्र की प्रकृति; अपना दृष्टिकोण बदलें; पश्चिम और हम; कश्मीर के लिए जो शहीद हुए उन्हें न भूलें। इस पुस्तक में दीनदयाल जी के वे मूलगामी विचार तत्त्व हैं जो व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और मानवता के परिपूर्ण और समग्र चिंतन की आधारशिला बनकर नवनिर्माण की प्रेरणा प्रदान करते हैं। पुस्तक में भारत की एकात्म चिंतन-धारा के सूत्र संगृहीत हैं। उनके सभी भाषणों का मूल पाठ तो उपलब्ध नहीं है, परंतु कुछ भाषणों के जो अंश हिंदी साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' में समय-समय पर प्रकाशित हुए वे ही अध्ययन में शामिल किए गए हैं।

## शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है। तथ्यों का प्रमुख स्रोत प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'दीनदयाल संपूर्ण वाङ्मय' है। यह वाङ्मय 15 खंडों में संकलित किया गया है।

हिंदी साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' में प्रकाशित दीनदयाल उपाध्याय के भाषणों के कुछ अंश निम्नलिखित हैं :

### 'आसुरी जीवन का आदर्श ही पतन का कारण'

*(राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह-प्रांत प्रचारक के रूप में दीनदयाल उपाध्याय द्वारा सितंबर 1951 में बहराइच की एक सार्वजनिक सभा में दिया गया भाषण)*

अपने परंपरागत मूलभूत सिद्धांतों को भूल जाने तथा प्राकृतिक जीवन को न समझने के कारण ही समाज में चारों ओर कठिनाइयाँ दृष्टिगोचर हो रही हैं। जिन लोगों को हम सर्वशक्तिमान समझते थे, त्यागी जानते थे तथा जिन पर हमने अपनी सारी श्रद्धा उड़ेल दी थी—उन नेताओं के हाथ में शासन की बागडोर होने के बाद हम बाहर तथा अंदर सभी ओर से असफल हो रहे हैं। आर्थिक कठिनाइयाँ बढ़ गई हैं तथा दिनोंदिन बड़े वेग के साथ बढ़ती जा रही हैं। इतना होने पर भी दलबंदी का जोर बढ़ता जा रहा है, वर्ग-विद्वेष उभारा जा रहा है। हम मिट्टी को सोना बनाने की सोच रहे थे, किंतु उसके स्थान पर सोने को हाथ लगाते ही वह मिट्टी हो रहा है।

इसके लिए जब तक हम पचास वर्ष पूर्व का इतिहास नहीं देखते कि स्वराज्य किस चीज के लिए लाया गया, तब तक समस्या हल नहीं हो सकती। मूल कारण को दूर किए बिना इच्छाओं की पूर्ति तथा सुख संभव नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए बबूल के पेड़ को चाहे शरबत और चाहे पानी से सींचा जाए, उसे दुष्ट या सज्जन कोई भी सींचे, अंततः उसमें काँटे ही मिलेंगे। आम के लिए तो आम के पेड़ की आवश्यकता है। जिस आधार को लेकर हमारे नेता आज चल रहे हैं, उसे बदले बिना हमारा तथा देश का कल्याण संभव नहीं। अभारतीय, विदेशी तथा भिखारी मनोवृत्ति को लेकर स्वराज्य की कल्पना महाराणा प्रताप का स्वराज्य नहीं हो सकती,

[1]कवि, लेखक एवं स्वतंत्र शोधकर्ता, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : jaryalpalampur@gmail.com

उसके द्वारा गो-ब्राह्मण प्रतिपालन तथा स्वधर्म की रक्षा नहीं की जा सकती।

हमने तो आर्थिक आधार पर रोटी और कपड़े के लिए स्वराज्य का आंदोलन किया। हमने सोचा कि मैनचेस्टर की मिलें तथा लंकाशायर के कारखाने ही हमारे पतन के कारण हैं। उनकी गुलामी आर्थिक गुलामी है। हमारे स्वराज्य की कल्पना भोगप्रधान होने के कारण यहाँ से अँग्रेजों के जाते ही रोटी का बँटवारा शुरू हो गया। राजनीतिक पंडितों का एक वर्ग विशेष उसे प्राप्त करने के प्रयत्न में लग गया। अपनी परंपरा तथा अपने इतिहास से स्फूर्ति न ग्रहण करते हुए अमरीका एवं फ्रांस की राज्य क्रांतियों को आदर्श मानकर उनसे प्रेरणा ली गई। इसी कारण अँग्रेजों के चले जाने के बाद भी आज अँग्रेजियत विद्यमान है। आज हमारे दिमाग के ऊपर मार्क्स तथा रूस के सिद्धांतों का आधिपत्य है।

अत्यंत प्राचीन काल से भारतवर्ष अखंड, अविभाज्य एवं एक दृढ़ राष्ट्र रहा है, किंतु इस सिद्धांत को भुलाकर कश्मीर के भाग्य निर्णय का अधिकार वहाँ के 40 लाख निवासियों को दिए जाने की गलत घोषणा की जा रही है। कश्मीर भारतवर्ष का एक महत्त्वपूर्ण अंग सदैव से रहा है, उसे आत्मनिर्णय का कोई अधिकार नहीं हो सकता। कश्मीर भारतवर्ष का नंदनवन है। श्री स्वामी शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म का मूलोच्छेदन करने के लिए कश्मीर में प्रवेश किया था तथा सनातन धर्म की प्रतिष्ठापना करते हुए उसके प्रतीक स्वरूप मंदिर का निर्माण किया था। 12 ज्योतिर्लिंगों के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण अमरनाथ कश्मीर में है, यह सर्वविदित है। कश्मीर भारत का अंग है, उसके विषय में निर्णय करने का अधिकार भारतवर्ष को होना चाहिए, न कि कश्मीर को। उदाहरण के तौर पर शरीर में अंगुली के फोड़े का ऑपरेशन करने का निर्णय अंगुली नहीं करती, वरन् संपूर्ण शरीर तथा सत्-असत् का ज्ञान रखने वाली बुद्धि ही करती है। इस प्रकार कश्मीर भारतवर्ष के साथ रहेगा अथवा नहीं, इसका अधिकार कश्मीर को नहीं, वरन समूचे देश को है। जब तक हम कश्मीर के आक्रमण का प्रतिकार नहीं करते तथा एक आक्रमणकारी को अपनी पवित्र मातृभूमि से खदेड़कर बाहर नहीं निकाल देते, तब तक कश्मीर की समस्या हल नहीं हो सकती। हम पर आक्रमण हों और हम स्वार्थी दुनिया के समक्ष खड़े होकर न्याय की याचना करें, इससे बढ़कर अपमान का जीवन और क्या हो सकता है? जो अपनी रक्षा अपने आप नहीं कर सकता, उसको न्याय की अपेक्षा भी नहीं करनी चाहिए। आज कश्मीर के भाग्य का निर्णय स्वार्थों के आधार पर बने साम्राज्यवादी आकांक्षाओं से परिपूर्ण संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा नहीं हो सकता। कश्मीर में हमारी सेनाएँ साम्राज्य निर्माण करने अथवा दया दिखाने के निमित्त नहीं गई थीं। आज वहाँ का जनमत भी यदि अराष्ट्रीय विचारधाराओं से प्रभावित होकर भारत की सेनाएँ हटाने के लिए कहे तो हम कभी स्वीकार नहीं करेंगे।

भारत के विधान में गलत सिद्धांतों को आधार बनाने के कारण ही हमने विधान में प्रांतों को स्वतंत्र राज्य तथा भारत को राज्यों का संघ घोषित किया है। यह अभारतीय विचार है। भारत एक और अखंड है। हाथ, पैर, आँख मिलाकर शरीर नहीं बना करता। शरीर में चैतन्य जीवन होने से ही सभी अंगों का अस्तित्व रहता है। आज जबकि एक ही दल सभी प्रांतों में सत्तारूढ़ है, तब तो दलबंदी का इतना तांडव दिखाई पड़ता है, किंतु जब अलग-अलग प्रांतों में सभी दलों के मंत्रिमंडल बनेंगे, तब देश की क्या दशा होगी, कहा नहीं जा सकता। इस प्रकार हमारी राजनीति गलत दिशा की ओर चल रही है। भारत की आत्मा धर्म है। यह देश सदैव से धर्म प्रधान देश रहा है। दुर्योधन का राज्य अधार्मिक था, इसलिए युधिष्ठिर ने धर्मराज्य की स्थापना के लिए संघर्ष किया। अधार्मिक राज्य में सदैव दुःख ही हुआ करते हैं। रावण के अधार्मिक राज्य में लंका तो सोने की हो सकती है, लेकिन रामराज्य नहीं बन सकता। इसके कारण ही आज सभी ओर दुःख दैन्य दिखाई दे रहा है।

आज समाज में वर्ग-विद्वेष के आधार पर साम्य निर्माण करने का अच्छा प्रयत्न चल रहा है, किंतु उनको यह पता नहीं कि सच्चा साम्य तो आत्मीयता ही है। आज जीवन के स्तर को ऊँचा करने की बात कही जाती है, अर्थात् अपनी आवश्यकताओं को अधिक से अधिक बढ़ाते हुए विषय वासनाओं के निमित्त सुखोपभोग के साधन इकट्ठा करना जीवन के स्तर को ऊँचा करना समझा जाता है। भारतीय जीवन तो त्याग प्रधान जीवन रहा है। एक साधु के सम्मुख, जो कि केवल लँगोट लगाकर निकलता है, हम श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं। हमारे जीवन का आधार भोग स्वार्थ न होकर प्रेम त्याग तथा आत्मीयता रहा है। आज असुरों का जीवन ही हमारा आदर्श हो गया है, इसी कारण देश में दुःख दैन्य का साम्राज्य दिखाई दे रहा है। नहीं तो जिस भारत ने आज तक दुनिया को भोजन दिया था, उसी को रोटी के लिए दूसरों के सामने हाथ फैलाना न पड़ता।

अतएव आज हम दृढ़ निश्चय के साथ अपनी शिक्षा नीति, आर्थिक नीति तथा राजनीति को भारतीय भावनाओं से ओतप्रोत करें, तभी हमारा तथा देश का कल्याण संभव है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इसी अभाव की पूर्ति में प्रयत्नशील है तथा भारत के कण-कण में प्रेम, आत्मीयता तथा सहानुभूति निर्माण करने का कार्य कर रहा है। हमको यह विश्वास है कि दुनिया के लोग पथभ्रष्ट हो गए हैं, किंतु इसकी चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। लोग गिरते रहते हैं और वृद्ध मरते ही रहते हैं, परंतु बच्चे जीवित रहते हैं। हमने इस समाज को जीवित रखने की इच्छा की है और जीवित ही रखेंगे।

हम शरीर के प्रत्येक अंग बाहु, आँख, कान तथा दिमाग को बलिष्ठ बनाते हुए जीवित रहने की इच्छा करें। हमें कोई मार नहीं सकता। जो चलते हैं, वही अपने ध्येय को प्राप्त करते हैं। आज हम चलने का निश्चय करें, इस प्रकार सभी समस्याएँ सुलझ जाएँगी। हम और शीघ्र गति से चलें, हमें सभी वस्तुएँ प्राप्त होंगी। इसमें चिंता करने का कोई कारण नहीं है। महाराणा प्रताप ने 25 वर्षों तक जंगलों की खाक छानी, रोटी की चिंता नहीं की, यदि चिंता की तो अपने ध्येय पर दृढ़तर होकर चलने की। इस प्रकार हम देखेंगे कि उस परमवीर ने अपने बाहुबल से रोटी ही नहीं, अपने गत वैभव को प्राप्त कर लिया। हम स्वर्णिम भविष्य का निर्माण करके ही रहेंगे, इसे कोई ताकत रोक नहीं सकती। हमारा भारत फिर से जगद्गुरु बनेगा, बनेगा, बनेगा। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है (पाञ्चजन्य, 3 मई, 1951)।

## 'इन नेताओं ने देश की एकता स्थिर रखने का कभी प्रयत्न नहीं किया'

*(भारतीय जनसंघ के प्रदेश महामंत्री (उत्तर प्रदेश) के नाते यह दीनदयाल उपाध्याय का प्रथम भाषण है, जो भारतीय जनसंघ की शाहजहाँपुर शाखा के उद्घाटन के अवसर पर 20 सितंबर, 1951 को दिया गया। उस कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री हरिनारायण वकील ने की थी)*

विश्व को पालने वाला देश आज विदेश से अन्न मँगाता है। जिस भारत के खेतों में सोने की बालियाँ लगती थीं, वह अन्न की भीख माँग रहा है।

हमारे उत्थान और पतन का इतिहास बताता है कि हमने कभी इस प्रकार अन्न की भीख नहीं माँगी। अँग्रेजों के समय में हम नौकर थे, लेकिन आज फकीर बन गए हैं। इसके अतिरिक्त आज हिंदुस्थान की सीमा अरक्षित है, जिसके लिए करोड़ों रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा है। विभाजन दूर होने पर देश की समस्याएँ हल हो सकती हैं। हम पुनः सुख-शांति से रहकर अपने पूर्वजों का तर्पण सिंधु नदी के तट पर पूर्ववत् कर सकेंगे, गलत कदम उठाकर भी गलती का समाधान कर उठाया गया कदम पीछे हटा लेना ही बुद्धिमत्ता है, किंतु लगता है कि जिस काँग्रेस ने पाकिस्तान बन जाने दिया, वह अब उसे मिटाने का प्रयत्न करने के लिए तैयार नहीं है।

यह ठीक है कि आज के जनतंत्र के युग में विरोधी दल की महती आवश्यकता है, किंतु दल का निर्माण केवल विरोध के लिए नहीं होना चाहिए। जनसंघ काँग्रेस सरकार का विरोध करने के लिए नहीं, अपितु राष्ट्र हितकारी मूलभूत तत्त्वों को संपूर्ण समाज के समक्ष रखने के लिए तथा उसे उन तत्त्वों का अभ्यास कराने के हेतु स्थापित किया गया। है। गत चार वर्षों से काँग्रेस के हाथ में शासन रहा। त्यागी समझकर जिनके प्रति जनता ने अपनी श्रद्धा प्रकट कर आदर प्रदर्शन किया, वे समय आने पर देश के नेता और फिर एक दिन शासक बन गए, पर देश की स्थिति कुर्सियाँ बदल जाने से सुधरी नहीं, अपितु वह दिन-पर-दिन बिगड़ती ही गई और तब यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हो गया कि काँग्रेस का निर्माण केवल अँग्रेजों का विरोध करने मात्र के लिए ही हुआ था, अपेक्षित रचनात्मक कार्य की पूर्ति उसके द्वारा संभव न हो सकी। विरोध में अनेकों मित्र मिल जाते हैं। हिटलर द्वारा विरोध करने के समय पश्चिम के सब राष्ट्र जर्मनी का दम भरने लग गए थे, किंतु आज उसकी क्या स्थिति है? यही दशा आज अपने देश की दिखती है। हमें किसी का केवल विरोध करने के लिए नई पार्टी की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है कि जनता के समक्ष हम अपने विचारों की महत्ता रख सकें, क्योंकि आज सरकार बदल देने से काम नहीं चल सकता, सरकार बदलने से केवल टोपियाँ बदल जाएँगी, मंत्री बदल जाएँगे, सड़कों पर नए मंत्रियों की कारें दौड़-धूप मचाती दिखेंगी, पर इतने से गरीब जनता की समस्याएँ नहीं हल हो सकतीं।

भारतीय जनसंघ अपने मौलिक आधारभूत तत्त्वों को आपके सामने लाता है तथा उसे पूर्ण भरोसा है कि उनको अपनाकर समाज के सुख को अपना सुख तथा समाज के दुःख दारिद्र्य को अपना दुःख दारिद्र्य अनुभव करने वाले लोग सब प्रकार की समस्याएँ हल कर सकेंगे। जनसंघ एक देश, एक जन तथा एक संस्कृति के सिद्धांत पर विश्वास रखता है तथा इसी आधार पर राष्ट्र के निर्माण में प्रयत्नशील है। देश के नेताओं ने देश की एकता स्थिर रखने का कभी आग्रह नहीं किया, जिसके कारण एक दिन उन्हें देश का विभाजन स्वीकार करना पड़ा और यही विभाजन देश की सारी समस्याओं का मूल कारण बन बैठा है। विस्थापितों की दशा अब भी दयनीय है, एक-एक तंबू में पूरा परिवार रह रहा है, लोग कीड़ों-मकोड़ों का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

देश की एक संस्कृति के सिद्धांत पर हमारा विश्वास है। अँग्रेजों ने देश में यह जहर बोया कि सिख, ईसाई तथा मुसलमान सब अलग-अलग हैं, पर यह बात सर्वथा गलत है। आज लोग कहते हैं कि मुसलमानों की संस्कृति अलग होनी चाहिए, किंतु अरब, फारस, इंडोनेशिया तथा चीन आदि देशों में रहने वाले मुसलमानों की भाषा, नाम, पहनावा, रहन-सहन क्या सब एक सा है? संस्कृति देश के आधार पर होती है, मजहब के आधार पर नहीं। फारस में मुसलमान 'रुस्तम-सोहराब' के गीत गाते हैं, जबकि रुस्तम आदि मुसलमान नहीं थे। लेकिन भारत का मुसलिम यहाँ के राम-कृष्ण के नाम लेने में संकोच करता है। यह सभी दृष्टियों से अनुचित है। मुसलमानों को चाहिए कि वे ऐसे लोगों का सहारा छोड़ दें, जो पंचमांगी व विश्वासघाती होना सिखाते हों, क्योंकि वे पाकिस्तान को मक्का और लियाकतों के मुक्के को अपना राष्ट्रीय निशान समझकर कभी इस देश के नहीं हो सकते।

जनसंघ का आधारभूत तत्त्व सर्वथा राष्ट्रीय है, सांप्रदायिक नहीं। किंतु यदि अपने अतीत-गौरव का गर्व करना तथा राम, कृष्ण के गीत गाना सांप्रदायिकता है तो हम सांप्रदायिक हैं। यदि शिवा, प्रताप व राजस्थान के त्याग के गीत गाने से कोई सांप्रदायिक हो जाता है तो हम सांप्रदायिक ही बने रहना चाहते हैं (पाञ्चजन्य, 27 सितंबर, 1951)।

### 'निजाम के साथ कड़ा व्यवहार हो'

*(26 सितंबर, 1951 को लखनऊ के नादानमहल पार्क में 5000 से अधिक लोगों के समक्ष हैदराबाद पर भारत सरकार के अनपेक्षित, कुशल और सामयिक अभियान एवं विजय पर बधाई देते हुए दीनदयाल उपाध्याय का सारगर्भित भाषण)*

निजाम को रजाकारों की कठपुतली समझना बड़ी भूल है। भारतवर्ष के पेट में छेद करने वाले निजाम ने आतंकवादियों को जनता का नाश करने के लिए खुली छूट दे दी थी और स्वयं भारत से युद्ध की घोषणा की। निजाम के साथ देशद्रोही और आतंकवादी की तरह कठोर व्यवहार होना चाहिए। जैसा माननीय पंत जी ने अपने पूर्व भाषण में कहा था, 'निजाम टट्टी की ओट में शिकार खेल रहा था। आज वह टट्टी टूट गई है, पर शिकार सुरक्षित रखा जा रहा है और उसके लिए नई टट्टी तैयार हो रही है'।

हैदराबाद रियासत और निजामशाही को हटाने के लिए रियासत को आंध्र, महाराष्ट्र और मध्य प्रांत में मिला देना चाहिए। वहाँ की राज्य काँग्रेस पद-लिप्सा छोड़कर इस संबंध में प्रयत्न करे। क्या हैदराबाद स्वतंत्र देश रहेगा, जो वहाँ विधान परिषद् बनने जा रही है? (पाञ्चजन्य, 27 सितंबर, 1951)

### 'अखंड भारत में ही हिंदू-मुसलमान दोनों की भलाई है'

*(अलीगंज में भारतीय जनसंघ की नगर शाखा के उद्घाटन अवसर पर अक्टूबर 1951 में आयोजित सार्वजनिक सभा में दिया गया भाषण)*

देश विभाजन से भारतीय जनता को, चाहे वह हिंदू हो, चाहे मुसलमान, भीषण मुसीबतों का सामना करना पड़ा है। अतः हिंदू-मुसलमान की भलाई एक ही बात में है कि दोनों अपने संयुक्त प्रयास से अखंड भारत का निर्माण करें। काँग्रेसी नेताओं द्वारा जनसंघ को कुचल देने की धमकियाँ दी जा रही हैं। हमारे देश के संविधान ने पृथक्-पृथक् संस्थाएँ बनाकर शांतिमय ढंग से देशसेवा का अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्रदान किया है। अतः जब तक देश में कानून है, हम इसके पूर्णाधिकारी हैं। हमारे इस अधिकार को विश्व की कोई शक्ति छीन नहीं सकती। अन्यायी शक्तियाँ दुनिया में अधिक दिन टिक भी नहीं सकतीं।

जनता भेड़-बकरी नहीं है, वह शक्तिशालिनी है। इसी शक्ति के सामने कंस, रावण, दुःशासन और हिरण्यकशिपु को पराभूत होना पड़ा था और औरंगजेब को मुँह की खानी पड़ी। अँग्रेज भी उसके सामने नहीं टिक पाए। अतएव यदि कोई जनसंघ को समाप्त करना चाहे तो वह असंभव होगा। हम तो अपने मार्ग पर चलते ही रहेंगे, क्योंकि हमारा मार्ग न्यायसंगत और

वैधानिक है। किसी संस्था को कुचलने का सामर्थ्य सरकार में नहीं, अपितु जनता में रहता है। क्या अँग्रेजी शासन ने काँग्रेस को कुचल दिया था? निश्चय ही नहीं। पर जनता नाम से प्रेम नहीं करती। उसे तो काम प्यारा है। वह तो अपने सेवकों का ही मान करती है। राजमद के मतवालों का परिणाम भीषण हुआ है, यह इतिहास बताता है (पाञ्चजन्य, 8 नवंबर, 1951)।

**'अखंड भारत का संकल्प हो'**

*(25 मई, 1952 को जोधपुर की एक चुनावी सभा में दीनदयाल उपाध्याय द्वारा दिया गया भाषण)*

भारत को अखंड भूभाग के रूप में देखने का हमारा विचार स्वप्नमात्र न होकर सुविचारित संकल्प होना चाहिए। जनसंघ का पहला सिद्धांत 'एक देश' है, अर्थात् हम इस संपूर्ण भारतवर्ष को एक देश मानते हैं। हमारा यह प्यारा देश अटक से कटक एवं हिमालय से कन्याकुमारी तक एक एवं अखंड है। हम इसके टुकड़े-टुकड़े होना स्वीकार नहीं कर सकते। हमारी सात नदियाँ एवं चारों धाम हमारी एकता की मानो सगर्व घोषणा कर रहे हैं। देश को अलग-अलग हिस्सों में बाँटने वाली नीति को छोड़कर हमें तो ऐसी राह पकड़नी है कि हमारा देश पुनः अखंड हो और हम गर्व के साथ अपनी माता के सामने सुपुत्र के नाते अपना मस्तक ऊँचा कर सकें।

हमारे आधुनिक नेता भारत के निर्मम विभाजन को सुनिश्चित तथ्य (Settled Fact) मानते हैं, पर उनका यह दृष्टिकोण आमूल गलत है और चाहे कुछ हो, पर उनमें माँ के प्रति ममत्व नहीं। वे इतिहास को भूलते हैं, इतना ही नहीं, सच बात तो यह है कि वे इतिहास के ज्ञान से अनभिज्ञ हैं। मुसलमानों के काल में भी तो इस देश के कई टुकड़े हुए थे, लेकिन तात्कालिक नेताओं ने उन टुकड़ों को 'सुनिश्चित तथ्य' नहीं माना और वे अखंडता के लिए लड़ते रहे। पांडवों के लिए पाँच गाँव देने की बात तो दुर्योधन तक ने स्वीकार न की और उसने राज्य को खंडित होने से बचाया, पर हमारे नेताओं ने तो दुर्योधन को भी मात कर दिया, क्योंकि जो काम वह भी न कर सका, उसे हमारे गद्दी के लोभी नेताओं ने कर दिखाया। आज भारत एक राज्य नहीं, अनेक राज्यों का संघ (Union of States) माना गया है, यह कैसी विडंबना है।

कश्मीर के भाग्य निर्माण के लिए जनमत संग्रह की माँग युक्ति बुद्धि का सरासर दिवालियापन है। हमारे देश में स्वतंत्रता के पूर्व सैकड़ों देशी रियासतें थीं। कश्मीर तथा जम्मू की रियासत इन्हीं में से एक रियासत थी। जैसा कि अन्य रियासतों के साथ हुआ है, कश्मीर की रियासत का भाग्य निर्णय भारत के साथ ही है। कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। उसकी रक्षा के लिए भारतीय सेनाओं ने अपना शीर्ष-परिचय दिया है। बड़े-बड़े सेनानी भारतीय सैनिकों के अतुल पराक्रम को देखकर आश्चर्यचकित रह गए थे। अन्याय के ऊपर वे विजय करने के लिए निकले थे। उनके कदम उत्साह के साथ तेजी से बढ़ रहे थे। शत्रुबल उसके सामने नगण्य था। आततायी भागने लगे थे। पर हमारे प्रधानमंत्री को कदाचित् अन्याय का दमन अच्छा न लगा, उन्होंने लड़ाई बंद करा दी। भारतीय सैनिक मन मारकर रह गए। अनुशासन की माँग पर बढ़ा हुआ कदम भी आगे न रख सके। जम्मू-कश्मीर में अगणित भारतीय सैनिकों का बलिदान हुआ, धरा रक्तरंजित हुई, शरीर की अंतिम रक्तबूँद तथा श्वास तक वे मातृभूमि के लिए शस्त्र लिए रहे। अन्याय व अत्याचार से लोहा लेने के लिए वे स्वर्गस्थ आत्माएँ आज हमारे नेताओं की इस बुद्धिमानी (?) पर दो आँसू बहाए बिना रह नहीं पातीं।

जनसंघ का दूसरा सिद्धांत 'एक राष्ट्रवाद' का है। एक राष्ट्र में अल्पमत नहीं होता। शरीर की रचना में नाक एक ही है और आँखें दो, इससे शरीर में नाक का अल्पमत एवं आँख का बहुमत नहीं होता। सब एक ही शरीर के अंग हैं। परंतु हमने यदि यह धारणा न रखी तो थोड़े ही समय में सब अल्पमत रह जाएँगे, फिर आज चाहे उनका बहुमत हो क्यों न हो।

जनसंघ का तीसरा सिद्धांत एक संस्कृति है। भारतवर्ष के अंदर मुसलमानों या ईसाइयों की कोई भिन्न संस्कृति नहीं। संस्कृति का संबंध उपासना से नहीं, देश से होता है। मुसलमानों के सामने कबीर, जायसी व रसखान का आदर्श है। भारत के अंदर भारतीय बनकर रहने वाले मुसलमानों के लिए इन मुसलमान कवियों का जीवन अनुकरणीय है। उनकी भावनाओं तथा सोचने के दृष्टिकोण में मूलभूत परिवर्तन होना नितांत आवश्यक है। आज तो उनकी राष्ट्रभक्ति का केंद्र ही भारत के बाहर है। भारत में रहकर दजला-फरात के गीत गाना उन्हें छोड़ना पड़ेगा।

देश में आज जो विचारधाराएँ चल रही हैं, उनमें से कुछ के प्रतिनिधि तो पाश्चात्य संस्कृति को भारत में लाना चाहते हैं और कुछ रूस की तानाशाही को भारत में स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं। इन विचारधाराओं से तो भारत के नष्ट होने का डर है। नष्ट होने का तात्पर्य यह नहीं कि गंगा या हिमालय नष्ट हो जाएँगे, पर उनको पवित्र मानने की जो भावना हमारे अंत:करण में आज युग-युगों से बनी रही है, वह भावना नष्ट हो जाएगी।

**'राजनीतिक सौदेबाजी में हमारा विश्वास नहीं'**

*(लखनऊ की एक विशाल सार्वजनिक सभा में जुलाई 1953 में दिया गया भाषण)*

हम आज न केवल अपनी संस्था, बल्कि संपूर्ण देश के जीवन की महत्त्वपूर्ण कालावधि में मिल रहे हैं। अभी हाल में ही हम उस संघर्ष में से निकले हैं, जो आज के अपने शासकों को जनता की आवाज सुनाने के लिए और जनमन में भारत की एकता तथा अखंडता के लिए उत्पन्न आसन्न संकट की चेतना जगाने के लिए चलाया गया था, और हम बिना किसी संकोच के यह कह सकते हैं कि इस दिशा में हमें काफी सफलता मिली है। इसमें संदेह नहीं कि इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमें महान बलिदान करना पड़ा। हजारों लोगों को कारा की कोठरियों में कष्ट सहना पड़ा और इसके अतिरिक्त पुलिस तथा नौकरशाही के हाथों लोगों की जो सब प्रकार की दुर्गति हुई, उसकी तो कोई गिनती ही नहीं है, परंतु सामान्यतया संपूर्ण देश को, और विशेषकर हमारी संस्था को जो सर्वोच्च बलिदान करना पड़ा, वह है डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी की आहुति। भारतीय जनसंघ को उनके महान् व्यक्तित्व की कुछ कम देन नहीं थी, परंतु दूसरी ओर यह भी सच है कि उन्होंने ऐसी संस्था नहीं बनाई, जो अपने अस्तित्व के लिए पूर्ण रूप से उन्हीं पर निर्भर करे। आज देश में लाखों ऐसे कार्यकर्ता हैं, जिनमें उनके जैसी ही आदर्शवादिता भरी है और मुझे विश्वास है कि वे उनके अधूरे कार्य को पूरा करके ही रहेंगे। चूँकि बहुत से लोग हमारे समक्ष उपस्थित आदर्शवाद और उस पर हमारी श्रद्धा से उत्पन्न होने वाली आंतरिक शक्ति को समझने में असमर्थ हैं, इसलिए हमारी संस्था के अध्यक्ष की गद्दी के भरने के संबंध में मनमानी अटकलबाजियाँ लगाने में व्यस्त हैं। हवा में अनेक नाम उछाले हैं। उनमें से अधिकतर तो भारतीय जनसंघ के सदस्य भी नहीं है। यद्यपि बड़े या छोटे किसी भी व्यक्ति के लिए हमारे दरवाजे बंद

नहीं हैं, परंतु इससे किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि हम किसी नेता की तलाश में दुनिया भर में चक्कर लगाते फिरेंगे और फिर जहाँ कहीं उनके दर्शन हो जाएँगे, वहाँ तुरंत उसके गले में जयमाला डाल देंगे। हमारे लिए कोई अलग व्यक्ति न होकर संगठन शरीर का अभिन्न अंग होता है। हम यह नहीं समझते कि नेताओं की कोई अलग जाति होती है और इसलिए हम उन लोगों से सहमत नहीं हैं, जो ऐसा समझते हैं कि चूँकि हिंदू महासभा के पास नेता है और जनसंघ के पास सबल संगठन, इसलिए दोनों को एक हो जाना चाहिए (पाञ्चजन्य, 17 जुलाई, 1953)।

**'कश्मीर हमारा है! आज कश्मीर दिवस है'**

*(जम्मू-कश्मीर में अगस्त-सितंबर 1951 में चुनाव हुए। शेख अब्दुल्ला की जम्मू-कश्मीर नेशनल कॉनफ्रेंस ने सभी 75 सीटों पर जीत हासिल की। 31 अक्तूबर, 1951 को शेख अब्दुल्ला ने वहाँ की विधानसभा में अपने पहले भाषण में पृथक् राज्य ध्वज की माँग की थी। उस समय जून 1952 में दीनदयाल उपाध्याय द्वारा दिया गया वक्तव्य)*

कश्मीर समस्या किसी दल, वर्ग या संप्रदाय की समस्या नहीं है। वह तो संपूर्ण राष्ट्र के जीवन-मरण की समस्या है। अतः आवश्यक है कि आज सभी भारतवासी एक स्वर से माँग करें कि—

1. कश्मीर का भारत में पूर्ण विलय हो और वह अन्य राज्यों के समान ही स्थान प्राप्त करे।
2. कश्मीर का प्रश्न संयुक्त राष्ट्र संघ से वापस लिया जाए।
3. कश्मीर का जो 2/5 हिस्सा पाकिस्तान के कब्जे में रह गया है, उसे वापस लेने के लिए सक्रिय कदम उठाए जाएँ।

कश्मीर संविधान सभा के इन निर्णयों से कि कश्मीर-जम्मू राज्य का प्रधानमंत्री निर्वाचित किया जाए, राज्य का अपना पृथक् राज्य ध्वज हो एवं मूलभूत सिद्धांत समिति के इन सुझावों से कि कश्मीर का राज्य एक गणराज्य में स्वतंत्र गणराज्य होगा, एक गंभीर परिस्थिति उत्पन्न हो गई है। प्रधानमंत्री पंडित नेहरू के वक्तव्य से भी, जिसमें कश्मीर संबंधी उक्त निर्णयों का समर्थन किया गया है, सभी को गहरा धक्का लगा है। यह विशेषकर इसलिए कि प्रधानमंत्री ने जो मत व्यक्त किया है, वह भारतीय संविधान की आत्मा को ठेस पहुँचाता है।

कश्मीर की समस्या को, जो प्रारंभ में एक सरल सा प्रश्न था, जिसे हमारी सीमा से आक्रमणकारियों को खदेड़कर हल कर लिया जाता, अब इसलिए केवल इतना जटिल बना दिया गया है कि नेहरू जी न तो इस बात को समझ सके और न उन्होंने इस बात को समझने का प्रयत्न ही किया कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। वह भारत से पृथक् कोई इकाई या अंग नहीं, जो बाद में तथाकथित भारतीय संघ में सम्मिलित हो जाए। इस बात को समझना चाहिए कि भारतीय संविधान एकात्मक (Unitary) है। संघवाद की ओर उठाया गया कोई भी कदम हमारे देश को खंड-खंड कर देगा।

भारतीय संविधान के 370वें अनुच्छेद में कश्मीर के बारे में जो व्यवस्थाएँ की गई हैं, वे सब निश्चित रूप से अस्थायी थीं और केवल इसलिए की गई थीं कि जिस समय हमारा संविधान स्वीकार किया गया, उस समय कश्मीर का भारत में पूर्णतया विलीनीकरण नहीं हो पाया था। फिर भी उसका यह अर्थ नहीं कि कश्मीर वैधानिक पेचीदगियों से बाहर न निकले और अपने को भारत में पूर्णतया विलीन कर अपनी राष्ट्रभक्ति का परिचय उसी प्रकार न दे, जिस प्रकार कि अन्य राज्यों ने, जो सन् 1947 के भारतीय स्वातंत्र्य अधिनियम के अंतर्गत कश्मीर की भाँति वैधानिक स्वतंत्रता का उपभोग कर रहे थे, दिया है।

इन राज्यों कि सार्वभौमिकता की मिथ्या कल्पना तो चिरकाल पूर्व ही समाप्त हो चुकी है। अब कश्मीर के नेताओं और भारत के प्रधानमंत्री को यह शोभा नहीं देता कि वे आत्मनिर्णय के गलत सिद्धांत को मानते ही चले जाएँ (पाञ्चजन्य, 29 जून, 1952)।

**'काँग्रेस ने प्रजातंत्र के बालरूप का गला घोंट दिया'**

*(28 अप्रैल, 1952 को आगरा के मोतीगंज मैदान में आयोजित एक आम सभा में दीनदयाल उपाध्याय का संबोधन। सभा की अध्यक्षता श्री रघुनाथ दास गुप्त ने की)*

गत चुनावों में काँग्रेस की ओर से यह प्रचारित किया गया था कि यदि भारतीय जनसंघ को वोट दिया गया तो कश्मीर हाथ से निकल जाएगा, किंतु हमने उस समय कहा था कि कश्मीर जनसंघ के कारण निकल नहीं जाएगा, अपितु काँग्रेस और श्री नेहरू की नीति के कारण हमारे हाथ से निकल चुका है। आज श्री नेहरू के परम प्रिय मित्र शेख अब्दुल्ला ने उन्हें धोखा देकर हमारी पूर्वोक्त भविष्यवाणी की पुष्टि की है। आज फिर हम कहते हैं कि एक कमजोरी के आगे झुकने से वह बढ़ती जाती है। अब यदि शेख अब्दुल्ला को दबाने के स्थान पर तुष्ट किया गया तो कश्मीर सदा के लिए हमारे हाथ से निकल जाएगा।

यद्यपि काँग्रेस को चुनावों में आशातीत सफलता मिली, किंतु यह ईमानदारी की सफलता नहीं है। सत्तारूढ़ दल द्वारा सरकारी मशीन का दुरुपयोग और सील लगे हुए गोदरेज के बक्सों में से वोटों की अदला-बदली किसी से छिपी नहीं है। जिन बक्सों में निर्वाचन की पवित्रता, गोपनीयता और जन-विश्वास निहित था, काँग्रेस ने अपने स्वार्थ के लिए सब पर पानी फेर दिया। वे बक्से, जिनके संबंध में इतना बड़ा ढोल पीटा गया था, गोदरेज कंपनी के बने हुए होने के कारण ये बक्से कभी खुल ही नहीं सकते, मिट्टी की हँड़ियों से भी बदतर निकले, क्योंकि मिट्टी की हँड़िया फूटकर जुड़ नहीं सकती, जबकि ये बक्से बिना सील हटाए खुल और बंद हो सकते हैं। हम ये बातें हार जाने के कारण नहीं कह रहे, इन अनियमितताओं से बचने के लिए हमने चुनावों से पूर्व भी राष्ट्रपति शासन की माँग की थी। आज भी हम निष्पक्ष जाँच कमीशन की माँग कर रहे हैं, किंतु हमारी बात न तो तब सुनी गई थी और न आज सुनी जा रही है। इन अनियमितताओं के कारण जनता का चुनावों पर से विश्वास उठता जा रहा है। इस प्रकार काँग्रेस ने प्रजातंत्र के बालरूप का गला ही नहीं घोंटा, अपितु भारत के विधान के साथ भी विश्वासघात किया है।

आज का काँग्रेस शासन पहले से अच्छा नहीं होगा, क्योंकि जो लोग काँग्रेस टिकट पर चुने गए हैं, वे अधिकतर पुराने ही हैं और जो नए आए हैं, वे पहले से भी बदतर हैं। ऐसे समय में भारतीय जनसंघ असेंबलियों में और उनके बाहर विरोधी दल के रूप में 'ब्रेक' का काम करेगा। काँग्रेस मुसलिम सांप्रदायिकता को सदैव तुष्ट करती रही है। देश का विभाजन स्वीकार कर लेने के पश्चात् काँग्रेस ने गत चुनावों में पुराने मुसलिम लीगियों को अपने टिकट पर जिताया। इस कारण दबी हुई यह सांप्रदायिकता फिर पनप रही है। जिन्ना द्वारा माँगे गए पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान को मिलाने वाले कथित गलियारे की लाइन में हुए सांप्रदायिक दंगे और उर्दू को प्रादेशिक भाषा बनाने का आंदोलन आदि हमारे कथन की पुष्टि कर रहे हैं। हमें इन

अराष्ट्रीय प्रवृत्तियों का विरोध करना है। हम इसलाम या मुसलमानों के शत्रु नहीं, मित्र हैं। किंतु हम पृथकता की भावना को नहीं पनपने देंगे।

कश्मीर को स्वतंत्र रखने की घोषणा करके शेख अब्दुल्ला ने भारत के साथ विश्वासघात किया है। आज कश्मीर के लोगों को हमारे विधान में दिए गए मौलिक अधिकार भी प्राप्त नहीं हैं। इन सब बातों को देखते हुए कश्मीर पर भारत का विधान पूर्ण रूप से लागू कर उसे भारत का अविभाज्य अंग बनाना ही होगा, किंतु शेख अब्दुल्ला इन बातों का विरोधी है, अतः उसे दबाना ही पड़ेगा। अपनी सरकार से कश्मीर समस्या का ठीक हल निकलवाने के लिए यदि हमें आंदोलन भी करना पड़ा तो हम ऐसा भी करेंगे (पाञ्चजन्य, अप्रैल 28, 1952)।

**जनसंघ के 14वें वार्षिक अधिवेशन में दिया गया अध्यक्षीय भाषण**

जनसंघ का 14वाँ वार्षिक अधिवेशन केरल के कालीकट में दिनांक 28, 29 और 30 दिसंबर, 1967 को आयोजित किया गया। उस अधिवेशन में दीनदयाल उपाध्याय को जनसंघ का राष्ट्रीय अध्यक्ष चुना गया। राष्ट्रीय अध्यक्ष के रूप में दिनांक 30 दिसंबर को उस अधिवेशन में दिया गया उनका भाषण अनेक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। अध्यक्ष के रूप में यह उनका पहला भाषण था। दूसरे, इस अधिवेशन के बाद 11 फरवरी, 1968 को उनकी हत्या हो गई। वह पूरा भाषण 7000 से अधिक शब्दों का है। इस लिए यहाँ उसके प्रमुख अंश ही प्रस्तुत किए गए हैं (पार्टी दस्तावेज, 2005)।

अपने भाषण की शुरुआत में वे जनसंघ कार्यकर्ताओं के प्रति आभार व्यक्त करते हैं और कहते हैं कि कार्यकर्ताओं के हृदय की विशालता और स्नेहशीलता के सहारे ही वे महामंत्री के नाते काम करते रहे। भाषण के दूसरे पैराग्राफ में वे कहते हैं कि वर्तमान समस्याओं का विश्लेषण करते हुए हमें देश और काल के अनुसार अपनी नीति निर्धारित करनी चाहिए। उन्होंने तीन प्रकार की समस्याएँ गिनाई। प्रथम वे समस्याएँ जिनका संबंध राजनीति से है। इनमें विभिन्न दलों के बीच जोड़-तोड़, मंत्रिमंडलों की अस्थिरता, दल-परिवर्तन आदि। दूसरी श्रेणी में वे समस्याएँ आती हैं, जिनके बीज भारत के संवैधानिक ढाँचे में होते हुए भी जो पिछले वर्षों में उभरे नहीं थे अथवा उनका वर्तमान गंभीर रूप प्रकट नहीं हुआ था। केंद्र और प्रांतों के संबंध तथा अंतरप्रांतीय समस्याएँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। तीसरे वर्ग में देश की अर्थव्यवस्था, गृह, सुरक्षा तथा विदेश-नीति संबंधी समस्याएँ हैं, जो काँग्रेस शासन की गलत एवं अयथार्थवादी नीतियों के कारण काफी गंभीर बन गई हैं। वे इस भाषण में यह भी बताते है कि आम चुनावों के बाद दिल्ली और मद्रास को छोड़कर अन्य प्रांतों में किसी भी एक दल के बहुमत में न आने के कारण एक ओर जहाँ गैर-काँग्रेसी दलों ने जनभावना का समादर करते हुए तथा परिस्थिति और प्रजातंत्रीय माँग को समझकर पंजाब, बिहार, पश्चिम बंगाल और केरल में मिले-जुले मंत्रिमंडल बनाए, वहाँ दूसरी ओर राजस्थान और उत्तर प्रदेश में काँग्रेस ने जनक्षोभ के बावजूद, राज्यपालों के सहारे सत्ता हथियाई।

वे यह भी बताते हैं कि संयुक्त मंत्रिमंडलों ने काँग्रेस शासन का विकल्प देने का प्रयत्न तो किया, परंतु उसकी नीतियों और कार्यक्रमों का पर्याय प्रस्तुत करना न तो उनके लिए संभव था और न उनका निर्माण ही इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया था। "खेद का विषय है कि कुछ दलों ने इन मंत्रिमंडलों की इस सीमा को न समझकर उन्हें अपनी नीतियों और कार्यक्रमों को पूरा करने का साधन बनाने का प्रयास किया। इस दलीय दृष्टिकोण और गैर-जिम्मेदारी के व्यवहार के परिणामस्वरूप ये सरकारें बराबर तनावपूर्ण एवं अनिश्चितता के वातावरण में काम करती रही हैं। प्रदेशों के सीमित साधनों और अधिकारों, केंद्र के काँग्रेसी शासन की कुटिल नीति तथा घटक दलों की खींचतान के बाद भी इन शासनों ने अपने छोटे से कार्यकाल में जनता को राहत पहुँचाने के बहुत से काम किए हैं। जो चमत्कार की आशा करते थे उनकी अपेक्षाएँ अवश्य पूरी नहीं हुई।"

**दल परिवर्तन**

दल परिवर्तन पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं, "दल परिवर्तन कोई नई घटना नहीं है। चुनावों के पूर्व काँग्रेस छोड़ने का और बाद में काँग्रेस से नाता जोड़ने का क्रम सदैव रहा है। काँग्रेसियों की इस आवक-जावक से अनेक नये दल बने और बिगड़े हैं। जिन्होंने काँग्रेस नहीं छोड़ी वे भी काँग्रेस के अंदर विभिन्न गुटों के प्रति अपनी निष्ठा बदलते रहे हैं। फलतः काँग्रेस का नाम बना रहने के बाद भी मंत्रिमंडलों के संबंध में अनिश्चितता का वातावरण रहा है और उनका अनेक बार पतन हुआ है। स्वराज्य के बाद काँग्रेस और काँग्रेसजनों के सामने कोई नीति एवं आदर्श न होने के कारण ही उनका इस प्रकार का व्यवहार रहा है। दल बदलने वालों में से निन्यानवे प्रतिशत वे लोग हैं जो काँग्रेस को छोड़कर दूसरे दलों में आए और फिर उन दलों को छोड़कर चले गए। इस विषय में कानून का सहारा लेने का भी सुझाव दिया गया है। जो जनप्रतिनिधि हैं तथा जिनको कानून बनाने का अधिकार दिया गया है, उनके आचरण को कानून के डंडे से ठीक रखने के बजाय जनमत और परंपराओं का सहारा लिया जाय तो अधिक उपयुक्त होगा। प्रत्येक विधायक, दल के अतिरिक्त अपने निर्वाचन क्षेत्र और देश के प्रति भी जिम्मेदार है। इन सभी जिम्मेदारियों का समन्वय और उनका निर्वाह किसी बँधे-बँधाये कानूनी ढाँचे में नहीं किया जा सकता है। व्यक्ति को चुनने की ब्रिटिश पद्धति के स्थान पर दल के लिए मतदान की पद्धति को लाया जाए तो दल परिवर्तन से ही नहीं आज की अनेक राजनीतिक बुराइयों से बचा जा सकता है। पश्चिम जर्मनी के समान हम दोनों पद्धतियों का समन्वय भी कर सकते हैं"।

**स्थायी वित्त आयोग**

वे आगे कहते हैं, "वित्तीय दृष्टि से प्रदेश केंद्र पर बुरी तरह निर्भर है। अधिकारों और दायित्वों का संविधान में इस प्रकार बँटवारा हुआ है कि लोक कल्याण एवं विकास तथा प्रशासन की संपूर्ण जिम्मेदारी प्रदेशों पर है, जबकि आय के लचीले और फलदायी स्रोत केंद्र के पास हैं। वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार यद्यपि आयकर तथा उत्पादन शुल्क का कुछ भाग प्रदेशों को मिल जाता है, फिर भी वे बड़ी मात्रा में केंदीय अनुदानों पर निर्भर रहते हैं। 1951-52 में प्रदेशों के व्यय का 29.4 प्रतिशत केंद्र से प्राप्त हुआ था। 1966-67 के संशोधित आँकड़ों के अनुसार यह अनुपात 55.3 प्रतिशत हो गया है। इसी अवधि में केंदीय अनुदान प्रदेशों के व्यय के 7 प्रतिशत से बढ़कर 19 प्रतिशत हो गया है। निश्चित ही यह स्थिति उत्तरदायी शासन की भावना के प्रतिकूल है, इसे बदलना होगा। इस हेतु संविधान में संशोधन की माँग की जा रही है। मैं समझता हूं कि संविधान में संशोधन के स्थान पर बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप कोई लचीली व्यवस्था अधिक उपयुक्त होगी। वित्त आयोग की नियुक्ति प्रति पांच वर्ष के स्थान

पर स्थायी कर दी जाए तथा अनुच्छेद 282 के अंतर्गत निर्दिष्ट अनुदान एवं ऋणों का भी उसकी विचारकक्षा में सम्मिलित कर लिया जाय तो वह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है"।

कर-पद्धति पर पुनर्विचार का सुझाव देते हुए वे कहते हैं, "प्रदेशों को भी अपने राजस्व स्रोतों के भलीभाँति दोहन का विचार करना चाहिए। कर-भार में कमी तथा करवसूली की पद्धति में सरलता की आवश्यकता का अनुभव करते हुए भी यह कहना पड़ता है कि अनेक प्रदेशों की कर-नीति के निर्धारण में राजनीतिक नारों का प्रभाव अधिक तथा प्रशासनिक जिम्मेदारी की भावना कम दिखती है। भूराजस्व, आयकर, बिक्रीकर आदि के बारे में आज काफी क्रांतिकारी विचार रखे जा रहे हैं। अच्छा हो कि इन सबका शास्त्र-शुद्ध विचार कर लिया जाय क्योंकि ये सभी कर काफी समय से चले आ रहे हैं तथा राजस्व के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। अन्यथा भी संपूर्ण कराधान की जाँच के लिए एक आयोग की आवश्यकता है।"

**योजना को छुट्टी मत दो**

वे कहते हैं कि योजना आयोग से निराशा हुई है। "अभी तक की योजनाओं के कारण अर्थव्यवस्था में जो तनाव या दरारें पैदा हो गई हैं, उन्हें दूर करते हुए ऐसे कार्यक्रम अपनाने होंगे जिससे विकसित क्षमता का भी पूरा-पूरा उपयोग किया जा सके। जिस तरह मनमाने ढंग से पिछले दो वर्ष की योजनाओं की काट-छाँट की गई है वह मंदी और प्रशिक्षित व्यक्तियों की बेकारी के लिए बहुत अंश में जिम्मेदार है। ...योजना आयोग को एक विशेषज्ञ के रूप में काम करना चाहिए तथा आज की समस्याओं का निदान करके उनके समाधान के लिए तात्कालिक एवं दूरगामी उपाय सुझाने चाहिए। नियोजन का अर्थ विभिन्न क्षेत्रों के लक्ष्य निश्चित करने और उनका गणित के अनुसार समीकरण बिठाना मात्र नहीं है। नियोजन के लिए कल्पकता, दूरदर्शिता और व्यावहारिकता की नितांत आवश्यकता है। अभी तक की योजनाओं में इनका अभाव रहा है।"

**आर्थिक स्वाधीनता चाहिए**

साधनों के अभाव के तर्कों पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं, "मैं यह नहीं मानता कि देश में साधनों की कमी है। हमारे पास मानव, प्राकृतिक तथा वित्तीय सभी प्रकार के साधन पर्याप्त हैं। आवश्यकता है कि वर्तमान तथा विकासमान साधनों के अनुरूप योजना बनाई जाय। आज तक योजना का आधार विदेशी साधन, मशीन, तंत्रज्ञ, पूँजी-और अब कच्चा माल तथा बाजार भी-रहा है। जो नहीं है उसकी प्राप्ति की तो योजना बनाई जाती है, किंतु जो है उसको बचाने की तथा उसके सहारे नये निर्माण का विचार नहीं किया जाता। हमने खेती और स्वदेशी उद्योगों की ओर दुर्लक्ष्य किया तथा हमारे लिए अहितकर एवं अप्रतिष्ठयकारक शर्तों पर भी विदेशी गठबंधनों का स्वागत किया। विदेशी निहित स्वार्थ आज इतने प्रबल हैं कि देश के आर्थिक कार्यक्रमों को ही नहीं, अपितु आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक क्षेत्र की नीतियों को भी प्रभावित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यदि हमें स्वतंत्रता बचानी है तो आर्थिक क्षेत्र में स्वावलंबी बनना होगा। भावी योजनाएँ इसी आधार पर बनाई जाएँ।" कृषि की समस्याओं पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं, "कृषि को प्राथमिकता देने की घोषणा तो कई वर्षों से की जा रही है, किंतु शासन ने जो नीतियाँ अपनाई हैं, उनमें किसान के हितों का तथा कृषि की आवश्यकताओं का ध्यान नहीं रखा गया। ...बिना खाद के केवल उर्वरकों के आधिकारिक प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति पर प्रतिकूल परिणाम होगा। उस दिन की कल्पना करके दिल एकदम सिहर जाता है जब आज की अदूरदर्शी नीतियों के परिणामस्वरूप तंजौर, लुधियाना जैसे हरे-भरे जिले ऊसर हो जाएँगे, हमें इस दुष्परिणाम से बचना ही चाहिए।"

**सस्ते गल्ले के लिए सहायता**

"यह सत्य है कि खाद्यान्न के बढ़े हुए मूल्यों से नगरवासी तथा कम और निश्चित आय वालों के लिए भारी कठिनाई पैदा हो गई है। उन्हें सस्ते भावों पर जीवन की आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध की जानी चाहिए। यदि मद्रास सरकार कुछ नगरों में 'एक रुपये का एक माप' की योजना के अनुसार चावल बेच सकती है तो कोई कारण नहीं कि देशभर के नगरों में इस योजना को लागू न किया जा सके। महँगाई भत्ते को महँगाई से जोड़ना आवश्यक है। यह खेद का विषय है कि शासन ने इस नियम को स्वीकार नहीं किया, जिससे यह प्रश्न विवाद एवं औद्योगिक अशांति का कारण बन जाता है। श्रमिकों और कर्मचारियों के अतिरिक्त पेंशन पानेवालों को भी महँगाई भत्ता मिलना चाहिए तथा उनकी पेंशन की मात्रा का निर्धारण विद्यमान वेतन स्तर के अनुपात में होना चाहिए।"

**अंतरप्रांतीय सीमा विवाद**

वे कहते हैं, "देश की राजनीतिक समस्याओं के समाधान में हमें इस एकता के दृष्टिकोण को नहीं भुलाना चाहिए। आज प्रांतों के बीच कुछ सीमा के विवाद हैं। इन्हें उन सिद्धांतों को ध्यान में रखकर, जिनके आधार पर देश में प्रांतों की पुनर्रचना हुई, सुलझा लेना चाहिए। भारतीय जनसंघ यह तो मानता है कि इन तत्त्वों में भाषा भी एक है, किंतु यह नहीं माना जा सकता है कि वह एकमेव कसौटी है। भाषा का प्रशासन में, विशेषकार प्रजातंत्रीय प्रशासन में, महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसलिए सामान्यतया भाषाई सीमाएँ ही प्रदेशों की सीमाएँ बन गई हैं, किंतु कुछ लोग भाषा पर इतना अतिरेकी एवं एकात्मक विचार करते हैं कि उससे उपराष्ट्रवाद की बू आने लगती है। जनसंघ इसे उचित नहीं समझता। मैसूर-महाराष्ट्र तथा मैसूर-केरल के बीच के विवाद को सुलझाने के लिए महाजन आयोग की नियुक्ति हुई थी। निश्चित ही आयोग का प्रतिवेदन इस विवाद को हल करने में सहायक होना चाहिए, किंतु यह तभी संभव है कि जब झूठी प्रतिष्ठा और आवेश को त्याग कर इस प्रश्न पर विचार हो। जनमत संग्रह आदि के सुझाव अतर्कसंगत हैं। सीमा निर्धारण संसद का कर्तव्य है तथा उसे अपने दायित्व का निर्वाह करना चाहिए।" नागा विद्रोहियों से होने वाली बातचीत पर टिप्पणी करते हुए स्पष्ट रूप से कहते हैं, "नगाक्षेत्र के संबंध में यह कहना समीचीन होगा कि वहाँ आधे से अधिक हिंदू नगा रहते हैं। भारत सरकार ने अभी तक जो कुछ बातचीत की है वह बेपटिस्ट मिशन के माध्यम से की है। हिंदुओं की जनजातियों को कभी प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया। आवश्यकता है कि इनके हितों और अधिकारों की ओर दुर्लक्ष न किया जाय।"

**सादिक सरकार की असफलता**

जम्मू और कश्मीर राज्य के आंतरिक प्रशासन की ओर केंद्र सरकार का ध्यान आकृष्ट करते हुए वे कहते हैं, "श्री सादिक राज्य को एक स्वच्छ, निष्पक्ष एवं सुदृढ़ प्रशासन देने में असमर्थ रहे हैं। पिछले दिनों एक हिंदू बालिका के अपहरण एवं बलात् विवाह मामले पर पुलिस ने तथा शासन

ने जिस प्रकार उदासीनता, उपेक्षा तथा सांप्रदायिक दृष्टिकोण से व्यवहार किया उससे कश्मीर घाटी के हिंदुओं में असन्तोष तथा आशंकाएँ पैदा हुई हैं। केंदीय गृहमंत्री से भी अपने वचनों का पालन न करने की शिकायत वहाँ के लोगों को रही है। यह उचित नहीं है कि किसी भी वर्ग में इस प्रकार न्याय न मिलने की तथा असुरक्षा की भावना पैदा हो। जम्मू और कश्मीर शासन ने नौकरियों आदि में प्रतिनिधित्व के प्रश्न की जाँच के लिए एक आयोग सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री गजेंद्र गड़कर की अध्यक्षता में बनाया है। जहाँ तक क्षेत्रीय आधार पर भेदभाव का प्रश्न है आयोग को अवश्य जाँच करनी चाहिए। किंतु सांप्रदायिक आधार पर जाँच का प्रस्ताव देश के संविधान की भावना तथा व्यवस्थाओं के प्रतिकूल है"।

**सांप्रदायिक दंगे और निहित स्वार्थ**

सांप्रदायिक दंगों पर वे कहते हैं, "ये घटनाएँ दुर्भाग्यपूर्ण एवं निंदनीय हैं। जहाँ तक प्रशासन का संबंध है उसे अशांति और उपद्रव की इस प्रकार की घटनाओं को दबाने और रोकने के लिए बिना किसी भेदभाव तथा हिचक के दृढ़तापूर्वक कदम उठाने चाहिए, किंतु मैं इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि सांप्रदायिक दंगों के लिए प्रशासन की नीति और व्यवहार निश्चित करने की जो संहिता प्रचलित है वह अँग्रेजी जमाने की बनी हुई है। इसका मूल उद्देश्य शरारती तत्त्वों की रोकथाम तथा दोषी को दंड दिलाना न होकर ऊपर से निष्पक्षता का दिखावा करना तथा वास्तव में दोनों समाजों के बीच की खाई को बढ़ाना ही था। इस तथाकथित बराबरी की कार्यवाही की संहिता को बदलकर उपद्रवियों के विरुद्ध कार्यवाही की नीति अपनानी चाहिए। देश में ऐसे तत्त्व हैं जिनका इस प्रकार के दंगों में राजनीतिक स्वार्थ विकसित हो गया है। फलतः वे इस अवांछनीय घटनाओं को सीमित करने और दबाने के बजाय उन्हें अपने मतलब का रंग देकर चारों ओर ले उड़ते हैं। घटना चाहे जैसी हो किंतु उनकी व्याख्या और प्रचार की लाइन तय है। इनके अनुसार हर स्थान पर मुसलमान मारे जाएँगे और मारने वालों में भारतीय जनसंघ तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ता होंगे। कई बार तो जहाँ संघ और जनसंघ की शाखा भी न हो वहाँ भी इनके अखबारों में शाखाएँ खुल जाती हैं। उनकी ये हरकतें उन गिरहकटों और उठाईगीरों की चाल के समान हैं, जो लोगों को तथा पुलिस को भी भ्रम में डालने के लिए चोर से विरुद्ध दिशा में चोर-चोर चिल्लाकर दौड़ने लगते हैं तथा किसी भी भलेमानस को पकड़कर पीटने लगते हैं। तब तक असली चोर आराम से गायब हो जाते है। हमें इन तत्त्वों से सावधान रहना चाहिए।"

**भाषा**

भाषा के प्रश्न वे कहते हैं, "देश के कामकाज के लिए अपनी ही भाषाओं का प्रयोग व्यावहारिक एवं राष्ट्रीय स्वाभिमान दोनों ही दृष्टि से आवश्यक है। इस वर्ष केंदीय शिक्षा मंत्रालय ने भारतीय भाषाओं को उच्चतम शिक्षा का माध्यम बनाने की दिशा में स्तुत्य पग उठाया है। यह निर्णय शिक्षा आयोग की सिफारिशों के अनुरूप ही है तथा इसका अनुमोदन एवं समर्थन शिक्षा के उपकुलपतियों के सम्मेलन ने भी किया है। फिर भी कुछ अँग्रेजीपरस्त लोग इस निर्णय का विरोध कर रहे हैं। वे जो समस्याएँ बता रहे हैं उनमें से अधिकतर संक्रमण काल की हैं तथा कुछ काल्पनिक अथवा इक्के-दुक्के व्यक्तियों की। समस्याओं का हौवा खड़ा करने के बजाय उन्हें हल करने की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। विभिन्न प्रदेशों में गैर-काँग्रेसी सरकारें बनने के बाद प्रादेशिक स्तर पर वहाँ की भाषाओं के प्रयोग में काफी तेजी आई है। इसी प्रकार दृढ़ता से काम किया गया तो कुछ ही महीनों में संपूर्ण राजकाज जनता की भाषा में होने लगेगा। मैं उन सभी सरकारों को बधाई देता हूँ जो देश की भाषाओं को उनका उचित स्थान दे रही हैं। वे सच्चे अर्थों में जनता का प्रतिनिधित्व करती हैं।"

"केंद्र में अँग्रेजी के स्थान पर हिंदी के प्रयोग में शासन की नीति के कारण बराबर कठिनाइयाँ रही हैं। यह खेद का विषय है कि काँग्रेस शासन ने इस दिशा में सकारात्मक पग उठाने के बजाय विवाद और आशंकाएँ पैदा करने का ही काम किया है। जनसंघ ऐसे किसी कदम का समर्थन नहीं करता जिससे हिंदी न जानने वालों को किसी भी अधिकार से वंचित रहना पड़े। इस हेतु जनसंघ ने यह माँग की है कि संघ लोक सेवा आयोग की सभी परीक्षाएँ प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से हों तथा भर्ती के लिए किसी भी भाषा-विशेष के ज्ञान की बाध्यता न रहे। संक्रमण काल में जो अँग्रेजी का प्रयोग करना चाहें उन्हें भी सुविधा दी जा सकती है, किंतु अँग्रेजी का तो प्रभुत्व निर्बाध बना रहे तथा हिंदी के प्रयोग की भी छूट न हो, यह बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। हाल में जो राजभाषा संशोधन विधेयक का प्रस्ताव पारित हुआ है वह एक गलत दिशा में कदम है। इसके अनुसार केंद्र की जो भाषा नीति चलेगी उससे उन राज्य सरकारों के मार्ग में भी कठिनाई पैदा होगी, जो प्रांतों में प्रादेशिक भाषाओं को चलाना चाहती हैं। मद्रास में तब तक तमिल का बोलबाला नहीं हो सकता जब तक दिल्ली में अँग्रेजी का प्रभुत्व कायम है।"

**अरब राष्ट्र सोचें**

भारत की विदेश नीति के बारे में वे कहते हैं, "जब ब्रिटेन ने स्वेज पर बमबारी की थी तब हिंदुस्तान की जनता ने भारी रोष प्रकट किया था। हम लोग सदैव से अरब देशों की मित्रता के हामी रहे हैं, किंतु जब भारत-पाक संघर्ष में हमारे प्रति सरासर अन्याय होते हुए भी अरब देशों ने हमारे साथ मौखिक सहानुभूति भी प्रकट नहीं की, बल्कि जोरडन ने हमारे विरुद्ध पाकिस्तान की वकालत की तो भारत की जनता को अरबों से भारी निराशा हुई। यह निराशा ही लोगों के बदले हुए रुख के लिए जिम्मेदार है। यदि अरब देश वास्तव में भारत की मित्रता चाहते हैं तो उन्हें हमारी भावनाओं को समझना होगा तथा अपनी नीति और व्यवहार में मित्रता का निर्वाह करना होगा। जब अरब देश हमारे शत्रु देशों के साथ संबंध रख सकते हैं तो हम अपने ऊपर भी यह बंधन नहीं लगा सकते कि हम इसरायल के साथ कोई संबंध न रखें।"

**चीन-पाकिस्तान गठबंधन**

चीन और पाकिस्तान के संबंध में वे कहते हैं, "कम्युनिस्ट चीन और पाकिस्तान दोनों के प्रति हमारी नीति वही होनी चाहिए जो आक्रमणकारी शत्रु देश के प्रति किसी भी स्वाभिमानी राष्ट्र की होती है। आश्चर्य का विषय है कि हमने फारमोसा की सरकार को अभी तक मान्यता नहीं दी। तिब्बत की स्वतंत्रता के लिए हमारा सक्रिय योगदान होना चाहिए। दलाई लामा के प्रति हमारी नीति इस उद्देश्य की पूर्ति में साधक न होकर बाधक ही सिद्ध हो रही है। पाकिस्तान द्वारा ताशकंद घोषणा को रद्दी की टोकरे में डालने के बाद भी हमारे नेताओं द्वारा उसकी रट लगाए जाना हास्यास्पद है। ऐसा प्रतीत होता है कि सोवियत रूस की पाकिस्तान के प्रति नीति

में परिवर्तन आने के कारण हम भी रूसी नेताओं को खुश करने के लिए पाकिस्तान के साथ दोस्ती का राग अलापते रहते हैं। प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा मास्को जाते समय पाक प्रधान अय्यूब खाँ को दिए गए संदेश में माँगला बाँध के निर्माण पर बधाई देने का और कोई कारण नहीं नजर आता। पाकिस्ताम के प्रति हमारी नीति उसके व्यवहार के आधार पर निश्चित न होकर यदि रूस या अमरीका के इशारे पर तय होगी तो भारतखंड में कभी शांति नहीं रह सकेगी। चीन और पाकिस्तान दोनों मिलकर अगले आक्रमण की तैयारी कर रहे हैं। हम उनकी दुरभिसंधि और योजनाओं से बेखबर नहीं रह सकते। पिछले दिनों में देश की सैनिक तैयारी में कुछ बढ़ोतरी अवश्य हुई है, फिर भी वह आवश्यकता से बहुत कम है। चीन ने परमाणु अस्त्रों की दिशा में काफी प्रगति कर ली है। भारत सरकार अभी तक अपने पुराने हठवाद पर ही कायम है। हमें ये अस्त्र बनाने होंगे। बिना उनके हमारी सुरक्षा सदैव संकटापन्न रहेगी।"

### माओवादियों का षड्यंत्र

माओवादियों की गतिविधियों पर वे कहते हैं, "चीन और पाकिस्तान के संकट के संदर्भ में हमें उन तत्त्वों की गतिविधियों का भी विचार करना होगा जो उनसे सैद्धांतिक प्रेरणा लेकर उनकी योजना के अनुसार ही यहाँ पर काम कर रहे हैं। पश्चिम बंगाल और केरल में माओवादी कम्युनिस्टों के प्रतिनिधि सत्ता में भागीदार होने के बाद उसका साहस बढ़ा है तथा उन्होंने अपने मंतव्यों को पूरा करने के लिए सत्ता का खुलकर दुरुपयोग किया है। एक ओर तो उन्होंने नक्सलबाड़ी जैसे कांड करके कानून और व्यवस्था को भंग किया और दूसरी ओर पुलिस एवं प्रशासन को निष्क्रिय बनाने की भी कोशिश की। देश को सचेत रहना होगा तथा यह देखना होगा कि ये तत्त्व कोई ऐसी अशांतिपूर्ण स्थिति न पैदा कर दें, जिनका लाभ कम्युनिस्ट चीन और पाकिस्तान उठा लें। जब और जहाँ ये तत्त्व कानून और व्यवस्था की समस्या पैदा करें तथा देश की सुरक्षा के लिए खतरा बनें वहाँ उनका कठोरता से दमन किया जाय। देश की जनता की राष्ट्रवाद तथा प्रजातंत्र में गहरी निष्ठा है। वह उन तत्त्वों को सहन नहीं करेगी जो इन मान्यताओं के विरुद्ध चलते हैं। भारत सरकार ने हाल में गैर कानूनी कार्यवाही अधिनियम बनाकर जो अधिकार लिए हैं, वे अनावश्यक एवं अनुचित हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पिछले चुनावों में हारने के बाद केंद्र का काँग्रेस शासन अपने आपको उन सभी हथियारों से लैस करना चाहता है जिससे वह अपनी भ्रष्ट सत्ता को टिकाए रख सके।"

### जागरण की वेला

वे स्पष्ट चेतावनी देते हैं, "हमें उन लोगों से भी सावधान रहना चाहिए जो प्रत्येक आंदोलन के पीछे कम्युनिस्टों का हाथ देखते हैं और उसे दबाने की सलाह देते हैं। जन-आंदोलन एक बदलती हुई व्यवस्था के युग में स्वाभाविक और आवश्यक है। वास्तव में वे समाज की जागृति के साधन और उसके द्योतक हैं। हाँ, यह आवश्यक है कि ये आंदोलन दुस्साहसपूर्ण और हिंसात्मक न हों। प्रत्युत वे हमारी कर्मचेतना को संगठित कर एक भावात्मक क्रांति का माध्यम बनें। एतदर्थ हमें उनके साथ चलना होगा, उनका नेतृत्व करना होगा। जो राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्र में यथास्थिति बनाए रखना चाहते हैं वे उस जागरण से घबड़ाकर निराशा और आतंक का वातावरण बना रहे हैं। हमें दुःख है कि हम उनके साथ सहयोग नहीं कर सकते। वे कालचक्र की गति को थामना चाहते हैं, भारत की नियति को टालना चाहते हैं। यह सम्भव नहीं होगा। हम अतीत के गौरव में अनुप्राणित हैं परन्तु उसको भारत के राष्ट्र-जीवन का सर्वोच्च बिंदु नहीं मानते। हम वर्तमान के प्रति यथार्थवादी हैं, किंतु उससे बँधे नहीं। हमारी आँखों में भविष्य के स्वर्णिम सपने हैं, किंतु हम निद्रालु नहीं, बल्कि उन सपनों को साकार करने वाले जागरूक कर्मयोगी हैं। अनादि, अतीत, अस्थिर, वर्तमान तथा चिरंतन भविष्य की कालजयी सनातन संस्कृति के हम पुजारी हैं।"

### निष्कर्ष

दीनदयाल उपाध्याय के भाषणों में वे मूलगामी विचार तत्त्व हैं, जो व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और मानवता के परिपूर्ण और समग्र चिंतन की आधारशिला बनकर नवनिर्माण की प्रेरणा प्रदान करते हैं। इनमें भारत की एकात्म चिंतनधारा के सूत्र संगृहीत हैं। अपने भाषणों के माध्यम से वे राष्ट्रजीवन की विभिन्न समस्याओं पर बेबाक टिप्पणी करते हैं। उनके भाषणों की एक और विशेषता यह है कि वे समस्याओं पर टिप्पणी करते ही हैं, लेकिन समस्याओं के समाधान भी सुझाते हैं। कालीकट अधिवेशन के अपने अध्यक्षीय भाषण में वे जनसंघ कार्यकर्ताओं का आह्वान करते हुए अपने दल का लक्ष्य बहुत ही स्पष्ट तरीके से बताते हैं, "हमने किसी संप्रदाय या वर्ग की सेवा का नहीं, बल्कि संपूर्ण राष्ट्र की सेवा का व्रत लिया है। सभी देशवासी हमारे बांधव हैं। जब तक हम इन सभी बंधुओं को भारतमाता के सपूत होने का सच्चा गौरव प्रदान नहीं करा देंगे, हम चुप नहीं बैठेंगे। हम भारतमाता को सही अर्थों में सुजला, सुफला बनाकर रहेंगे। यह दशप्रहरण-धारिणो दुर्गा बनकर असुरों का संहार करेगी, लक्ष्मी बनकर जन-जन को समृद्धि देगी और सरस्वती बनकर अज्ञानांधकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलाएगी। हिंद महासागर और हिमालय से परिवेष्टित भारतखंड में जब तक एकरसता, कर्मठता, समानता, संपन्नता, ज्ञानवत्ता, सुख और शांति की सप्तजाह्नवी का पुण्य-प्रवाह नहीं ला पाते, हमारा भगीरथ तप पूरा नहीं होगा। इस प्रयास में ब्रह्मा, विष्णु और महेश सभी हमारे सहायक होंगे। विजय का विश्वास है, तपस्या का निश्चय लेकर चलें।" ये शब्द प्रमाण हैं कि अपने भाषण के माध्यम से वे कार्यकर्ताओं में किस तरह विश्वास और ऊर्जा पैदा करते हैं। उनके हर भाषण से इसी प्रकार का पाथेय प्राप्त होता है।

### संदर्भ

पाञ्चजन्य, 28 अप्रैल, 1952
पाञ्चजन्य, 29 जून, 1952
पाञ्चजन्य, 17 जुलाई, 1953
पाञ्चजन्य, 8 नवंबर, 1951
पाञ्चजन्य, 27 सितंबर, 1951
पाञ्चजन्य, 3 मई, 1951
पार्टी दस्तावेज. (2005). भारतीय जनसंघ, अध्यक्षीय भाषण (1951-75), पृष्ठ 228-245.
शर्मा, एम. सी. (2016). दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 31-38, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# दत्तोपंत ठेंगड़ी की साहित्यिक एवं पत्रकारीय दृष्टि

**प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार[1] और डॉ. आकाश दीप जरयाल[2]**

**सारांश**

देश के शीर्ष मजदूर संगठन, भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक दत्तोपंत ठेंगड़ी की गणना भारत के शीर्ष मजदूर नेताओं में होती है। वर्ष 1955 में जब उन्होंने भारतीय मजदूर संघ की स्थापना की तो उस समय भारत के श्रम जगत् पर वामपंथ से प्रेरित मजदूर संगठनों का पूरी तरह कब्जा था। वे जो चाहते वह करते थे। उन दिनों का भारतीय औद्योगिक जगत् का इतिहास दीर्घकालिक और हिंसक हड़तालों की घटनाओं से पटा पड़ा है। उन हड़तालों का आह्वान करने वाले नेता और संगठन आज शून्य हो गए और भारतीय मजदूर संघ देश का नंबर वन मजदूर संगठन गत तीन दशक से भी अधिक समय से है। यही नहीं, भारत के लगभग सभी श्रम संगठन आज भारतीय मजदूर संघ के नेतृत्व में मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वर्ष 2019-20 ठेंगड़ी जी का जन्म शताब्दी वर्ष था, परंतु कोविड महामारी के कारण उस दौरान उनके व्यक्तित्व पर उतनी चर्चा नहीं हो सकी, जितनी होनी चाहिए थी। आज दत्तोपंत ठेंगड़ी की जब भी चर्चा होती है तो प्रायः उन्हें एक ऐसे मजदूर नेता के रूप में चित्रित किया जाता है जिसने रूस व चीनपंथी नेताओं की विचारधारा को उखाड़कर भारतीय सनातन चिंतन पर आधारित श्रम चिंतन को स्थापित किया। उनके व्यक्तित्व के जिस एक पहलू पर प्रायः चर्चा नहीं होती वह है उनका लेखन और अध्ययन का पहलू। बहुत कम लोगों को जानकारी है कि दत्तोपंत ठेंगड़ी ने अपने जीवनकाल में 200 से अधिक पुस्तकें लिखीं और 50 से अधिक पुस्तकों की प्रस्तावना लिखीं। कुछ प्रस्तावनाएँ बहुत लंबी हैं। भानुप्रताप शुक्ल और श्री गौरीनाथ रस्तोगी द्वारा संयुक्त रूप से लिखी गई पुस्तक 'राष्ट्र' की प्रस्तावना 94 पृष्ठ की है। ठेंगड़ी जी द्वारा लिखित ऐसी सभी प्रस्तावनाओं को संकलित करके 412 पृष्ठ की एक अलग पुस्तक 'प्रस्तावना' नाम से ही प्रकाशित की गई है। ठेंगड़ी जी की मातृभाषा मराठी थी, परंतु संस्कृत, हिंदी, बांग्ला, मलयालम और अँग्रेजी पर उनका अच्छा अधिकार था। लोग इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि दिनभर श्रम जगत् के विभिन्न विषयों में व्यस्त रहते हुए उन्हें अध्ययन और लेखन के लिए इतना समय कैसे मिल जाता था! श्रमिकों के लिए कार्य करते हुए उन्होंने भारतीय इतिहास, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र का गहन अध्ययन किया, जिसकी छाप उनके लेखन में स्पष्ट दिखती है। किसी जटिल विषय को सामान्य व्यक्ति के लिए सरल भाषा में प्रस्तुत करना उनके लेखन की ऐसी विशेषता है जिसे साहित्य जगत् निर्विवाद रूप से स्वीकार करता है। इसलिए उनके व्यापक चिंतन पर आज गहन अध्ययन और शोध की आवश्यकता है ताकि भावी पीढ़ियाँ उनके चिंतन के अलग-अलग पहलुओं से अवगत हो सकें। प्रस्तुत शोध पत्र उनके साहित्यकार पक्ष को उजागर करने का एक प्रयास है। शोध हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों से सामग्री एकत्र की गई है। शोधार्थी का भी दत्तोपंत ठेंगड़ी से 15 वर्ष से अधिक समय तक निकट संपर्क रहा। इसलिए वह उनके व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं से परिचित है।

**संकेत शब्द :** दत्तोपंत ठेंगड़ी, भारतीय मजदूर संघ, स्वदेशी जागरण मंच, भारतीय किसान संघ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, सर्वपंथ समादर मंच, सामाजिक समरसता मंच, पर्यावरण मंच, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्

## प्रस्तावना

दत्तोपंत ठेंगड़ी नाम से विख्यात दत्तोपंत बापुराव ठेंगड़ी भारतीय श्रम जगत् के ऐसे नेता हुए हैं, जिन्होंने अपना संपूर्ण जीवन आधुनिक भारतीय श्रम चिंतन को एक नई दिशा देने में समर्पित कर दिया। वे थे तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पूर्णकालिक कार्यकर्ता, परंतु उन्होंने भारतीय मजदूर संघ की स्थापना कर भारतीय श्रमिक आंदोलन से वामपंथी विचारधारा से प्रेरित सभी संगठनों को शून्य कर दिया। आज वामधारा से प्रेरित सभी श्रमिक संगठन उसी भारतीय मजदूर संघ के साथ मिलकर अपने अस्तित्व को बचाए रखने का प्रयास कर रहे हैं, जिसे समाप्त करने के लिए उन्होंने सभी हथकंडे अपनाए और उसके नेताओं और कार्यकर्ताओं पर हिंसक हमले तक कराए। भारतीय मजदूर संघ के अलावा दत्तोपंत ठेंगड़ी और भी अनेक संगठनों के संस्थापक रहे हैं, परंतु उनकी पहचान एक श्रमिक नेता के रूप में ही है। 10 नवंबर, 2019 से 9 नवंबर, 2020 तक उनकी जन्म शताब्दी मनायी गई। परंतु कोविड महामारी के कारण उनके जीवन और व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर व्यापक चर्चा नहीं हो पाई। हालाँकि, जन्म शताब्दी वर्ष के लिए भारतीय मजदूर संघ ने व्यापक तैयारी की थी, परंतु कोविड महामारी के कारण उस पूरी योजना को अमलीजामा नहीं पहनाया जा सका। ऑनलाइन संचार माध्यमों का इस्तेमाल करते हुए कुछ कार्यक्रम करने का प्रयास किया गया। उस दौरान ठेंगड़ी जी के जीवन के जिस एक महत्त्वपूर्ण पहलू पर चर्चा नहीं हो सकी वह है उनकी असाधारण अध्ययन एवं लेखन प्रतिभा। अपने जीवन में ठेंगड़ी जी ने 200 से अधिक पुस्तकें लिखीं हैं। स्वाभाविक है कि इतनी पुस्तकों की रचना करने से पहले उन्होंने अनेक पुस्तकों का अध्ययन भी किया होगा।

## असाधारण अध्येता

उनकी अध्ययन प्रवृत्ति और लेखन क्षमता का परिचय कराने वाली एक घटना अक्टूबर 2019 के प्रथम सप्ताह में संस्कार भारती के संस्थापक 96 वर्षीय बाबा योगेंद्र जी ने प्रथम शोधार्थी को नई दिल्ली में बताई। 'ऑर्गनाइजर' अँग्रेजी साप्ताहिक के मुख्य समाचार समन्वयक के नाते प्रथम शोधार्थी ने बाबा योगेंद्र जी से लंबी वार्ता की, जिसका प्रकाशन 'ऑर्गनाइजर' में हुआ। बाबा योगेंद्र जी ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने सात दशक से अधिक समय तक दत्तोपंत ठेंगड़ी के साथ काम किया। ठेंगड़ी जी के बारे में जितना वे जानते थे उतना बहुत कम लोगों को मालूम है। उस बातचीत में उन्होंने बताया कि संस्कार भारती का परिचय देने वाली पुस्तक 'हिंदू

[1]अध्यक्ष, स्ट्रेटेजिक कम्युनिकेशन विभाग, भारतीय जन संचार संस्थान सम विश्वविद्यालय, नई दिल्ली. ईमेल : drpk.iimc@gmail.com
[2]कवि, लेखक एवं शोधकर्ता, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : jaryalpalampur@gmail.com

कला दृष्टिः संस्कार भारती क्यों?' ठेंगड़ी जी ने किस प्रकार अल्प समय में लिखी। बाबा योगेंद्र जी ने बताया, "संस्कार भारती का कार्य आरंभ हुए काफी समय बीत गया था, परंतु कार्यकर्ताओं और जनसामान्य को संगठन का परिचय देने वाली कोई पुस्तक हमारे पास नहीं थी। 1980 के दशक में कई बैठकों में विषय उठा कि ऐसी पुस्तक तैयार की जानी चाहिए जो संस्कार भारती की स्थापना के उद्देश्यों को स्पष्ट करने के साथ-साथ भारतीय कला दृष्टि को भी स्पष्ट करे। उस चर्चा के बाद ऐसे व्यक्ति की तलाश आरंभ हुई, जो ऐसी पुस्तक की रचना कर सके। 1990 के आरंभ में बहुत चिंतन-मंथन के बाद मुझे लगाकि इस काम को दत्तोपंत ठेंगड़ी ही बेहतर ढंग से कर सकते हैं। इसलिए एक दिन मैंने उनसे मिलकर इस पूरे विषय पर विस्तार से चर्चा की। बातचीत के बाद वे इसके लिए सहमत हो गए। उसी बातचीत में तय हुआ कि पुस्तक की रचना के लिए वे एक सप्ताह के लिए पुणे जाएँगे और वहीं बैठकर पांडुलिपि तैयार की जाएगी। पुणे में बैठकर पुस्तक लिखने का प्रमुख कारण यह था कि वहाँ डेक्कन विश्वविद्यालय के पुस्तकालय से संदर्भ सामग्री आसानी से प्राप्त हो सकती थी। मैंने पुणे के एक कार्यकर्ता, सुभाष कुलकर्णी को इस संबंध में ठेंगड़ी जी की सहायता के लिए निर्देशित किया। अंततः निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार ठेंगड़ी जी एक अन्य कार्यकर्ता के साथ पुणे पहुँच गए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने उस विषय पर चिंतन-मंथन आरंभ किया और संघ कार्यालय में ही बैठकर पुस्तक की रचना आरंभ कर दी। कला विषय पर जिन भी पुस्तकों की उन्हें आवश्यकता महसूस होती थी वे सुभाष कुलकर्णी को बताते और कुलकर्णी वे पुस्तकें उन्हें डेक्कन विश्वविद्यालय के पुस्तकालय से लाकर दे देते। ठेंगड़ी जी स्वयं उन पुस्तकों को पढ़ते और जहाँ से सामग्री उपयोगी प्रतीत होती, उसका पुस्तक में उपयोग करते। उस वर्ष संस्कार भारती का राष्ट्रीय अधिवेशन हैदराबाद में आयोजित होना तय था। सुप्रसिद्ध गायक श्री सुधीर फड़के के साथ ठेंगड़ी जी भी उस अधिवेशन में शामिल होने वाले थे। संगठन योजना के अनुसार श्री शैलेंद्रनाथ श्रीवास्तव संस्कार भारती के अध्यक्ष का दायित्व ग्रहण करने वाले थे। उसी अवसर पर हम संस्कार भारती का परिचय कराने वाली उस पुस्तक का विमोचन कराना चाहते थे। ठेंगड़ी जी ने एक सप्ताह में दिन-रात काम करके उस पुस्तक की अँग्रेजी पांडुलिपि तैयार कर दी। यह सोचकर आश्चर्य होता है कि उन्होंने कैसे इतनी पुस्तकें पढ़ीं और कैसे उनमें से उपयोगी सामग्री निकाली। अंत में 'ए हिंदू व्यू ऑफ आर्ट : व्हाय संस्कार भारती?' शीर्षक से जो पुस्तक तैयार हुई वह संस्कार भारती के सभी कार्यकर्ताओं के लिए आज भी प्रांसगिक और उपयोगी है। जब इस पुस्तक पर पुणे में कार्य प्रारंभ हुआ तो मुझे स्वयं इस बात का अंदाजा नहीं था कि इतनी कम अवधि में तैयार होने वाली यह पुस्तक इतनी अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। ठेंगड़ी जी ने वह कार्य अत्यंत समर्पण भाव से किया। यह पुस्तक सिर्फ भारतीय कला दृष्टि को ही स्पष्ट नहीं करती, बल्कि भारतीय और पश्चिमी कला दृष्टि में अंतर भी बताती है। हमने उस पुस्तक की पांडुलिपि आज भी पुणे में सँभालकर रखी है। उस पुस्तक का प्रकाशन हैदराबाद में ही हुआ। विमोचन भी हैदराबाद अधिवेशन में ठेंगड़ी जी, सुधीर फडके जी और शैलेंद्र जी की उपस्थिति में हुआ। बाद में उस पुस्तक का हमने हिंदी, गुजराती, मराठी और कन्नड़ में अनुवाद कराया। बाबा योगेंद्र जी द्वारा प्रदान की गई यह पूरी जानकारी 'ऑर्गनाईजर' के 17 नवंबर, 2019 के अंक में पृष्ठ 21 से 23 पर प्रकाशित हुई है। इस एक पुस्तक की रचना से समझा जा सकता है कि ठेंगड़ी जी कैसे विलक्षण अध्येता और असाधारण लेखक थे (बाबा योगेंद्र, 2019)।

ठेंगड़ी जी की असाधारण स्वाध्याय प्रवृत्ति की चर्चा करते हुए नागपुर से प्रकाशित मराठी दैनिक 'तरुण भारत' के मुख्य संपादक रहे वरिष्ठ पत्रकार सुधीर पाठक एक घटना का जिक्र करते हुए कहते हैं, "जब मुझ पर 'तरुण भारत' के मुख्य संपादक का दायित्व आया तो दत्तोपंत जी ने मुझे नागपुर के भगवान नगर में वसंतराव पाठक के घर पर मिलने के लिए बुलाया। मुझे बधाई देने के पश्चात् पूछा कि मैंने कौन-कौन सी पुस्तकें पढ़ी हैं? मैंने जो पढ़ी थीं वे बता दीं। उसी समय उन्होंने करीब 40 पुस्तकों के नाम मुझे बताए और कहा कि मैं उन्हें अवश्य पढ़ूँ। उन पुस्तकों का नाम बताते समय उन्होंने यह भी बताया था कि किस पुस्तक में किस विषय से संबंधित जानकारी है। मुझे आज तक एक प्रश्न का उत्तर नहीं मिल पाया कि दत्तोपंत जी ने देशव्यापी तथा विदेश प्रवास के कार्यक्रम में होने वाली बैठकों, चर्चाओं, बौद्धिक, भाषण आदि के बीच इतने ग्रंथों का वाचन कैसे और किस समय किया होगा? उनका अध्ययन बहुआयामी ग्रंथों का था और चिंतन चतुरस। उनका अँग्रेजी ग्रंथों का अध्ययन बहुत गहरा था। उनकी बताई 40 पुस्तकों में से केवल 10 पुस्तकें ही मैं आज तक पढ़ पाया हूँ, किंतु उन दस पुस्तकों ने मुझे यशस्वी संपादक के रूप में प्रतिस्थापित कर दिया (डोगरा, 2019, पृष्ठ 82-83)।

**दत्तोपंत ठेंगड़ी का जीवन परिचय**

दत्तोपंत ठेंगड़ी का जन्म महाराष्ट्र के वर्धा जिले में स्थित आरवी गाँव में 10 नवंबर, 1920 को हुआ। नागपुर में अध्ययन करते हुए वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संपर्क में आए। संघ संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार के जीवन से प्रभावित होकर उन्होंने अपना पूरा जीवन भारतमाता के चरणों में समर्पित करने का निश्चय किया और 1942 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक बन गए। केरल में संघ का काम शुरू करने में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। 23 जुलाई, 1955 को स्थापित भारतीय मजदूर संघ के अलावा ठेंगड़ी जी ने अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् (9 जुलाई 1949), भारतीय किसान संघ (4 मार्च, 1971), सामाजिक समरसता मंच (14 अप्रैल, 1983), स्वदेशी जागरण मंच (22 नवंबर, 1991), पर्यावरण मंच, सर्वधर्म समादर मंच, भारतीय जनसंघ, अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद्, संस्कार भारती, स्वदेशी साइंस मूवमेंट, आदि अनेक संगठनों की स्थापना में प्रमुख भूमिका निभाई। उन्होंने न केवल इन संगठनों की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, बल्कि उन्हें अपने-अपने क्षेत्रों में गौरवशाली ऊँचाइयों तक ले गए। उनकी संगठन क्षमता को देखते हुए अक्सर कहा जाता है कि "उन्होंने शून्य से कई हिमालय खड़े कर दिए।"

भारतीय श्रमिक आंदोलन में उनका सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने श्रमिक जगत् में कई दशक तक प्रभावी वामपंथी संगठनों को अपने जीते-जी शून्य कर दिया। इसमें उनकी संगठन कुशलता के साथ-साथ अद्भुत बौद्धिक क्षमता का भी योगदान है। वैसे तो दत्तोपंत ठेंगड़ी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक थे, परंतु उन्होंने संघ परिधि से बाहर इंटक, शेतकरी कामगार फेडरेशन जैसे संगठनों में भी सक्रिय रूप से काम किया। 1964 के बाद वे 12 वर्षों तक राज्यसभा के सदस्य रहे। उस दौरान संसदीय शिष्टमंडल के सदस्य के नाते उन्होंने रूस, हंगरी आदि देशों का प्रवास किया। 1977 में जिनेवा में संपन्न इंटरनेशनल लेबर आर्गेनाईजेशन की

परिषद् में सहभागिता की। उस समय उन्होंने युगोस्लाविया में चल रहे श्रमिकीकरण के प्रयोगों का अध्ययन किया। 1979 में अमेरिकी सरकार के निमंत्रण पर वहाँ के मजदूर आंदोलन का अध्ययन करने हेतु प्रवास किया। साथ ही कनाडा और ब्रिटेन का भी प्रवास किया। 1985 में चीन फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियंस के निमंत्रण पर चीन जाने वाले भारतीय मजदूर संघ के शिष्टमंडल का भी उन्होंने नेतृत्व किया।

**शोध प्रविधि**

दत्तोपंत ठेंगड़ी का साहित्य संसार बहुत व्यापक है। उन्होंने 200 से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। इसलिए शोध के लिए द्वितीयक सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। चूँकि ठेंगड़ी जी के निकट संपर्क में रहे अथवा उनके साथ काम किए हुए अनेक लोग अभी जीवित हैं, इसलिए उनसे बात करके शोध हेतु प्राथमिक सामग्री भी संकलित की गई। ऐसे लोगों में खासतौर से संस्कार भारती के संस्थापक बाबा योगेंद्र जी, आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानंद गिरि महाराज, दत्तोपंत ठेंगड़ी के कई दशक तक सहयोगी रहे श्री रामदास पांडे से बात की गई। इसके अलावा भारतीय मजदूर संघ के वरिष्ठ नेता अमरनाथ डोगरा द्वारा संकलित 'दत्तोपंत ठेंगड़ी जीवन दर्शन' की भी सहायता ली गई।

**शून्य से हिमालय खड़े करने वाले आधुनिक चाणक्य**

करीब 25 वर्ष तक दत्तोपंत ठेंगड़ी के निकट संपर्क में रहे वरिष्ठ संत आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानंद गिरि जी महाराज ठेंगड़ी जी की बौद्धिक प्रतिभा को इस प्रकार व्यक्त करते हैं : "मेरा संपर्क ठेंगड़ी जी से 1980 के दशक के प्रारंभ में आया। श्रीरामजन्मभूमि आंदोलन के दौरान उन दिनों संतों की विभिन्न विषयों पर बैठकें हुआ करती थीं। उसी दौरान हरिद्वार में संतों की एक बड़ी बैठक हुई। उस बैठक में मैंने दत्तोपंत जी से अनुरोध किया कि वे 'अर्थ तत्त्व' पर कुछ बोलें। हमने अपनी संस्कृति में चार पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—स्वीकार किए हैं। हमने अर्थ की अवहेलना नहीं की है। हम पश्चिम की तरह उपभोगवादी नहीं हैं, परंतु हमने भौतिक विकास को लेकर अनेक नवीन प्रयोग किए हैं। अर्थ का जितना गहन चिंतन हमारी संस्कृति में हुआ है, उतना कहीं नहीं हुआ है। इसीलिए मैंने ठेंगड़ी जी से अर्थ तत्त्व को स्पष्ट करने का आग्रह किया, जिसके लिए वे सहर्ष तैयार हो गए। प्रारंभ में तय हुआ कि वे 10-12 मिनट ही बोलेंगे, परंतु जब उन्होंने इस विषय की गहराई में जाकर जानकारी प्रस्तुत करनी आरंभ की तो वे 50 मिनट तक बोलते रहे और किसी ने उन्हें टोकने का प्रयास नहीं किया। वहाँ उपस्थित वरिष्ठ संत भी उनकी अद्भुत बौद्धिक क्षमता को देखकर आश्चर्यचकित थे। उस दिन मुझे अहसास हुआ कि हम आधुनिक चाणक्य को सुन रहे हैं।

"ठेंगड़ी जी के बौद्धिक ज्ञान का मुख्य स्रोत गली-नुक्कड़ पर मौजूद चाय की दुकानें थीं। वे जहाँ जाते वहीं ऐसी दुकानें ढूँढ़ लेते थे। वे विषय का विश्लेषण आम आदमी की दृष्टि से करते थे। भारत की संसद का सदस्य रह चुका व्यक्ति चाय वाले, सब्जी बेचने वाले, मोची तथा नाई आदि के साथ पूरी तरह घुल-मिल जाता था। मैंने उनके अंदर ऐसे महान ऋषि के दर्शन किए, जिसकी अद्भुत बौद्धिक क्षमता गिरि-कंदराओं में साधनारत संतों से अधिक गहरी थी। बौद्धिक दृष्टि से जब हम उन्हें देखते हैं तो मुझे लगता है कि वे इतिहास का एक पृष्ठ नहीं, बल्कि पूरा युग थे। वे महज एक कहानी नहीं, बल्कि पूरी गाथा थे। यह ज्ञान उनकी लेखन में भी परिलक्षित होता है (गिरि, 2019)। स्वामीजी से प्रथम शोधकर्ता की यह पूरी बातचीत 'ऑर्गनाईजर' के 17 नवंबर, 2019 के अंक में पृष्ठ 14-15 पर प्रकाशित हुई है।

**मौलिक लेखन**

14 अक्टूबर, 2004 को जब दत्तोपंत ठेंगड़ी का देहावसान हुआ तो उससे एक सप्ताह पहले ही उन्होंने अपनी पुस्तक 'डॉ. अंबेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा' की पांडुलिपि तैयार की थी। इस पुस्तक में उन्होंने विस्तार से बताया है कि बाबासाहब अंबेडकर से उनके रिश्ते कैसे थे और बाबासाहब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को लेकर क्या सोचते थे। यह पुस्तक इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ठेंगड़ी जी का बाबासाहब अंबेडकर से बहुत निकट संपर्क था और वे बाबासाहब अंबेडकर द्वारा स्थापित 'शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन' में अनेक वर्षों तक महत्त्वपूर्ण भूमिका में सक्रिय रहे। यहाँ तक कि जिस दिन बाबासाहब ने बौद्ध मत स्वीकार किया उससे पहले की रात में बाबासाहब अंबेडकर और दत्तोपंत जी के बीच लंबी वार्ता हुई और उसमें बाबासाहब ने स्पष्ट किया कि उन्हें बौद्ध मत स्वीकारने का निर्णय क्यों लेना पड़ा। उस पूरी चर्चा का वर्णन ठेंगड़ी जी ने अपनी इस पुस्तक में किया है। यह पुस्तक उनके निधन के पश्चात् अक्टूबर 2005 में प्रकाशित हुई (ठेंगड़ी, 2005)।

भारतीय मजदूर संघ ने ठेंगड़ी जी के जन्म शताब्दी वर्ष के निमित्त उनके द्वारा लिखित लगभग सभी हिंदी, अँग्रेजी और मराठी पुस्तकों की 'सॉफ्ट कापी' तैयार कर खासतौर से इसी कार्य के लिए समर्पित वेबसाइट www.dbthengadi.in पर अपलोड कर रखी हैं। इसलिए किसी भी पाठक अथवा अध्येता के लिए उनकी पुस्तकों को खोजना अब मुश्किल काम नहीं रहा है। वेबसाइट पर उनके द्वारा लिखे हुए महत्त्वपूर्ण आलेख भी हैं जो उनके साहित्यिक योगदान का प्रमाण हैं। यही नहीं, दत्तोपंत जी के महत्त्वपूर्ण भाषणों के वीडियो भी वेबसाइट पर उपलब्ध हैं। उनके कुछ भाषण इतने प्रभावशाली हैं कि उन्हें पुस्तक आकार में प्रकाशित किया गया है। शोध के दौरान शोधार्थियों ने उनकी निम्नलिखित पुस्तकों की सूची तैयार करने का प्रयास किया :

**प्रमुख हिंदी पुस्तकें**

वर्ष 1950 से 1990 तक प्रकाशित पुस्तकें भारतीय मजदूर संघ ही क्यों? (प्रकाशक : भारतीय मजदूर संघ, कानपुर, 1951), हमारा प्रतीक (रामनरेश सिंह, भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर, 1962), भारतीय मजदूर संघ उत्तर प्रदेश के अधिवेशनों में दत्तोपंत ठेंगड़ी व अन्यान्य नेताओं के भाषण (भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर, 1964), श्रमिक क्षेत्र के उपेक्षित पहलू (रामनरेश सिंह, महामंत्री, भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर, 1965), भारतीय प्रतिरक्षा मजदूर संघ प्रथम अधिवेशन (भारतीय प्रतिरक्षा मजदूर संघ, कानपुर, 1968), कार्यकर्ताओं से वार्ता और विचार (भारतीय श्रमशोध मंडल, नई दिल्ली, 1970), एकात्म मानवदर्शनः एक अध्ययन (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1970), श्रम स्वाध्याय (प्रभाकर केलुसकर, भारतीय मजदूर संघ, बंबई, 1970), हमारी राष्ट्रीयता : एक तर्कपूर्ण समर्थन (भारतीय विचार साधना, नागपुर, 1970), नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स चतुर्थ अधिवेशन (पंजाब

बैंक वर्कर्ज आर्गेनाइजेशन, जालंधर, 1971), नवदधीचि (चंपकलाल सुखाड़िया, सूरत, 1973), राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का आधार (सुरुचि साहित्य, नई दिल्ली, 1973), रेलवे कर्मचारियों की हड़ताल (एडवोकेट गोविंदराव आठवले, नागपुर, 1974), आपात स्थिति और भारतीय मजदूर संघ (भारतीय मजदूर संघ, 1976), राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ : एक स्वयं संपूर्ण कार्य (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, कलकत्ता, 1978)।

भारतीय किसान संघ प्रथम अखिल भारतीय अधिवेशन (भारतीय किसान संघ, राजस्थान, 1979), पश्चिमी देशों में श्रमसंघवाद : एक तुलनात्मक समीक्षा (भारतीय मजदूर संघ, बिहार प्रदेश, 1979), भारतीय किसान संघ : रीति-नीति (भारतीय किसान संघ, जयपुर प्रांत, खाटूश्यामजी में आयोजित पंचम अखिल भारतीय अधिवेशन में दिया हुआ भाषण), भारतीय मजदूर आंदोलन विचार सूत्र (भारतीय श्रम अन्वेषण केंद्र, पुणे, 1980), भारतीय किसान संघ : तत्त्व एवं व्यवहार (भारतीय किसान संघ, उत्तर प्रदेश, 1983), कांप्युटरायजेशन-एक प्रकट चिंतन (भारतीय श्रमशोध मंडल, नई दिल्ली, 1984), ध्येय पथ पर किसान (भारतीय किसान संघ, लखनऊ 1984), पश्चिमीकरण के बिना आधुनिकीकरण (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984), भारतीय मजदूर संघ के सातवें अखिल भारतीय अधिवेशन के अवसर पर हैदराबाद में प्रतिनिधियों को मार्गदर्शन (भारतीय मजदूर संघ, 1984), सप्तक्रम (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984), पुरानी नींव नया निर्माण (जागृति प्रकाशन, नोएडा, 1985), कार्यकर्ता (अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत, 1986), शिक्षा में भारतीयता (भारतीय शिक्षण मंडल, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, 1986), संघ विचार वर्तमान संदर्भ में (बौद्धिक विभाग, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, नागपुर, 1987), डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1988), राष्ट्रीय प्रतिबद्धता (विश्वकर्मा श्रमिक शिक्षा संस्था, नागपुर, 1988)।

वर्ष 1990 से 2000 तक प्रकाशित पुस्तकें : चिंतन पाथेय : श्री गुरुजी के समग्र जीवन विषयक विचारों का एक विवेचन (जागृति प्रकाशन, नोएडा, 1991), पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन : तत्त्व जिज्ञासा, खंड-1, अनुवर्ती छह खंडों की प्रस्तावनास्वरूप स्वतंत्र विवेचन (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1991), भारतीय मजदूर संघ कार्यकर्ता की मनोभूमिका (भारतीय मजदूर संघ, 1992), मास्टरमाइंड ग्रुप चाहिए (उत्तर रेलवे कर्मचारी यूनियन, 1992), संकेतरेखा (जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992), संघे शक्ति (श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी का राष्ट्रचिंतन पुस्तक में एक अध्याय), संघ, संघ परिवार एवं त्रिविध पथ्य (आकाशवाणी प्रकाशन, जालंधर, 1992), सावधान दक्ष! (26 जनवरी, 1992 को स्वयंसेवकों के बीच समारोप भाषण), राष्ट्र का आत्मविश्वास (श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी की राष्ट्रचिंतन पुस्तक में एक अध्याय), मा.स. गोलवलकर 'श्री गुरुजी' : राष्ट्र (जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992), पश्चिम की शोषणात्मक अर्थव्यवस्था और स्वदेशी (आकाशवाणी प्रकाशन, जालंधर, 1992), लक्ष्य और कार्य (जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992), लोकतंत्र (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1992), हिंदू कला दृष्टि : संस्कार भारती क्यों? (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992), हिंदू चिंतन और चुनौतियाँ (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1992), हिंदू राष्ट्र चिंतन (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, बिहार प्रदेश 1992), डंकेल प्रस्ताव : आर्थिक गुलामी की ओर बढ़ते कदम (भारतीय किसान संघ, 1993), धर्म क्षेत्रे-कुरूक्षेत्रे... (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 1993), देशप्रेम की साकार अभिव्यक्ति : स्वदेशी (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 1994), प्रस्तावना (जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994), धर्म और सेकुलरिज्म (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1994), नई चुनौतियाँ शाश्वत सिद्धांत (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली), नववर्ष का संकल्प (भारतीय विचार साधना, नागपुर, 1994)।

सामाजिक न्याय : हम एकात्म हैं (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1994), सौ में से एक, सौ में से तीन (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ), स्वदेशी अपनाएँ विदेशी हमलों से सावधान (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1994), स्वदेशी बनाम बहुराष्ट्रीय शिकंजा (जागृति प्रकाशन, नोएडा, 1994), आत्मविलोपी आबाजी (भारतीय विचार साधना, नागपुर, 1995), समरस हिंदू समाज (विश्व संवाद केंद्र, झारखंड), समाचार पत्र प्रचार तंत्र : प्रबोधन मालिका पुष्प क्र. 3 (भारतीय श्रमशोध मंडल, पुणे, 1995), परम पूजनीय श्री गुरुजी—अलोकसामान्य चरित्र (श्री बाबासाहब आपटे स्मारक समिति, नागपुर, 1996), श्री गुरुजी के प्रेरक संस्मरण (भारतीय विचार साधना, नागपुर, 1996), डॉक्टर जी का जीवन संदेश (भारतीय विचार साधना, नागपुर, 1997), बदलते परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय समाज के सामने खड़ी चुनौतियाँ (स्वस्तिश्री प्रकाशन, पुणे, 1997), विकास की अवधारणा (अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् का 43वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन, चेन्नई, 1997), हमारा अधिष्ठान (भारतीय मजदूर संघ, नई दिल्ली), हमारा राष्ट्रीय श्रम दिवस (रामनरेश सिंह, भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर), हमारे बालासाहब (साप्ताहिक विवेक, मुंबई, 1997), हिंदुत्व की धारणा ('श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी का राष्ट्रचिंतन' पुस्तक में एक अध्याय), नेशनल आर्गनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स : कम्यूनवादियों की मजदूर द्रोही हरकतों का भंडाफोड़ (उत्तर प्रदेश बैंक वकर्स आर्गेनाइजेशन, कानपुर), परम वैभव का संघ मार्ग (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1998), पिछड़े बंधुओं की समस्या ('श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी की राष्ट्रचिंतन' पुस्तक में एक अध्याय), तीन विधाएँ (अर्चना प्रकाशन, भोपाल, 1998), सर्वपंथ समादर मंच-एक रास्ता (भारतीय श्रमशोध मंडल, नई दिल्ली, 1998), किसान चेतना (भारतीय किसान संघ, मेरठ प्रांत, 2000) बैंकों का राष्ट्रीयकरण अथवा सरकारीकरण (भारतीय मजदूर संघ, कानपुर), बौद्धिक संपदा का प्रेत (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली), बड़े भाई स्मृति ग्रंथ (...), भारतीय मजदूर संघ के बढ़ते चरण (...), भारत का अभ्युदयः स्वदेशी रूपरेखा (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली), श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी षष्टिपूर्ति सत्कार समारोह स्मृति स्मारिका अंक (भारतीय मजदूर संघ, राजस्थान प्रदेश), भारतीयता और समाजवाद (भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर), भावी भारत का निर्माण (नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स, नागपुर), भाषण कला (...), मजदूर की माँग केवल एक : मैं मनुष्य हूँ, मनुष्य के नाते जिंदा रहने का हमारा हक है (भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश, कानपुर), तीसरा विकल्प (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली) आदि।

वर्ष 2000 के बाद प्रकाशित पुस्तकें : भावी पीढ़ियों की चेतावनी : सांख्य-वाहिनी समाप्त करो (अर्चना प्रकाशन, भोपाल, 2000), चिरंतन राष्ट्र-जीवन (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2002), डंकल प्रस्ताव अर्थात् गुलामी का दस्तावेज (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 2003), अर्थ या अनर्थ (सुरुचि प्रकाशन, 2003), विजयी विश्वास (भारतीय किसान संघ, महाराष्ट्र प्रदेश, 2003), आत्माभिमुख राष्ट्रकल्प में राष्ट्रीय स्वयंसेवक

संघ की भूमिका (पटना संघ शिक्षा संघ समापन समारोह में दिया गया भाषण), आदर्श आत्मविलोपी मोरोपंत पिंगले (वीर वाणी, बेलगाम, कर्नाटक, 2003), एकात्मता के पुजारी डॉ. बाबा साहब अंबेडकर (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2003), दीनदयाल उपाध्याय : व्यक्ति और विचार (जागृति प्रकाशन, नोएडा, 2003), स्वदेशी आंदोलन-1 (स्वदेशी विचार केंद्र, जोधपुर 2003), स्वदेशी आंदोलन-2 (स्वदेशी विचार केंद्र, जोधपुर 2003), स्वदेशी आंदोलन-4 (स्वदेशी विचार केंद्र, जोधपुर, 2003), पूर्वसूत्रः कृतज्ञ स्मरण (...), औद्योगिक महासंघ (भारतीय मजदूर संघ, नई दिल्ली), कम्यूनिज्मः अपनी ही कसौटी पर (भारतीय संस्कृति पुनरुत्थान समिति, उत्तर प्रदेश), कल्पवृक्ष (जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रस्तावना), किसान संघोष (भारतीय किसान संघ, कोटा विभाग, 2004), डॉ. अंबेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2005), सर्वपंथ समादर मंच : एक रास्ता (भारतीय श्रमशोध मंडल, नई दिल्ली, 2006), प्रचार तंत्र (लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2008), हिंदू मानसिकता (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009), राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ कार्यकर्ता : अधिष्ठान, व्यक्तिमत्व, व्यवहार (हिंदुस्थान जागरण, पुणे, 2011), विचार दर्पण (भारतीय श्रमशोध मंडल, पुणे, 2011), अकार्यकर्ता एक मनःस्थिति (राजस्थान वनवासी कल्याण परिषद्, उदयपुर, 2012), सर्वसमावेशी स्वदेशी (स्वदेशी विचार केंद्र, जोधपुर, 2013)।

**प्रमुख मराठी पुस्तकें**

चिंतन सामग्री (भारतीय विचार साधना, पुणे, 1979), राष्ट्रपुरुष छत्रपति शिवराय (भारतीय विचार साधना, पुणे, 1979), एरणीवरचे घाव (भारतीय श्रमशोध मंडल, पुणे, 1988), आर्थिक आक्रमणाचे चक्रव्यूह आणि स्वदेशी (मोरया प्रकाशन, डोंबिवली, 1995), त्रिसर्या पर्यायाकडे (मोरया प्रकाशन, डोंबिवली, 1998), संस्मरणीय विस्मृतांचे कृतज्ञ स्मरण (भारतीय विचार साधना, नागपुर), समरसतेशिवाय सामाजिक समता अशक्य! (भारतीय विचार साधना, पुणे, 1999) माननीय श्री. दत्तोपंत ठेंगड़ी याँचे प्रकट चिंतन (कल्याणचे माजी नगराध्यक्ष मा. श्री. भगवानराव जोशी याँच्या अमृत महोत्सवानिमित्त, 2001), द्रष्टा श्रमयोगी (समग्र प्रबोधन केंद्र, पुणे, 2004), कर्मयोगी श्रद्धेय दत्तोपंत ठेंगड़ी, लेखक : उदय पटवर्धन (भारतीय मजदूर संघ, पुणे, 2019)।

**प्रमुख अँग्रेजी पुस्तकें**

लेबर पॉलिसी (भारतीय मजदूर संघ, नागपुर, 1967), मार्क्स एंड दीनदयाल : द टू अप्प्रोचेस (दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली), द पर्सपेक्टिव (साहित्य सिंधु प्रकाशन, बंगलौर, 1971), लॉ ऑफ कलेक्टिविटी : समष्टि धर्म (नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स, नागपुर, 1972), फोकस ऑन द सोसियो-इकॉनोमिक प्रोब्लेम्स (सुरुचि साहित्य, नई दिल्ली, 1972), क्लरिओन कॉल टू द एक्टिविस्ट्स ऑफ एनओबीडब्ल्यू (नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स, नागपुर, 1973), हिज लिगेसी : आवर मिशन (जयभारत प्रकाशन, कालीकट, 1973), नेशनल सेमिनार ऑन एजुकेशन, एजुकेशनल प्लानिंग & डेवलपमेंट प्लानिंग (अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, नई दिल्ली, 1975), ऑन रेवोलुशन (भारतीय मजदूर संघ, 1976), रेस्पोंसिव कोऑपरेशन (नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ इंसोरेंस वर्कर्स, हैदराबाद, 1977), द ग्रेट सेंटिनल (सुरुचि साहित्य, नई दिल्ली), द ऑनवर्ड मार्च ऑफ बीएमएस (...), आरएसएस लाइट्स अप द पाथ टू एटर्नल ग्लोरी (जागरण प्रकाशन, बंगलौर, 1979), व्हाट सस्टेंस संघ (...), आवर नेशनल रेनैस्संस : इट्स डायरेक्शन एंड डेस्टिनेशन (साहित्य सिंधु प्रकाशन, बंगलौर, 1980), लेबर मूवमेंट: अ न्यू पर्सपेक्टिव (भारतीय मजदूर संघ, कर्नाटक, 1982), यू आर फूल बट सो वर ग्रेट पर्सनलिटीज (ऑल इंडिया रिजर्व बैंक वर्कर्स आर्गेनाइजेशन, बंगलौर, 1983)।

मॉडर्नाइजेशन विदआउट वेस्टर्नाइजेशन (सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984), स्पेक्ट्रम (भारतीय श्रमशोध मंडल, मुंबई, 1984), सुई जेनेरिस (भारतीय मजदूर संघ कर्नाटक, बंगलौर, 1984), योर इक्विपमेंट (भारतीय मजदूर संघ प्रकाशन), कंजूमर—अ सोवरिन विदआउट सोवरिनिटी (अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत, नागपुर, 1986), द पल्लाडियन पलवेर एंड द पनोप्ली (भारतीय मजदूर संघ कर्नाटक, बंगलौर, 1988), अ हिंदू व्यू ऑफ आर्ट्स : व्हाई संस्कार भारती? (संस्कार भारती प्रकाशन, आगरा, 1990), नेशनलिस्ट परसूट (साहित्य सिंधु प्रकाशन, बंगलौर, 1992), हिंदी इकोनॉमिक्स : अ फ्रेश एक्सप्लोरेशन (साहित्य सिंधु प्रकाशन, बंगलौर, 1993), ग्लोबल इकॉनोमिक सिस्टम : अ हिंदू व्यू (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 1993), द प्रैक्टिकल मेनिफेस्टेशन ऑफ पेट्रिओटिज्म (भारत प्रकाशन दिल्ली लि., 1995), एनवायरनमेंट प्रोटेक्शन : अ चैलेंज बिफोर लीगल सिस्टम (अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद, नई दिल्ली, 1995), द कांसेप्ट ऑफ डेवलपमेंट (अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, मुंबई, 1997), फॉरेन इन्वेस्टमेंट : फैक्ट्स विदआउट कमेंट्स (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 1997), फ्यूचर ऑफ पार्लियामेंटरी सिस्टम इन इंडिया (अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद, नई दिल्ली, 1997), द प्लेज : द स्टैंडर्ड (...), थर्ड वे (साहित्य सिंधु प्रकाशन, बंगलौर, 1998), गोल्डन एज ऑफ ग्लोबलाइजेशन : 7000 इयर्स ऑफ इंडियन इकॉनमी (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली, 2002), इंडियाज प्लांड पावर्टी (भारतीय किसान संघ, लखनऊ), इंटीग्रल हुमनिज्म : अ स्टडी (स्वदेशी विचार केंद्र, जोधपुर), इश्यूज इन नेशनल टेक्नोलॉजी पालिसी (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली), नंबूदिरिपाद्स एंटी-कम्युनलिज्म एक्सरेड (विश्व हिंदू परिषद् प्रकाशन), नेशनलाइजेशन ओर गवर्नमेंटाइजेशन (नेशनल ऑर्गनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स), ऑन द इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स (स्वदेशी जागरण मंच), रिबिल्डिंग द नेशन : अ स्वदेशी आउटलाइन (स्वदेशी जागरण मंच, नई दिल्ली), अ ट्रिब्यूट टू द लीजेंड (भारतीय मजदूर संघ, नई दिल्ली, 2004), चेंजिंग होरिजोंस & इमर्जिंग चैलेंजज बिफोर द नेशनलिस्ट (...), द पोस्ट इंडिपेंडेंस महात्मा : अ ट्रिब्यूट टू द रोल मॉडल ऑफ आल सोशल वर्कर्स (स्वदेशी पत्रिका, नई दिल्ली, नवंबर 2004 अंक)।

दत्तोपंत ठेंगड़ी द्वारा लिखी हुई जिन पुस्तकों की जानकारी प्रस्तुत शोध पत्र में संकलित नहीं हो सकी है, उनमें लगभग 120 पुस्तकें हिंदी में हैं, करीब 20 पुस्तकें मराठी में हैं और करीब 60 पुस्तकें अँग्रेजी में हैं। इन तीन भाषाओं के अलावा जिन भाषाओं में उनकी पुस्तकों का अनुवाद हुआ है उसकी जानकारी अभी संकलित होनी शेष है। भारतीय मजदूर संघ ने

उनकी सभी पुस्तकों को संग्रहीत करने का स्तुत्य प्रयास किया है। इसलिए अभी और पुस्तकें सामने आने की संभावना है। इसके अलावा उनके लिखे हुए असंख्य लेख हैं, जिनका संकलन अभी होना है। सामान्यतः जब लेखों के संकलन की बात आती है तो प्रायः 'पाञ्चजन्य', 'ऑर्गनाइजर' और 'विवेक' जैसे पत्रों में प्रकाशित लेखों तक ही ध्यान जाता है, परंतु ठेंगड़ी जी ने बहुत से समाचार पत्रों के लिए लेख लिखे हैं, जिनका संकलन करना आसान काम नहीं है। जन्म शताब्दी के निमित्त भारतीय मजदूर संघ ने उनके भाषणों के वीडियो, ऑडियो, छायाचित्र आदि भी संकलित किए, जो ठेंगड़ी जी पर अध्ययन करने वाले अध्येताओं और शोधकर्ताओं के लिए जानकारी के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।

दत्तोपंत जी के साहित्यकार पक्ष का एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह भी है कि उन्होंने भारतीय मजदूर संघ सहित अनेक संगठनों के कार्यकर्ताओं को मीडिया का सही उपयोग करने की कला आज से साठ साल पहले उस समय सिखाई जब मीडिया को लेकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ दूरी बनाकर रखता था। मीडिया को लेकर ठेंगड़ी जी की दृष्टि पूरी तरह स्पष्ट थी और वे संगठन विस्तार में मीडिया के प्रयोग के हिमायती थे। भारतीय मजदूर संघ के कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए वे 1970 में लिखते हैं : "जहाँ रा. स्व. संघ के समान पूर्णरूपेण प्रसिद्धि पराङ्मुख रहना हमारे लिए कठिन है, वहीं समाजवादी पार्टी के समान केवल प्रसिद्धि को ही संगठन का विकल्प मानना भी हमारे लिए खतरनाक है। प्रसिद्धि वर्षा के समान है। पहले जमीन की जुताई की होगी और उसमें बीज बोया होगा तो वर्षा के फलस्वरूप अच्छी फसल आ सकती है, किंतु केवल प्रस्तर पर वर्षा हुई तो इसका उपयोग नहीं होगा और जुती हुई जमीन पर भी अतिवृष्टि हुई तो अकाल होगा। संगठन पहले से रहा तो प्रसिद्धि का लाभ उठाया जा सकता है, किंतु इस परिस्थिति में भी प्रसिद्धि पर आवश्यकता से अधिक बल दिया तो संगठन में दुर्बलता आ सकती है। अति प्रसिद्धि का मोह टालते हुए केवल आवश्यकता के अनुकूल प्रसिद्धि (नीड्स बेस्ड मिनिमम पब्लिसिटी) का आश्रय लेने का निश्चय करना चाहिए। इस दृष्टि से कौन-सी बातें आवश्यक तथा करने लायक हैं, इसका पूरा विवरण अपनी 'प्रचारतंत्र' पुस्तिका में दिया गया है। मेरा अनुरोध है कि इस विषय में उक्त पुस्तिका में दिए हुए सुझावों को क्रियान्वित करने का हम प्रयास करें" (ठेंगड़ी, 1970, पृष्ठ 6-7)।

ठेंगड़ी जी की पुस्तक 'प्रचार तंत्र' को देखकर लगता है कि 1970 से पहले मीडिया से व्यवहार के संबंध में जो जानकारी उन्होंने भारतीय मजदूर संघ के कार्यकर्ताओं दी, वही जानकारी आज जनसंपर्क के विद्यार्थियों को मीडिया प्रशिक्षण के बड़े-बड़े संस्थानों में दी जाती है। इस पुस्तक का पंचम संस्करण 4 जनवरी, 2008 को प्रकाशित हुआ। उस संस्करण के पृष्ठ 4-5 पर वे लिखते हैं : "आज के प्रचारवादी युग में किसी भी सार्वजनिक कार्य के प्रचार और प्रसार में समाचारपत्रों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। किसी भी बात को जन-जन तक पहुँचाने तथा उसके पक्ष या विपक्ष में जनमत तैयार करने में उनका बहुत बड़ा हाथ रहता है। यही कारण है कि सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने वाले प्रत्येक कार्यकर्ता को इस बात की ओर विशेष ध्यान देना पड़ता है कि उसके कार्य और कार्यक्रमों का विवरण स्थानीय और राष्ट्रीय समाचारपत्रों में योग्य रीति से प्रकाशित हो। साथ ही उसका यह भी प्रयत्न रहता है कि विशिष्ट प्रश्नों पर अधिकाधिक समाचार पत्र उसके दृष्टिकोण का समर्थन करें। वास्तव में समाचारपत्रों में अपने समाचार उचित रीति से प्रकाशित करवाना और संपादक से अपने दृष्टिकोण का समर्थन करवा लेना बड़ी कुशलता का काम है। जब तक हम समाचारपत्र जगत् की बारीकियों से परिचित नहीं होते तब तक अपनी इच्छानुसार उनका समर्थन नहीं पा सकते। अतः आवश्यक है कि हम इन बारीकियों पर विचार करें।

समाचारपत्रों की कार्यविधि या संपादकों की मनोभूमिका समझने के पूर्व हमें अपने उद्देश्य की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए। हम समाचारपत्रों का किस प्रकार उपयोग करना चाहते हैं, उससे हमें क्या-क्या परिणाम अपेक्षित हैं, आइए पहले हम इसका ही सम्यक् विचार करें।

**समाचारों के प्रकाशन के उद्देश्य**

- आगामी कार्यक्रमों तथा उद्देश्यों के संबंध में स्वजनों का मार्गदर्शन करना।
- अपनी संस्था के ध्येय तथा उद्देश्य के प्रति स्वजनों की निष्ठा को अधिक दृढ़ बनाना।
- विरोधी पक्ष के व्यक्तियों, उनके तर्कों और उद्देश्यों अथवा दाँव-पेंचों का प्रखरतापूर्वक प्रत्युत्तर देना।
- विरोधियों को उनकी अपनी संस्था पर तथा उसके ध्येय और उद्देश्य के प्रति उनकी निष्ठा को हिलाकर उसमें अस्थिरता निर्माण करना।
- अपनी संस्था के उद्देश्यों के स्पष्टीकरण के समय जब स्वजनों में वाद-विवाद होने लगे तब उसे दूर करना तथा उनमें मतैक्य निर्माण करना।
- विरोधियों में मतभेद निर्माण करना तथा उनकी वैचारिक उलझनों को वृद्धिंगत करना।
- उदासीन तथा तटस्थ जनता की सहानुभूति प्राप्त करना।
- जिन व्यक्तियों के पास किसी भी समस्या का गहरा अध्ययन करने के लिए समय नहीं है, ऐसे बहुसंख्यक लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर उन्हें किसी विशेष समस्या का ज्ञान कराना तथा शिक्षित करना।
- अपनी इच्छानुसार सरकारी प्रतिक्रिया प्राप्त करना।
- अपने आगामी योजनाबद्ध कार्यक्रमों एवं दाँव-पेंचों के प्रति जनमानस में सहानुभूति निर्माण करके सहयोग प्राप्त करना।
- समाचारपत्र जगत् के व्यक्तियों को अपनी संस्था के मूल उद्देश्यों व उसके कार्यों से अवगत कराना तथा उनकी सहानुभूति प्राप्त करना।

केवल किसी प्रकार समाचारों को प्रकाशित करा देना ही पर्याप्त नहीं है। उद्देश्यहीन प्रकाशन आपकी संस्था की प्रतिष्ठा बढ़ाने के बदले घटाने में ही सहायक होंगे। अतएव समाचारों का प्रकाशन ऐसा हो जिससे आपकी संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति होकर उसके प्रचार तथा प्रसार में सहायता मिल सके" (ठेंगड़ी, 2008, पृष्ठ 4-5)।

इस पुस्तक के आगे के पृष्ठों पर वे भारतीय मजदूर संघ के कार्यकर्ताओं को विस्तार से बताते हैं कि समाचार पत्र जगत् से कैसे संबंध विकसित करें। वे यह भी बताते हैं कि पत्रकारों और समाचार पत्र व्यवसायियों से संबंध स्नेहयुक्त होने चाहिए। वे लिखते हैं : "अनेक ऐसी महत्त्वपूर्ण घटनाएँ समाज में घटित होती हैं, जिनका संबंध आपकी संस्था से नहीं होता, किंतु 'समाचार' की दृष्टि से वे महत्त्वपूर्ण होती हैं। यदि उनका संपूर्ण ज्ञान आपको किसी प्रकार हो जाता है, तो उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

उनकी तथा उनके सूत्रों की सूचना संबंधित संवाददाता को तत्परतापूर्वक दे दीजिए। आपका यह कार्य उसके धंधे अथवा कर्त्तव्य में सहायक होगा और वह आपके प्रति कृतज्ञ रहेगा। उसके और आपके संबंध अधिक पुष्ट होते जाएँगे। किंतु यह कार्य केवल मित्रता के नाते सहजभाव से संपन्न किया जाए" (ठेंगड़ी, 2008, पृष्ठ-6)।

ठेंगड़ी जी अपने कार्यकर्ताओं को संचार लेखन की बारीकियों से भी परिचित कराते हैं। वे लिखते हैं : "संवाद (समाचार) लेखन का बाह्य स्वरूप आकर्षक होना चाहिए। साधारण रूप से लिखते समय जितना अंतर हम दो पंक्तियों के बीच में छोड़ते हैं, उससे दुगुना अंतर समाचार लेखन के समय छोड़ने से उसमें परिवर्तन एवं परिवर्द्धन करने में सुविधा रहेगी। कागज उत्तम हो, उस पर सलवटें न पड़ी हों, क्योंकि समाचार लेखन की पहली वस्तु कागज ही है। कागज के चुनाव के पश्चात् अक्षर लेखन का क्रम आता है। जहाँ तक हो सके, समाचार टाइप करके ही भेजे जाया करें। टाइप की सुविधा न हो और समाचार हाथ से लिखना हो तो अक्षर सुंदर और सुपाठ्य लिखे जाएँ। संस्था के नाम, स्थान आदि छपे हुए पत्रों पर (लेटर पेपर पर) ही समाचार लिखा जाना श्रेयस्कर होगा। यदि समाचार विस्तृत है और अधिक कागज लगने की संभावना है तो पहला कागज संस्था का 'लेटर पेपर' का ही हो। यदि किसी समय 'लेटर पेपर' न हो तो साधारण कागज के ऊपरी भाग पर लेटर पेपर की लिखावट या तो टाइप कर लेनी चाहिए अथवा हाथ से लिख लेनी चाहिए (संस्था का नाम, केंद्र कार्यालय, स्थानीय पता, फोन नंबर आदि)।

इसके अनंतर अब आपको प्रत्यक्ष समाचार लेखन का कार्य प्रारंभ करना है। ध्यान रहे समाचार लेखन एक कला है और उसका अंकन सावधानी और कुशलतापूर्वक होना आवश्यक है। मान लीजिए आपने समाचार लेखन का प्रारंभ लेटर पेपर पर छपे संस्था के नाम आदि के नितांत पास से ही कर दिया, तो सजावट की दृष्टि से वह एकदम असुंदर हो जाएगा और यदि सहसंपादक को आपके समाचार को शीर्षक, उपशीर्षक देने पड़ें तो उसे बड़ी असुविधा होगी। अतएव सजावट की दृष्टि से तथा सहसंपादक की सुविधा की दृष्टि से संस्था के नाम आदि के नीचे कुछ रिक्त स्थान छोड़कर समाचार लेखन का कार्य प्रारंभ करना उपयुक्त होगा।

समाचार यदि एक से अधिक पृष्ठों पर लिखा जाने वाला हो तो प्रत्येक पृष्ठ के अग्रभाग पर रिक्त स्थान छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। हाँ, जहाँ एक पैराग्राफ (पैरा) समाप्त हो और दूसरा पैराग्राफ प्रारंभ करना हो तो उन दोनों के मध्य में थोड़ी रिक्तता रखनी चाहिए जिससे कि उस रिक्त स्थान पर सहसंपादक उपशीर्षकों का नाम लिख सके।

समाचार कागज के एक ओर ही लिखा जाए। कागज के दोनों ओर लिखना सर्वथा वर्ज्य है। समाचार सामग्री के चारों ओर एक इंच से कुछ अधिक मार्जिन भी छोड़ी जाया करे। एक ही कागज पर दो अलग-अलग समाचार न तो लिखे जाएँ न भेजे जाएँ। स्थान तथा दिनांक लिखने के पश्चात् समाचार लिखना प्रारंभ किया जाए जैसे बंबई दि. 12.....।

समाचार लेखन की चतुरता तभी है जब कि वाक्य छोटे-छोटे हों, भाषा सरल हो। रचना उलझन भरी न हो। पैराग्राफ टाइप की हुई 6 पंक्तियों से अधिक न हों।

अब आपने समाचार लिख लिया है तथा उसका सिंहालोकन प्रारंभ कर दिया है और किसी शब्द के स्थान पर आप कोई दूसरा शब्द लिखना चाहते हैं तो उस शब्द को काटकर उसके ऊपर दूसरा उपयुक्त शब्द लिख दें, किंतु परिवर्तन अधिक करना चाहते हों, तो जिस पंक्ति के पश्चात् आपको परिवर्तन करना है, उसके नीचे से कागज फाड़ दीजिए और दूसरे कागज पर दुबारा लिखकर उस कागज को पहले कागज में चिपका दीजिए।

पंक्ति के अंत में आनेवाले शब्द को खंडित न कीजिए। कागज के अंत में कुछ स्थान कोरा रह जाए तो रहने दीजिए, किंतु पूर्ण शब्द दूसरी पंक्ति में ही लिखिए। उसी प्रकार पृष्ठ के अंत में भी आने वाले शब्द को अधूरा न लिखकर अगले पृष्ठ में ही उसे पूरा लिखना चाहिए।

कभी-कभी ऐसा अवसर भी आता है जबकि वाक्य समाप्त नहीं हो पाता, लेकिन पृष्ठ समाप्त हो जाता है, तब अधूरा वाक्य अगले पृष्ठ पर लिखना पड़ता है। यह उचित नहीं। वाक्य उसी पृष्ठ पर समाप्त होना चाहिए, जिस पर लिखना प्रारंभ किया गया है। यदि स्थान की कमी है तो वाक्य लिखना प्रारंभ ही न किया जाय, भले ही थोड़ा स्थान रिक्त रह जाए। यही नहीं, जो पैरा आपने लिखना प्रारंभ किया है वह भी यदि उसी पृष्ठ पर समाप्त हो तो उत्तम होगा। इस समय आपको यह देख लेना चाहिए कि जो पैरा आप समाप्त कर चुके हैं और उसके पश्चात् जिस पैरा को प्रारंभ करना चाहते हैं, वह उसी पृष्ठ में समाप्त हो सकेगा या नहीं? यदि नहीं, तो उसे लिखना प्रारंभ ही न किया जाए, भले ही थोड़ा स्थान खाली रह जाए और अगले पृष्ठ पर उसे लिखना पड़े।

कुछ समाचार इतने विस्तृत होते हैं कि उन्हें कई पृष्ठों में लिखना पड़ता है। तब आपको एक सावधानी बरतनी होगी। प्रत्येक पिछले पृष्ठ के अंत में दाहिने कोने पर 'आगे देखिए' या 'आगे और है' इस प्रकार या इसी प्रकार के दूसरे चिह्नांकित शब्द लिखे जाया करें। उसी प्रकार अगले पृष्ठ के प्रारंभ में बायें कोण पर 'पृष्ठ 1 से आगे' यह या इसी प्रकार के दूसरे चिह्नांकित शब्द लिखे जाएँ। और भी उत्तम होगा यदि प्रत्येक पिछले पृष्ठ की अंतिम पंक्ति के कुछ अंतिम शब्द अगले पृष्ठ की पंक्ति के ऊपर टाइप कर दें या हाथ से लिख दें।

समाचार लेखन पूर्ण होते ही अंतिम पंक्ति के नीचे कुछ स्थान रिक्त छोड़कर कोई ऐसा चिह्न अंकित कर दिया जाए जिससे ज्ञात हो सके कि समाचार समाप्त हो चुका है।

सारांश यह है कि हमारी ओर से भेजा गया समाचार सुसज्जित हो, सहसंपादक को पढ़ते समय अधिक से अधिक सुविधा हो और उसके सामने कोई कठिनाई उपस्थित न हो" (ठेंगड़ी, 2008, पृष्ठ 8-10)। यह सब लिखने के बाद ठेंगड़ी जी यह बताना नहीं भूलते कि समाचार को लिखने के बाद उसका पुनर्वाचन अवश्य कर लेना चाहिए। कार्यकर्ताओं को यह भी बताते हैं कि उनका सामचार दोपहर तक ही समाचार पत्र के कार्यालय में पहुँच जाना चाहिए। तैयार संचार 'समाचार-संपादक' को और कार्यक्रम का निमंत्रण 'प्रमुख संवाददाता' को भेजा जाना चाहिए। कार्यकर्ताओं को विभिन्न समाचार के नियमित अध्ययन की सलाह देते हुए वे लिखते हैं, "समाचार लेखनकला को दिन पर दिन उन्नत और परिमार्जित करने के लिए आपका भिन्न-भिन्न विचारधारा के अनेक समाचारपत्रों को पढ़ना आवश्यक है। केवल पढ़ना ही पर्याप्त नहीं है, समालोचना के दृष्टिकोण से उसका अध्ययन भी करना चाहिए। उनकी तकनीक क्या है? रचना किस प्रकार की जाती है? किस समाचार पत्र में किस प्रकार के संवाद प्रकाशित होते हैं? किन समाचारों को प्रमुखता दी जाती है? समाचारों को

प्रमुखता प्रदान करते समय उसके कौन-से भाग को प्रभावशाली रूप से प्रथम लिखा जाता है? इन समस्त कला-अंगों में पारंगत होने के लिए नित्य प्रति समाचारपत्रों को पढ़कर उनका अध्ययन करना अनिवार्य है" (ठेंगड़ी, 2008, पृष्ठ 12)। वे कार्यकर्ताओं को यह भी समझाते हैं कि पत्रकार वार्ता कैसे आयोजित की जानी चाहिए। कुल 32 पृष्ठ की यह पुस्तक विभिन्न संगठनों ही नहीं, बल्कि कॉर्पोरेट जगत् के जनसंपर्क अधिकारियों को भी पढ़नी चाहिए।

## निष्कर्ष

दत्तोपंत ठेंगड़ी की पुस्तकों का अध्ययन करते समय एक महत्त्वपूर्ण तथ्य, जो एकदम ध्यान में आता है, वह यह है कि वे किसी भी कार्यक्रम में बोलने से पहले अपने भाषण की तैयारी हेतु गहन शोध करते थे। यही कारण था कि उनका प्रत्येक भाषण बहुत प्रभावी होता था। इसीलिए उनके अधिकतर भाषण पुस्तक आकार में प्रकाशित किए गए हैं। उनकी 90 प्रतिशत से अधिक पुस्तकें वास्तव में उनके भाषणों का ही संकलन हैं। चूँकि उनके भाषण कम-से-कम एक घंटे के होते थे, इसलिए एक भाषण में 20 से 30 पृष्ठ की पुस्तक आसानी से तैयार हो जाती थी। ठेंगड़ी जी ने जिन पुस्तकों की प्रस्तावना लिखी है उसके लिए भी उन्होंने गहन अध्ययन किया। कई बार तो उनकी प्रस्तावना की सामग्री मूल पुस्तक से अधिक हो जाती थी, परंतु उस शोधपरक प्रस्तावना के कारण पुस्तक की अहमियत बहुत अधिक बढ़ जाती थी। उनके लेखन से एक बात और स्पष्ट होती है कि वे जो भी कुछ लिखते थे उसे स्थायी वैचारिक अधिष्ठान प्रदान कर लिखते। इसलिए उनके लेखन को जब भी पढ़ा जाता है तभी वह प्रासंगिक प्रतीत होता है।

ठेंगड़ी जी के लेखन का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि उन्होंने बड़े शोधकर्ताओं की भाँति बहुत से सम्मेलनों हेतु शोधपत्र तैयार किए और उनके शोधपत्र उस विषय पर 'दृष्टिपत्र' बन गए। ठेंगड़ी जी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पुरानी पीढ़ी के प्रचारक थे, जिन्होंने संघ के चार सरसंघचालकों के साथ काम किया। इसलिए संगठन की रीति-नीति और विचार को नई पीढ़ी के कार्यकर्ताओं के समक्ष स्पष्ट करने का महत्त्वपूर्ण काम उन्होंने किया। वे अतीत के अनुभव को नूतन स्वरूप में प्रस्तुत करने में सिद्धस्त थे। संघ विचार की इतने सरल शब्दों में उन्होंने व्याख्या की जो सामान्य कार्यकर्ता की भी समझ में आसानी से आ जाती है। उनके चिंतन का दायरा बहुत व्यापक था। इसलिए सिर्फ मजदूरों की ही नहीं, बल्कि किसानों, शिक्षाविदों, विद्यार्थियों, कला साधकों, अर्थशास्त्रियों आदि समाज जीवन के अनेक विषयों को उन्होंने अत्यंत प्रभावी तरीके से प्रस्तुत किया। इस वैचारिक स्पष्टता के कारण ही उनके द्वारा स्थापित सभी संगठन आज अपने-अपने क्षेत्र के अग्रणी संगठन हैं। ठेंगड़ी जी की साहित्यिक एवं पत्रकारीय दृष्टि सिर्फ अतीत को ही समझने में सहायक नहीं है, बल्कि भविष्य का मार्ग भी प्रशस्त करती है। इसलिए उनके साहित्य पर गहन शोध की आवश्यकता है। भारतीय विश्वविद्यालयों में अनेक विद्वानों पर शोधपीठ स्थापित हुई हैं। दत्तोपंत ठेंगड़ी के चिंतन पर शोध को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा मंत्रालय और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को तत्काल दत्तोपंत ठेंगड़ी शोध पीठ स्थापित करने पर विचार करना चाहिए।

## संदर्भ


कुमार. पी. (2019). ऑर्गनाइजर, 17 नवम्बर, 2019. We are Following the Vision Given by Thengadiji: https://www.organiser.org/Encyc/2019/11/13/We-are-Following-the-Vision-Given-by-Thengadiji.html से पुन:प्राप्त.

कुमार, पवन. (2020). भारतीय मजदूर संघ उत्तर क्षेत्र संगठन मंत्री. दिनांक 14 अक्टूबर, 2020 को दूरभाष पर साक्षात्कार.

गिरी, ए. (2019). जूना पीठाधीश्वर एवं अध्यक्ष हिंदू धर्म आचार्य सभा. नई दिल्ली में अक्टूबर 25, 2019 को शोधार्थी द्वारा स्वयं साक्षात्कार.

ठेंगड़ी, डी.बी. (1970). कार्यकर्ताओं से वार्ता और विचार. नई दिल्ली : भारतीय श्रमशोध मंडल. पृष्ठ 6-7.

ठेंगड़ी, डी.बी. (2005). डॉ. अंबेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा. लखनऊ : लोकहित प्रकाशन.

ठेंगड़ी, डी.बी. (2008). प्रचार तंत्र. लखनऊ : लोकहित प्रकाशन. पृष्ठ 4-5.

डोगरा, ए. (2019). दत्तोपंत ठेंगड़ी-प्रेरक जीवन प्रसंग. नई दिल्ली : सुरुचि प्रकाशन, पृष्ठ 81-83.

दत्तोपंत ठेंगड़ी. (2019). https://dbthengadi.in/

पांडे, आर.डी. (2020). दत्तोपंत ठेंगड़ी के निजी सहायक. दिनांक 15 अक्टूबर, 2020 को दूरभाष पर साक्षात्कार.

बाबा योगेंद्र. (2019). संस्कार भारती के संस्थापक. नई दिल्ली में अक्टूबर 24, 2019 को साक्षात्कार.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 39-47, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# अच्युतानंद मिश्र : साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंध का अध्ययन

**प्रो. कृपाशंकर चौबे**[1]

**सारांश**

हिंदी के तमाम मूर्धन्य संपादकों ने किसी विश्वविद्यालय या संस्थान से पत्रकारिता की शिक्षा नहीं ली थी। किंतु वे अपने आप में शिक्षण संस्थान थे। वे पूरे के पूरे पाठ्यक्रम थे और वे ही प्रयोगशाला थे। उनके भीतर अपने समाज को देखने और समझने की निर्मल दृष्टि थी। उन्हीं मूर्धन्य संपादकों की एक कड़ी अच्युतानंद मिश्र से जुड़ती है। अच्युतानंद मिश्र की लिखी या संपादित पुस्तकों के माध्यम से साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंध तथा भारतीय समाज के भीतर पत्रकारिता के स्वाभाविक विकास को समझा जा सकता है। अच्युतानंद मिश्र जैसा मूर्धन्य संपादक यानी पत्रकारिता के भीतर का अनुभवी व्यक्ति अपनी ज्येष्ठ पीढ़ी के मूर्धन्य संपादकों की कहानी बताता है तो जाहिर है कि प्रामाणिकता उसकी सबसे बड़ी पूंजी होती है। उस कहानी में पत्रकारिता का सिद्धांत है तो तकनीक, उद्देश्य और भविष्य के लिए प्रेरणा भी। अच्युतानंद मिश्र ने अपनी सद्यः प्रकाशित पुस्तक 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती की पत्रकारिता की कहानी लिखी है। अच्युतानंद मिश्र ने अपनी सद्यः प्रकाशित दूसरी पुस्तक 'कुछ सपने, कुछ संस्मरण' के एक खंड में भी अज्ञेय, धर्मवीर भारती के अलावा प्रतिमान रचनेवाले संपादक अरविंद घोष, नंद दुलारे वाजपेयी और विद्यानिवास मिश्र की पत्रकारिता की कहानी अलग-अलग अध्यायों में कही है। पराड़कर युग और आज की पत्रकारिता जैसे लेख तो आँख खोल देनेवाले हैं। वस्तुनिष्ठ विवेचन में अच्युतानंद मिश्र का कोई सानी नहीं है। यह विशेषता अच्युतानंद मिश्र की लिखी पुस्तक 'सरोकारों के दायरे' और उनकी संपादित पुस्तकों 'हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं' (चार खंड) तथा 'पत्रों में समय-संस्कृति' में भी विद्यमान है।

**संकेत शब्द :** अज्ञेय, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, प्रतीक, दिनमान, धर्मयुग, 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान', 'कुछ सपने, कुछ संस्मरण', 'सरोकारों के दायरे', 'हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं', पत्रों में समय-संस्कृति'

## प्रस्तावना

अच्युतानंद मिश्र ने पिछली आधी शताब्दी की अपनी पत्रकारिता में राष्ट्रीय साख बनाई है। 02 दिसंबर, 1937 को उत्तर प्रदेश के गाजीपुर शहर में श्री रामचंद्र मिश्र और श्रीमती राम प्यारी देवी के पुत्र के रूप में जन्में अच्युतानंद मिश्र ने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से राजनीति विज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि ली और पेशे के रूप में पत्रकारिता का चयन किया। उनका पैतृक गाँव गाजीपुर जिले का वीरभानपुर है। बनारस में 'आज' और 'गांडीव' से उनकी पत्रकारिता आरंभ हुई। फिर लखनऊ चले गए। वहां उन्होंने साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' और सांध्य दैनिक 'तरुण भारत' में काम किया। उसके बाद अच्युतानंद मिश्र ने 'अमर उजाला' के लखनऊ ब्यूरो को स्थापित किया। 'अमर उजाला' से वे डेढ़ दशक तक जुड़े रहे। फिर 'जनसत्ता' में समाचार संपादक बनकर दिल्ली चले गए। एक बार पुनः संपादक बनकर 'अमर उजाला', कानपुर लौटे। विद्यानिवास मिश्र जब 'नवभारत टाइम्स' में प्रधान संपादक बने तो अच्युतानंद मिश्र वहां वरिष्ठ संपादक बनकर गए। साढ़े तीन वर्षों के बाद वे 'जनसत्ता' के कार्यकारी संपादक बने। उसके बाद वे 'लोकमत समाचार' के संपादक बने। राष्ट्रीय समाचार पत्रों में संपादक का दायित्व निभाते हुए भी साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंधों पर वे अनुशीलनरत रहे। उसी अनुशीलन का परिणाम उनकी सद्यः प्रकाशित पुस्तक 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' है।

## साहित्यिक पत्रकारिता का इतिहास

तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' पुस्तक में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती की पत्रकारिता की कहानी कहने के पूर्व अच्युतानंद मिश्र संक्षेप में हिंदी पत्रकारिता और साहित्यिक पत्रकारिता का इतिहास बताते हुए तब के संपादकों की संघर्ष गाथा का वर्णन करते हैं। हिंदी का पहला समाचार पत्र 'उदंत मार्तंड' 30 मई, 1826 को कलकत्ता से युगल किशोर शुक्ल के संपादन में निकला था, किंतु साधनों के अभाव में वह केवल डेढ़ वर्ष चला। 'हिंदी प्रदीप' के संपादक बालकृष्ण भट्ट इलाहाबाद की कायस्थ

[1] प्रोफेसर, जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र. ईमेल : drkschaubey2@gmail.com

पाठशाला में संस्कृत अध्यापन करते थे। शहीद खुदीराम बोस को भरे सभा मंडप में श्रद्धांजलि देने और एक कविता छापने के कारण उनका पत्र बंद हो गया और नौकरी चली गई (मिश्र, 2024, पृष्ठ-07)। पंडित मदनमोहन मालवीय 'हिंदोस्तान' के संपादक थे। उसके मालिक कालाकांकर के जमींदार राजा रामपाल सिंह उनका आदर करते थे। एक दिन तयशुदा शर्त के विपरीत नशे की हालत में उन्होंने मालवीय जी को अपने पास बुला लिया और मालवीय जी नौकरी छोड़कर प्रयाग वापस चले गए। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 150 रुपये मासिक वाली रेलवे की नौकरी छोड़कर केवल बीस रुपये मासिक में 'सरस्वती' का संपादक बनना स्वीकार किया था। 'हिंदी बंगवासी' के संपादक अमृतलाल चक्रवर्ती की मातृभाषा हिंदी नहीं थी। अपने शहर कलकत्ता (अब कोलकाता) से दस वर्ष तक उन्होंने 'हिंदी बंगवासी' का संपादन किया था। पंडित अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी उस पत्र को हिंदी पत्रकारिता की प्राथमिक पाठशाला मानते थे। श्री चक्रवर्ती बाद में मुंबई के 'श्रीवेंकटेश्वर समाचार' के संपादक हुए। उन्होंने 1914 में इसका प्रकाशन दैनिक पत्र के रूप में शुरू कर दिया। एक समाचार छापने से इंकार करने पर उन्हें नौकरी छोड़नी पड़ी थी। सन् 1925 में सोलहवें हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभापति बनकर जब वे वृंदावन पहुंचे थे तो उनके पास न तो सर्दियों में पहनने लायक कपड़े थे और न वापस लौटने के लिए रेल का किराया। एक बार ऋण न चुका पाने के कारण उन्हें जेल भी जाना पड़ा था। 'मणिमय' के संपादक रामव्यास पांडेय ने लिखा है कि वे आपाद मस्तक सैद्धांतिक थे। 1936 में कोलकाता में बेहद गरीबी भोगते हुए उनका निधन हुआ था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-07)। नित्यानंद चटर्जी ने अपनी पत्नी के जेवर बेचकर पांच सौ रुपये दिए थे, जिससे इलाहाबाद से मशहूर साप्ताहिक 'कर्मयोगी' निकला था।

मिश्र जी याद दिलाते हैं कि हिंदी के प्रथम संपादकाचार्य पंडित रुद्रदत्त शर्मा चार दशक तक हिंदी पत्रकारिता की सेवा करने के बाद अंतिम दिनों में आजीविकाविहीन थे। पाँच रुपये मासिक के लिए किसी को पढ़ाने उन्हें तीस मील पैदल जाना पड़ता था। विपन्नता में हुई उनकी मौत को पूरे हिंदी समाज के लिए लज्जाजनक कहा गया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-08)। महान कथाकार और 'हंस' के संस्थापक-संपादक प्रेमचंद की एक अनाम व्यक्ति की तरह हुई मौत पर काशी के हिंदी विद्वान आज तक शर्मिंदा हैं (मिश्र, 2024, पृष्ठ-08)। उस युग के अधिकतर संपादकों और पत्रकारों ने अंग्रेजी, बांग्ला, गुजराती, मराठी और संस्कृत की रचनाओं का अनुवाद करके हिंदी पत्रकारिता का कोष समृद्ध किया था।

अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं कि आधुनिक हिंदी गद्य के जन्मदाता भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 18 वर्ष की आयु में अपनी पत्रिका 'कविवचन सुधा' (1867) के माध्यम से साहित्य की जिस पत्रकारिता का आरंभ किया था, उसे ठोस विस्तार, भाषा और तेवर देने का काम पंडित बालकृष्ण भट्ट के 'हिंदी प्रदीप' (1877), पंडित छोटूलाल मिश्र के 'भारतमित्र' (1878), सदानंद मिश्र के 'सारसुधानिधि' (1879) और दुर्गाप्रसाद मिश्र की पत्रिका 'उचितवक्ता' (1880) ने किया था। उस दौर के पत्रों में स्वाधीनता की चेतना और उग्र राष्ट्रीयता तो थी ही, पत्रकारों की निष्ठा, आदर्शवादिता, साहस और बलिदान के सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं। बाद के वर्षों में सर्वआदरणीय पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी, बालमुकुंद गुप्त, पंडित अंबिकाप्रसाद वाजपेयी, पंडित माखनलाल चतुर्वेदी, गणेश शंकर विद्यार्थी, बाबूराव विष्णु पराड़कर जैसे अनेक साहित्यिक प्रतिभा वाले पत्रकारों ने राष्ट्रीय चेतना को आंदोलित कर घर-घर पहुँचाने में अप्रतिम योगदान दिया। स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में इनका योगदान अमर हो गया है। इनको प्रेरणा देने का काम उस दौर के संपादक-राजनेता लोकमान्य तिलक, पंडित मदनमोहन मालवीय, देशबंधु चित्तरंजन दास, लाला लाजपत राय और महात्मा गांधी जैसे लोगों ने किया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-09)। स्वाधीन भारत में भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता को व्यवस्था विरोध की सशक्त भाषा, भाषा के संस्कार, सरोकारों के लिए संघर्ष और वैचारिक आधार देने का काम भी ऐसे संपादकों-पत्रकारों ने किया था, जो मूलतः साहित्य से पत्रकारिता में आए थे। उन्होंने साहित्य के साथ-साथ पत्रकारिता को भी अपनी अभिव्यक्ति का साधन बनाया था।

**हिंदी गद्य के निर्माण में पत्रकारिता का योगदान**

अच्युतानंद मिश्र ने लिखा है कि स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी साहित्य और हिंदी पत्रकारिता के बीच विभाजक रेखा अदृश्य थी। प्रस्तुति की शैली और अनुशासन अलग-अलग थे, लेकिन दोनों के सामाजिक सरोकार, राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति निष्ठा और राष्ट्रीयता की दृष्टि समान थी। हिंदी गद्य के निर्माण में पत्रकारिता की महत्त्वपूर्ण भूमिका को सभी ने स्वीकार किया है। साहित्य की प्राचीनता और पत्रकारिता की आधुनिकता के बावजूद हिंदी की सांस्कृतिक विरासत और संपूर्ण शब्द संपदा दोनों की अविभाज्य धरोहर है (मिश्र, 2024, पृष्ठ-01)। पौने दो सौ वर्ष के सहविकास का यह रिश्ता अटूट है। अपने दौर के श्रेष्ठतम साहित्य सर्जकों और संपादकों ने इतिहास के इस शानदार और गौरवपूर्ण अध्याय को साथ-साथ लिखा और जिया है। साहित्य के प्रति पूर्ण सम्मान के साथ ही यह स्वीकार करना पड़ेगा कि स्वतंत्रता प्राप्ति के युद्ध में लोक प्रतिबद्ध पत्रकारिता ने अपने सर्वस्व की आहुति दी थी। सैकड़ों पत्र-पत्रिकाओं और पत्रकारों ने अपना अस्तित्व दाँव पर लगाकर सच लिखने, छापने और बोलने का जोखिम उठाया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-01)।

अच्युतानंद मिश्र की स्थापना है कि स्वतंत्र भारत की पत्रकारिता में चुनौती स्वीकार करने की प्रवृत्ति घटी है। कहानियाँ, कविताएँ, उपन्यासों के अंश और समीक्षाएँ छापकर पत्रकारिता ने साहित्य के पाठकों की संख्या में अकल्पनीय वृद्धि की है लेकिन स्वतंत्रता के बाद की पत्रकारिता को नई भाषा, नए तेवर और वर्तनी के संस्कार देने की जो अपेक्षा साहित्य से थी, वह पूरी नहीं हुई (मिश्र, 2024, पृष्ठ-01)। हिंदी साहित्य ने यदि पत्रकारिता को अभिव्यक्ति की नई शब्दावली और अपनी आचार सहिता तय करने के लिए प्रेरित किया होता तो बाजार और प्रबंधन के गठजोड़ या सार संहिता परिदृश्य इतना अराजक नहीं होता। पिछले तीन दशकों से दोनों पक्षों की संवादहीनता ने खाई गहरी करने का काम किया है। साहित्य की आत्ममुग्धता की पत्रकारिता की अहमन्यता से हिंदी की अक्षम्य क्षति हुई है। रचनात्मक सृजन घटा है, आत्मकेंद्रित लेखन बढ़ा है। संबंधों में तनावों के बावजूद दोनों के बीच का रिश्ता आज भी अभिन्न है। यह रिश्ता वैसा ही है जैसे फूल और सुगंध का, ध्वनि और गूँज का, अनुभूति और अभिव्यक्ति अथवा भाषा और व्याकरण के बीच होता है। आरोप यह है कि स्वतंत्रता के बाद साहित्य और पत्रकारिता ने एक संवेदनशील और क्रियाशील समाज बनाने की कोई लक्ष्यनिष्ठ कोशिश नहीं की है। समाज के साथ उनका रिश्ता मोलभाव और ग्राहक उपभोक्ता का बन गया है। पिछली पीढ़ी के दसियों ऐसे साहित्य मनीषी हैं, जिनका

नाम साहित्यिक पत्रिकाओं के संपादक के रूप में बड़े आदर और सम्मान से लिया जाता है। उन्होंने पत्रकारिता के धर्म और गुणवत्ता को भी समृद्ध किया है। उसी पीढ़ी के तीन ऐसे शलाका हिंदी संपादक हैं सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती। उन तीनों ने साहित्य के साथ हिंदी पत्रकारिता में भी सशक्त और सार्थक हस्तक्षेप किया (मिश्र, 2024, पृष्ठ-02)।

**अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती में समानता**

अच्युतानंद मिश्र के अनुसार अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती को साहित्य से भरपूर सम्मान और पत्रकारिता से अभूतपूर्व लोकप्रियता मिली थी। तीनों ने अपना-अपना साहित्यिक और पत्रकारीय लेखन लगभग साथ-साथ शुरू किया था। तीनों संपादकों में बहुत कुछ समान था और कई वैचारिक अंतर्विरोध भी थे। तीनों पर स्वतंत्रता पूर्व के संपादकों की छाप थी। उनमें से कुछेक के साथ उन्होंने काम किया था और कई को नजदीक से काम करते हुए देखा था। साहित्य तीनों का पहला आकर्षण था। तीनों पेशेवर पत्रकार नहीं थे लेकिन पत्रकारिता के मूल्यों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता कम नहीं थी। साहित्य की तरह ही संपादक के रूप में भी तीनों अपने पाठकों में अलग-अलग पहचान के साथ लोकप्रिय थे। तीनों के बीच लोकतंत्र, समाजवाद, व्यवस्था विरोध और हिंदी की अस्मिता निर्विवाद थी (मिश्र, 2024, पृष्ठ-03)। हिंदी पत्रकारिता की भाषा गढ़ने में तीनों ने अपनी शैली में योगदान किया था। तीनों ने हिंदी के साथ भारतीय साहित्य और भाषाओं को प्रोत्साहित किया था। तीनों का फलक विशाल था। वे साहसी और प्रयोगधर्मी थे। भारतीय मनुष्य और मानवीयता उनके साहित्य और पत्रकारिता दोनों के केंद्र में थी। तीनों ने मौलिक लेखन के साथ-साथ अनुवाद के माध्यम से भी हिंदी को समृद्ध किया। तीनों को लेकर साहित्य में जो गुटबंदी या विवाद उछाले गए थे, उसकी छाया उनकी पत्रकारिता पर भी थी। लेखन और संपादन में तीनों अपने कथ्य और शिल्प को लेकर बेहद सजग थे। तीनों ने अपने दौर के चर्चित श्रेष्ठ साहित्यकारों से अपनी पत्रिकाओं में बार-बार लिखवाया और छापा था। अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती एक समय में एक ही प्रकाशन संस्थान से जुड़े थे। उन्होंने प्रकाशकों की तीन पीढ़ियों और बदलते मैनेजरों के तेवर भी देखे थे। तीनों अपने दौर के उन साहित्यकारों में शामिल नहीं हैं, जो यह मानते थे कि पत्रकारिता साहित्य कर्म की साधना को पथभ्रष्ट करती है अथवा साहित्य अनुभूति और जीवन के सत्य का दर्शन है, जबकि पत्रकारिता इंद्रिय गोचर सूचनाओं या तथ्यों की प्रस्तुति और विश्लेषण मात्र है। यह भी कहा गया कि वे हिंदी साहित्य के मठाधीश थे और हिंदी पत्रकारिता में प्रोजेक्ट किए गए। उनके प्रयोग अपारंपरिक, साहसिक और सरोकारों से जुड़े थे। राजनेताओं से गहरे निजी रिश्तों के बावजूद वे राजनीति में नहीं गए। उनका चिंतन प्रगतिशील और आधुनिक था लेकिन वे मार्क्सवादी नहीं थे। उन पर मानवेंद्रनाथ राय, राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण की गहरी छाप थी। उनके आदर्श उदात्त थे। बिक्री और विज्ञापन बढ़ाने के लिए पत्रिकाओं को सस्ता बनाने के तीनों खिलाफ थे। उन्होंने अपने लेखकों, सहयोगियों और पाठकों की एक पूरी पीढ़ी को अपने ढंग से गढ़ने का काम किया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-04)।

अच्युतानंद मिश्र के मुताबिक तीनों अपने पांडित्य से आक्रांत करने के बजाए अपने साहचर्य से एक नई स्फूर्ति देते थे। उस दौर के सैकड़ों लेखकों और हजारों प्रबुद्ध पाठकों को उन्होंने स्वयं पत्र लिखकर लेखन के लिए प्रेरित किया और सम्मान से छापा भी था। यह निर्विवाद है कि तीनों ने हिंदी क्षेत्र में मध्य वर्ग के बेचैन युवाओं को भाषाई स्वाभिमान, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सांस्कृतिक पहचान दिलाने में पहल की थी। तीनों स्वप्नद्रष्टा भी थे और कर्मकठोर भी। तीनों ने बुद्धिजीवियों को उनकी निष्क्रियता तथा अकर्मण्यता पर जमकर लताड़ा है। अज्ञेय तो क्रांतिकारियों के सहयोगी रहे और सीमा पर हथियार उठाकर लड़े भी। उसी तरह रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती ने बांग्लादेश का युद्ध या जयप्रकाश नारायण के आंदोलन के दौरान संपूर्ण हिंदी क्षेत्र के ध्येयवादी युवकों के मानस को हर संघर्ष के लिए तैयार किया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-05)।

अच्युतानंद मिश्र ने तीनों मूर्धन्य संपादकों में समानता का वर्णन किया है तो उनके वैचारिक अंतर्विरोध को भी उजागर किया है। उन्होंने लिखा है कि तीनों के कई फैसले आज तक विवादों के घेरे में हैं। जैसे इमरजेंसी के दौर में 'दिनमान' की भूमिका, संपादक के रूप में रघुवीर सहाय द्वारा लिखी गई टिप्पणियाँ या जयप्रकाश नारायण को केंद्र में रखकर लिखी गई धर्मवीर भारती की प्रसिद्ध कविता 'मुनादी' का सबसे पहले 'धर्मयुग' में न छपना जैसे मुद्दों को लेकर आज भी सवाल उठाए जाते हैं। यह पूछा जाता है कि आजीविका के लिए मूल्यों के साथ समझौता किस सीमा तक होना चाहिए। अज्ञेय उसके अपवाद हैं। उन्होंने पूरा जोखिम उठाकर इमरजेंसी के खिलाफ 'नया प्रतीक' में लिखा और छापा था। विवाद इस पर भी है कि तीनों को उनके संचालकों ने प्रताड़ित और अपमानित किया था, लेकिन तीनों ने उसके विरुद्ध आवाज नहीं उठाई। अच्युतानंद मिश्र ने नंद किशोर त्रिखा के हवाले से लिखा है कि अज्ञेय जी ने अपनी शर्तों पर लेकिन पूरी कीमत चुकाकर संपादन का काम किया था। टाइम्स प्रबंधन ने प्रेस आयोग

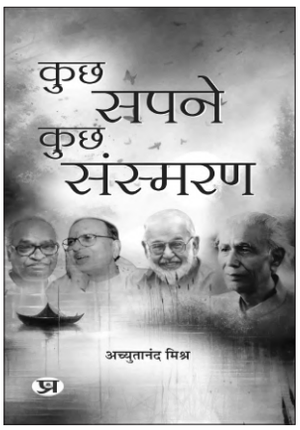


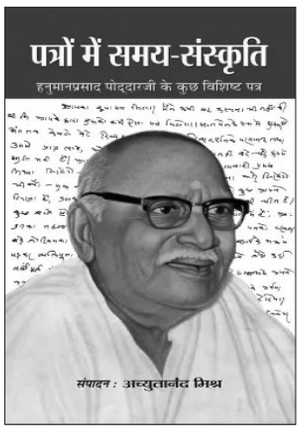


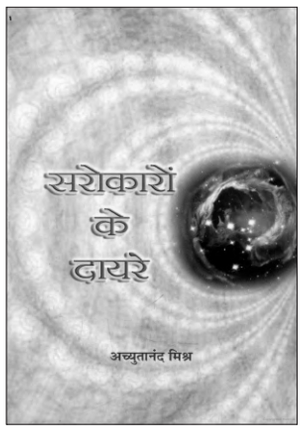


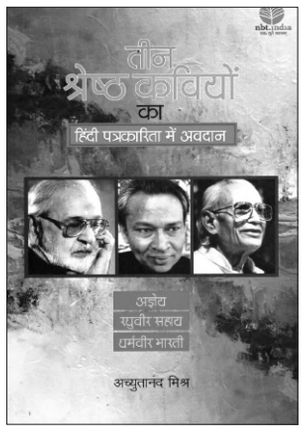


से असहयोग करने के लिए एक आदेश जारी किया था लेकिन अज्ञेय जी को यह मंजूर नहीं था। इसी कारण उनको प्रबंधन ने संपादक पद का विस्तार नहीं दिया था (मिश्र, 2024, पृष्ठ-19)। उनके संपादक पद से हटने के बाद भी कोई शून्य नहीं पैदा हुआ, क्योंकि अज्ञेय जिस भी पत्र-पत्रिका में रहे, अपने उत्तराधिकारी बनाते चलते थे।

अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती के बारे में अनेक विद्वानों के विचार भी पुस्तक में दर्ज हैं। वे विचार सटीक मूल्यांकन भी हैं। उदाहरण के लिए जवाहरलाल कौल से अच्युतानंद मिश्र की बातचीत को देखा जा सकता है। अच्युतानंद मिश्र के प्रश्न के उत्तर में जवाहर लाल कौल कहते हैं- धर्मवीर भारती में आपातकाल का वह टूटन नहीं दिखाई पड़ता था जो रघुवीर सहाय में दिखाई पड़ा। धर्मवीर भारती की कविता मुनादी यदि 'कल्पना' में छपी तो ये ज्यादा समझदारी है। रघुवीर सहाय तो आकलन लिख रहे थे और 320 सीटें काँग्रेस को मिलता दिखा रहे थे। सवाल है कि क्या ये आकलन लिखना जरूरी था? (मिश्र, 2024, पृष्ठ-145)

पुस्तक में अज्ञेय ही रहे 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय ने पत्रकारिता को नई ऊर्जा दी, 'धर्मयुग' और धर्मवीर भारती, संवादों और साक्षात्कारों के बीच अज्ञेय, अज्ञेय से त्रिलोकदीप की बातचीत, अज्ञेय से नरेश कौशिक की बातचीत, अज्ञेय से भारतभूषण अग्रवाल की बातचीत शीर्षक अध्याय भी पठनीय हैं। उन अध्यायों से पाठकों के सामने सामने एक नया परिप्रेक्ष्य खुलता दिखाई पड़ता है। उनमें विचार की कई बार एक नई कौंध मिलती है। यह विशेषता मिश्र जी की सद्यः प्रकाशित दूसरी पुस्तक 'कुछ सपने, कुछ संस्मरण' में भी विद्यमान है।

'कुछ सपने, कुछ संस्मरण' पुस्तक अच्युतानंद मिश्र के आलेखों और व्याख्यानों का संग्रह है। यह पुस्तक छह खंडों में विभाजित है। पहले खंड 'भारतीय अस्मिता और हिंदी' में छह आलेख हैं—भारतीय भाषा दिवस, हिंदी-अस्मिता-अपमान और आशावाद, पाठकों और दर्शकों की सम्पादकों से अपील, वैश्वीकरण, मीडिया और हिंदी, भारतीय लोकतंत्र में भाषाई समाचारपत्रों की भूमिका तथा मातृभाषाओं का अस्तित्व संकट में। ध्यान देनेयोग्य है कि अच्युतानंद मिश्र केवल संकट की चर्चा ही नहीं करते, वे समाधान भी बताते हैं। 'मातृभाषाओं का अस्तित्व संकट में' शीर्षक लेख में वे लिखते हैं, "अँग्रेजी को राजभाषा और रोमन लिपि को सभी भारतीय भाषाओं की लिपि बनाने की मानसिकता हमारी संस्कृति ही नहीं, मातृभाषाओं के अस्तित्व के लिए गंभीर चुनौती बनती जा रही है। इसके राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक आयाम दूरगामी और चिंताजनक हैं। इस चुनौती का समाधान राजनीति से नहीं, बल्कि अंतरभाषाई स्वतःस्फूर्त विमर्श में ही तलाश करना होगा। भारतीय राष्ट्रीयता की अवधारणा भाषाओं और लोकसंस्कृतियों के बीच परस्पर संवाद, अंतःक्रिया और सांस्कृतिक पर्यावरण के निर्माण पर निर्भर है। साहित्य ही नहीं, साहित्येतर विधाओं जैसे पत्रकारिता के बीच अंतरसंवाद से भी मानसिक गुलामी की इस प्रवृत्ति से संघर्ष करने का वातावरण निर्मित किया जा सकता है"(मिश्र, 2024, पृष्ठ-44)।

पुस्तक के दूसरे खंड 'भारतीय पत्रकारिता और संपादक के प्रतिमान' में भी छह लेख हैं—अरविंद और 'वंदेमातरम', पराड़कर युग और आज की पत्रकारिता, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी सम्पादक के प्रतिमान, अज्ञेय और पत्रकारिता के प्रतिमान, पंडित विद्यानिवास मिश्र और हिंदी पत्रकारिता और हिंदी विद्वानों की दृष्टि में संपादक भारती (धर्मवीर भारती)। अरविंद और वंदेमातरम् शीर्षक लेख में अच्युतानंद मिश्र बताते हैं कि वंदेमातरम् गीत कैसे देशप्रेमियों की प्रेरणा का स्रोत बन गया था। अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं, "बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यास 'आनंद मठ' में प्रकाशित होकर 'वंदे मातरम्' गीत पूरे देश में लोकप्रिय हुआ था। अरविंद ने इस गीत का अंग्रेजी अनुवाद किया था और युवा रवींद्रनाथ ने आरंभिक पंक्तियों को संगीतबद्ध करके स्वयं बंकिमचंद्र को सुनाया था। इसी गीत की प्रेरणा से बिपिनचंद्र पाल ने 'वंदेमातरम्' दैनिक पत्र निकाला। अरविंद के राजनीतिक लेखन और संपादकीय टिप्पणियों से ब्रिटिश सत्ता थर्रा गई थी। जनवरी 1908 को अरविंद ने 'वंदेमातरम्' में लिखा था, "उत्पीड़ित देशवासियों के लिए हम बड़ी तीव्रता से संवेदना अनुभव करते हैं, पर उन्हें सिवा इसके और कोई परितोष नहीं दे सकते कि दुःख से सुख की ओर, अँधेरे से उजाले की ओर, दुर्बलता से शक्ति और शर्म से कीर्ति की ओर जाने के लिए कोई राजपथ नहीं है। बिना बलिदान के हमारा उत्थान नहीं हो सकता। बंगाल ने इस बलिदान की महिमा समझी है और देश के लिए कष्ट सहने को आमंत्रित लोगों की उज्ज्वल कथा आशा और विश्वास जगाती है" (मिश्र, 2024, पृष्ठ-47)।

'पराड़कर युग और आज की पत्रकारिता' शीर्षक लेख में अच्युतानंद मिश्र ने मीडिया द्वारा हमारे जीवन और चिंतन को नियंत्रित करने पर गंभीर चिंता प्रकट की है। उन्होंने लिखा है, "पराड़करजी के दौर की पत्रकारिता ने अगर हमें राष्ट्रीय स्वाभिमान और सांस्कृतिक श्रेष्ठता की पहचान दी थी तो आज की मीडिया उस पहचान पर प्रश्नचिह्न खड़ा कर रही है। उसका नियंत्रण उन शक्तियों के हाथों में है, जो भारत ही नहीं, पूरी दुनिया की आर्थिक गुलामी का तानाबाना बुन रही हैं। आज का यक्ष प्रश्न है कि अपनी विश्वसनीयता दाँव पर लगाकर भारतीय मीडिया का एक बड़ा वर्ग बाजार

की उन शक्तियों के साथ क्यों खड़ा है, जो हमारी राजनीति, अर्थव्यवस्था, संस्कृति, खेती, कुटीर उद्योग, चिकित्सा, संगीत और कुल मिलाकर सामाजिक अस्मिता को समाप्त करना चाहता है" (मिश्र, 2024, पृष्ठ-54)?

पुस्तक के तीसरे खंड 'मीडिया और संचार क्रांति की चुनौतियाँ' में नौ लेख संकलित हैं। उनके शीर्षक हैं— परंपरागत ज्ञान को कृत्रिम मेधा और संचार क्रांति की चुनौतियाँ, साहित्य, पत्रकारिता और मीडिया, मीडिया, जनाकांक्षा और लोकतंत्र, मीडिया, माध्यम और नैतिकता, भूमंडलीकरण, मुक्त व्यापार तथा भारतीय मीडिया की चुनौतियाँ, नागरिक नहीं उपभोक्ता समर्थक है मीडिया, मीडिया और नैतिकता, महिला सशक्तीकरण और मीडिया, समाचार-व्यावसायिक मीडिया का सबसे बड़ा हथियार। चौथे खंड 'शिक्षा, साहित्य और संस्कृति' में 15 लेख संकलित हैं। वे हैं— 'भारत' की संकल्पना, उच्चशिक्षा में मूल्यनिष्ठा का प्रवेश, राष्ट्रीय शिक्षा का पहला प्रयोग, आधुनिक मीडिया शिक्षण-बाजार और सरोकार के बीच एक पाठ्यक्रम, अप्प दीपो भव, राष्ट्रकवि दद्दा मैथिलीशरण गुप्त, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का लोक और लोकदृष्टि, गँवई संवेदना के साधक (कृष्णबिहारी मिश्र), हिंदी पत्रकारिता और साहित्य का नैकट्य जरूरी, पद्मश्री पंडित कृष्णबिहारी मिश्र को 'संस्कृति सौरभ सम्मान', राष्ट्रीय आस्था और राजनीति, भारतीय संस्कृति और जीवन मूल्य, नदी संस्कृति की पुन:प्रतिष्ठा का संकल्प, भारतीय परिवेश, सामाजिक न्याय और मीडिया, डॉ. जोशी-एक संस्कृति पुरुष (मुरलीमनोहर जोशी)।

'हिंदी पत्रकारिता और साहित्य का नैकट्य जरूरी' शीर्षक लेख में अच्युतानंद मिश्र ने बताया है कि हिंदी पत्रकारिता को सवालों और संदेहों के दौर से क्यों गुजरना पड़ रहा है? उन्होंने लिखा है, "मुख्य प्रश्न विश्वसनीयता के संकट का है। ये सवाल चुभ रहे हैं कि क्या पत्रकारिता में जनपक्षधरता और आंतरिक प्रतिरोध की जिजीविषा समाप्त हो गई है? क्या सामाजिक सरोकार से जुड़ाव का स्थान सिर्फ और सिर्फ मुनाफे ने ले लिया है? चूँकि यह एहसास हो रहा है कि कहीं-न-कहीं कोताही और विचलन हुआ है, इसलिए इस स्थिति से उबरने की फिक्र भी सता रही है। इसका उपाय भी है—पारदर्शिता और जवाबदेही। ध्यान रहे, प्रेस को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ संविधान में नहीं कहा गया है। यह लोक मान्यता है और लोक मान्यता अर्जित करना जितने जीवट का काम है, उससे कहीं ज्यादा साधना और तपस्या लोक मान्यता को बनाए रखने के लिए अपेक्षित है" (मिश्र, 2024, पृष्ठ-182)।

पाँचवें खंड 'संसदीय लोकतंत्र और मीडिया' में चार लेख संकलित हैं—स्वतंत्रता का अधिकार और दुरूपयोग के खतरे, स्वैच्छिक क्षेत्र और विधायिका, आरक्षण : देश तोड़ो- वोट जोड़ो और कल बहुत देर हो जाएगी। छठे खंड में राम मनोहर लोहिया, माखनलाल चतुर्वेदी, शिव पूजन सहाय और प्रभाष जोशी की याद में श्रद्धांजलि-लेख हैं। इस तरह पत्रकारिता के अलावा अच्युतानंद मिश्र ने शिक्षा, साहित्य और संस्कृति, समकालीन इतिहास, बदलती राजनीतिक परिस्थिति, युवाओं की परिवर्तित सोच और पुरानी संस्कृति का सम्यक विवेचन पुस्तक में किया है।

**इतिहास संरक्षण का विनम्र प्रयास**

अच्युतानंद मिश्र समालाप शृंखला के हिमायती रहे हैं। यानी उनकी आकांक्षा रही है कि दो बड़े व्यक्तित्व आपस में संवाद करें। इसी शृंखला के तहत 'जनसत्ता' के संपादक के रूप में अच्युतानंद मिश्र ने रामविलास शर्मा से नामवर सिंह की बातचीत रिकार्ड कराई थी। कहने की जरूरत नहीं कि इस तरह का मौलिक प्रयोग वही कर सकता है जो विजनरी हो। साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंध पर अच्युतानंद मिश्र ने दिल्ली में अलग से संवाद शृंखला शुरू की थी। इसी तरह जब वे माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल के कुलपति बने तो भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता पर शोध व लेखन प्रकल्प प्रारंभ किया और उसके तहत अस्सी किताबें निकालीं। उसी प्रकल्प के अंतर्गत 'हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं' पुस्तक चार खंडों में प्रकाशित हुई। उसका संपादन अच्युतानंद मिश्र ने किया है। इस पुस्तक में स्वतंत्रता के बाद हिंदी की प्रतिनिधि पत्र-पत्रिकाओं के देश के पुनर्निर्माण एवं राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में योगदान का वर्णन है तो उनकी कमजोरियों का विवेचन भी किया गया है। 'हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं' पुस्तक ऐसा प्रामाणिक दस्तावेज है जिसमें एक विस्मृत और उपेक्षित इतिहास का प्रामाणिक इतिवृत्त दर्ज हुआ है। कहने की जरूरत नहीं कि पत्रकारिता के विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिए यह अनिवार्य पाठ सामग्री है। पुस्तक के पहले खंड में संत समीर ने 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', सुधांशु मिश्र ने 'धर्मयुग', उमेश चतुर्वेदी तथा सुधांशु मिश्र ने 'दिनमान' और सुधांशु मिश्र ने 'रविवार' का प्रामाणिक इतिहास लिखा है। पुस्तक की संपादकीय टिप्पणी का शीर्षक अच्युतानंद मिश्र ने 'इतिहास संरक्षण का विनम्र प्रयास' सटीक रखा है। उसमें उन्होंने लिखा है कि स्वाधीन भारत में पत्रकारिता के संचालकों और प्रकाशकों की पीढ़ियों ने विरासत में उनकी विश्वसनीयता और लोकप्रियता तो ग्रहण कर ली किंतु यह कड़वा सच है कि बाद की हिंदी पत्रकारिता ने न तो उन आदर्शों की ओर रुख किया और न उस कसौटी पर खरी उतरी जो स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इसका प्राणतत्व थी। महात्मा गांधी मानते थे कि निर्भयता पत्रकारिता की सबसे पहली और आवश्यक शर्त है। आज के दौर में शायद यह अंतिम वरीयता है। आपातस्थिति के दौरान प्रेस सेंसरशिप का लचर विरोध इसका प्रमाण है (मिश्र, 2010, पृष्ठ-08)।

अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं कि सन् 1950 में इलाचंद्र जोशी के संपादन में प्रकाशित 'धर्मयुग' अपने समय की सर्वाधिक लोकप्रिय पत्रिका थी। 27 वर्षों के अपने संपादन काल में डॉ. धर्मवीर भारती ने संपादन के अप्रतिम कीर्तिमान रचे। डॉ. भारती ने विचार-दर्शन, साहित्यिक विमर्श, सांस्कृतिक संचेतना और आर्थिक मुद्दों पर उत्कृष्ट सामग्री का संयोजन किया जिसके कारण देश के प्रबुद्ध पाठकों के बीच और मध्यवर्ग के हर हिंदीभाषी परिवार में 'धर्मयुग' की उपस्थिति अपरिहार्य थी। 'धर्मयुग' ने हिंदी पत्रकारिता की भाषा को संस्कारित किया। हिंदी के युवा लेखकों को 'धर्मयुग' ने भरपूर प्रोत्साहन दिया, महिला कथाकारों का एक बड़ा वर्ग भी तैयार किया, जिनमें से अधिकतर समकालीन हिंदी साहित्य के बड़े नाम हैं। यह ऐसा समय था जब 'धर्मयुग' में छपना न केवल प्रतिष्ठा की बात मानी जाती थी अपितु नवोदित लेखकों के लिए यह 'लेखक' होने का प्रमाणपत्र जैसा था। डॉ. भारती ने भारत-पाक युद्ध के समय पूर्वी बंगाल के युद्ध क्षेत्र में अग्रिम मोर्चे तक स्वयं जाकर जो रिपोर्ताज लिखे, वे हिंदी पत्रकारिता की धरोहर हैं। 'धर्मयुग' सुसंपादित और सुरुचिपूर्ण संपूर्ण पारिवारिक पत्रिका थी। भारती जी के सभी रचनाकारों से व्यापक एवं प्रगाढ़ संबंधों का भरपूर प्रतिसाद 'धर्मयुग' को मिला। उनके बाद श्री गणेश मंत्री और श्री विश्वनाथ सचदेव 'धर्मयुग' के संपादक बने। डॉ. भारती की देखरेख में

दीक्षित तब के युवा पत्रकार आज पत्रकारिता जगत में कीर्ति पताका फहरा रहे हैं। आपातकाल के दौरान 'धर्मयुग' की चुप्पी ने इससे जुड़े प्रबुद्ध वर्ग को निराश किया था (मिश्र, 2010, पृष्ठ-10)। 'धर्मयुग' ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य पर राजनीति को सदैव आलोचनात्मक नजरिए से देखा। टाइम्स आफ इंडिया समूह से हिंदी की सुरुचिपूर्ण पत्रिकाओं के प्रकाशन का जो दौर श्रीमती रमा जैन ने शुरू किया था, वह उनकी तीसरी पीढ़ी तक आते-आते पूरी तरह बदल गया। अब इसी नीति के कारण पत्रिकाओं को भी उनकी सुरुचि, गुणवत्ता और लोकप्रियता से नहीं, बल्कि विशुद्ध व्यावसायिक लाभ की दृष्टि से देखा जाने लगा। अंततः 'धर्मयुग' जैसी प्रकाशन समूह की अत्यंत लोकप्रिय पत्रिका बंद कर दी गई।

टाइम्स समूह ने ही 1965 में समाचार और विचार पत्रिका के रूप में साप्ताहिक 'दिनमान' का प्रकाशन वरिष्ठ साहित्यकार सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के संपादकत्व में आरंभ किया। मिश्र जी लिखते हैं कि अज्ञेय ने 'दिनमान' को जीवन के हर पक्ष को छूने वाली एक संपूर्ण पत्रिका बनाने का सफल प्रयल किया। 'दिनमान' ने विषयवस्तु, प्रस्तुति और भाषा के मान से जो सामग्री दी, वह हिंदी पत्रकारिता में पहला और उत्कृष्ट प्रयोग था। 'दिनमान' का मूल स्वर गैर कांग्रेसवाद से प्रभावित रहा है। अज्ञेय के बाद लंबे समय तक प्रसिद्ध साहित्यकार रघुवीर सहाय 'दिनमान' के संपादक रहे। 1975 में जब आपातकाल और प्रेस की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगा तो 'दिनमान' के पृष्ठों पर विरोध का कोई स्वर नहीं उभरा (मिश्र, 2010, पृष्ठ-10 )। बल्कि इसका स्वर सत्ता-समर्थन का हो गया था। 'दिनमान' की इस बदली भूमिका ने प्रकाशकों को भले ही प्रसन्न किया हो, लेकिन हिंदी के बुद्धिजीवियों को निराश किया था।

अच्युतानंद मिश्र ने लिखा है कि 'दिनमान' को हिंदी पत्रकारिता में नई भाषा गढ़ने का श्रेय दिया जाता है। इसने अनेक नए शब्दों का प्रयोग किया। 'दिनमान' ने साहित्य, कला, संस्कृति, संगीत की समीक्षा और समालोचना के नए मुहावरे और भाषा देकर पाठकों और युवा लेखक-समीक्षकों को प्रशिक्षित किया। 'दिनमान' के अधिकतर अंक अपनी समृद्ध और विचारपरक सामग्री के कारण संग्रहणीय होते थे। रघुवीर सहाय, जितेंद्र गुप्त, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, श्रीकांत वर्मा, महेश्वर दयालु गंगवार, प्रयाग शुक्ल, जवाहरलाल कौल और स्वयं अज्ञेय ने अपनी सशक्त लेखनी से 'दिनमान' को गहरे सामाजिक सरोकार वाली वैचारिक पत्रिका बनाया। आरंभ में कुछ समय तक श्री मनोहर श्याम जोशी भी इससे जुड़े रहे। बिहार में बाढ़ और सूखे की आपदा पर फणीश्वरनाथ रेणु के रिपोर्ताज पत्रकारी धरोहर बन गए। 'दिनमान' ने पत्र लिखनेवाले अपने अनेक पाठकों की प्रतिभा को पहचाना, तराशा और उन्हें पत्रकारिता में दीक्षित कर सुदूर कस्बों में नए-नए पत्रकार तैयार किए। सातवें और आठवें दशक में हिंदी पट्टी के युवाओं को वैचारिक दीक्षा और तेवर देने का योगदान 'दिनमान' ने किया था (मिश्र, 2010, पृष्ठ-11)।

यह निर्विवाद है कि स्वाधीन भारत में हिंदी की पत्रिकाएं विचारों की संवाहक और भाषा की शुद्धता की समर्थक रही हैं, साथ ही उनमें राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक आंदोलनों और परिवर्तनों की जो अनुगूँज मुखरित हुई है, वह देश में लोकतंत्र और हिंदी साहित्य के विकास का गौरवपूर्ण अध्याय है।

अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं कि देश के हिंदी भाषी समाज को साहित्यिक, नैतिक और राजनीतिक विचारधारा से संस्कारित करने की सात्विक महत्त्वाकांक्षा के साथ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' का प्रकाशन आरंभ हुआ था। मुकुटबिहारी वर्मा, बांके बिहारी भटनागर, रामानंद दोषी, मनोहरश्याम जोशी, शीला झुनझुनवाला, राजेंद्र अवस्थी, मृणाल पांडेय ने 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' का संपादन किया। 42 वर्षों के अपने प्रकाशन काल में यह साप्ताहिक पहले 21 वर्षों में गांधीजी के विचारों का पैरोकार रहा। बाद के समय में जब सत्तारूढ़ दल ने गांधीवाद से किनारा कर लिया तब उसका प्रभाव इस पत्रिका में भी दिखा जिसके चलते 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकार बदल गए। भारतीय संस्कृति के संवाहक के रूप में इसने हिंसा की तुलना में अहिंसा को, आडंबर की तुलना में सरलता को और भौतिकता की तुलना में आध्यात्मिकता को प्रश्रय और समर्थन दिया (मिश्र, 2010, पृष्ठ-9)। सबसे लंबी अवधि तक इसके संपादक रहे मनोहर श्याम जोशी की संपादकीय टिप्पणियों की भाषा धारदार, प्रवाहमयी और मुहावरेदार है। उनकी टिप्पणियाँ सत्ता-प्रतिष्ठान पर हमले की सी स्थिति में दिखाई पड़ती हैं। साहित्य के क्षेत्र में भी इसका योगदान इस मायने में महत्त्वपूर्ण रहा कि इसमें न केवल समकालीन सभी बड़े साहित्यकारों की रचनाओं को प्रकाशित किया वरन अन्य भारतीय भाषाओं की उत्कृष्ट रचनाओं के हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित किए। एक लाख प्रसार संख्या होने के बावजूद इस लोकप्रिय पत्रिका का अचानक बंद किया जाना सभी पाठकों के लिए वज्राघात था (मिश्र, 2010, पृष्ठ-09)।

आपातकाल हटने के बाद देश में नए पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन का दौर आया, उसमें आनंद बाजार पत्रिका समूह, कोलकाता द्वारा प्रकाशित समाचार साप्ताहिक पत्रिका 'रविवार' सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। उसके युवा संपादक सुरेंद्र प्रताप सिंह ने अपने अभिनव प्रयोगों और संपादन कौशल से 'रविवार' को थोड़े ही समय में सर्वथा भिन्न तेवर वाली लोकप्रिय समाचार पत्रिका बना दिया। 'दिनमान' में जो कुछ कम था, उसे 'रविवार' ने पूरा करने का प्रयास किया था। बाद में पत्रिका के संपादक रहे उदयन शर्मा के अनुसार, "एस.पी. ने जिस नए अंदाज और दिलेरी के साथ इस पत्रिका का संपादन किया, उससे हिंदी पत्रकारिता को नई दिशा के साथ-साथ तरोताजा मुहावरा भी मिला।" 'रविवार' ने दक्षिणपंथी राजनीति पर तीखी टिप्पणियाँ तो की ही हैं, समाजवादियों की कार्यशैली और सत्तालोलुपता पर भी खूब निशाना साधा था। इसने मार्क्सवादी विचारधारा की दिशाहीनता पर भी गहरे कटाक्ष किए। तब जबकि देश में विश्वनाथ प्रताप सिंह की छवि भ्रष्टाचार से संघर्ष करने वाले साफ-सुथरे राजनेता की बन रही थी, 'रविवार' उनके खिलाफ खड़ा दिखाई दिया। इसने समाजवादी विचारक डॉ. राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण के विचारों को प्रमुखता से छापा । इसने देश के सभी राज्यों के सत्तासीन दलों की कमियों, खामियों और प्रशासनिक असफलताओं पर खोजपूर्ण और तथ्यपरक सामग्री लगातार छापी। पत्रकारिता के चरित्र की तरह इसका मूल स्वर प्रायः व्यवस्था विरोधी रहा। 'रविवार' ने सांप्रदायिकता का, चाहे वह मुस्लिम सांप्रदायिकता हो अथवा हिंदू, बराबर विरोध किया। पूरे प्रकाशन काल में 'रविवार' ने गहरे सामाजिक सरोकार का परिचय दिया और वंचितों, शोषितों तथा पीड़ितों के पक्ष में दृढ़ता से खड़ा रहा (मिश्र, 2010, पृष्ठ-11)। इसने पत्रकारिता क्षेत्र की कमजोरियों और गोरखधंधों को बेबाकी से उजागर किया। इसने खोजी तथा ग्रामीण पत्रकारिता को नया आयाम दिया। राजनीतिक समाचार पत्रिका होने के बावजूद इसने साहित्य

को भी समुचित स्थान दिया। इसने देश की राजनीति, सामाजिक और आर्थिक विद्रूपताओं पर तीखे प्रहार किए। साहित्य, कला एवं संस्कृति को, उनकी समकालीन सर्जनात्मक जिजीविषा को, उनकी रागात्मकता और सुंदरता को सहज अभिव्यक्ति प्रदान की। 'रविवार' ने 'दिनमान' अथवा 'धर्मयुग' की तरह तो नहीं, लेकिन साहित्य, संस्कृति, कला, इतिहास, पुरातत्व, फिल्म जैसे विषयों पर स्तरीय और विचारोत्तेजक सामग्री निरंतर प्रकाशित की।

अच्युतानंद मिश्र द्वारा संपादित 'हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं' पुस्तक के दूसरे खंड में डॉ. धीरेंद्र नाथ सिंह ने 'आज', संत समीर ने 'हिन्दुस्तान', सत्यनारायण जोशी ने 'दैनिक नवज्योति' और मनोज कुमार ने 'नवभारत' का इतिहास प्रस्तुत किया है। तीसरे खंड में अमरेंद्र कुमार राय ने 'नवभारत टाइम्स', शिव अनुराग पटैरया ने 'नई दुनिया', रजनीकांत वशिष्ठ ने 'स्वतंत्र भारत', बच्चन सिंह ने 'दैनिक जागरण' और अभय प्रताप ने 'अमर उजाला' का इतिवृत्त प्रस्तुत किया है। चौथे खंड में अचला मिश्र ने 'राजस्थान पत्रिका', अंजनी कुमार झा ने 'युगधर्म', सोम दत्त शास्त्री ने 'दैनिक भास्कर', देवेश दत्त मिश्र ने 'देशबंधु', रामभुवन सिंह कुशवाह ने 'स्वदेश' और जेब अख्तर ने 'प्रभात खबर' का इतिहास प्रस्तुत किया है।

**सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों का सटीक मूल्यांकन**

अच्युतानंद मिश्र ने राष्ट्रीय समाचार पत्रों में पिछले तीन-चार दशकों में प्रचुर लेख लिखे हैं। उन लेखों का संकलन पुस्तक रूप में होना शेष है। राहत की बात है कि दो दशक पूर्व कम से कम 'लोकमत समाचार' में उनके साप्ताहिक स्तंभ में प्रकाशित लेखों का संकलन 'सरोकारों के दायरे' शीर्षक से छपा था। 'सरोकारों के दायरे' पुस्तक से पता चलता है कि समाज में जहाँ भी अनौचित्य दिखता है, अच्युतानंद मिश्र उसे टोकते हैं। उस पुस्तक में अच्युतानंद मिश्र ने साहित्य-कला-संस्कृति के कई सबल पक्षों को हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया और राजनीति, शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, स्त्री-विमर्श, दलित और अल्पसंख्यकों के समसामयिक सवालों को भी उम्दा तरीके से उठाया।

'सरोकारों के दायरे' पुस्तक में बीसवीं शताब्दी की सांध्य वेला और इक्कीसवीं सदी के आरंभ के भारतीय परिदृश्य का सटीक विवेचन किया गया है। समकालीन सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों व सवालों का अच्युतानंद मिश्र का मूल्यांकन इतना सम्यक् और सुचिंतित है कि वह समाज, संस्कृति और राजनीति के प्रश्नों को जाँचने-परखने का मानक बन जाता है। इस किताब के लेख दीर्घजीवी और पठनीय हैं। इनमें निबंध की बुनावट, कहानी सी रोचकता, रेखाचित्र सी चुस्ती और पत्रकारिता जैसी यथार्थता है। अपनी सहजता और लालित्य में विशिष्ट इन लेखों को अच्युतानंद मिश्र ने इतनी जीवन्तता से रचा है कि पूरा समकालीन परिदृश्य सजीव हो उठता है। पुस्तक चार खंडों में विभक्त है—चिंतन, ऊर्जा-पुंज, सरोकार और परिदृश्य। चिंतन खंड का पहला आलेख है 'पृथ्वी, मंगल और अंतरिक्ष'। यह लेख इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि अच्युतानंद मिश्र के चिंतन व चिंता के दायरे में समूची पृथ्वी और अंतरिक्ष का विस्तार है। इसी खंड में एक टिप्पणी है- 'एक सहस्राब्दी बेचने का सुख'। इसके तहत दूसरी सहस्राब्दी के अवसान और तीसरी के आगमन पर विचार करते हुए लेखक का ध्यान इस प्रश्न पर जाता है कि पहली सहस्राब्दी की समाप्ति पर दुनिया का मानचित्र कैसा था? और उस सहस्राब्दी का इतिहास रचनेवालों को इतिहासकारों ने कितनी ईमानदारी से पेश किया है? दूसरी सहस्राब्दी को लहूलुहान करने वाले युद्धलोलुप सूरमाओं ने अपनी विजय गाथाओं को इतिहास की आड़ लेकर नई पीढ़ी के लिए किस रूप में पेश किया है? अच्युतानंद मिश्र ने एक हजार वर्ष की इतिहास-गाथा को कुछेक शब्दों में चमत्कारिक ढंग से समेटा है, "पूरी अंतिम शताब्दी राजनीतिक और आर्थिक उपनिवेशों, महायुद्धों, एटम बमों और आतंकवादियों की कहानी कह रही है। ताकतवर देशों की असभ्यताओं को पराजित देशों पर थोपना ही उसका इतिहास है। जो युद्ध का उन्माद और हथियार साथ-साथ पैदा करते हैं, वे विश्व संस्कृति, मानवाधिकार और सहस्राब्दी भी साथ-साथ बेचते हैं।... करोड़ों नरसंहारों से लहूलुहान यह शताब्दी राजनीति और युद्ध, शोषण और अन्याय के इतिहास का अद्भुत संग्रहालय है।... क्यों पूरी दुनिया को लुभाने के लिए यह झूठ फैलाया जा रहा है कि तीसरी सहस्राब्दी के नए सूरज की पहली किरण देखने वाले एक इतिहास के साक्षी बनेंगे" (मिश्र, 2005, पृष्ठ 28)।

अच्युतानंद मिश्र ने जिस शिद्दत से भारतीय बुद्धिजीवियों के दायित्वबोध के सवाल पर विचार किया है, उसी आवेग के साथ राष्ट्रभाषा बनाम राजभाषा पर भी। श्री मिश्र के इस कथन से किसी की असहमति नहीं हो सकती कि आजादी के बाद के छह दशकों में राजनेताओं और सभी क्षेत्रों के बुद्धिजीवियों की प्रामाणिकता घटी है। उनके राष्ट्रीय चिंतन, बौद्धिक ईमानदारी तथा सैद्धान्तिक प्रतिबद्धता पर से लोगों का भरोसा उठता जा रहा है क्योंकि उनके जीवन आदर्श राजनेता और अभिनेता हो गए और इतिहास के मूल्यों व संस्कारों की ओर देखने की उनकी दृष्टि विखंडित हो गई। श्री मिश्र के चिंतन-मनन और संवेदन-संस्कारों पर आजादी की लड़ाई के मूल्य-मानकों का गहरा प्रभाव है। पुस्तक में सर्वत्र अच्युतानंद मिश्र की मूल्य चिंता और मनुष्यता, सच्चाई की रक्षा की चिंता मुखर है। 'कठघरे में कैद बुद्धिजीवी' शीर्षक आलेख में एक राजनेता के कथन का हवाला देते हुए श्री मिश्र ने कहा है, "अगर राजनीति का अपराधीकरण करने का आरोप राजनीतिक दलों पर है तो शिक्षा, न्याय, प्रशासन, मीडिया, कला, साहित्य या इतिहास में फैली हुई विकृतियों के लिए वे बुद्धिजीवी जिम्मेदार क्यों नहीं हैं जो अपने आपको सामाजिक नैतिकता का पहरुआ मानते हैं" (मिश्र, 2005, पृष्ठ 34)।

अच्युतानंद मिश्र की चिंता यह है कि सत्ता से सच कहने, उससे बेबाक ढंग से असहमति जताने और खरी-खरी कहने व प्रतिरोध की ताकत क्यों सिकुड़ती गई? इन कारणों ने पार्टी व सरकारों के संचालन में विचारधारा और आदर्शवाद को खो दिया है। इसीलिए उनकी विश्वसनीयता के साथ समाज के लिए उपयोगिता भी तेजी से घट रही है। राजनीति में आई विकृतियों पर श्री मिश्र अंगुली रखते हैं और मूल्यों की हाँक लगाते हैं। अच्युतानंद मिश्र जलयोद्धा राजेंद्र सिंह पर हुए प्रहार को देश पर प्रहार की संज्ञा देते हैं (मिश्र, 2005, पृष्ठ 74)। पूरी दुनिया में उग्र हो रहे जल संकट और वर्षा जल संरक्षण के क्षेत्र में राजेंद्र सिंह की उपलब्धियों पर दृष्टिपात करते हुए राजेंद्र सिंह पर हुए प्रहार के प्रतिकार का वे आह्वान करते हैं। राजेंद्र सिंह सरीखी समाज की कई विभूतियों के रचनात्मक अवदान को अच्युतानंद मिश्र ने इस तरह प्रस्तुत किया है ताकि वह दिशाहीन हो रहे समाज को सृजनशील दिशा दे सके। सुगम संगीत की साम्राज्ञी लता मंगेशकर की वाणी की मधुरता, मन के सौंदर्य और हर ऊँचाई के साथ

बढ़ती विनम्रता का उल्लेख करते हुए श्री मिश्र जड़ता पर रचनात्मक चोट करना नहीं भूलते (मिश्र, 2005, पृष्ठ 77)। उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ पर लिखते हुए उनकी गहरी पीड़ा और असुरक्षा बोध के लिए श्री मिश्र ने सत्ता को फटकार लगाई है और कहा है कि भारतीय संगीत के इस पुरोधा के प्रति समाज और सरकार की उपेक्षा अक्षम्य अपराध है (मिश्र, 2005, पृष्ठ 81)।

श्री मिश्र का मूल्य चेतस मन विद्याधर नायपाल के बुद्धिजीवियों संबंधी विचारों के सतही विरोध से प्रभावित नहीं होता तो 'का-पुरुषों को ललकारती तसलीमा नसरीन' के साहस का भी विवेक-सम्मत विवेचन करता है (मिश्र, 2005, पृष्ठ 84)। जन संस्कृति मंच के अध्यक्ष पद से त्रिलोचन के हटाए जाने पर टिप्पणी करते हुए श्री मिश्र ने ठीक कहा है, "उन्हें प्रगतिशीलता का किसी मंच से प्रमाण-पत्र नहीं चाहिए। वे एक जन पक्षधर योद्धा एवं साहित्यकार हैं और बने रहेंगे। संगठनों की आवश्यकता से कोई इनकार नहीं कर सकता लेकिन साहित्य के नाम पर गठित संगठन जब राजनीतिक मतवादों से प्रेरित होते हैं तो वे मार्गदर्शन से ज्यादा फतवा देने का काम करते हैं" (मिश्र, 2005, पृष्ठ 93)।

श्री मिश्र ने स्त्री अस्मिता और स्त्री मुक्ति के प्रश्नों पर विचार किया है तो कामगारों और उनके जन आंदोलनों पर भी। उनकी नजर शिक्षा में राजनीतिक वर्चस्व पर है तो नदियों को जोड़ने के संभावित खतरों और प्रदूषण की पीड़ा पर भी। मिश्र जी ने पेप्सी कोक के लिए सरकार की बेशर्मी को कोसा है तो लोकसभा में लोकपाल, नकली राजनीति की असली तस्वीर भी उनकी नजर से नहीं छूटी है। पुस्तक में संकलित निबंधों व लेखों में राजनीति से आक्रांत होकर बिखरते समाज, साहित्य और मीडिया, धर्म और संस्कृति के सार्वकालिक सरोकारों के सवालों पर विचार करते हुए अच्युतानंद मिश्र उन जगहों में भी जाते हैं जहाँ अभी भी संभावनाएँ बची हुई हैं।

अच्युतानंद मिश्र की संपादित पुस्तक 'पत्रों में समय संस्कृति' हनुमान प्रसाद पोद्दार के पत्र-व्यवहार का मूल्यवान संकलन है। 'भाई जी' के नाम से मशहूर हनुमान प्रसाद पोद्दार स्वाधीनता संग्राम के सेनानी थे। उनकी लोकसेवा, दिव्य तेज और भावपूर्ण जीवन के बारे में कई विद्वानों ने अत्यंत आदर सहित उल्लेख किया है। तत्कालीन केंद्रीय गृहमंत्री गोविंद वल्लभ पंत को लिखे हनुमान प्रसाद पोद्दार के पत्र से पता चलता है कि तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू हनुमान प्रसाद पोद्दार को भारत रत्न देना चाहते थे और इसीलिए उन्होंने पंत जी को पोद्दार जी के पास भेजा था। पंत जी को लिखे हनुमान प्रसाद पोद्दार के पत्र से इसका पता चलता है। उस पत्र में पोद्दार जी लिखते हैं- "आपने मेरे लिए लिखा कि "आप इतने महान् हैं, इतने ऊँचे महामानव हैं कि भारतवर्ष को क्या, सारी मानवी दुनिया को इसके लिए गर्व होना चाहिए। मैं आपके स्वरूप के महत्त्व को न समझकर ही आपको 'भारत रत्न' की उपाधि देकर सम्मानित करना चाहता था। आपने उसे स्वीकार नहीं किया, यह बहुत अच्छा किया। आप इस उपाधि से बहुत-बहुत ऊँचे स्तर पर हैं। मैं तो आपको हृदय से नमस्कार करता हूँ।" आपके इन शब्दों को पढ़कर मुझे बड़ा संकोच हो रहा है। पता नहीं, आपने किस प्रेरणा से यह सब लिखा है। मेरे तो आप सदा ही पूज्य हैं। मैं जैसा पहले था, वैसा ही अब हूँ, जरा भी नहीं बदला हूँ। आप सदा मुझपर स्नेह करते आए हैं और मुझे अपना मानते रहे हैं। मैं चाहता हूँ, वैसा ही स्नेह करते रहें और अपना मानते रहें। मैं आपकी श्रद्धा नहीं चाहता, कृपा तथा प्रीति चाहता हूँ, स्नेह चाहता हूँ। मेरे लायक कोई सेवा हो तो लिखें। आपके आदेशानुसार पत्र जला दिया है। आप भी मेरे इस पत्र को गुप्त ही रखिएगा" (मिश्र, 2015, पृष्ठ-252)।

जीवन के हर क्षेत्र के महापुरुषों से पोद्दार जी का जीवंत संबंध था। वह संबंध कैसा था, इसे देखने के लिए प्रेमचंद के पत्र को पढ़ा जा सकता है। तीन मार्च 1932 को हनुमान प्रसाद पोद्दार को लिखे पत्र में प्रेमचंद कहते हैं, "आपके दो कृपा पत्र मिले। काशी से पत्र यहाँ आ गया था। 'हंस' के विषय में आपने जो सम्मति दी है, उससे मेरा उत्साह बढ़ा। मैं 'कल्याण' के ईश्वरांक के लिए अवश्य लिखूँगा। क्या कहें आप काशी गए और मेरा दुर्भाग्य कि मैं लखनऊ में हूँ। भाई महावीर प्रसाद बाहर हैं या भीतर मुझे ज्ञात नहीं। उनकी स्नेह स्मृतियां मेरे जीवन की बहुमूल्य वस्तु हैं। वह तो तपस्वी हैं, उन्हें क्या खबर कि 'प्रेम' भी कोई चीज है" (मिश्र, 2015, पृष्ठ-40)।

17 अक्टूबर, 1931 को लिखे पत्र में निराला कहते हैं, "प्रिय श्री पोद्दार जी, नमो नम: । आपका पत्र मिला। मैं कलकत्ता सम्मेलन में जाकर बीमार पड़ गया। पश्चात घर लौटने पर अनेक गृह प्रबंधों में उलझा रहा। कई बार विचार करने पर भी आपके प्रतिष्ठित पत्र के लिए कुछ नहीं लिख सका। क्या लिखूँ, आपके सहृदय सज्जनोचित बरताव के लिए मैं बहुत ही लज्जित हूँ। आपके आगे के अंकों के लिए कुछ-कुछ अवश्य भेजता रहूँगा। एक प्रबंध कुछ ही दिनों में भेजूँगा" (मिश्र, 2015, पृष्ठ-बैक कवर)।

मैथिलीशरण गुप्त ने चिरगाँव (झाँसी) से 26-6- 2009 (संवत्) को लिखे पत्र में कहा है, "प्रिय पोद्दारजी, मैं पिछले दिनों बंबई गया था। वहाँ कुछ थका। वहाँ से मुझे इंदौर जाना पड़ा। शरीर पर सब झेल नहीं सका और मुझ पर हृद् रोग का आक्रमण हुआ। किसी प्रकार बच गया। अब भी कहीं आता-जाता नहीं। ऐसी स्थिति में कुछ लिखना संभव नहीं है (मिश्र, 2015, पृष्ठ-40)।

इस पुस्तक में केवल साहित्यकारों के ही पत्र संकलित नहीं हैं, अपितु संतों, विद्वानों, पत्रकारों, राजनीति, समाज, संस्कृति के कृती पुरुषों के पत्र भी संकलित हैं। उन पत्रों में सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, धार्मिक और आध्यात्मिक जिज्ञासाओं के पक्ष उजागर हुए हैं। इन पत्रों में पोद्दारजी के ज्ञान, विनम्रता, शील और मर्यादा की यथेष्ठ पहचान होती है। इन पत्रों में एक पूरे दौर की समय संस्कृति अभिव्यक्त हुई है।

## निष्कर्ष

अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती के पत्रकारीय अवदान पर न तो साहित्य में और न पत्रकारिता में कभी कोई बौद्धिक हलचल हुई। अच्युतानंद मिश्र की पुस्तक 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' का महत्त्व इसलिए है कि यहां पहली बार इन तीन श्रेष्ठ कवियों के पत्रकारीय अवदान को प्रकाश में लाया गया है। कृष्णबिहारी मिश्र ने ठीक ही इसे अनुशीलन का एक और गवाक्ष कहा है। 'कुछ सपने, कुछ संस्मरण' पुस्तक में भी कई महत्त्वपूर्ण पत्रकारों, संपादकों और साहित्यकारों की उपलब्धियों का वस्तुपरक आकलन किया गया है। संपादक के रूप में सुदीर्घ अनुभव रखने वाले अच्युतानंद मिश्र के अध्ययन, चिंतन और मनन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विषय साहित्य और पत्रकारिता का अंतर्संबंध रहा है और इसकी झलक उनकी लिखी या संपादित सभी पुस्तकों में मिलती है। दूसरे शब्दों में कहें तो अच्युतानंद मिश्र की लिखी या संपादित सभी

पुस्तकें साहित्य और पत्रकारिता के अंतर्संबंध के संधान का सुपरिणाम हैं।

**संदर्भ**


मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-07.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-08.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-09

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-01.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-02.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-03.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-04.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-05.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-19.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान (अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं धर्मवीर भारती). नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. पृष्ठ-145.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). कुछ सपने, कुछ संस्मरण. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-44.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). कुछ सपने, कुछ संस्मरण. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-47.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). कुछ सपने, कुछ संस्मरण. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-54.

मिश्र, अच्युतानंद. (2024). कुछ सपने, कुछ संस्मरण. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-182.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2010). हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ-08.

मिश्र, अच्युतानंद (सं.). (2010). हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ-10.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2010). हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ-09.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2010). हिंदी के प्रमुख समाचार पत्र और पत्रिकाएं. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ-11.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-28.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-34.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-74.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-77.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-81.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-84.

मिश्र, अच्युतानंद. (2005). सरोकारों के दायरे. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-93.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2015). पत्रों में समय संस्कृति (श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के नाम कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के पत्र). नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-252.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2015). पत्रों में समय संस्कृति (श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के नाम कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के पत्र). नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-40.

मिश्र, अच्युतानंद. (सं.). (2015). पत्रों में समय संस्कृति (श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के नाम कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के पत्र). नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-बैक कवर.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 48-53, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# संवैधानिक चेतना के विकास में पत्रकार रामबहादुर राय का योगदान

**आशीष द्विवेदी**[1]

**सारांश**

'विकसित भारत 2047' के संकल्प के साथ भारत अमृत काल में प्रवेश कर चुका है। भारतीय संविधान से लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में जो यात्रा 26 जनवरी, 1950 को प्रारंभ हुई, उसका 'अमृत महोत्सव' वर्ष समीप है। गत 74 वर्षों में भारत ने उत्तरोत्तर विकास किया। भारतीय संस्कृति जिन मूल्यों से संचालित रही है, उसमें लोकतांत्रिक मूल्य सर्वोपरि हैं। आधुनिक शासन प्रणाली भी इसी लोकतांत्रिक मूल्य की देन है। स्वाधीनता आंदोलन का सबसे बड़ा लक्ष्य स्वराज्य की स्थापना था। संविधान निर्माण उसका साधन मात्र था, लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों के फलस्वरूप साधन ही लक्ष्य बन गया। अर्थात् संविधान का निर्माण ही स्वाधीनता आंदोलन का मुख्य लक्ष्य बनकर रह गया। जब हम संविधान को देखते हैं तो यह विचार करना स्वाभाविक हो जाता है कि क्या संविधान ने उन मूल्यों को अपने में समाहित किया है, जो अनादिकाल से भारतीय संस्कृति में रचे-बसे हैं? संविधान लागू होने के 25 वर्षों में ही आपातकाल लगा दिया गया, जिसे 'लोकतंत्र की हत्या' की संज्ञा दी जाती है। आपातकाल जैसी परिस्थितियों ने संवैधानिक जागरूकता और साक्षरता जैसी बुनियादी आवश्यकताओं को रेखांकित किया। इसी क्रम में विद्वानों द्वारा कई बौद्धिक अभियान और प्रयास हुए, जिसमें एक नाम है पत्रकार रामबहादुर राय का। श्री राय ने संविधान को जानने के साथ उसके इतिहास और निर्माण की तत्कालीन परिस्थितियों को समझाने का कार्य अपने लेखों और पुस्तकों के माध्यम से किया है। उन्होंने संविधान को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाए जाने की भी वकालत की। रामबहादुर राय ने 'संविधान को मानो' के स्थान पर 'संविधान को जानो' के दृष्टिकोण को अपनाने पर बल दिया है। साथ ही उन्होंने संविधान को देखने में यथार्थवादी नजरिया अपनाने का विचार व्यक्त किया है। अपनी पुस्तकों और लेखों के माध्यम से रामबहादुर राय ने संविधान सभा की मौलिक बहसों को आसान भाषा में और स्पष्ट रूप से आमजन तक पहुँचाने का उपक्रम किया है। आमजन में संवैधानिक चेतना पैदा करके ही संविधान को मजबूत बनाया जा सकता है। संविधान की मजबूती से ही लोकतंत्र की मजबूती सुनिश्चित होती है।

**संकेत शब्द :** संविधान, संविधानवाद, संविधान सभा, विधि दिवस, संविधान दिवस, मदर ऑफ डेमोक्रेसी, अमृत महोत्सव, लोकतांत्रिक मूल्य, रामबहादुर राय

## प्रस्तावना

लोकतांत्रिक गणराज्य में सत्ता का स्रोत जनता होती है अर्थात् लोकतंत्र में संप्रभुता जनता में निहित होती है। लोकतांत्रिक गणराज्य में शासन का आधार संविधान होता है। संविधान क्या है? इस संदर्भ में लोक सभा के पूर्व महासचिव और वरिष्ठ संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप लिखते हैं– "देश का संविधान उसकी राजनीतिक व्यवस्था का वह बुनियादी साँचा-ढाँचा निर्धारित करता है, जिसके अंतर्गत उसकी जनता शासित होती है। यह राज्य की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका जैसे प्रमुख अंगों की स्थापना करता है, उनकी शक्तियों की व्याख्या करता है, उनके दायित्वों का सीमांकन करता है और उनके पारस्परिक तथा जनता के साथ संबंधों का विनियमन करता है" (कश्यप, 2012, पृष्ठ 1)। इस संदर्भ में वे आगे लिखते हैं, "प्रत्येक संविधान उसके संस्थापकों तथा निर्माताओं के आदर्शों, सपनों तथा मूल्यों का दर्पण होता है। वह जनता की विशिष्ट सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रकृति, आस्था एवं आकांक्षाओं पर आधारित होता है" (कश्यप, 2012, पृष्ठ 1)। एक लोकतांत्रिक गणराज्य में शासन और समाज को समन्वयपूर्वक संचालित करने का माध्यम संविधान ही होना चाहिए। भारतीय संसद की वेबसाइट पर संविधान के संदर्भ में उल्लेख है–"संविधान भारत का सर्वोच्च कानून है। यह एक लिखित दस्तावेज है जो सरकार और उसके संगठनों की मौलिक बुनियादी संहिता, संरचना, प्रक्रियाओं, शक्तियों और कर्तव्यों और नागरिकों के अधिकारों और कर्तव्यों का निर्धारण करने वाले ढाँचे को निर्धारित करता है" (संसद, 2024)।

## शोध उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से संवैधानिक चेतना के निर्माण के चरणों को समझने का प्रयास है। साथ ही पत्रकार रामबहादुर राय द्वारा संवैधानिक चेतना के निर्माण एवं संवैधानिक साक्षरता की दिशा में किए प्रयासों को रेखांकित करना है। 'संविधान दिवस' ने संवैधानिक चेतना के निर्माण में किस प्रकार की भूमिका का निर्वहन किया, इसका मूल्यांकन करना है।

## शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोधपत्र के लिए विषय से संबंधित पुस्तकों और लेखों का अध्ययन किया गया है। श्री रामबहादुर राय से साक्षात्कार के माध्यम से जानकारी एकत्र की गई है। साथ ही उनके द्वारा संबंधित विषय पर लिखे गए लेखों और पुस्तकों को आधार बनाया गया है। यह एक गुणात्मक प्रकृति का शोधपत्र है। इसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों से जानकारी एकत्र की गई है।

## परिचय

हिंदी के वरिष्ठ पत्रकार, संपादक, स्तंभकार और जीवनीकार रामबहादुर राय का जन्म सन् 1946 में उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले में हुआ। उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय में अध्ययन के साथ-साथ विभिन्न छात्र आंदोलनों में भी सक्रिय भूमिका निभाई। लोकनायक जयप्रकाश नारायण की प्रेरणा से बांग्लादेश मुक्ति संग्राम में सक्रिय रहे। सन् 1974 के बिहार आंदोलन में संचालन समिति के सदस्य रहे, उसी

[1]शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, ईमेल : adwivedi@hindi.du.ac.in

आंदोलन के दौरान प्रथम मीसाबंदी रहे व आपातकाल में भी बंदी रहे। संवाददाता के रूप में पत्रकारिता में उनका प्रवेश सन् 1979 में हुआ। हिंदुस्थान समाचार, जनसत्ता और नवभारत टाइम्स जैसे समाचार पत्रों में लंबे समय तक कार्य किया। जनसत्ता में समाचार संपादक रहे। 'प्रथम प्रवक्ता' और 'यथावत' जैसी पाक्षिक पत्रिकाओं के भी संपादक रहे। पद्मश्री सम्मान से सम्मानित रामबहादुर राय वर्तमान में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष हैं।

**संवैधानिक चेतना के क्रम**

संवैधानिक चेतना नागरिकों को संविधान के प्रावधानों और मूल्यों को समझने में मदद करती है। यह उन्हें संविधान के प्रति संवेदनशील बनाती है, साथ ही अपने संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक करती है। संवैधानिक चेतना के माध्यम से नागरिकों में स्वतंत्रता, न्याय, समानता जैसे मूल्यों का विकास होता है। यह चेतना लोगों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति संवेदनशीलता प्रदान करती है। संवैधानिक चेतना के निर्माण के चरणों पर विचार करें तो इसे तीन प्रमुख चरणों में समझा जा सकता हैं। प्रथम चरण को संवैधानिक आंदोलन की संज्ञा दी जाती है। इसके दूसरे चरण में संविधान की अवधारणा स्पष्ट होती है व संविधान के निर्माण की प्रक्रिया है और तीसरे चरण में संविधान के लागू होने के बाद की स्थिति है, जिसे संवैधानिक साक्षरता का चरण माना जाता है।

**संवैधानिक आंदोलन**

आरंभिक चरण में संवैधानिक चेतना अँग्रेजों द्वारा बनाए गए शोषण के कानूनों के प्रतिक्रियास्वरूप विकसित होती है। जैसे-जैसे अँग्रेजी हुकूमत के शोषण का पर्दाफाश होता है, वैसे-वैसे संवैधानिक चेतना का विकास समाज में होता है। "भारतीय संविधान की नींव तो सन् 1773 के नियमन कानून में मानी जाती है" (स्वरूप, 2018, पृष्ठ 18)। अँग्रेजों द्वारा जो भी संवैधानिक सुधार भारत में लागू किए गए वे अपनी सत्ता को लंबे समय तक बनाए रखने के उद्देश्य से किए गए। सन् 1857 तक ईस्ट इंडिया कंपनी ब्रिटिश संसद के अधीन काम करती रही। प्रथम स्वाधीनता संग्राम ने परिस्थिति बदल दी, जिससे ब्रिटिश संसद ने सीधे भारतीय शासन को अपने अधीन कर लिया। स्वाधीनता आंदोलन ने समाज में संवैधानिक चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। इसी क्रम में कई महत्त्वपूर्ण आंदोलन हुए जिसमें अँग्रेजी कानूनों का विरोध तेजी से हुआ। अँग्रेजों के भेदभावपूर्ण और विद्वेषपूर्ण कानूनों के विरोध में जनचेतना विकसित होने लगी। चाहे सन् 1861 का कानून हो या सन् 1892 का भेदभावपूर्ण निर्वाचन का कानून, सभी भेदभाव वाले कानूनों का मुखर रूप से विरोध किए जाने की शुरुआत हुई। संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप ने लिखा है–"सन् 1861 का भारत परिषद अधिनियम भारत के संवैधानिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण और युगांतकारी घटना है" (कश्यप, 2012, पृष्ठ 10)।

सन् 1885 में काँग्रेस की स्थापना संवैधानिक आंदोलन का महत्त्वपूर्ण बिंदु है। काँग्रेस की स्थापना के फलस्वरूप संविधान पर व्यवस्थित रूप से चिंतन आरंभ होता है। इस चरण में अँग्रेजी शासन से कुछ रियायत अथवा सुविधाएँ प्राप्त करने की कोशिश में देश ने संविधानवाद की राह पकड़ी। इस संदर्भ में रामबहादुर राय 'यह संविधान हमारा या अँग्रेजों

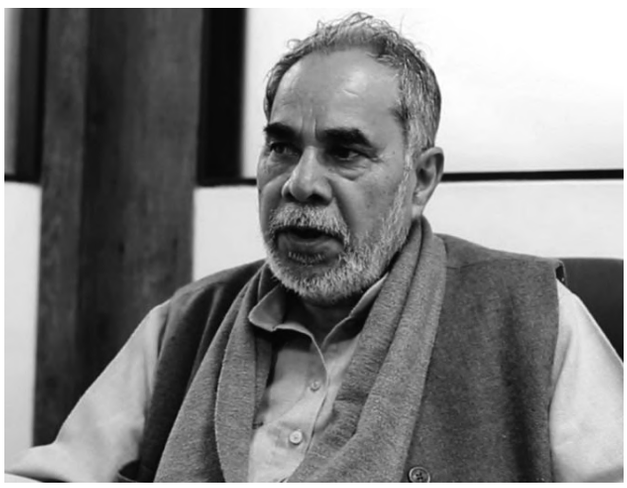

का?' पुस्तक के पुरोकथन में लिखते हैं–"संविधान बनाने की दिशा में पहला प्रयास सन् 1895 में किया गया। बाल गंगाधर तिलक की देखरेख में एक विधेयक बना। उसे 'द कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ इंडिया बिल' कहा गया। माना जाता है कि तिलक और ऐनी बेसेंट ने उसे तैयार किया था, जिसे ऐनी बेसेंट ने 'होमरूल बिल' की संज्ञा दी थी। इसकी भूमिका में कहा गया था कि विधेयक का मकसद ब्रिटिश हुकूमत से भारतवासियों के लिए कुछ नागरिक अधिकार प्राप्त करना है" (स्वरूप, 2018, पृष्ठ 22)। इस प्रकार भारतीय परिषद् अधिनियम 1909 बनाए जाने के बाद इसकी पृष्ठभूमि में कई घटनाएँ घटीं, जिनमें से काँग्रेस द्वारा 'स्वराज की घोषणा' का प्रस्ताव महत्त्वपूर्ण है। स्वाधीनता आंदोलन के बढ़ते प्रभाव को सीमित करने के उद्देश्य से अँग्रेजों ने कई महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव लागू किए। इसी चरण में भारतीय नागरिकों में संविधान की अवधारणा विकसित होती है, जिसने संविधान की माँग और निर्माण को एक मजबूत आधार देने का काम किया। इस संदर्भ में सुभाष कश्यप लिखते हैं–"संविधान सभा की संकल्पना भारत में सदैव राष्ट्रीय आंदोलन के विकास के साथ जुड़ी रही है। ऐसी संविधान सभा का विचार, जिसके द्वारा भारतीय स्वयं अपने देश के लिए संविधान का निर्माण कर सकें, 1919 के एक्ट के विरोध में अंतर्निहित था" (कश्यप, 2012, पृष्ठ 24)। सन् 1922 में, महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन ने स्वाधीनता आंदोलन को नई ऊर्जा प्रदान की। सन् 1925 में एक और महत्त्वपूर्ण घटना घटी जब लार्ड बर्कनहेड ने भारतीयों को संविधान बनाने की चुनौती दे दी। इस घटना के संदर्भ में डॉ. सुदर्शन प्रधान लिखते हैं–"In response to the continuous demand of the national movement, the British government appointed all-white Simon Commission in November 1927 to recommend constitutional changes. The Secretary of State, Lord Borkenhead, challenged the Indians "Let them produce a Constitution which carries behind it a fair measure of general agreement among the great peoples of India" in 1925 and reiterated the challenge again in 1927, moving a bill for the appointment of the Simon Commission." (प्रधान, 2020, पृष्ठ 2).

राष्ट्रीय आंदोलन के प्रभाव को कम करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने सन् 1927 में 'साइमन कमीशन' का गठन किया। इस कमीशन में कोई भी सदस्य भारतीय नहीं था, जिस कारण इसका पुरजोर विरोध हुआ।

इस घटना के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय नेताओं ने भारतीय संविधान की रूपरेखा बनाने का निश्चय किया और सन् 1927 के चेन्नई अधिवेशन में यह प्रस्ताव रखा गया, जिसके फलस्वरूप मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक सर्वदलीय समिति का गठन किया गया और उस समिति ने अपनी रिपोर्ट सन् 1928 में दी जिसे हम 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से जानते हैं। यह संविधान का लक्ष्य और उसकी रूपरेखा निर्धारित करने वाला पहला दस्तावेज था। इसी क्रम में एक और महत्त्वपूर्ण घटना हुई–"दिसंबर 1929 में काँग्रेस ने लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता के लक्ष्य का प्रस्ताव पारित किया। वहीं यह निर्णय भी हुआ कि 26 जनवरी को स्वाधीनता दिवस मनाया जाएगा। इस प्रकार हर साल 26 जनवरी को स्वाधीनता दिवस मनाने का क्रम प्रारंभ हुआ। उसका ही रूपांतरण है–गणतंत्र दिवस" (राय, 2019, पृष्ठ 17)।

**संविधान की अवधारणा एवं संविधान निर्माण**

संवैधानिक चेतना के दूसरे चरण में हम देखते हैं कि नेताओं के भीतर संविधान निर्माण की चेतना और राष्ट्रीयता की चेतना का विकास हो चुका था और अब वे स्वयं द्वारा अथवा भारतीयों के द्वारा संविधान निर्माण की माँग अँग्रेजी शासन से करने लगे। इसी क्रम में सन् 1930 में लाहौर अधिवेशन में काँग्रेस द्वारा 'पूर्ण स्वराज्य' का संकल्प पास किया जाता है। तमाम राजनैतिक घटनाओं के बीच "सन् 1931 का कराची अधिवेशन काँग्रेस संविधानवाद की यात्रा में एक यादगार है। इसलिए कि सरदार पटेल की अध्यक्षता में मौलिक अधिकारों की पुनर्व्याख्या की गई" (स्वरूप, 2018, पृष्ठ 26)। इस अधिवेशन से स्वाधीनता संग्राम के नेताओं में एक नई चेतना का प्रवाह हुआ। अगली कड़ी में सन् 1934 में काँग्रेस अधिवेशन में 'संविधान सभा' के गठन की माँग रखी गई। राष्ट्रीयता के बढ़ते प्रभाव के बीच अँग्रेजी शासन ने अपनी छवि सुधारने के उद्देश्य से 'भारत शासन अधिनियम 1935' तैयार करवाया। इस एक्ट में पहली बार संघीय प्रणाली का उपबंध किया गया। एक्ट के संदर्भ में सुभाष कश्यप लिखते हैं–"भारत के संवैधानिक इतिहास में भारत शासन एक्ट, 1935 का एक बहुत महत्त्वपूर्ण तथा स्थायी स्थान है। इस एक्ट के द्वारा देश को एक लिखित संविधान देने का प्रयास किया गया था। हालाँकि भारत की जनता या उसके प्रतिनिधियों का इस दस्तावेज के निर्माण में कोई हाथ नहीं था और इसमें अनेक गंभीर खामियाँ थी, फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कुल मिलाकर तथा कई दृष्टियों से यह एक प्रगतिशील कदम था। सदियों के बाद, भारतीयों को अपने देश के प्रशासन को चलाने में कुछ जिम्मेदारी सँभालने का अवसर मिला था" (कश्यप, 2012, पृष्ठ 18)। संविधान की इस ऐतिहासिक यात्रा के संदर्भ में रामबहादुर राय कहते हैं–"जिसे हम अपना संविधान कहते हैं, उसे अँग्रेजों ने सन् 1773 से एक निश्चित उद्देश्य को सामने रखकर समय-समय पर जो कानूनी व्यवस्थाएँ बनाईं, उसी का समापन सन् 1935 के भारत शासन अधिनियम में होता है। अँग्रेजों का पहले चरण में लक्ष्य था भारत की आर्थिक व्यवस्था को अपने नियंत्रण में करना। इसे ईस्ट इंडिया कंपनी ने पूरा किया। दूसरे चरण में ब्रिटिश संसद का परोक्ष नियंत्रण हुआ। तीसरे चरण में पूरा नियंत्रण हो गया। उसके बाद जब अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों ने अँग्रेजों जैसा अधिकार माँगना शुरू किया तब से संवैधानिक सुधारों की शुरुआत होती है। वह समय है सन् 1892 । चुनाव की शुरुआत सन् 1909 से होती है। उसी क्रम में सन् 1935 का अधिनियम है" (राय, 2015, पृष्ठ 1)।

इसकी अगली कड़ी में क्रिप्स मिशन, भारत छोड़ो आंदोलन, वेवल योजना, शिमला सम्मेलन जैसे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाक्रम हुए। जिसने संविधान सभा की माँग को मजबूत किया। सन् 1945 में कैबिनेट मिशन के अंतर्गत एक अंतरिम सरकार का गठन करते हुए संविधान सभा की माँग को पूरा किया गया।

"संविधान सभा ने तीन चरणों में काम किया। पहले चरण में वह ब्रिटिश सरकार की शर्तों से बँधी थी। उसके हाथ-पाँव में बेड़ियाँ थीं। यह चरण है–दिसंबर 9 से 2 जून, 1947। दूसरे चरण में भारत विभाजन की घोषणा होती है। वह बहुत उथल-पुथल और मार-काट से भरा है। यह चरण है 3 जून, 1947 से 14 अगस्त, 1947। तीसरा चरण भारत के विभाजन और स्वाधीनता संग्राम की आंशिक सफलता का है। इसका प्रारंभ 15 अगस्त, 1947 को हुआ। परिणामस्वरूप संविधान सभा संप्रभु हो गई। तब से 26 नवंबर, 1949 तक संविधान सभा ने काम किया। संविधान बनाया" (राय, 2019, पृष्ठ 24)।

**संवैधानिक साक्षरता का संकट**

संवैधानिक चेतना के तीसरे चरण में संविधान लागू होने के बाद 'संवैधानिक साक्षरता' का चरण है। आरंभ में ज्यादातर लोगों ने संविधान को एक मिथक के रूप में गढ़ना शुरू किया। उससे संविधान का महिमामंडन प्रारंभ हुआ। संविधान की साक्षरता के संदर्भ में रामबहादुर राय लिखते हैं– "प्रो. देवेंद्र स्वरूप के व्याख्यान में डॉ. सुभाष कश्यप भी उपस्थित रहते थे। उन्होंने अनेक बार इस बात पर अफसोस जताया कि भारत में साक्षरता तो बढ़ी है, लेकिन संविधान का साक्षर खोजना मुश्किल है" (राय, 2023, पृष्ठ 18)। संविधान लागू होने के 25 वर्ष पश्चात ही सन् 1975 में, इंदिरा गांधी द्वारा देश में आपातकाल लगाया गया। जिसे 'लोकतंत्र की हत्या' की संज्ञा दी जाती है। आपातकाल के बाद संविधान के प्रति जागरूकता के प्रयास आरंभ हुए। इस दिशा में कई प्रयास किए गए। उसी दौरान "न्यायाधीशों और अधिवक्ताओं के समूह के द्वारा सन् 1979 में सबसे पहले 26 नवंबर को 'विधि दिवस' के रूप में मनाए जाने की शुरुआत की गई" (राय, 2023, पृष्ठ 21)। आपातकाल ने आम नागरिक के लिए संविधान की साक्षरता की आवश्यकता को रेखांकित किया।

संविधान लागू होने के बाद जनता ने उसे किस रूप में स्वीकार किया और उसे किस रूप में समझने का प्रयास किया यह जानना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। संविधान की साक्षरता किसी भी लोकतांत्रिक गणराज्य के लिए बहुत आवश्यक है। इस संदर्भ में रामबहादुर राय का मानना है– "संविधान को इसलिए जानना जरूरी है, क्योंकि हम जहाँ भी जाते हैं अपने मोहल्ले में, अपने घर में या स्कूल, कॉलेज में या विश्वविद्यालय में या जहाँ भी हैं, उसका संबंध संविधान से है। जिस शासन प्रणाली में हम जी रहे हैं, उसका जो मूल ग्रंथ है वह संविधान है" (राय, 2015, पृष्ठ 1)। आगे और विस्तार से बात रखते हुए वे स्पष्ट करते हैं–"आज संविधान हमारे जीवन को नियंत्रित करता है। जो आज की राजनीतिक व्यवस्था है उसके मूल में संविधान है। संविधान हमारे जीवन में मायने रखता है। क्यों मायने रखता है? क्योंकि भारतीय जन-जीवन के नियम उससे निकलते हैं। उससे संस्थाएँ निकलती हैं। चाहे संसद हो, चाहे न्यायपालिका हो या जो नरेंद्र मोदी की सरकार है और उसी तरह से जो राज्यों में सरकारें हैं, वे इस संविधान

से निकलती हैं। जब संविधान का दायरा इतना बड़ा हो और आजकल परिवार भी संविधान से तय हो रहे हों, तब संविधान का महत्त्व बढ़ जाता है। वह सर्वव्यापी हो जाता है। आप कैसे रहें, यह संविधान से तय हो रहा है। जब संविधान का इतना व्यापक फलक हो, तब मैं कहूँगा कि उस संविधान को जानना जरूरी है" (राय, 2015, पृष्ठ 2)। संविधान निर्माण के दौरान भी जयप्रकाश नारायण और आचार्य नरेंद्र देव जैसे विद्वानों ने भी जनता में संविधान के प्रति जागरूकता की कमी की तरफ इशारा किया था। उनका मानना था–"लोक शिक्षण के अभाव में जनता की संविधान के निर्माण में कोई दिलचस्पी नहीं दिखती है" (राय, 2023, पृष्ठ 402)।

**रामबहादुर राय का योगदान**

नई पीढ़ी को यह मालूम होना चाहिए कि संविधान क्या है? उसका निर्माण किन परिस्थितियों में हुआ? और संविधान का महत्त्व क्या है? यह ऐसे प्रमुख बिंदु हैं, जिन्हें आने वाली पीढ़ी के सामने स्पष्टता से रखना बहुत आवश्यक है। संविधान को देखने के नजरिये पर ध्यान देते हुए रामबहादुर राय लिखते हैं–"संविधान को देखने के तीन नजरिये हैं। वे शुरू से हैं। उनमें कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ है। पहली श्रेणी में वे हैं, जो संविधान को एक धर्मग्रंथ की तरह देखते हैं। इसे इस तरह भी कह सकते हैं कि उनके लिए संविधान किसी धर्मस्थान का गर्भगृह जैसा है, यानी जिसे बदला नहीं जा सकता, जिसकी आराधना की जा सकती है। दूसरे वे हैं जो इस संविधान को पूरी तरह खारिज करते हैं। उन्हें संविधान का अघोर संप्रदाय मान सकते हैं, जो संविधान के नास्तिक हैं। तीसरे में वे सुबुद्ध लोग आते हैं जो संविधान के यथार्थ को समझाने का पुरोहित कर्म अरसे से कर रहे हैं" (स्वरूप, 2018, पृष्ठ 9)।

संविधान के जानने और मानने के अर्थ को स्पष्ट करते हुए रामबहादुर राय लिखते हैं–"जानने और मानने में बड़ा फर्क है। बिना जाने, अगर लोग मानते हैं, तो वहीं मानेंगे, जो उन्हें बताया जाएगा। जानकर, मानने के बाद किसी नागरिक को संविधान के बारे में भ्रमित नहीं किया जा सकता है" (पुरोकथन- राय, 2023, पृष्ठ 22)। आरंभ में संविधान आमजन की भावना से बहुत दूर एक बौद्धिक वर्ग तक सीमित रहा। इन वर्षों में संविधान न सिर्फ वकीलों के पुस्तकालय की शोभा बढ़ाने वाला रहा, बल्कि उन पर वकीलों का कब्जा भी रहा। इस प्रकार वह धीरे-धीरे आमजन की भावना और उसकी चेतना से दूर होता रहा। इस संदर्भ में जवाहरलाल नेहरू ने संसद में कहा था–"हमने यह पाया कि हमने जो शानदार संविधान बनाया था बाद में वकीलों ने उसे अगवा कर कब्जे में ले लिया" (पुरोकथन- राय, 2023, पृष्ठ 17)। संविधान को लेकर आम नागरिकों में एक समझ बना दी गई कि संविधान एक पवित्र वस्तु है। उसे कहीं ऊपर रख दिया जाना चाहिए। संविधान को जाँचा-परखा नहीं जाना चाहिए।

इस दौरान संविधान से जुड़े अनेक विषयों पर लेख लिखे जा रहे थे। विद्वानों ने संविधान को जानने और समझने की दिशा में कई बौद्धिक अभियान चलाए। इस संदर्भ में एक संस्मरण का जिक्र करते हुए रामबहादुर राय 'भारतीय संविधान अनकही कहानी' पुस्तक की भूमिका में लिखते हैं–"छत्तीसगढ़ के अंबिकापुर में बजरंगलाल अग्रवाल भी संविधान को समझने और उसे समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप बदलने का बौद्धिक अभियान चला रहे हैं। उनके निमंत्रण पर वहाँ जाने का दो बार मुझे अवसर मिला। पहली यात्रा में सर्वोदय के ठाकुर दास बंग और अमरनाथ भाई भी थे। वहाँ जो बातचीत हुई, भाषण सुने। उससे एक जानकारी मिली कि पुराने मध्यप्रदेश के सरगुजा जिले के अंतर्गत रामानुजगंज में संविधान पर वर्षों से विमर्श चल रहा है, जिसमें सुभाष कश्यप जैसे संविधान विशेषज्ञ भी सहभागी रहे" (राय, 2023, पृष्ठ 13)। इन बौद्धिक अभियानों में एक प्रमुख नाम रामबहादुर राय का भी है। रामबहादुर राय ने संविधान को जानने के साथ उसके इतिहास और निर्माण की तत्कालीन परिस्थितियों को भी समझने का काम किया। इस संदर्भ में उनका विचार है–"संविधान को जानना आधुनिक भारत में नए 'प्रश्नोपनिषद्' की रचना करने जैसा एक बौद्धिक प्रयास है। जिन्हें भी राज्य-व्यवस्था को 'रामराज्य' की राह पर ले जाने में रुचि है और थोड़ा संकल्प भी है, उन्हें संविधान को नहीं, संविधान के इतिहास को पहले जानना चाहिए" (राय, 2023, पृष्ठ 18)।

रामबहादुर राय ने संविधान को केंद्र में रखकर आधुनिक भारत के इतिहास को पढ़ा और उसे शब्दबद्ध किया। संविधान को जानने और समझने की उत्कंठा रामबहादुर राय को मीसा (मेंटीनेंस ऑफ इंटरनल सिक्योरिटी एक्ट) की गिरफ्तारी के बाद पैदा हुई। 9 अप्रैल, 1974 को गिरफ्तार हुए रामबहादुर राय को सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर 12 नवंबर, 1974 को जेल से छोड़ा गया। तत्कालीन सरकार द्वारा कानून के दुरुपयोग के फलस्वरूप की गई इस गिरफ्तारी को सर्वोच्च न्यायालय ने असंवैधानिक ठहराया। इसके साथ ही मीसा के तहत गिरफ्तार होने वाले वे पहले व्यक्ति रहे। न्यायालय का यह निर्णय ही उनके लिए पहला पाठ बना। गिरफ्तारी से संविधान के प्रति उत्कंठा की जो लौ जली, वह आज भी प्रकाशित है। उस समय शुरू हुआ संविधान के अध्ययन का क्रम आज भी अनवरत जारी है।

रामबहादुर राय ने संविधान की जागरूकता के लिए अनेक लेख लिखे। 29 मार्च, 1987 के 'नवभारत टाइम्स' में छपे एक लेख में वे लिखते हैं–"कुर्सी पर बैठने के पहले राष्ट्रपति को शपथ लेनी पड़ती है (अनुच्छेद 60) कि मैं संविधान और कानून को कायम रखूँगा, उसे बचाऊँगा और उसकी रक्षा करूँगा। ऐसी शपथ मंत्रियों को या प्रधानमंत्री को नहीं लेनी पड़ती। उनका काम सिर्फ संविधान के प्रति निष्ठा और वफादारी व्यक्त करके चल जाता है" (राय, 1987, मार्च 29)। इसी लेख में आगे वह संविधान के बुनियादी ढाँचे पर विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं–"केशवानंद भारती के मुकदमे में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के अनुसार संविधान के बुनियादी ढाँचे को कोई संसद नहीं बदल सकती। अतः भारत की जनता द्वारा चुना गया सदन भी भारत के संविधान का पूरा कचूमर नहीं निकाल सकता" (राय, 1987, मार्च 29)।

संविधान जानने और समझने के क्रम में रामबहादुर राय ने सन् 2000 में प्रज्ञा संस्थान की स्थापना की। संविधान को पढ़ने पर स्वीकार और नकार के दो भाव थे। उस भाव से अलग रामबहादुर राय ने तीसरी दृष्टि का संधान किया। वे लिखते हैं–"संविधान को दो पद्धतियों से ही देखने के प्रयास होते रहे हैं, एक पद्धति नकारने की है तो दूसरी है संविधान जैसा है, वैसा मानने की। क्या कोई तीसरा तरीका भी हो सकता है? क्यों नहीं? अवश्य हो सकता है। मैंने तीसरा ढंग अपनाया। संविधान की माया ने स्वाधीनता संग्राम के इतिहास को किस-किस तरह लुभाया? 'माया महाठगिनी हम जानी' की तर्ज पर संविधानवाद को स्वाधीनता संग्राम के इतिहास के दर्पण में जाँचने-समझने का प्रयास आरंभ किया। जो समझा वह लिखा" (राय, 2023, पृष्ठ 19)। संविधान की साक्षरता की दृष्टि से

वे संविधान को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाए जाने का समर्थन करते हैं। वे अपने एक लेख में लिखते हैं– "संविधान को पाठ्यक्रम का हिस्सा क्यों बनाया जाना चाहिए? यह सवाल अब अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है। इसलिए संविधान का शिक्षण आवश्यक है, क्योंकि संविधान ही है जिससे शासन चलता है और समाज का जीवन उससे संचालित होता है। संविधान वह संहिता है जो अपने देश और समाज को चलाने के लिए रची गई है। संविधान की शिक्षा से बहुत बड़ा अज्ञान दूर हो सकेगा" (राय, 2015, दिसंबर 1-15)। संवैधानिक चेतना की दृष्टि से संविधान को समझने के क्रम में वे कहते हैं– "संविधान के निर्माण और उसके गुणों के बारे में अधिकतर जानकारी मिथक और महिमामंडन के रूप में उपलब्ध है। संविधान के सच को जानने के लिए हमें इस संविधान को मिथक और महिमामंडन से इतर समझना होगा" (राय, 2015, पृष्ठ 3)। संविधान का सच अगर जान लें तो उसका यथार्थ समझना आसान हो जाता है। इस आधार को समझने में रामबहादुर राय की पुस्तक 'भारतीय संविधान अनकही कहानी' महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जो संविधान की मौलिक बहसों पर आधारित है। इस पुस्तक के माध्यम से लेखक ने राष्ट्रीय संवैधानिक चेतना के विकास के निर्माण में अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वहन किया है। संविधान निर्माण की तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन करती यह पुस्तक संविधान का निर्माण किस प्रकार से व किन परिस्थितियों में हुआ, इसका बखूबी विश्लेषण करती है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के संविधान संबंधी भाषणों पर केंद्रित पुस्तक 'नए भारत का सामवेद' आई है। इस पुस्तक का पुरोकथन रामबहादुर राय ने लिखा है। इसके साथ ही इस पुस्तक के औचित्य और प्रासंगिकता पर भी गंभीर विचार व्यक्त किया है। इसके पुरोकथन में वे लिखते हैं– "संविधान वनवास में था। इसका स्पष्टीकरण यहाँ जरूरी है, नहीं तो अनर्थ का खतरा है। संविधान के वनवास से अभिप्राय है कि वह भारत के जन-जीवन के केंद्र में स्थापित नहीं हो पाया था" (पुरोकथन- राय, 2023, पृष्ठ 5)। इस वनवास के कारण ही संविधान एक नागरिक के लिए अमूर्त हो गया, निराकार हो गया। रामबहादुर राय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को एक मननशील प्रधानमंत्री की संज्ञा देते हैं। नरेंद्र मोदी मननशील प्रधानमंत्री हैं। ऐसा सिर्फ इसलिए कि उन्होंने संविधान के प्रति साक्षरता का एक आंदोलन खड़ा किया। उन्होंने संविधान को मानने से पहले संविधान को जानने पर बल दिया है। प्रधानमंत्री ने न सिर्फ संविधान को सरकार का 'धर्मग्रंथ' घोषित किया, बल्कि संविधान के प्रति जागरूकता और चेतना के विकास के लिए 26 नवंबर को 'संविधान दिवस' के रूप में मनाने की घोषणा भी की। देश संविधान दिवस का साक्षी बना और संविधान दिवस में संविधान को जानने का एक बौद्धिक विमर्श शुरू हुआ। रामबहादुर राय प्रधानमंत्री द्वारा संविधान दिवस की घोषणा की सराहना करते हुए कहते हैं–"संविधान दिवस से एक और बड़ी बात हुई है। वह है, लोकतंत्र की कुलीन तंत्र के बंधन से मुक्ति। यह है, सामाजिक तंत्र के लिए बंद दरवाजे को खोलने का साहस। इससे स्वतंत्रता को नया अर्थ मिला है। संविधान शंकर की जटा में बंद हो गया था। वह संविधान दिवस से जन-जीवन में एक पवित्र प्रवाह बनकर उतरा है। इस रूप में नरेंद्र मोदी पहले प्रधानमंत्री हैं, जिन्होंने संविधान की सुध इस तरह ली कि उसे देश का राष्ट्रीय पर्व बना दिया" (पुरोकथन- राय, 2023, पृष्ठ 14)। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सकारात्मक पहल का परिणाम है कि जो सत्तर साल से 'भारत का संविधान' था, वह 'भारतीय संविधान' समझा जाने लगा।

हाल ही में संपन्न हुए लोकसभा के चुनाव में संविधान एक प्रमुख मुद्दा बनकर उभरा। विपक्षी दलों ने सरकार पर संविधान को बदलने का आरोप लगाते हुए 'संविधान बचाओ' का नारा दिया, जबकि इसके उलट सरकार ने मौजूदा दौर में संविधान की चेतना को सशक्त करने का काम किया है। 'संविधान दिवस' इसका एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। वर्तमान में व्यक्तिगत स्तर पर संवैधानिक जागरूकता के अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। ग्रामीण, आदिवासी, दलित आदि क्षेत्रों में भी इस प्रकार के प्रयास हो रहे हैं। 28 मई 2024 को द टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित एक लेख में इसका उदाहरण देखा जा सकता है। जहाँ लेखक लिखते हैं–"Santosh, a Bhil activist, the first from his family to attend school and now in possession of a master's degree in social work, runs constitutional awareness workshops in tribal northern Maharashtra. Using stories and songs in local languages, he explains to a crowd of barely-literate villagers, gathered after a long day's work: The road to your village, govt welfare schemes, forest rights, the court, all come from this deshachi pustak (country's book). Dhanaji, a lower-caste activist from Kolhapur, Maharashtra, says: Dams and electricity, which created rural prosperity, tie back to state planning, and, eventually, the Constitution. So do primary health centres in villages and reservations for women. Dadabhai, a Dalit school teacher in Nandurbar, Maharashtra, adds: Many historically subordinated groups, especially women, Dalits, and Adivasis are now thinking, what's my problem, and how can it be addressed using the Constitution?" (Piliavsky & Other, 2024, May 28, Page 14).

## निष्कर्ष

संविधान हमें शक्ति देता है, प्रेरणा देता है और हमें जोड़ता है। भारत का नागरिक संविधान के केंद्र में है। वह सत्ता का स्रोत है। संविधान को जानना हमेशा ही महत्त्वपूर्ण रहा है, क्योंकि उससे भारत देश की एक नई यात्रा शुरू होती है। संविधान को जानने से यह भी संभव है कि अपनी पहचान पर देश पुनः लौट आए। जानने और मानने का अंतःसंबंध काव्यात्मक है। पहले जानो और फिर मानो, नहीं तो अनेक भूलें हो सकती हैं। संविधान को जानने का यह अभियान रामबहादुर राय की सकारात्मक सोच का परिचायक है, जो भारत के नागरिकों को मशाल दिखाकर संविधान के प्रति जागरूकता उत्पन्न कर रहे हैं। विभिन्न लेख व पुस्तकें रामबहादुर राय के 'संवैधानिक चेतना' के विकास में योगदान को विशिष्ट स्थान दिलाते हैं। 'संवैधानिक चेतना' विकसित भारत के संकल्प को पूरा करने में एक प्रमुख भूमिका का निर्वहन करेगी। आवश्यक है कि अमृत काल में हम अपने संविधान निर्माण की प्रक्रियाओं व उसकी परिस्थितियों को समझें। भारत की पहचान को 'मदर ऑफ डेमोक्रेसी' के तौर पर पुनर्स्थापित करें। संविधान की बहसों को समझे बिना यह कार्य पूरा नहीं हो सकता है। इसके बिना न तो संविधान को जन-जन तक पहुँचाया जा सकता है और न ही आत्मसात् किया जा सकता

है। संवैधानिक चेतना के विकास के फलस्वरूप संविधान के प्रति निष्ठा पैदा होगी, जो हमारे लोकतंत्र को मजबूती प्रदान करेगी। इससे संविधान मजबूत होगा और देश का भविष्य उज्ज्वल होगा।

**संदर्भ**

कश्यप, एस. (2012). हमारा संविधान, दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास.

द टाइम्स ऑफ इंडिया, दिल्ली संस्करण, संविधान : सीता ऑफ द इलेक्शन एपिक, अनास्तासिया पिलियावस्की एवं विक्रमादित्य ठाकुर, 28 मई, 2024.

नवभारत टाइम्स, दिल्ली संस्करण, राष्ट्रपति संविधान की रक्षा करे या प्रधानमंत्री की सलाह माने?, रामबहादुर राय एवं राजेंद्र माथुर, 29 मार्च, 1987.

प्रधान, एस. (2020). मेकिंग ऑफ द इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन, ओडिसा रिव्यु, जनवरी 2020.

राय, आर.बी. (2015). संविधान को जानो, 13वाँ वार्षिक सत्यवती स्मृति व्याख्यान, दिल्ली : सत्यवती कॉलेज (सांध्य).

राय, आर.बी. (2015). संविधान दिवस सार्थक कैसे बने?, यथावत, 1-15 दिसंबर.

राय, आर.बी. (2019). हमारा संविधान एक पुनरावलोकन, दिल्ली : प्रभात प्रकाशन.

राय, आर.बी. (2023). पुरोकथन– नए भारत का सामवेद, दिल्ली : प्रभात प्रकाशन.

राय, आर.बी. (2023). भारतीय संविधान अनकही कहानी, दिल्ली : प्रभात प्रकाशन.

स्वरूप, डी. (2018). यह संविधान हमारा या अँग्रेजों का?, दिल्ली : प्रभात प्रकाशन.

संसद. (2024). भारत का संविधान. https://sansad.in/ls/hi/about/introduction से पुन:प्राप्त.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 54-57, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# गोत्र परंपरा : एक सामुदायिक संवादसेतु

**डॉ. जयप्रकाश सिंह[1], हरीश चंद्र[2] और डॉ. रविंद्र सिंह[3]**

**सारांश**

सनातन दृष्टि और सनातन भाव भारत की प्रमुख पहचान रहे हैं। भारत में यह सनातन दृष्टि केवल दार्शनिक स्तर पर ही उपस्थित नहीं है, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनाओं में भी इसकी अभिव्यक्ति हुई है। भारतीय समाज में ऐसी परंपराओं का विकास हुआ, जो भारतीयों की सनातन दृष्टि और भाव को पुष्ट करती रही हैं। गोत्र परंपरा एक ऐसी ही सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना है। गोत्र परंपरा व्यक्तियों को अपनी वंश-परंपरा अथवा ज्ञान-परंपरा से ही नहीं जोड़ती, अंततः यह व्यक्ति को उसके समाज और भूमि से संबद्ध करती है। इसके साथ ही यह एक समुदाय के साथ दूसरे समुदाय के अंतरसंबंधों को भी परिभाषित करती रही है। इसके कारण, यह परंपरा एकत्व बोध और समरसता की भावना तो पैदा करती ही है, निश्चित ज्ञान-परंपरा के प्रति उत्तरदायित्व बोध पैदा कर ज्ञान को परिष्कृत और संवर्द्धित भी करती रही है। भारतीय संदर्भों में गोत्र परंपरा की लगभग सभी समुदायों में उपस्थिति रही है। इस सार्वत्रिक उपस्थिति के कारण गोत्र परंपरा समुदायों के बीच संवादसेतु का कार्य करती रही है। नवीन परिस्थितियों में भी गोत्र-परंपरा सामुदायिक-संवादसेतु बनने की क्षमता बनी हुई है। आवश्यकता इसके वास्तविक स्वरूप और विशेषताओं को पहचान कर उसको सार्वजनिक विमर्श में स्थापित करना है। एक ऐसे समय में जब जाति को भारतीय पहचान का एकमात्र उपकरण मानकर भारतीय सामाजिक-संरचना के बारे में भ्रामक निष्कर्ष स्थापित किए जा रहे हैं, यह आवश्यक हो जाता है कि गोत्र परंपरा की सामुदायिक संवादसेतु में भूमिका का मूल्यांकन किया जाए। प्रस्तुत शोध आलेख गोत्र परंपरा के सामुदायिक संवाद करने के सामर्थ्य के मूल्यांकन का प्रयास है।

**संकेत शब्द :** गोत्र-परंपरा, सामुदायिक संवादसेतु, सामाजिक-संरचना, एकत्व बोध, ज्ञान-परंपरा

## प्रस्तावना

सनातन भारतीय संस्कृति की पहचान के जो मूलभूत तत्त्व हैं, उनमें गोत्र प्रमुख है। 'जिस प्रकार चार वेद, चार पुराण और चार वर्ण हमारी संस्कृति के समुन्नायक हैं, उसी प्रकार अति प्राचीन काल से चतुर्वर्णों के गोत्र भी संस्कृति के आधारभूत हैं। इस गोत्र के प्रवर्तक ऋषि, महर्षि ब्रह्मर्षि और राजर्षि अर्थात् आर्ष परंपरा प्राप्त-संप्रदाय सह कृत समारंभ है। 'गोत्र' शब्द के अनेक अर्थ हैं :

सन्तति गौत्रणजनकुलान्यमिजनान्वगौ।
वंशोऽन्ववायः सन्तानो वर्णाः स्युर्बाह्मणादयः।।

अमर कोश, 2-791

अर्थात् संतति, जनन, कुल, अभिजन, अन्वय, वंश, अन्नवाय संतान और नाग पर्वत इत्यादि विविध अर्थों में गोत्र शब्द का प्रयोग होता है। गो पृथ्वी घरों त्रायते रक्षति इति गोत्रम्—यह गोत्र शब्द की व्युत्पत्ति है। अर्थात् जो अनेक अर्थों में व्याप्त होकर संपूर्ण 'गो' पृथ्वी ज्ञान अनुवंश आदि का भाण रक्षया करता है, वह गोत्र कहा जाता है (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-16)। इस प्रकार भारतीय संस्कृति में गोत्र की विशेष महानता रही है। गोत्र प्रणाली भारतीय समाज की एक ऐसी व्यवस्था है, जिसके अंतर्गत प्रत्येक वंश अथवा कुल स्वयं का संबंध किसी ऋषि विशेष अथवा ज्ञान-परंपरा से स्थापित करता है। यह अवधारणा प्राचीनतम तत्त्व से जुड़े रहने की अभिलाषा की प्रतीक है (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-13)।

समाज को व्यवस्थित आकार देने में गोत्र परंपरा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। समूचे विश्व ने अब तक भारत की गोत्र परंपरा के समतुल्य किसी व्यवस्था की रचना नहीं की है। सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से यह एक अद्वितीय संस्था है। 'यह एक इतिहास का विषय है, हमारी संस्कृति का विषय है मूल पुरुष से भावात्मक संबंध दृढ़ करने का सुंदर आधार है। इसमें पूरी शक्ति लगाकर यह प्रयत्न किया गया है कि प्रवर्तक ऋषि का जहाँ से भी प्राप्त हो इतिवृत्त प्राप्त कर इसमें दिया गया है। हम सहस्राब्दियों अथवा शताब्दियों से चले आ रहे अपने वंश के किसी विशिष्ट पुरुष को जानें अथवा न जानें, इसके इतिहास के अभाव में, किंतु मूल पुरुष को तो सुनिश्चित रूप से अधिक भी न हो तो नामादि का परिचय प्राप्त कर ही लेंगे। विश्व में यह व्यवस्था अन्यत्र कहीं नहीं है। भारत ने न केवल गोत्र, अपितु प्रवरों की भी व्यवस्था की थी। दोनों का सम्मिलित ज्ञान हमें भटकने से रोकने में पर्याप्त था (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-22)।

## शोध-प्रविधि

गोत्र परंपरा के संबंध में उपलब्ध अधिकांश सामग्री उसके शास्त्रीय स्वरूप को बताने का प्रयास करती है। यह परंपरा भारतीय पहचान, सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना तथा सामुदायिक-संवाद एवं अंतर्संबंधों को किस तरह से प्रभावित करती रही है, इसके बारे में अध्ययन नगण्य ही हैं। प्रस्तुत शोध-आलेख में गोत्र परंपरा के सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव और विशेषकर उसके सामुदायिक संवाद सामर्थ्य के आकलन का प्रयास किया गया है और इसके लिए बिखरी सामग्री और बेतरतीब तथ्यों को एक निश्चित परिप्रेक्ष्य में संयोजित करना आवश्यक था, इसीलिए विषयगत विश्लेषण शोध प्रविधि का उपयोग किया गया है।

## शोध-उद्देश्य

- भारतीय सामाजिक पहचान को वृहत्तर परिप्रेक्ष्य में परिभाषित करना।
- गोत्र परंपरा के संकल्पनात्मक स्वरूप की पहचान करना।

[1]सहायक आचार्य, कश्मीर अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : jpsh.pol@gmail.com
[2]शोधार्थी, जनजातीय अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : harishchander387@gmail.com
[3]रिसोर्स पर्सन, जनजातीय अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, ईमेल : drrsbhadwal@gmail.com

- गोत्र परंपरा के सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव का रेखांकन करना।
- गोत्र परंपरा में निहित सामुदायिक संवाद के सामर्थ्य की पहचान करना।

**गोत्र : विविध अर्थ**

मेधातिथि ने गोत्र शब्द के सामान्य रूप से प्रचलित अर्थ की सुंदर व्याख्या की है। उनके अनुसार गोत्र शास्त्रीय और लौकिक दो प्रकार के होते हैं। शास्त्रीय गोत्र स्मरण परंपरा के रूप में अनादिकाल से चले आ रहे हैं और लौकिक गोत्र वे हैं जो पाणिनि के अनुसार वंश को सूचित करते हैं (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-25)। इसी में इस व्यवस्था की प्रासंगिकता एवं सार्थकता दृष्टिगत होती है।

गोत्र परंपरा के माध्यम से प्रत्येक समुदाय अपने पूर्वजों की धरोहर से जुड़े रहते हैं। यह व्यक्ति अथवा समुदाय की पहचान का एक महत्त्वपूर्ण अंग रहा है। गोत्र परंपरा समाज के विभिन्न व्यक्तियों अथवा समुदायों को उनके पूर्वजों के साथ जोड़ती है। एक समुदाय के परिवारों के आपसी संबंधों को जोड़कर यह सामुदायिक एवं सांस्कृतिक एकता को बल प्रदान करती है। गोत्र का महत्त्व समाज में विवाह-संबंधों के निर्धारण में भी रहा है। लौकिक दृष्टि से यह उस समय की देन है, जब मानव समुदाय अनेक भागों में विभक्त होने लगा था और उसे अपने पूर्वजों और संबंधियों का ज्ञान करने के लिए संकेत की आवश्यकता प्रतीत होने लगी थी। क्रमशः जैसे-जैसे मानव-समाज अनेक भागों में विभक्त होता गया, वैसे-वैसे इस नाम के प्रति मनुष्यों का मोह भी बढ़ता गया। विवाह संबंध और सामाजिक रीति-रिवाजों में इसका विचार किया ही जाने लगा, धार्मिक क्षेत्रों में भी इसने स्थान प्राप्त कर लिया। इसे किसी-न-किसी रूप में सभी भारतीय परंपराओं ने स्वीकार कर लिया है (शास्त्री, 1989, पृष्ठ-101)। इस प्रकार से भारत में गोत्र-परंपरा भारतीय समाज में एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक पहचान बन गई है।

भारतीय संस्कृति के प्राचीन साहित्य और लोक परंपरा में गोत्र की व्याख्या में विभिन्न संदर्भ मिलते हैं। डॉ. ब्रजमोहन जावलिया ने प्रत्येक समुदाय में लोक साहित्य और गोत्र परंपरा का वर्णन करते हुए लिखा है कि संस्कृत साहित्य के आधुनिक कोशों में गोत्र उसे ही कहा है जो पूर्व पुरुषों को घोषित करता है। गोत्र शब्द की यह व्युत्पत्ति संभवतः इसके प्रयोग को देखकर कल्पित की गई है। वैदिक साहित्य में गोत्र का यह प्रधान अर्थ नहीं था। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं में गोत्र शब्द का अर्थ गायों का बाड़ा दिया गया। इसके अतिरिक्त बादल, बादल में निवासित दैत्य, बादलों को छिपाने वाले पर्वतों की चोटियां भी अर्थ दिए गए हैं। ऋग्वेद में कतिपय स्थलों में गोत्र का प्रयोग समूह के अर्थ में हुआ है। अमर कोश में गोत्र शब्द का अर्थ ऋग्वेद के अनुसार जहाँ पर्वत दिया गया है—वहीं वंश और उसका नाम भी दिए गए हैं। इसी से धीरे-धीरे गोत्र शब्द मनुष्यों के समूह के अर्थ में भी प्रयुक्त होने लगा। आधुनिक काल में यह शब्द एक सामान्य पूर्वज के वंश के लिये प्रयोग किया जाता है। वाचस्पत्य कोश में गोत्र शब्द के पर्वत, नाम, ज्ञान, जंगल, खेत, छत्र, संघ, घन, मार्ग, वृद्धि और मुनियों के वंश अर्थ दिए गए हैं (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-25)। छांदोग्य उपनिषद् में गोत्र से अभिप्राय सत्यकाम के कुल या पिता के नाम से था। महाभारत में भी ययाति द्वारा पूछे गए कन्याओं के गोत्र के अर्थ में वे अपने पिता का नाम बताती हैं। पालि साहित्य में भी गोत्र शब्द का प्रयोग 'कुल' के अर्थ में हुआ है (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-25)। इस प्रकार गोत्र शब्द का उपयोग लिखित साहित्य और लोक साहित्य में अति प्राचीन काल से होता आ रहा है। हालाँकि इसकी व्याख्या में अलग-अलग समय में अलग-अलग शब्द उपयोग किए जाते रहे हैं। इसके बावजूद मूल भाव सदैव एक-सा ही प्रतीत होता है।

गोत्र परंपरा जितनी प्राचीन है, इसकी उत्पत्ति से संबंधित व्याख्या में उतनी ही विषमता देखने को मिलती है। इसकी (गोत्र) व्युत्पत्ति कई प्रकार से बताई गई है। पूर्व पुरुषों का यह उद्घोष करता है, इसलिए गोत्र कहलाता है। इसके पर्याय जैसा कि पूर्व में अंकित हैं संतति, कुल, जनन, अभिजन, अन्वय, वंश, संतान आदि। कुछ विद्वानों के अनुसार 'गोत्र' शब्द का अर्थ गोष्ठ है। आदिम काल में जितने कुटुंबों की गायें एक गोष्ठ में रहती थीं, उनका एक गोत्र होता था। परंतु इसका संबंध प्रायः वंश परंपरा से ही है। वास्तविक अथवा कल्पित आदिपुरुष से वंश परंपरा प्रारंभ होती है (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-33)। और फिर पीढ़ी-दर-पीढ़ी उस वंश के सदस्य स्वयं को उसी गोत्र से जोड़ते गए।

**गोत्र प्रवर्तक ऋषि**

भारतीय समाज में प्रचलित गोत्र परंपरा का संबंध बहुत से ऋषि-मुनियों के साथ जुड़ा रहा है। प्रारंभ में सप्तर्षियों का उल्लेख गोत्र कारक ऋषियों के रूप में मिलता है :

विश्वमित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः।
अत्रिर्वसिष्ठः कश्यप इत्येते गोत्रः कारकाः।।

**याज्ञवल्क्य स्मृति**

कहीं-कहीं आठ ऋषियों का उल्लेख गोत्रकर्ता ऋषियों के रूप में मिलता है—प्रारंभ में ऐसे आठ ऋषि हुए हैं, जो गोत्रकर्त्ता माने जाते हैं। वे आठ ऋषि हैं - जमदग्नि, भारद्वाज, विश्वामित्र, अत्रि, गौतम, वशिष्ठ, कश्यप और अगस्त्य (शास्त्री, 1989, पृष्ठ-102-103)। 'जमदग्नि आदि आठ ऋषियों के समकाल में भृगु और अंगिरा ये दो ऋषि और हुए हैं। ये भी मंत्रद्रष्टा थे, पर इनके नाम पर गोत्र का प्रचलन नहीं हो सका। ये गोत्रकर्त्ता क्यों नहीं बन पाए, इसका कारण जो कुछ भी रहा हो, इतना स्पष्ट है कि उस समय अपने-अपने नाम पर गोत्रप्रथा चलाने के प्रश्न को लेकर इनमें आपस में मतभेद था (शास्त्री, 1989, पृष्ठ-103)। गोत्र का स्वरूप अनेक कारणों से बहुत जटिल है।... न तो गोत्र का अर्थ निश्चित है और न गोत्रों की संख्या नियत है। महाभारत में चार ही मूल गोत्र माने गए हैं। बोधायन ने आठ गोत्र माने हैं। अतः वह इस विषय को अत्यंत कठिन बताता है। प्रो. हरिदत्त वेदालंकार एम.ए. स्व लिखित पुस्तक 'हिंदू विवाह का संक्षिप्त इतिहास' में लिखते हैं कि बौधायन के मत से विश्वामित्र, जमदग्नि, भारद्वाज, गौतम, अत्रि, वशिष्ठ, कश्यप तथा अगस्त्य मुनि की जो संतान हैं, वे गोत्र हैं (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-24)। जिनकी पौरोहित्य परंपरा छिन्न हो गई है और जिनके गोत्र का पता नहीं लगता उनकी गणना कश्यप गोत्र में की जाती है, क्योंकि कश्यप सब के पूर्वज माने जाते हैं (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-33)। इस प्रकार परंपरा को समझना अत्यंत जटिल कार्य रहा है। गोत्र परंपरा के मूल में रहे ऋषियों ने अपनी गहन साधना और तपस्या के बल पर जो ज्ञान अर्जित किया, वह सदैव से समाज का मार्गदर्शन करता आया है।

**गोत्र-परंपरा और धार्मिक परिदृश्य**

अति प्राचीन काल से ही भारत में गोत्र परंपरा धार्मिक जीवन का

एक अनिवार्य अंग रही है। प्राचीन संस्कृति के धनी देशों में प्राचीनतम वंशावली के अभिलेखों के संधारण की यह प्रक्रिया स्वाभाविक ही है। इसीलिए गत शताब्दियों में अनेक ऐसे ग्रंथ लिखे गए, जिनमें ब्राह्मणों की उत्पत्ति का इतिहास वर्णित है, गोत्र-प्रवर्तक ऋषियों का, उनके वंशजों का विवरण है। इनके आधार पर प्रत्येक ब्राह्मण बालक यज्ञोपवीत संस्कार के समय अपने 'गोत्र' और 'प्रवर' का ज्ञान प्राप्त कर जीवन भर प्रतिदिन 'संध्यावंदन' या अन्य किसी भी धर्म कार्य के समय उनका उच्चारण करता है। क्षत्रियों, वैश्यों आदि में भी पूर्वजों के स्मरण की, गोत्रों के उच्चारण की अनिवार्यता है प्रत्येक धार्मिक विधान में। इसलिए गत कालखंड में अपने पूर्वजों की वंशावली या गोत्रों के अभिलेख का विवरण देने वाले ग्रंथ क्षत्रियों और वैश्यों के समाज ने भी प्रकाशित किए हैं (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-14)। शूद्र वर्ण में भी गोत्र प्रणाली का उल्लेख विभिन्न अनुष्ठानों और धार्मिक रीति-रिवाजों में देखने को मिलता है। इससे भारतीय समाज में गोत्र परंपरा की महानता और व्यापकता को सहज ढंग से समझा जा सकता है।

गोत्र परंपरा ने प्रत्येक समुदाय अथवा वंश के सदस्यों को एक संगठित ढाँचे में बाँधने का कार्य किया है। 'भारत की प्राचीन संस्कृति में वर्ण व्यवस्था के विकास के साथ ही गोत्र का प्रचलन हुआ है। वह आदि पुरुष, जिसके नाम से वंशजों की पहचान होती है, उसी के नाम से गोत्र प्रचलित हुए हैं। चौधरी खुर्शीद भाटी के अनुसार 'गोत्र का अर्थ है वंश परंपरा में जो हमारा कुल पुरुष या वंश पुरुष है, उसके नाम के साथ जुड़ाव।' गोत्र निर्माता अपने पूर्वजों के नाम से गोत्र का निर्माण करते गए जैसे विश्वामित्र ने अपने दादा कौशिक के नाम पर कौशिक गोत्र प्रारंभ किया (मोरछले, 2019, पृष्ठ-14-16)। ऐसी ही व्यवस्था अन्य वंशों में भी देखने को मिलती है।

### सांस्कृतिक पहचान का आधार होता है गोत्र

गोत्र परंपरा ने भारत की परिवार व्यवस्था को भी एक सुदृढ़ आधार प्रदान किया है। गोत्र ने परिवारों में पीढ़ियों से परिष्कृत आदर्शों एवं जीवन मूल्यों का विकास किया है। 'प्रत्येक गोत्र का कोई-न-कोई नाम अवश्य होता है, जिसके द्वारा उसके सदस्य एक-दूसरे को पहचानते हैं एवं परिचय देते हैं। यह नाम किसी ऋषि, पशु, पक्षी, देवता या निर्जीव वस्तु से भी संबंधित हो सकता है (महतो, 2014, पृष्ठ-42-53)। देश और काल की पर्याप्त दूरी के पश्चात् भी सगोत्र के मिलते ही ये दूरियाँ ध्वस्त हो जाती हैं तथा एक सगे भाई के जैसे स्नेहिल अथवा आदर पूर्व भाव हृदय में उमड़ पड़ते हैं। गोत्र एवं प्रवर की यह सुदृढ़ सीमा सगोत्र विवाह जैसे महादोष से रोकने में समर्थ रही है (तिवाड़ी, 2017, पृष्ठ-22)। इस तरह से गोत्र की दो अलग संदर्भों में महत्ता हमारे ध्यान में आती है। एक ही वंश के सदस्य होने के कारण संबंधित गोत्र के सभी लोगों में अपनत्व और एकता का भाव सुदृढ़ होता है। दूसरा, गोत्र का ज्ञान होने से विवाह निर्धारण के समय सगोत्रीय विवाह को निषेध कर एक ही गोत्र में विवाह से होने वाले दोषों से बचा जा सकता है।

### सामाजिक एवं सामुदायिक सुरक्षा

गोत्र समाज की एक शक्तिशाली संस्था रही है। यह संस्था सामाजिक संरचना का ऐसा अंग है, जिसके माध्यम से व्यक्तियों की पहचान और उनके पूर्वजों से जुड़ाव का निर्धारण होता रहा है। इससे सामुदायिक अनुशासन की भावना भी बलवती हुई है। 'गोत्र एक महत्त्वपूर्ण शक्तिशाली संगठन है। वह अपने सदस्यों को सूत्र में पिरोता है, उनकी सहायता और सुरक्षा करता है, उन पर नियंत्रण और शासन करता है। गोत्र भाईचारे और रक्त संबंध की भावना के आधार पर बहिर्विवाह के नियमों का भी पालन करवाता है। यह अपने सदस्यों के लिए विधिक, धार्मिक, सांस्कारिक और आर्थिक कार्य संपन्न करता है। इस प्रकार गोत्र सामाजिक और सामुदायिक जीवन में शक्ति प्रवाहित करने वाला स्रोत है (महतो, 2014, पृष्ठ-42-53)। एक गोत्र के भीतर जो परिवार आते हैं, उनमें आपसी संबंधों और सहयोग की भावना मजबूत होती है। ऐसे में जब कभी कोई सामाजिक अथवा सामुदायिक संकट पैदा होता है, तो गोत्र के सदस्य अन्य सदस्यों के साथ अपनत्व का भाव महसूस करते हुए एक-दूसरे के समर्थन और सहयोग के लिए आगे आते हैं। इस प्रकार यह गोत्र नाम की संस्था अपने अधीन आने वाले सभी परिवारों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक हितों की सुरक्षा सुनिश्चित करती है।

### सार्वत्रिक उपस्थिति

गोत्र परंपरा की उपस्थिति प्रायः उन सभी समुदायों में है, जिनमें वर्ण और जाति परंपरा की उपस्थिति देखने को मिलती है। वस्तुतः वर्ण, जाति और गोत्र मिलकर भारतीय सामाजिक पहचान के वृहत्तर परिप्रेक्ष्य का निर्माण करते रहे हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि गोत्र की पहचान निर्धारण में भूमिका और महत्त्व को औपनिवेशिक काल में एकदम से नकार दिया गया। इसके कारण भारतीय समाज को एकसूत्र में बाँधने वाली संकल्पना और परंपरा विस्मृत होने लगी और विखंडन की प्रवृत्ति अधिक प्रभावी दिखाई देने लगी। यह एक स्थापित तथ्य है कि केवल जाति ही हिंदू होने के लिए पर्याप्त नहीं है (मल्होत्रा एवं विश्वनाथन, 2023, पृष्ठ-47), लेकिन आजकल जाति पर अत्यधिक बल दिया जाता है और गोत्र परंपरा के सामाजिक एकीकरण की दृष्टि से परखने की भी कोशिश नहीं होती। इसके कारण भारतीय एकत्वबोध बुरी तरह प्रभावित हो रहा है।

### सामुदायिक संवाद की क्षमता

आमतौर पर भारतीय इतिहास को काल-खंडों में बाँटकर देखा जाता है। इस बँटवारे से बड़ा नुकसान यह होता है कि इसमें भारत की प्राणशक्ति को पूरी तरह से नकार दिया जाता है। विभाजन यह नहीं देख पाता कि भारत हमेशा से ही जीवंत और सतत गतिशील समुदायों का देश रहा है (सरकार, 2022, पृष्ठ-20)। भारतीय समुदायों में निहित इस जीवंतता और सतत गतिशीलता का एक प्रमुख कारण गोत्र परंपरा रही है।

गोत्र परंपरा की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि एक ही जाति और वर्ण के व्यक्तियों के गोत्र अलग-अलग हो सकते हैं और अलग-अलग जाति और वर्णों के व्यक्तियों के गोत्र समान हो सकते हैं। कश्यप गोत्र ब्राह्मण वर्ण में भी मिल जाता है और शूद्र वर्ण में भी मिल जाता है। यही गोत्र क्षत्रिय वर्ण और वैश्य वर्ण में भी मिल जाता है। यहाँ पर कश्यप गोत्र का उदाहरण मात्र इसलिए दिया गया है, क्योंकि इसकी व्यापकता सबसे अधिक है। अन्य गोत्रों के संदर्भ में भी ऐसी ही स्थिति है। इसके कारण संपूर्ण भारतीय समाज स्वयं को कुछ निश्चित पूर्वजों और उनकी ज्ञान परंपरा से जोड़ता रहा है। यह भावना समाज को एक सूत्र में बाँधने का कार्य करती रही है।

गोत्र परंपरा की एक अन्य प्रमुख विशेषता सगोत्रीय विवाहों का निषेध

है। एक ही गोत्र के युवा और युवती आपस में विवाह नहीं कर सकते। सगोत्रीय विवाहों का निषेध भारतीय समाज में एक प्रभावी लक्षण रहा है। यह जाति और वर्ण व्यवस्था में निहित मान्यता के विपरीत है। जाति और वर्ण में इस बात पर बल दिया जाता है कि विवाह सजातीय और सवर्णीय होने चाहिए। वर्ण-जाति एवं गोत्र की विवाह संबंधी मान्यताओं में यह विरोध समाज में विभिन्नता और वर्गीकरण को संतुलित बनाकर रखता रहा है।

वर्ण और जाति व्यक्तियों का जिस आधार पर विशिष्टीकरण करते हैं, वहाँ गोत्र परंपरा व्यक्तियों का सामान्यीकरण करती है। जाति और वर्ण जिन आधारों पर सामान्यीकरण करते हैं, वहाँ गोत्र परंपरा व्यक्तियों का विशिष्टीकरण करती है। जब जाति-वर्ण जन्म के आधार पर कर्मों का विभाजन करते हैं, तो गोत्र व्यवस्था सभी जातियों और वर्णों में अपनी उपस्थिति के माध्यम से उनको एक सूत्र में बाँधती है। और जब विवाह के समय सजातीय और सवर्णीय होने की अपेक्षा रखते हैं, तो गोत्र व्यवस्था सगोत्रीय विवाहों का निषेध कर देती है।

इस तरह, एक ऐसे समय में जब इस बात की व्यग्रता बढ़ती जा रही है कि 'अपने संसार में लौटे बिना, अपने सहज चित्त, मानस, काल के धरातल को ढूँढ़े बिना अपना काम चलने वाला नहीं है' (धर्मपाल, 2022, पृष्ठ-150)। गोत्र परंपरा न केवल अपने चित्त, मानस कल को समझने का एक आधार प्रदान करती है, बल्कि भारतीय सामुदायिक संवाद के बारे में भी एक अंतःदृष्टि प्रदान करती है। गोत्र आधारित सामुदायिक संवाद का विस्तृत अध्ययन भारत में संघर्ष-समाधान और शांति-निर्माण के नया परिदृश्य रचने में सक्षम है, क्योंकि 'संवाद व्यक्ति और मनुष्य समाज की मुक्ति का उपाय है (त्रिपाठी, 2022, पृष्ठ-5)।

## निष्कर्ष एवं सुझाव

इस तरह, वर्ण-जाति और गोत्र सामुदायिक संवाद की एक ऐसी नियंत्रण और संतुलन प्रणाली (Check and Balance System) का निर्माण करते रहे हैं, जिससे विभिन्नता का विखंडन में परिवर्तन नहीं होता। वर्गीकरण एवं एकीकरण की प्रक्रियाएँ एक साथ चलती रहती हैं। एकता में विभिन्नता की अभिव्यक्ति अथवा विभिन्नता में एकता की स्वीकृति की जो मूलभूत भारतीय सामाजिक विशेषता है, उसका एक बड़ा कारण गोत्र परंपरा रही है। गोत्र परंपरा की विस्मृति बढ़ने से सामुदायिक-संवाद की नियंत्रण और संतुलन की यह व्यवस्था बुरी तरह प्रभावित हुई है। गोत्र को भारतीय समाज की वृहत्तर पहचान के रूप में पुनः स्थापित कर भारत में सामुदायिक संवाद की स्वस्थ अंतःक्रिया को पुनः सबल बनाया जा सकता है। गोत्र प्रणाली की सम्यक् समझ और स्वीकृति से न केवल विऔपनिवेशीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की जा सकती है, बल्कि स्वस्थ सामुदायिक संवाद को सबल बनाकर सामाजिक-विखंडन के प्रयासों को भी कुंद किया जा सकता है। इसके लिए गोत्र परंपरा की विभिन्न समुदायों में उपस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन एक आवश्यक अकादमिक कदम हो सकता है।

## संदर्भ


तिवाड़ी, आर.पी. (2017). गोत्र प्रवर्तक ऋषि : संक्षिप्त परिचय (प्रो. शिवजी उपाध्याय द्वारा लिखित शुभाशंसा से प्राप्त). जोधपुर : राजस्थानी ग्रंथागार.

त्रिपाठी, आर.वी. (2022). वाद और संवाद की भारतीय परंपराएँ, कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय, रामटेक. पृष्ठ-5.

धर्मपाल. (2022 ). इतिहास, समाज और परंपरा (संकलन एवं संपादन लक्ष्मी नारायण मित्तल), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली. पृष्ठ-150.

मल्होत्रा, आर. एवं विश्वनाथन, वी. (2023). वर्ण, जाति, कास्ट : अ प्राइमर ऑन इंडियन सोशल स्ट्रक्चर्स, ब्लूवन इंक, नोएडा. पृष्ठ-47.

महतो, ए.के. (2014). कुरमियों के गोत्र का ऐतिहासिक विश्लेषण : झारखंड के विशेष संदर्भ में. शोध संचय. भाग-5. अंक-2. जुलाई. पृष्ठ-42-53.

मोरछले, एस. (2019). गुर्जर समुदाय में गोत्र व विवाह परंपरा : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (हरदा जिले के संदर्भ में). इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फंडामेंटल ऐंड एप्लाइड रिसर्च. मार्च-मई. पृष्ठ-14-16.

शास्त्री, एफ.सी. (1989). वर्ण, जाति और धर्म. नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन. द्वितीय संस्करण. पृष्ठ-20.

सरकार, जे.एन. (2022). भारत : युग-युगांतर की यात्रा (अनुवाद नवोदिता शर्मा), संवाद प्रकाशन, 2022, पृष्ठ-20.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 58-63, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# 'मत-सम्मत' और 'दिनमान'

**डॉ. मनीषचंद्र शुक्ल**[1]

**सारांश**

पत्र-पत्रिकाएँ लोकतंत्र, साहित्य और समाज के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। वे पक्ष और विपक्ष से अलग एक ऐसी सामूहिक चेतना और जीवन मूल्यों का निर्माण करती हैं, जो मनुष्यता के लिए आवश्यक है। तथ्यपरकता, वस्तुनिष्ठता, निष्पक्षता, संतुलन और स्रोत पत्रकारिता के मूल्य एवं आदर्श हैं। 'दिनमान' ने इन मूल्यों को आत्मसात् किया तथा समाचार के लिए तथ्यों के संकलन और उसे प्रस्तुत करते समय अपने आकलन को अपनी धारणाओं या विचारों से प्रभावित नहीं होने दिया। स्वाधीनता के बाद 1980 के दशक तक कई पत्रकार और संपादक साहित्य से आते थे, उनमें तो कई ऐसे थे जो पत्रकारिता में आने से पहले ही साहित्य में सक्रिय और मान्य हो चुके होते थे। जैसे अज्ञेय, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, विद्यानिवास मिश्र, मनोहरश्याम जोशी, आदि। इन लोगों ने साहित्यिक पत्रकारिता के द्वारा पाठकीय चेतना को संपन्न किया और समाज में जीवन मूल्यों का प्रसार किया। 'दिनमान' उन्हीं दिनों की परिकल्पना थी। 'दिनमान' का मशहूर स्तंभ था 'मत और सम्मत', जिसमें पाठकों के पत्र प्रकाशित होते थे। इन पत्रों में सूचनाएँ भी होती थी, दृष्टि भी और एक तरह का दिशा बोध भी। इसीलिए संपादकीय से ज्यादा महत्त्वपूर्ण पाठकों के पत्र और उनकी प्रतिक्रियाएँ होती थीं। संपादक के नाम वही लोग पत्र लिखा करते थे, जिन्हें समाज की समस्या का गहन बोध था, जो समाज को जानने की चाह रखते थे। 'दिनमान' में प्रकाशित पत्रों में एक समग्रता थी। समग्रता इस अर्थ में कि इन पत्रों में साहित्य, संस्कृति, भाषा, राजनीति, शिक्षा, कला, विज्ञान, पुरातत्त्व और सिनेमा जैसे विविध विषय समाहित थे। जो पाठक 'दिनमान' में संपादक के नाम पत्र लिखते थे, उनमें से कई पाठक बड़े लेखक भी बने। 'दिनमान' ने पाठकों का एक बड़ा वर्ग निर्मित किया। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि 'दिनमान' अपनी आलोचना का पत्र भी छापता था। यह 'दिनमान' की सदाशयता का प्रमाण है। इसीलिए 'मत और सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित पत्रों ने हिंदी बौद्धिकता को बहुत गहराई से प्रभावित किया था। ऐसा इसलिए था, क्योंकि संपादक इन पत्रों में स्वयं रुचि लेता था। 'दिनमान' के संपादकों की अंतर्दृष्टि और विश्वदृष्टि ने हिंदी समाज को ऐसी पत्रिका दी, जिसने पाठकीय अभिरुचि को न सिर्फ परिष्कृत किया, बल्कि साहित्यिक और सांस्कृतिक विवेक का सृजन भी किया। 'दिनमान' के सभी अंक माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल में उपलब्ध हैं।

**संकेत शब्द :** मत और सम्मत, दिनमान, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन, 'अज्ञेय', कन्हैयालाल नंदन, सतीश झा, घनश्याम पंकज, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, विद्यानिवास मिश्र, मनोहरश्याम जोशी

## प्रस्तावना

'दिनमान' का आरंभ 21 फरवरी, 1965 को हुआ। यह समाचार-साप्ताहिक पत्रिका थी। यह टाइम्स ऑफ इंडिया समूह द्वारा नई दिल्ली से प्रकाशित होती थी, जिसके संस्थापक-संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन थे। बाद में रघुवीर सहाय, कन्हैयालाल नंदन, सतीश झा और घनश्याम पंकज 'दिनमान' के संपादक हुए। 'दिनमान' के प्रत्येक अंक में 'मत और सम्मत' स्तंभ के अलावा साहित्य, कला, संस्कृति, खेल, पुरातत्व, रंगमंच, धर्म-दर्शन और सिनेमा जैसे महत्त्वपूर्ण स्तंभ शामिल थे। 'दिनमान' बौद्धिक क्षेत्र में अकेली ऐसी पत्रिका थी, जो विविध विषयों को एक साथ लेकर चली। 'दिनमान' नाम के अर्थ को लेकर पत्रिका के प्रवेशांक में सोनीपत के ज्ञानदेव शर्मा का पत्र प्रकाशित हुआ—"'दिनमान' नाम तो किसी दैनिक पत्र का हो सकता है। किसी साप्ताहिक पत्र के लिए यह नाम कैसे सार्थक हो सकता है? इस नाम के अंतर्गत दिनभर का लेखा-जोखा ही प्रस्तुत हो सकता है, सप्ताह भर का तो नहीं" (शर्मा, 1965)। संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन का उत्तर पत्र के साथ ही प्रकाशित हुआ है—"'दिनमान' अर्थात् सूर्य, दिन, सप्ताह, मास, वर्ष सभी की माप प्रस्तुत करता है, इसलिए वह 'युगमान' भी है" (वात्स्यायन, 1965)। 'दिनमान' में 'मत-सम्मत' स्तंभ का विशिष्ट महत्त्व था। यह स्तंभ पत्रिका में शुरुआती पृष्ठ पर प्रकाशित होता था। इस स्तंभ में प्रकाशित पत्र को पढ़कर लोकमानस की ताजी छवि मिल जाती है। 'दिनमान' ने पाठकों के पत्र को वैचारिक ऊँचाई दी। विचारों का आदान-प्रदान, संचार एवं संवाद के लिए पत्र एक महत्त्वपूर्ण विधा है। 'दिनमान' जैसी साप्ताहिक पत्रिका ने पत्र लेखन की विधा को और सशक्त बनाया।

[1]लेखक, शोधकर्ता एवं शिक्षाविद, नई दिल्ली. ईमेल : mcshukla27@gmail.com

## राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान

पत्र लेखन के महत्त्व और उसके भविष्य को लेकर वरिष्ठ पत्रकार अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं, "पत्रों के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान, संचार एवं संवाद केवल साहित्य में ही नहीं, बल्कि प्रेम, धर्म और आध्यात्मिक जगत् में भी लगातार होता रहा है। आज के इस दौर में जब पत्र लेखन की संपूर्ण विधा विलुप्ति के कगार पर है, बुद्धिजीवियों के ब्लॉग, ट्विटर और फेसबुक में समाती जा रही है, यह अनुमान लगाना असंभव है कि कब कोई भावी भक्तकवि गोस्वामी तुलसीदास की तरह अपने भगवान राम को विनय पत्रिका भेजेगा। विश्व के विशाल पत्र साहित्य की धरोहर का भविष्य क्या होगा? मुद्रण प्रणाली के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिह्न है। साहित्य, दर्शन, राजनीति, इतिहास और कलाओं के विमर्श तो 'ऑनलाइन' शुरू हो गए हैं। दुनिया के करोड़ों पुस्तकालयों में सुरक्षित पोथियाँ जब संचार क्रांति की सुनामी में समा जाएँगी तो सुपर कंप्यूटरों में सुरक्षित इस ज्ञानराशि को कोई वायरस नष्ट नहीं करेगा, इसका भरोसा कौन दिलाएगा? लेकिन कहीं-न-कहीं यह विश्वास जरूर है कि उपग्रह संचार की इस सर्वग्रासी तकनीक के बावजूद साहित्य शिल्पियों का उर्वर मस्तिष्क किसी-न-किसी रूप में संवाद की इस शैली को बचाकर रखने की कोशिश अवश्य करेगा" (मिश्र, 2015)। 'राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान' 'दिनमान' का ध्येय वाक्य था। यहाँ 'आह्वान' शब्द 'दिनमान' के चरित्र की सही व्याख्या प्रस्तुत करता है। 'दिनमान' अपने स्तंभों के माध्यम से, उन स्तंभों में छपे लेखों के माध्यम से संगत भाषा का आह्वान आमजन से, पाठकों से और तमाम बुद्धिजीवियों, लेखकों, पत्रकारों से करता हुआ दिखाई देता है। 'आह्वान' शब्द संगत के समर्थन में असंगत के विरुद्ध, सही के पक्ष में विसंगति, अन्याय, अत्याचार के खिलाफ दिखाई देता है। 'मत-सम्मत' स्तंभ में छपे पत्रों में 'दिनमान' की पत्रकारिता निर्मल जल की तरह बिल्कुल साफ झलक रही है। 'दिनमान' के पाठक स्तंभों में छपे लेखों को पढ़कर उससे सहमत और असहमति जताते हुए पत्र लिखते थे। 'दिनमान' पाठकों के उन पत्रों के 'मत' में अपने और अन्य पाठकों के 'सम्मत' को सम्मिलित कर प्रकाशित करता था। इसलिए 'मत-सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित पाठकों के पत्र को संकलित कर लिया जाए, तो उस दौर के समाज की परिस्थितियों एवं उसके मिजाज और वर्तमान समय में उसकी उपादेयता का बेहतर मूल्यांकन किया जा सकता है।

## भारतीय जीवन मूल्यों को सँवारने का प्रयास

'दिनमान' ने भारतीय जीवन मूल्यों को सँवारने और उन मूल्यों को जन-जन तक पहुँचाने का श्रेष्ठ कार्य किया है। 'दिनमान' के पाठक उसके प्रशंसक ही नहीं, आलोचक भी हैं। 'निंदक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय' कबीर की यह पंक्ति 'मत-सम्मत' में प्रकाशित पाठकों के पत्र की गुणवत्ता को दर्शाती है। संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने 'मत-सम्मत' स्तंभ में पाठकों के पत्र प्रकाशित करने के उद्देश्य को स्पष्ट किया है। वे लिखते हैं—'मत-सम्मत स्तंभ में पाठकों के पत्र या पत्रों के अंश छापने में हमारा लक्ष्य केवल 'दिनमान' के या उसमें प्रकाशित सामग्री के बारे में पाठकों के विचार जानना नहीं है, बल्कि उन सभी समस्याओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते रहना है, जिनके बारे में एक जागरूक नागरिक को सोचना चाहिए। सुचिंतित और तर्कसंगत विचारों के आदान-प्रदान के आधार पर ही लोकतंत्र-समाज अपना वास्तविक मत व्यक्त करता है" (वात्स्यायन, 1966)।

'दिनमान' 21 फरवरी, 1965 को जब हिंदी पाठकों के पास पहुँचा, तो उस अंक में देश के हर क्षेत्र के श्रेष्ठ महापुरुषों की शुभकामनाएँ 'मत-सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित हुई थीं। ये शुभकामनाएँ निरी औपचारिकता भर नहीं है, उसमें लोकमंगल की कामना है, युवाओं की आकांक्षाओं एवं सपनों से समृद्ध भारत निर्माण के संकल्प का भाव है। "दिनमान' सही दिशा में हमारे लिए कल्याणकारी हो, यही कामना है" (गुप्त, 1965)। "दिनमान' टाइम्स ऑफ इंडिया संगठन द्वारा प्रकाशित और आपके द्वारा संपादित हो रहा है, यह इस बात की गारंटी है कि पत्र अपने नाम के अनुरूप ही होगा और पत्रकारिता के क्षेत्र में एक नए कीर्तिमान की स्थापना करेगा। पत्र के उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी मंगलकामनाएँ स्वीकार करें" (वाजपेयी, 1965)। "वात्स्यायन जी हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित रचनाकार हैं। आशा है कि उनके निर्देशन में यह पत्रिका भारतीय पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान प्राप्त करेगी" (गांधी, 1965)। अज्ञेय का नाम साहित्य में सुरुचि, शालीनता, नवीनता और प्रौढ़ि का वाचक समझा जाता है। मुझे पूरा विश्वास है कि उनके संपादकत्व में निकलने वाला 'दिनमान' दिनमान के ही समान प्रतापी और जाज्वल्यमान होगा" (दिनकर, 1965)। "दिनमान' हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में एक नया और मौलिक व्यक्तित्व लेकर आया है, इसका आभास उसके प्रायः सभी पाठकों को होगा। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई है कि उसकी सामग्री सुगठित, साथ ही सुपाठ्य रूप में प्रस्तुत की गई है। आपके संपादकत्व में उन्नति-प्रगति हो सकेगी, इसका मुझे विश्वास है। कृपया मेरी बधाई स्वीकार करें" (बच्चन, 1965)। "दिनमान' की पहली किरण में नहा चुका हूँ। 'जय हो-जय हो' मन में गूँज रहा है। हमें अभिमान करने का मौका मिलेगा" (रेणु, 1965)। "श्री वात्स्यायन हिंदी साहित्य में नई चेतना के अग्रदूत रहे हैं। 'दिनमान' हिंदी पत्रकारिता में एक स्थायी मानदंड बने और जनतांत्रिक समाज तथा राष्ट्रीय


मत और सम्मत

सन्देश

एकता के पथ को आलोकित रखे, यही मेरा आशीर्वाद है" (कृपलानी, 1965)। "आपके साहित्य के साथ आपकी दृष्टि और दूरदर्शिता का भी कायल रहा हूँ। मुझे पक्का विश्वास है कि 'दिनमान' एक संगठित भारत का परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करेगा, जिसका या तो अस्तित्व ही नहीं या फिर जिसका विकृत रूप ही देखने में आता है" (बरुआ,1965)।

## अमेरिकी मॉडल पर आधारित पत्रिका

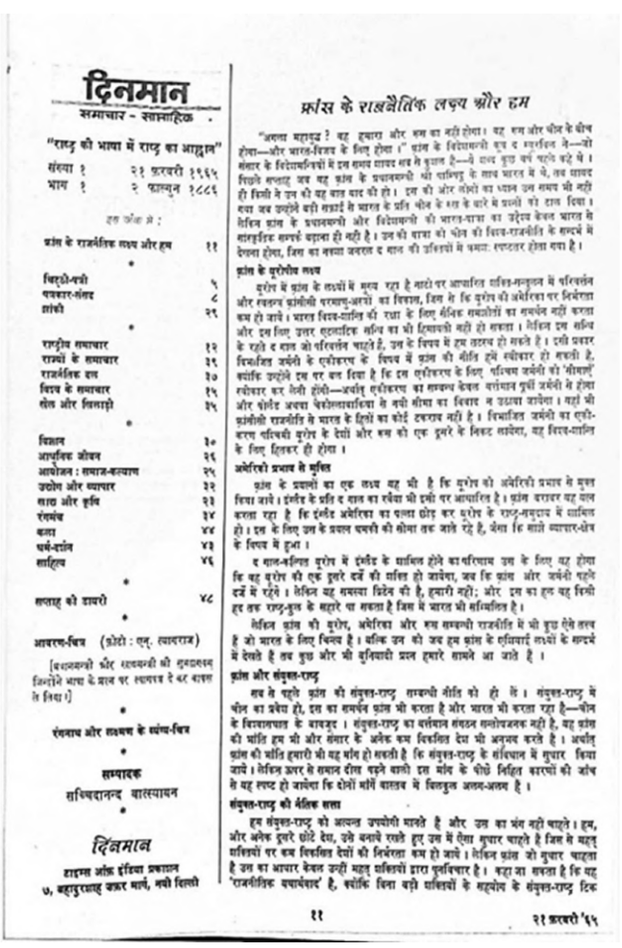

'दिनमान' अमेरिकन 'टाइम' और 'न्यूजवीक' मॉडल पर आधारित साप्ताहिक पत्र था। जिस तरह अमेरिकन 'टाइम' और 'न्यूजवीक' साप्ताहिक पत्र होते हुए भी अमेरिकी पाठकों के लिए महत्त्वपूर्ण समाचार स्रोत थे, उसी तरह अज्ञेय 'दिनमान' पत्रिका को बनाना चाहते थे, जिसमें साहित्य के अलावा अन्य विषय जैसे—कला, संस्कृति, पुरातत्त्व, विज्ञान, धर्म-दर्शन, शिक्षा, खेल, सिनेमा आदि शामिल हों। इसी संदर्भ में डॉ. राममनोहर लोहिया का पत्र प्रकाशित हुआ—"सुना, मालिकों ने अमेरिकी 'टाइम' के नमूने पर 'दिनमान' निकालने की सोची है। एक ओर 'पुराने हिंदुस्तान की नासमझ पूजा करने वाले पीछे देखूँ' लोग हैं, तो दूसरी ओर अमरीकी या रूसी या पश्चिम यूरोपीय नकल पर चलने वाले लोग। तीसरी ओर नकली एशियाई रुख रखने वाले लोग। क्या खाक लिखेंगे वे विदेशी मामलों पर" (लोहिया, 1965)। डॉ. लोहिया के प्रश्न को गंभीरतापूर्वक विचार करते हुए सच्चिदानंद वात्स्यायन अपने उत्तर में लिखते हैं, "दिनमान' के लिए अमरीकी 'टाइम' नमूना नहीं है। हाँ, समाचार संग्रह के लिए जितना बड़ा संगठन 'दिनमान' कर सकेगा, करेगा। विदेशी मामलों पर लिखने वाले हिंदुस्तानियों की 'रुख' के अलावा एक कमी यह भी रहती है कि उनके सोचने पर अँग्रेजी की छाप बहुत गहरी रहती है, वे भारतीय भाषाओं में नहीं सोचते, अनुवाद में सोचते हैं—चाहे वे अँग्रेजी-विरोधी ही क्यों न हों। 'दिनमान' ऐसी भाषा में ऐसे चिंतन का प्रयत्न करेगा कि उसमें न तो 'हिंदुस्तान की नासमझ पूजा' दिखेगी और न हिंदुस्तान की किसी भी भाषा का कम-समझ मलीदा" (वात्स्यायन, 1965)। मात्र पंद्रह लोगों के सहयोग से 'दिनमान' पूरे कलेवर को प्रस्तुत करने में समर्थ रही है। जिस पत्रिका से सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन, मनोहरश्याम जोशी, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, फणीश्वरनाथ रेणु, विद्यानिवास मिश्र, रघुवीर सहाय, प्रयाग शुक्ल और श्रीकांत वर्मा जैसे वरेण्य साहित्यकार जुड़े हों, तो उस पत्रिका में भाषा की बुनावट से लेकर साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में असर पड़ना स्वाभाविक है। वरिष्ठ साहित्यकार पद्मश्री कृष्णबिहारी मिश्र लिखते हैं, "विज्ञप्त तथ्य है कि पत्रकारिता से जब साहित्यकार की भूमिका जुड़ती है, तो पत्रकारिता को विधायक आयाम से संपन्न करती है" (मिश्र, 2024)। साहित्य का मूल्य जीवन के मूल्य से पृथक् नहीं होता है। इसलिए जिन जीवन मूल्यों की स्थापना साहित्यकार साहित्य में करता है, पत्रकारिता उन मूल्यों को व्यावहारिक दिशा देने का कार्य करती है। वरिष्ठ लेखक, मीडिया शिक्षक एवं भारतीय जन संचार संस्थान नई दिल्ली में प्रोफेसर डॉ. प्रमोद कुमार लिखते हैं, "सत्य, धर्म, न्याय, मर्यादा, सौहार्द, सद्भाव, परोपकार, विश्वशांति, विश्वकल्याण जैसे जीवन मूल्य हमें अपने पूर्वजों से विरासत में प्राप्त हुए हैं। ये मूल्य न केवल समाज में व्यवस्था कायम करने में मदद करते हैं, बल्कि जन सामान्य को एक सार्थक जीवन जीने की राह भी दिखाते हैं। इन जीवन मूल्यों को सरल तरीके से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का काम पहले श्रुति परंपरा और आधुनिक समय में साहित्यिक पत्रकारिता ने किया है" (कुमार, 2024)।


दिनमान
समाचार - साप्ताहिक
"राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान"
संख्या १ २१ फ़रवरी १९६५
भाग १ २ फाल्गुन १८८६
इस अंक में :

| | |
|---|---|
| फ्रांस के राजनैतिक लक्ष्य और हम | ११ |
| चिट्ठी-पत्री | ५ |
| पत्रकार-संसद | ८ |
| झांकी | २९ |
| राष्ट्रीय समाचार | १२ |
| राज्यों के समाचार | ३९ |
| राजनैतिक दल | ३० |
| विश्व के समाचार | १५ |
| खेल और खिलाड़ी | ३५ |
| विज्ञान | ३० |
| आधुनिक जीवन | २६ |
| आयोजन : समाज-कल्याण | २५ |
| उद्योग और व्यापार | ३२ |
| खाद्य और कृषि | २३ |
| रंगमंच | ३४ |
| कला | ४४ |
| धर्म-दर्शन | ४३ |
| साहित्य | ४६ |
| सप्ताह की डायरी | ४८ |

आवरण-चित्र (फ़ोटो : एन्. त्यागराज)
रंगनाथ और लक्ष्मण के व्यंग्य-चित्र
सम्पादक
सच्चिदानन्द वात्स्यायन
दिनमान
टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रकाशन
७, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली

फ्रांस के राजनैतिक लक्ष्य और हम
फ्रांस के यूरोपीय लक्ष्य
अमेरिकी प्रभाव से मुक्ति
फ्रांस और संयुक्त-राष्ट्र
संयुक्त-राष्ट्र की नैतिक सत्ता

११ २१ फ़रवरी '६५

## भाषा का संस्कार

'दिनमान' ने अपने पाठकों को जो सबसे महत्त्वपूर्ण चीज दी, वह है 'भाषा का संस्कार'। वर्तमान हिंदी पत्रकारिता जिस भाषा का उदाहरण बनती जा रही है, उसके पीछे की मानसिकता को समझना होगा। अपनी भाषाओं के प्रति एक हीनता और कमतरी का भाव ही वह कारण है, जिसके चलते भाषा उपेक्षा का शिकार बनती जा रही है। सजग समाज में यह सवाल उठना ही चाहिए कि भाषा के प्रति यह हीनता क्यों पनप रही है? क्यों हम अपनी भाषा के प्रति उस गर्व का अनुभव नहीं करते, जो 'दिनमान' जैसे पत्रों में हमें दिखता है? 'दिनमान' भाषा का निर्माण सही दिशा में, एक सही राष्ट्र और समाज के निर्माण में करता है। सत्ता के गलियारों से लेकर आमजन की चौपालों तक 'दिनमान' सही चेतना और संस्कारमयी भाषा के प्रहरी के रूप में खड़ा नजर आता है। 'दिनमान' का पाठक आत्म स्वीकार करता है - "मेरी गलत धारणा थी कि दैनिक या साप्ताहिक पत्र में उर्दू-मिश्रित सरल भाषा होनी चाहिए, किंतु आपकी यह पत्रिका पढ़कर जरूर मुझे अपना विचार बदलने को बाध्य होना पड़ा। बिना वजह भाषा के सरलीकरण का बहाना बनाकर अनावश्यक उर्दू शब्दों को घुसेड़ना राष्ट्रभाषा के लिए अहितकर है। 'दिनमान' की भाषा मुझे अत्यधिक पसंद आई" (शाह, 2010)। भाषा को लेकर 'दिनमान' का एक विशेष आग्रह यह था कि शब्द का जो मूल स्रोत है, उस शब्द को उसी तरह से बोला और लिखा जाना चाहिए। जिस देश या प्रदेश की जो मूल भाषा

है, 'दिनमान' उस भाषा को उसी रूप में प्रस्तुत करता था। जैस–भारत में लोग 'काठमांडौ' को 'काठमांडू' बोलते हैं, जबकि नेपाल में 'काठमांडौ' ही बोला, पढ़ा और लिखा जाता है। इसी तरह अँग्रेजी भाषा के शब्द 'क्विंटल' को हम 'कुंटल' बोलते हैं। इस संदर्भ में डॉ. देवर्षि सनाढ्य (काठमांडौ) का पत्र उल्लिखित है, "दिनमान' में काठमांडौ से संबद्ध समाचार पढ़ा। 'दिनमान' भाषा-शुद्धि के विषय में विशेष सावधान रहा है, एतदर्थ सूचना है। इस स्थान का नेपाली नाम 'काठमांडौ' है 'काठमांडू' नहीं। यह काष्ठमंडप से विकृत या स्वाभाविक रूप से विकसित होकर बना है।...नेपाली भाषा के देवनागरी लिपि में प्रकाशित सभी पत्र आदि में काठमांडू नहीं। मांडू वास्तव में रोमन लिपि की देन है" (सनाढ्य, 1967)।

**बिहार में सूखा और सरकार**

'रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून' यानी पानी को बचाकर रखना हर मनुष्य का अपना नैतिक कर्तव्य है। पानी के बिना मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन जब मनुष्य की आँख का पानी सूखता है, तो उसके नैतिक मूल्यों का पतन हो जाता है। काँग्रेस सरकार की यह असंवेदनशीलता 1966 में बिहार के सूखे में दिखाई पड़ती है। 'दिनमान' में 'भूख की राजनीति' शीर्षक से प्रकाशित लेख का अंश है, "प्रधानमंत्री से कुछ संवाददाताओं ने जब यह कहा कि बिहार में भयानक अकाल है मगर राजनीतिज्ञ टिकटों के बँटवारे में व्यस्त हैं, तब श्रीमती गांधी ने बिल्कुल मासूम टिप्पणी की कि 'अनाज बाँटना राजनीतिज्ञों का नहीं, प्रशासन का काम है।' श्रीमती गांधी का दृष्टिकोण इस देश की सत्तारूढ़ राजनीति के चरित्र को स्पष्ट करता है। यथार्थ से कटते-कटते काँग्रेस पार्टी वहाँ पहुँच चुकी है, जहाँ अकाल भी उसे दूसरे नंबर का काम नजर आता है। उसकी निगाह में सबसे अधिक महत्त्व है सत्ता को बनाए रखने के तरीकों का" (वात्स्यायन, 1966)। भूख से मौत की कोई परिभाषा नहीं है। बिहार में हर वर्ष बाढ़ आती है। बाढ़ के कारण लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। उसी बिहार में पानी की कमी के कारण सूखा भी पड़ता है। अनेक लोगों की भूख के कारण अकाल मृत्यु भी होती है। पानी के इस उतार-चढ़ाव में राजनीति के सेतु पर रहने वाले सुरक्षित रहते हैं और अन्य भूमिपुत्र भूमिगत या जलमग्न हो जाते हैं। 1966 में जब बिहार में सूखा पड़ा, तो फणीश्वरनाथ रेणु के साथ अज्ञेय भी बिहार गए। अज्ञेय ने कैमरे से बिहार सूखे का चित्र खींचा तो रेणु ने उस सूखे की रिपोर्टिंग की। जिसका सचित्र मार्मिक विवरण 'दिनमान' में 'भूमि-दर्शन की भूमिका' शीर्षक से छह खंडों में प्रकाशित हुआ। 'दिनमान' का अनुकरण करते हुए देश के अन्य समाचार पत्रों ने बिहार सूखे के वर्णन को प्रमुखता से प्रकाशित किया। मध्यप्रदेश, हरदा के प्रणेश अग्रवाल ने बिहार सूखे की विभीषिका को लेकर 'मत-सम्मत' स्तंभ में अपनी चिंता व्यक्त की है, "पानी खो गया, पानी उतर गया' तथा 'भूमि-दर्शन की भूमिका' बड़े मार्मिक लगे। उन्हीं से प्रेरित होकर 'बिहार के सूखे' पर निकटतम बंधुओं से परिचर्चा भी हुई। किसी ने उसे मजाक में लिया, किसी ने थोड़ी-सी सहानुभूति बाँट दी। रुपये भेजने के रूप में जब दायित्व निबाहने का प्रश्न आया, सभी ने मौन साध लिया। ...कितना अच्छा हो कि हम अपने को टटोलें, अपनी दृष्टि को उदार बनाएँ और वक्त आने पर अपने दायित्व को महसूस भी करें। बिहार में पड़ा है सूखा/धरती का इनसान/बेहद है भूखा!/मरना है, मरें, क्या हुआ/छटाँक भर भेज दी/सस्ती-सी दुआ/दायित्व धूमिल जो हो गया!/और/ मानव की संवेदना का कुआँ" (अग्रवाल, 1967)।

**भारतीय जीवनमूल्यों की संवाहक हिंदी**

भारत एक विशाल बहुभाषिक एवं विविधताओं का देश है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 क्रियान्वित होने के पश्चात् हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं की उपादेयता बढ़ी है। इसी उद्देश्य के तहत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने देश के सभी उच्च शिक्षण संस्थानों में मातृभाषा में पाठ्यक्रम शुरू करने के निर्देश दिए हैं। अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआइसीटीई) ने चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी की शिक्षा हिंदी सहित आठ भारतीय भाषाओं में कराए जाने की पहल की है। देश में सर्वप्रथम मध्यप्रदेश राज्य ने चिकित्सा की शिक्षा हिंदी में देने की शुरुआत की थी। उत्तर प्रदेश और अब बिहार राज्य में भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रावधानों के अंतर्गत चिकित्सा पाठ्यक्रम को हिंदी में उपलब्ध कराने की घोषणा की गई है। बच्चों को मातृभाषा में शिक्षा देने का प्रमुख लाभ यह है कि वे स्थानीय कला, संस्कृति, परंपरा और विरासत से जुड़ सकेंगे, उसे जान सकेंगे, पहचान सकेंगे। भारतीय भाषाओं को लेकर 'दिनमान' का पाठक अपनी गंभीर वैचारिक दृष्टि रखता था। वह अँग्रेजी का नहीं अपितु अँग्रेजी के वर्चस्व का विरोध करता है और भारतीय भाषाओं की जरूरत को महसूस करता है। द्वारिकाप्रसाद अग्रवाल बिलासपुर (म.प्र.) का 'मत-सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित पत्र उल्लिखित है, "इतिहास गवाह है कि जब भी शासन ने कोई विशिष्ट भाषा जबरन देश की जनता पर थोपने की कोशिश की, उस भाषा का प्रचलन बहुत कम हो गया, चाहे वह भाषा कितनी भी समृद्ध क्यों न रही हो। चाहे वह ग्रीक, लेटिन या संस्कृत ही क्यों न रही हो। यदि भारतीय प्रशासन अँग्रेजी को ही देश पर जबरन थोपना चाहता है तो इससे भारतीय भाषाओं की कतई हानि नहीं होगी, बल्कि अँग्रेजी का ह्रास होता जाएगा। जरूरत सिर्फ भारतीय भाषाओं के साधारण जीवन में प्रयोग में लाने की है, स्वयंमेव कुछ दिनों बाद यह स्थिति आ जाएगी कि प्रशासन को बाध्य होकर किसी भारतीय भाषा को माध्यम बनाना पड़ेगा" (अग्रवाल, 1967)। हिंदी भारतीय जीवनमूल्यों, उसकी संस्कृति एवं संस्कारों की संवाहक है। प्रतिष्ठित पत्रिका 'फोर्ब्स' के अनुसार 'हिंदी विश्व की तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। यह लगभग साठ करोड़ लोगों द्वारा बोली जाती है।' राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारत के युवाओं की आकांक्षाओं और सपनों को न सिर्फ साकार किया, बल्कि हिंदी की महत्ता को भी स्थापित किया है। हिंदी स्वाधीनता संग्राम की भाषा है। हमारे देश के देशभक्तों की भाषा है। इसलिए हिंदी हम भारतवासी के लिए गौरव और गर्व का प्रतीक है। हिंदी के अवदान पर 'मत-सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित श्रीकांत जोशी, जवाहरगंज, खंडवा (मध्यप्रदेश) का पत्र उल्लिखित है, "हिंदी और टंडन जी : पंडित माखनलाल चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'समय के पाँव' में पृष्ठ-137 पर राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन के संबंध में बताया है कि टंडन जी ने एक बार मुझसे कहा था कि यदि हिंदी भारतीय स्वतंत्रता के आड़े आएगी तो मैं स्वयं उसका गला घोंट दूँगा। वे हिंदी को पहले आजादी प्राप्त करने का साधन मानते रहे हैं और आजादी मिलने के बाद आजादी को बचाए रखने का" (जोशी, 1967)।

**दिनमान और प्रश्न-चर्चा**

'दिनमान' ने 'मत और सम्मत' स्तंभ के अंतर्गत 'प्रश्न-चर्चा' नाम से

नये विमर्श की शुरुआत की। 'प्रश्न-चर्चा' पहली बार 2 दिसंबर, 1966 अंक में प्रकाशित हुई। उद्देश्य यह था कि पाठकों में रचनात्मक लेखन की समझ विकसित हो सके। उनका झुकाव साहित्य, समाज एवं लेखन के प्रति बना रहे। पाठकों में इसी क्षमता को विकसित करने का कार्य 'प्रश्न-चर्चा' के माध्यम से 'दिनमान' ने प्रारंभ किया। संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन के अनुसार, "सुचिंतित और तर्कसंगत विचारों के आदान-प्रदान के आधार पर ही लोकतंत्र-समाज अपना वास्तविक मत व्यक्त करता है। इस आदान-प्रदान को और प्रोत्साहन देने के लिए हम हर सप्ताह एक प्रश्न उठाकर उस पर पाठकों के विचार को आमंत्रित करेंगे। सर्वोत्तम उत्तर पर पचास रुपये का पुरस्कार लेखक को भेंट किया जाएगा। पहला प्रश्न है : लोकतंत्र-व्यवस्था में देश के मंत्रिमंडल का रूप, स्वभाव और कार्य-क्षमता मुख्यतया इन पाँच मंत्रियों पर निर्भर करती है : प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, वित्तमंत्री, विदेशमंत्री और प्रतिरक्षामंत्री। यह मानकर कि देश में काँग्रेसी मंत्रिमंडल होगा, आपकी राय में इन पाँच पदों के लिए क्रमशः पाँच सर्वोत्तम नाम कौन से हैं, और क्यों? उत्तर (अधिक से अधिक 600 शब्द) हमारे कार्यालय में 15 दिसंबर तक पहुँच जाने चाहिए। पुरस्कृत उत्तर 'दिनमान' के 30 दिसंबर के अंक में प्रकाशित किया जाएगा। पत्र संपादक, 'दिनमान' के पते पर आने चाहिए। लिफाफे के कोने पर 'प्रश्न-चर्चा' लिखा रहने से उस पर अविलंब विचार हो सकेगा" (वात्स्यायन, 1966)। 'प्रश्न-चर्चा'-1 में पाठकों का उत्तर 'मत-सम्मत' में 'निर्णायक का प्रतिवेदन' शीर्षक से 30 दिसंबर, 1966 अंक में प्रकाशित हुआ।

इस तरह 'प्रश्न-चर्चा' के माध्यम से 'दिनमान' बौद्धिक पाठक-मंच का सहारा बना। 'दिनमान' में 'प्रश्न-चर्चा' विमर्श की एक लंबी शृंखला प्रकाशित हुई। अनेक पाठक पुरस्कृत भी हुए। 'प्रश्न-चर्चा' के धनपक्ष और ऋणपक्ष को उजागर करते हुए पाठकों के अनेक पत्र प्रकाशित हुए। इस विषय पर प्रसाद प्रभाकर (गुड़गावाँ) का पत्र प्रकाशित हुआ, "आपने यह 'प्रश्न-चर्चा' क्या शुरू की, 'मत-सम्मत' का पाठक-मंच ही छीन लिया। 'मत-सम्मत' के अंतर्गत पहले जहाँ विविध रंग और ढंग के पत्र प्रकाशित होते थे, वहाँ केवल नियंत्रित विषय-गोष्ठी का रंग ही रह गया। आप की यह नई नीति मेरी तरह अनेक पाठकों को अखरेगी। 'प्रश्न-चर्चा' पर आप पुरस्कार प्रदान करते हैं, लेकिन निर्धारित विषय पहले ही, उन्हें जो इन चर्चाओं में भाग लेते हैं, दे देते हैं। इसमें आप कौन-सा हित देखते हैं? न तो ऐसी चर्चाओं में गंभीरता ही आ पाती है और न ही प्रभावी चिंतन। केवल पुरस्कार के लालच में कोरी होड़ को प्रोत्साहन मिलता है; होड़, जिससे साहित्य या समाज को कोई दिशा नहीं मिल पाएगी। मेरा मुझाव है कि आप (1) इन प्रश्न-चर्चाओं को बंद करके हर मास या हर सप्ताह पाठकों के विविध पत्रों में विषय, शैली, विधा की दृष्टि से श्रेष्ठ पत्र छाँटकर उस पर पुरस्कार दें। इससे पाठकों में जागृति और प्रोत्साहन पैदा होगा। (2) यदि आप इन चर्चाओं को इसी रूप में चालू रखना चाहते हैं तो इनके लिए अलग नए स्तंभ की व्यवस्था कीजिए। 'मत-सम्मत' स्तंभ तो पाठकों के विविध पत्रों की रंग-बिरंगी वाटिका ही बना रहे" (प्रभाकर, 1967)।

### गो-हत्या-निरोध एक नैतिक सवाल

भारतीय संस्कृति में 'गाय' का अपना विशिष्ट सांस्कृतिक महत्त्व है। भारतीय समाज में गाय दूध का मुख्य साधन है, पर महिमा राम से अधिक गाय की है। गाय माता के तुल्य है। गाय धार्मिक प्रतीक है। गाय रखना हर गृहस्थ अपना धर्म समझता है। वह हिंदू जीवन में पूजा की पात्र है। गो-हत्या पाप है। गोहत्या राष्ट्र की हत्या है, इस पर प्रत्येक भारतीय को गंभीरता एवं संयम के साथ विचार करना चाहिए। 'दिनमान' के 11 नवंबर, 1966 के संपादकीय लेख 'विवेक की हत्या बंद हो' जो गो-हत्या पर केंद्रित है, इस लेख की निंदा करता रमेंद्रनाथ त्रिपाठी, (प्रयाग) का पत्र 'मत-सम्मत' स्तंभ में प्रकाशित हुआ, "11 नवंबर, 1966 के संपादकीय लेख को पढ़कर हैरत हुई। 'विवेक की हत्या बंद हो' में आपने विवेक (जो इधर एक अर्से से तथ्य के प्रति जनमानस को गुमराह करने के लिए प्रयुक्त होता रहा है) की आड़ में सत्य की हत्या करने का जो प्रयास किया है, वह सर्वथा निंदनीय एवं अस्तुत्य है। आपके ऐसे एकांगी विचार लोकतंत्र (जिसकी मृत्यु उसी दिन हो गई, जिस दिन काँग्रेस के हाथ सत्ता आई) की पीठ में छुरा भोंकते हैं। गो-हत्या-निरोध एक नैतिक सवाल है, जिस पर प्रत्येक भारतीय को गंभीरता एवं संयम के साथ विचार करना चाहिए। जिसके खून को पीकर हम अपना विकास पाते हैं, उसकी हत्या की वकालत इतिहास का कौन-सा कालम करेगा, मुझे मालूम नहीं। नेहरू और गांधी ने क्या कहा या उनके कहे गए वाक्य हमारे लिए आदर्श हों, यह आवश्यक नहीं। नेहरू ने कहा था कि 'मैं संविधान में गाय का नाम तक नहीं आने दूँगा।' इसलिए किसी उचित माँग के लिए संघर्ष न किया जाए और यदि किया जाए तो आप जैसे बुद्धिजीवी लोग उसे 'विवेक की हत्या' करार दें, तो मैं निर्भ्रांत रूप से उसे बौद्धिक दिवालियापन की संज्ञा दूँगा। जहाँ तक 'विवेक की हत्या' का प्रश्न है, मैं सवाल पूछना चाहूँगा कि स्वतंत्र भारत में विवेक के शिशु का जन्म ही कब हुआ? फिर उसकी हत्या का सवाल ही कहाँ उठता है" (त्रिपाठी, 1966)?

### फिल्मों में नग्नता

फिल्म एक सामूहिक कला है। यह एक संपूर्ण विधा है। इसमें साहित्य भी है, कला भी है, गीत-संगीत भी है, नृत्य भी है, चित्र भी है और अभिनय भी। यह एक ऐसा दृश्य माध्यम है, जो अपने अभिनय एवं कला से एक व्यापक जन समुदाय को आकर्षित करता रहा है। यह व्यापक स्तर पर आमजन को प्रभावित भी करता है। आज के पूँजीवादी दौर में जब पूरी दुनिया एक बाजार में तब्दील हो गई, तो स्वाभाविक तौर पर इसका असर फिल्मों में भी दिखाई पड़ता है। भारतीय फिल्मों में पश्चिम के प्रभाव, चुंबन या वस्त्र-विहीन मानव-शरीर प्रदर्शन से हमारी कला और संस्कृति की स्वस्थ परंपरा पर किस तरह नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। दयानंद वर्मा (दिल्ली) पत्र में लिखते हैं, "फिल्मों में चुंबन के दृश्य होने चाहिए या नहीं, इस बात की इन दिनों काफी चर्चा है। उस चर्चा में भाग लेने की बजाय हमें खुद से यह पूछना है कि क्या हम समाज में ऐसा वातावरण लाना चाहते हैं, जिसमें हमारे देश के युवक-युवतियाँ सार्वजनिक स्थानों पर चुंबनरत दिखाई दें? हमारे सामने उन पश्चिमी देशों की मिसालें मौजूद हैं, जहाँ चुंबन आदि क्रीड़ाएँ सार्वजनिक स्थानों पर हो सकती हैं। वहाँ के सामान्य जीवन में हिंसा-प्रेम बढ़ रहा है। उस हिंसा का कारण ढूँढ़ने से ज्ञात होता है कि वहाँ के निवासी को चुंबन देखने या खुले आम चुंबन में भाग लेने से कोई उत्तेजना नहीं महसूस होती। ऐसे दृश्यों से उत्तेजना का अनुभव न होने का अर्थ यह है कि अब उन्हें उत्तेजित होने के लिए और अधिक उद्दीपक माध्यमों की आवश्यकता महसूस होने लगी है। नंगे क्लबों और

वेदना-संवेदन (सैडिज्म) की ओर उनके अग्रसर होने का कारण यही है। यह स्थिति भारत में वांछित नहीं है। इसलिए उस स्थिति को न आने देने के लिए इस पथ की ओर बढ़ने वाले चरणों को रोकने के लिए हम भारतीय फिल्मों में 'चुंबन' के दृश्य लाने का विरोध कर रहे हैं" (वर्मा, 1969)।

**नाम की सार्थकता**

मनुष्य के नाम का अपना विशिष्ट महत्त्व है। नाम से ही उस देश की सभ्यता, संस्कृति और संस्कार की झलक मिलती है। राजीव गांधी का नाम 'राजीवरत्न' है। ऐसा नाम जिसमें भारतीयता का बोध हो, जवाहरलाल नेहरू की प्रार्थना पर आचार्य नरेंद्र देव ने नेहरू के प्रथम दौहित्र का नाम 'राजीवरत्न' रखा। बाद में नाम से 'रत्न' हटा दिया गया। राजीव गांधी नाम ही प्रचलन में रहा। नाम की क्या सार्थकता है और पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण भारतीय युवा पीढ़ी एवं तथाकथित अँग्रेजी मानसिकता वाले भारतीय किस तरह से करते हैं, इसका एक रोचक एवं व्यंग्यात्मक वर्णन किशोरीदास वाजपेयी के पत्र में मिलता है। वे लिखते हैं, "सोन्या' नाम ऐसा है कि हमें अजनबी नहीं लगता। जान पड़ता है कि किसी भारतीय लड़की का ही नाम है। फिर 'सोन्या' का 'रत्न' से मेल—सोने की अँगूठी में कीमती नग—पोखराज। परंतु 'रत्न' को नापसंद क्यों किया गया? हमने सर्वत्र इन दिनों 'राजीव गांधी' नाम छपा पढ़ा, परंतु नाम है 'राजीवरत्न गांधी'। यह नाम आचार्य नरेंद्र देव का रखा हुआ है। नेहरू जी ने उनसे अपने इस प्रथम दौहित्र का नाम रखने की प्रार्थना की और कहा कि नाम ऐसा रखिए कि भारतीयता प्रकट हो और बच्चे की नानी तथा नाना के नाम भी झलकें। नेहरू जी की प्रार्थना के अनुसार आचार्य नरेंद्र देव ने बच्चे का नाम रखा–'राजीव रत्न'। यह सब अखबारों में छपा था। 'राजीव' कहते हैं 'कमल' को, जिससे 'कमला' (बच्चे की नानी) का स्मरण और 'रत्न' माने 'जवाहर'। यों 'राजीवरत्न' नाम बच्चे का रखा गया, जिसे 'सोन्या' मिली है। परंतु इन दिनों नाम केवल 'राजीव गांधी' छपा है, 'रत्न' हटाकर। बिना 'रत्न' के 'राजीव' ('सोन्या' से) कुछ चस्पाँ नहीं हुआ। सो पूरा नाम चाहिए–'राजीवरत्न गांधी" (वाजपेयी, 1968)।

**निष्कर्ष**

स्वाधीन भारत में 'दिनमान' ने हिंदी पत्रकारिता में श्रेष्ठ जीवन मूल्यों को स्थापित किया। ऐसा जीवन मूल्य जिसमें साहित्य की सुवास रची बसी है। लोक के मुहावरे की गंध है, सर्जनात्मक भाषा की सजगता है और समन्वय का भाव है। 'दिनमान' 'मत-सम्मत' स्तंभ के माध्यम से जिस तरह से पाठकीय अभिरुचि को परिष्कृत किया है, पाठकों को तराशा है, वह सराहनीय है। 'दिनमान' को मूल्य आधारित पत्रिका बनाने में संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन का योगदान तो महत्त्वपूर्ण है ही, पत्रिका की मालकिन रमारानी जैन की भूमिका भी अत्यंत सराहनीय है। चूँकि रमारानी जैन की रुचि सुरुचिपूर्ण साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों को लेकर रही है, इसलिए उन्हीं की पहल पर ही 'दिनमान' जैसी मूल्य आधारित पत्रिका निकली। वर्तमान समय में ऐसे साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों से सरोकार रखने वाले मालिकों और संपादकों का पत्रकारिता में होना अत्यंत आवश्यक है, जहाँ मुनाफा गौण हो, क्योंकि जब मुनाफा प्राथमिक उद्देश्य बन जाता है, तो पत्रकारिता से जीवनमूल्य गायब हो जाते हैं। शायद 'कादंबिनी' और 'नंदन' जैसी बेहद सरोकार वाली पत्रिका से उनको वह मुनाफा न मिला हो, जिसके आकांक्षी आज के संपादक और मालिक हैं। ऐसे में आज इन पत्रिकाओं का बंद होना स्वाभाविक है।

**संदर्भ**


अग्रवाल, पी. (1967). दिनमान, 16 अप्रैल, 1967. पृष्ठ-4.

अग्रवाल, डी. (1967). दिनमान, 31 दिसंबर, 1967. पृष्ठ-4.

कुमार, पी. (2024). भारतीय साहित्यिक पत्रकारिता और 'आजकल'. नई दिल्ली : संचार माध्यम, जनवरी-जून 2024, पृष्ठ-105.

कृपलानी, एस. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

गांधी, आई. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

गुप्त, एम. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

जोशी, सी. (1967). दिनमान. 31 दिसंबर, 1967. पृष्ठ-4.

त्रिपाठी, आर. (1966). दिनमान. 2 दिसंबर, 1966. पृष्ठ-4.

दिनकर, आर. एस. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

प्रभाकर, पी. (1967). दिनमान. 20 जनवरी, 1967. पृष्ठ-5.

बच्चन, एच. आर. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

बरुआ, एच. (1965). दिनमान. 28 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5

मिश्र, ए. (2015). पत्रों में समय-संस्कृति, नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ-9.

मिश्र, ए. (2024). तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान. नई दिल्ली : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास प्रकाशन. पृष्ठ-3.

रेणु, एफ. एन. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-6.

लोहिया, आर. एम. (1965). दिनमान. 28 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

वर्मा, डी. (1969). दिनमान. 7 दिसंबर, 1969. पृष्ठ 3-4.

वात्स्यायन, एस. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-6.

वात्स्यायन, एस. (1965). दिनमान. 28 फरवरी, 1965. पृष्ठ-5.

वात्स्यायन, एस. (1966). दिनमान. 2 दिसंबर, 1966. पृष्ठ-11

वात्स्यायन, एस. (1966). दिनमान. 2 दिसंबर, 1966. पृष्ठ-4.

वात्स्यायन, एस. (1966). दिनमान. 2 दिसंबर, 1966. पृष्ठ-4.

वाजपेयी, के. (1968). दिनमान. 10 मार्च, 1968. पृष्ठ-3.

वाजपेयी, ए. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-6.

शर्मा, जी. (1965). दिनमान. 21 फरवरी, 1965. पृष्ठ-6.

शाह, आर. (2010). पत्रकारिता के युग निर्माता. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन. पृष्ठ-40.

सनाढ्य, डी. (1967). दिनमान. 13 अगस्त, 1967. पृष्ठ-4.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 64-68, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# मेवात की पत्रकारिता के इतिहास का अध्ययन (भरतपुर-अलवर के विशेष संदर्भ में)

**डॉ. ईश्वर दास बैरागी[1] और डॉ. दीपिका विजयवर्गीय[2]**

**सारांश**

पत्रकारिता समाज जागरण का सशक्त माध्यम है। समाज में आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और राजनीतिक जागृति लाने में पत्रकारिता का बड़ा योगदान रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में मेवात अंचल की पत्रकारिता के इतिहास पर चर्चा की गई है। मेवात की भौगोलिक सीमाएँ तीन राज्यों हरियाणा, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में फैली हैं। क्षेत्र में यातायात के संसाधनों का अभाव है, इसलिए कस्बों और कुछ बड़े गाँवों तक ही समाचार पत्रों की पहुँच सुलभ है। इंटरनेट के पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकास से न्यू मीडिया क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव आए हैं। स्मार्टफोन-इंटरनेट की जुगलबंदी ने उपयोगकर्ता तक सूचना सामग्री का ढेर लगा दिया है। उपयोगकर्ता एक संप्रेषक की भूमिका में भी है। वह एक नागरिक पत्रकार बन गया है, जो अपने निकट घटित घटना का समाचार पूरी दुनिया में पहुँचा सकता है। मेवात भी इससे अछूता नहीं है। मेवात की संस्कृति, लोक जीवन, भाषा और भौगोलिक स्थिति अन्य क्षेत्रों से कुछ अलग है। अपवादों को छोड़ दें तो यहाँ के जीवन में माधुर्य है। सांस्कृतिक रूप से समृद्ध इस अंचल की जटिल समस्याएँ भी हैं। कट्टरता और बढ़ते अपराधों ने मेवात को बदनाम किया है। सकारात्मक पत्रकारिता के माध्यम से धूमिल होती मेवात की छवि को काफी हद तक रोका जा सकता है।

**संकेत शब्द :** साझा संस्कृति, लोकचेतना, मजहबी कट्टरता, संकीर्णता, सकारात्मक पत्रकारिता, मेवात

## प्रस्तावना

रियासत कालीन राजस्थान में पत्रकारिता की शुरूआत देश के अन्य राज्यों की तुलना में देरी से हुई। राजस्थान की पत्रकारिता के इतिहास में भरतपुर और अलवर का भी यथेष्ट योगदान रहा है। मेवात अंचल राजस्थान के इन जिलों में भी विस्तारित है। अंचल का शेष भाग हरियाणा और उत्तर प्रदेश में है। दूसरे अंचलों की तुलना में मेवात पिछड़ा है। हरियाणा और राजस्थान की सरकारें अलग-अलग मेवात विकास बोर्ड का गठन कर इसे मुख्यधारा में लाने का प्रयास कर रही हैं। अतीत में मेवात अंचल के सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवहार सौम्य रहे हैं। मेवात में भाईचारे और साझी संस्कृति का लंबा इतिहास रहा है, लेकिन कट्टर ताकतें समाज को मजहबी और संकीर्णता के रास्ते पर धकलने के प्रयास लगातार कर रही हैं। ऐसे में आज ऐसी पत्रकारिता और पत्रकारों की आवश्यकता है, जो मेवात की एकात्म लोक संस्कृति को समाज तक पहुँचाएं, क्योंकि समाज पर पत्रकारिता का व्यापक प्रभाव होता है। यह नकारात्मक और सकारात्मक दोनों ही तरह से हो सकता है। पत्रकारिता का स्वरूप परिवर्तनशील रहा है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र सांस्कृतिक रूप से समृद्ध मेवात में पत्रकारिता के इतिहास के अध्ययन का लघु प्रयास है।

## शोध का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य राजस्थान के भरतपुर (अविभाजित) और अलवर जिले की पत्रकारिता के इतिहास का अवलोकन करते हुए मेवात अंचल में पत्रकारिता के प्रभाव का अध्ययन करना है।

## शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोधपत्र में मेवात अंचल की पत्रकारिता को समझने का प्रयास किया गया है। चूँकि मेवात अंचल तीन राज्यों हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान की सीमाओं से घिरा है। मेवात का अपना एक वैशिष्ट्य है। सांस्कृतिक रूप से यह एक इकाई है। ऐसे में राजस्थान के अलवर और भरतपुर क्षेत्र में विस्तारित मेवात अंचल की पत्रकारिता को ही अध्ययन में शामिल किया गया है। राजस्थान के अन्य क्षेत्रों की तुलना में मेवात में पत्रकारिता के इतिहास पर बहुत कम काम हुआ है। पत्रकारिता से संबंधित सामग्री बिखरी हुई है। संदर्भ साहित्य भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है। अध्ययन में प्राथमिक स्रोत के रूप में क्षेत्र के वरिष्ठ पत्रकारों का साक्षात्कार कर सामग्री जुटाने का प्रयास किया गया है। साथ ही द्वितीयक स्रोत के रूप में उनके पास उपलब्ध संदर्भ सामग्री जैसे उनकी दैनंदिनी, आलेख और पत्रिकाओं का सहारा लिया गया है। मेवात के ठेठ ग्रामीण अंचलों में समाचार पत्रों की पहुँच आज भी सीमित है, इसके विपरीत न्यू मीडिया की पहुँच बढ़ी है। ऐसे में फेसबुक, वेबपोर्टल, न्यूज चैनल और यूट्यूब चैनल को ग्रामीण अंचलों में खूब देखा जाता है। मीडिया के प्रभाव के अध्ययन के लिए मेवात अंचल में प्रसारित समाचार पत्रों के अलावा पुस्तकों, शोधपत्रों और ऑनलाइन वेबपोर्टल पर प्रकाशित सामग्री का भी उपयोग किया गया है। विषय बोध के लिए भरतपुर और अलवर के पुस्तकालयों के अलावा सूचना एवं जनसंपर्क विभाग के वाचनालय, दैनिक भास्कर अलवर और मेवात साहित्य अकादमी संस्थान में उपलब्ध साहित्य का अवलोकन भी किया गया है।

## मेवात की पत्रकारिता

मेवात सांस्कृतिक रूप से एक इकाई है, लेकिन इसकी सीमाएँ तीन राज्यों में फैली हैं। भारत के 'इंपीरियल गजेटियर' के अनुसार, "देहली के दक्षिण में स्थित वह भू-भाग, जिसमें मथुरा और गुड़गाँव जिलों का कुछ भाग, अलवर जिले का अधिकांश भाग और भरतपुर जिले का थोड़ा-सा भाग शामिल है, मेवात कहलाता है" (सिंह, 2008, पृ-264)। हालाँकि गुड़गाँव को विभाजित कर नया जिला नूह अस्तित्व में आया। मेवात की पत्रकारिता के तीन बड़े केंद्र अलवर, भरतपुर और गुड़गाँव रहे। मेवात की पत्रकारिता पर चर्चा करने से सबसे पहले राजस्थान और इसके बाद भरतपुर-अलवर जिले की पत्रकारिता के संक्षिप्त इतिहास पर चर्चा करेंगे।

[1]पोस्ट डॉक्टरल फेलो, भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली. ईमेल : ishwar.media@gmail.com
[2] शोध पर्यवेक्षक, सह आचार्य, हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान. ईमेल : deepikavijayvergia@gmail.com

भारत में आधुनिक पत्रकारिता की शुरूआत जेम्स ऑगस्टस हिकी के बंगाल गजट (वर्ष 1780) से हो गई थी। इसके बाद देश में उत्तरोत्तर पत्रकारिता का विकास हुआ। बंगाल के बाद एक-एक कर अन्य प्रदेशों से समाचार पत्र निकल रहे थे, जबकि तत्कालीन राजपूताना ने अभी अँगड़ाई भी नहीं ली थी। यहाँ का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिदृश्य देश के अन्य भागों की अपेक्षा काफी अलग था। जनता ब्रिटिश सरकार, राजाओं, जमींदारों और जागीरदारों से शोषित और पीड़ित थी। शिक्षा का भी अभाव था। देशी रियासतों के अपने कानून थे। लिखने और बोलने की आजादी नहीं के बराबर थी। परंपरागत सामाजिक ढाँचा और आर्थिक जीवन अस्त-व्यस्त था। अधिकांश आबादी पशुपालन और कृषि पर निर्भर थी। संचार के साधनों की कमी थी। कुशासन, भ्रष्टाचार और अराजकता का बोलबाला था। ऐसे में यहाँ समाचार पत्र का प्रकाशन तो बहुत दूर की बात है, पत्र का पढ़ना भी राजद्रोह माना जाता था।

राजस्थान में पत्रकारिता की शुरूआत 'मजहरुल सरूर' से हुई है। "यह द्विभाषी पत्र उर्दू तथा हिंदी में सन् 1849 में भरतपुर से प्रकाशित होता था, किंतु इसकी कोई प्रति उपलब्ध नहीं है। फ्रेंच लेखक तासी ने अपने 'डिसकोर्सेज' में इसका उल्लेख मात्र किया है। अतः इस पत्र के स्वरूप के बारे में प्रामाणिक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता" (प्रभाकर, 1981, पृ-19)। यह पत्र मासिक था। इसे भरतपुर महाराणा बलवंत सिंह का संरक्षण प्राप्त था, जो कि सरकारी गजट मात्र था। "राजस्थान में प्रारंभिक पत्र राज्याश्रित थे" (पुरोहित, 2007, पृ-33)। 'मजहरुल सरूर' के बाद सात वर्ष तक राजस्थान से किसी पत्र के प्रकाशित होने का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। "1856 में हैडमास्टर कन्हैयालाल के संपादन में उर्दू भाषा में जयपुर से साप्ताहिक 'रोजतुल तालिम'/राजपूताना अखबार का प्रकाशन हुआ। इसी के हिंदी संस्करण का नाम राजस्थान अखबार रखा गया था। कागज के स्थान पर यह लीथो कपड़े पर प्रकाशित होता था" (नागरवाल, 2022, पृ-92)। "इसके बाद 1861 मे अजमेर से 'जगलाभ-चिंतक, तथा सन् 1863 में 'जगहितकारण' का प्रकाशन हुआ। जैसा कि इन नामों से ही स्पष्ट है, ये पत्र पूर्णतः हिंदी में निकलते थे तथा इनकी भाषा तत्कालीन हिंदी के विकासमान स्वरूप को प्रतिबिंबित करती थी। 1866 में जोधपुर से प्रकाशित 'मारवाड़ गजट' का भी एक भाग हिंदी में ही प्रकाशित होता था। इसके बाद 1868 में 'जयपुर-गजट' और 1869 में 'उदयपुर-गजट' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ" (प्रभाकर, 1981, पृ-19)। "जोधपुर दरबार की ओर से सन् 1864 में 'जोधपुर गवर्नमेंट गजट' शुरू हुआ। जोधपुर से ही सन् 1866 में 'मारवाड़ गजट' शुरू हुआ। इसी वर्ष जोधपुर से उर्दू में 'मुहिबे मारवाड़' तथा हिंदी में 'मरुधर मित्र' शुरू हुए। 'मारवाड़ गजट' जोधपुर महाराजा तख्त सिंह के काल में शुरू हुआ। इस अखबार के प्रबंधकर्ता बाबू हीरालाल थे। यह अखबार न केवल सरकारी सूचनाएँ प्रकाशित करता था, अपितु काँग्रेस की गतिविधियों पर भी टीका-टिप्पणी करता था" (सत्यनारायण, 2018, पृ-52-53)।

राजस्थान में पत्रकारिता अँगड़ाई ले रही थी। "इस अवधि में महर्षि दयानंद का पदार्पण हुआ। उन्होंने स्वभाषा, स्वदेशी, स्वराज्य तथा वेदों की ओर लौटने का नारा दिया। 1857 में प्रकाशित इनकी पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' ने राजस्थान में भूचाल मचा दिया। इन्होंने समस्त देश को प्राचीन भारत के गौरव का स्मरण कराने के साथ ही जनमानस में चेतना की एक किरण फैलाई। इन्होंने संपूर्ण राष्ट्रीय जीवन को झकझोर दिया। इन्हीं से प्रभावित होकर उदयपुर के महाराणा सज्जन सिंह ने विशुद्ध हिंदी का प्रथम साप्ताहिक (सोमवार) 'सज्जन कीर्ति सुधाकर' का 1879 में प्रकाशन प्रारंभ किया। जो 1956 तक प्रकाशित होता रहा" (नागरवाल, 2022, पृ-92)। इसके बाद राजस्थान की पत्रकारिता में आर्य समाज का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। अधिकतर पत्रकार स्वामी दयानंद से प्रभावित होकर राष्ट्रीय चिंतनधारा के वाहक बन रहे थे। अजमेर से मुन्नालाल शर्मा ने 'देश हितैषी' (1882) और मौलवी मुराद अली ने 'राजपूताना गजट' (1885) प्रकाशित किया। इसका मुख्य उद्देश्य भय की भावना को खत्म करने और रियासतों के लोगों के उत्पीड़न का पर्दाफाश करना था। हनुमान सिंह ने अजमेर से ही अँग्रेजी में 'राजपूताना हेराल्ड' (1885) निकाला और निर्भीकता के साथ बंदोबस्त के घोटाले को उजागर किया। अजमेर से ही 'राजस्थान टाइम्स' (1885) निकला। राजस्थान का प्रथम हिंदी समाचार पत्र 'राजस्थान समाचार' (1889) भी अजमेर से प्रकाशित हुआ। इसके प्रकाशक मुंशी समर्थदान थे। "राजस्थान में पत्रकारिता के इस आविर्भाव काल में मुख्यतः सरकारी सूचना बहुल सामग्री से परिपूर्ण राजकीय राजपत्रों और दूसरे कुछ ऐसे जनाश्रित पत्रों का जन्म हुआ, जिनकी सामग्री मुख्यतः सुधारवादी होती थी और थोड़ी-बहुत मनोरंजनपूर्ण सामग्री का समावेश होता था" (विद्यालंकार, 2016, पृ- 681)। वर्ष 1900 तक के राजपूताना के लगभग सभी समाचार पत्र मुख्यतः सरकारी सूचना प्रधान, राज्याश्रित और आर्यसमाजी विचारधारा से प्रेरित सुधारवादी पत्र थे। राजस्थान में सर्वाधिक समाचार पत्र अजमेर से प्रकाशित हुए। "राजपूताना में पत्रकारिता ने जनसाधारण का इतिहास रचा तथा सामंत, शासक एवं ब्रिटिश सत्ता, तीन मोर्चों पर लड़ाई लड़ी" (पुरोहित, 2007, पृ-18)। आज पत्रकारिता का उद्देश्य बहुआयामी हो गया है, जो केवल राजनीतिक घटनाओं से ही अवगत नहीं कराती है, बल्कि सोई हुई शक्ति को जगाना, जीवन के यथार्थ को उभारना, जिज्ञासाओं को शांत करना, आनंद संतोष और मार्गदर्शन कराना है। वह अतीत की संरक्षिका, वर्तमान की विशेष लेखिका ही नहीं है, अपितु भविष्य की नियामिका भी है" (यादव, 2022, पृ- 19)।

**अलवर की पत्रकारिता का इतिहास**

अलवर में भी समाचार पत्रों की अभिव्यक्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। आजादी से पूर्व अलवर में अधिकतर समाचार पत्र-पत्रिकाएँ साहित्यिक रहीं। अलवर राज्य में मुद्रणालयों और पुस्तक तथा अन्य मुद्रित सामग्री पर निगरानी (नियंत्रण) करने के लिए सर्वप्रथम 1934 में सरकार ने अलवर प्रेस कानून लागू किया। इस कानून के तहत प्रेस के स्वामी को घोषणा पत्र देना होता था। प्रकाशित सामग्री की एक प्रति निर्धारित समय में राज्य के पुलिस प्रमुख को प्रेषित की जाती थी। सन् 1944 में पुराने अलवर प्रेस एक्ट 1934 को निरस्त कर दिया गया। इसके स्थान पर अलवर प्रेस एंड रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स एक्ट 1944 लाया गया। 1944 के कानून को व्यापक बनाते हुए इसमें समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं का रजिस्ट्रेशन भी सम्मिलित कर लिया गया। अलवर राज्य प्रशासनिक रिपोर्ट वर्ष 1945-46 के अनुसार शासन ने इस वर्ष कुछ पत्र-पत्रिकाओं को प्रकाशन की स्वीकृति प्रदान की। इनमें 'तेज प्रताप' (साप्ताहिक), 'सैन मित्र' (मासिक) तथा 'विश्वकर्मा ब्राह्मण' (मासिक) पत्रिकाएँ प्रमुख थीं।

अलवर में पहला प्रकाशित पत्र राजर्षि महाविद्यालय की 'विनय' पत्रिका है। इसका प्रकाशन 1935 में आरंभ किया गया था। यह पत्रिका

प्रारंभ के कई सालों तक वर्ष में दो बार प्रकाशित की जाती थी, परंतु बाद में यह वार्षिक हो गई। यह पत्रिका 1972 तक प्रकाशित हुई। राजर्षि महाविद्यालय के विद्वान् शिक्षकों के अलावा प्रदेश के अनेकों चिंतकों, विचारकों, बुद्धिजीवियों एवं समीक्षकों के आलेख इस पत्रिका में लगभग 40 वर्ष तक प्रकाशित होते रहे। यह पूर्ण रूप से साहित्यिक सामाजिक-शैक्षणिक पत्रिका थी, परंतु इसकी ख्याति पूरे प्रदेश के बुद्धिजीवियों एवं साहित्यकारों के बीच थी। इस पत्रिका में आलेख छपना सम्मान समझा जाने लगा था। राज्य के ख्यातनाम साहित्यकार 'विनय पत्रिका' से जुड़े हुए थे। हिंदी परिषद् अलवर ने अगस्त 1944 में 'अरावली' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। पत्रिका के प्रथम संपादक लक्ष्मण स्वरूप त्रिपाठी थे। त्रिपाठी के बाद योगेश चंद्र पराग और बंशीधर मिश्रा इसके संपादक रहे। 'अरावली' पत्रिका के तीन महत्त्वपूर्ण विशेषांक प्रकाशित हुए। 'अरावली' का प्रकाशन तीन वर्ष में ही बंद हो गया। लक्ष्मण त्रिपाठी लेखक होने के साथ-साथ प्रजामंडल के सक्रिय नेता भी थे। त्रिपाठी मूल रूप से मध्यप्रदेश के थे। वे छात्रजीवन से ही स्वाधीनता आंदोलन से संबद्ध थे। 1930 में वे नेताजी सुभाषचंद्र बोष के संपर्क में आए। त्रिपाठी ने दक्षिण भारत में हिंदी-प्रचार व हिंदी आंदोलन के मुख्य पत्र 'हिंदी प्रचारक' का 1931 में संपादन किया। उन्होंने 1930 में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की पत्रिका 'सुधा' में भी संपादन कार्य किया था।

प्रदेश की अन्य रियासतों की तरह अलवर में भी पत्र-पत्रिकाएँ 1942 से पूर्व साहित्यिक अधिक रही। प्रदेश में स्वतंत्रता आंदोलन के लिए जनचेतना जाग्रत करने हेतु रियासतों में आजादी के पक्षधर कार्यकर्ताओं ने प्रजामंडलों का गठन प्रारंभ किया। सभी अखबारों में स्वतंत्रता आंदोलन की खबरों को प्रधानता दी जाने लगी। राजनीतिक पत्रों का इतिहास साहित्यिक पत्रों के इतिहास से अलग नहीं है। 1937 ई. में प्रकाशित 'तेज प्रताप' अलवर का पहला समाचार पत्र था। इसके संपादक अवतारचंद जोशी थे और यह 7-8 वर्ष तक प्रकाशित होता रहा। इस पत्र को शासन का सहयोग प्राप्त था और अधिकृत रूप से सरकारी प्रकाशन न होने पर भी सरकार समर्थित प्रकाशन था। मोदी कुंजबिहारीलाल गुप्ता ने 1943 में 'अलवर पत्रिका' का प्रकाशन आरंभ किया। अलवर प्रजामंडल के इतिहास में 'अलवर पत्रिका' का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। आजादी से पूर्व 'अलवर पत्रिका' ही एक मात्र समाचार पत्र था, जो अलवर की जनता की आकांक्षाओं को और स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयत्नों को निर्भीक भाव से प्रकट करता था। आजादी के बाद उसे मत्स्य सरकार का कोप सहना पड़ा और 'अलवर पत्रिका' के अस्तित्व की रक्षा के लिए कुंजबिहारीलाल गुप्ता को अनशन करना पड़ा। पच्चीस वर्ष से भी अधिक समय तक प्रकाशित होते रहने के बाद अब 'अलवर पत्रिका' का अस्तित्व समाप्त हो गया है।

जनवरी 1949 में अलवर काँग्रेस के द्वारा 'स्वतंत्र भारत' का प्रकाशन आरंभ हुआ। भोलानाथ इसके प्रथम संपादक थे। बाद में रामानंद अग्रवाल इसके संपादक बने। अग्रवाल के काँग्रेस छोड़ देने के बाद शांतिस्वरूप डाटा संपादक बने। 'स्वतंत्र भारत' 7-8 वर्ष तक प्रकाशित हुआ। अप्रैल 1945 में ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ ने 'राजस्थान-क्षितिज' नामक मासिक आरंभ किया। यह पहला हिंदी डाइजेस्ट था। राजस्थान प्रगतिशील लेखक संघ ने इसे अपना मुखपत्र बनाया। आर्थिक तंगी के कारण यह अधिक दिन नहीं चल सका और सितंबर 1948 में इसका प्रकाशन बंद करना पड़ा। अलवर से प्रकाशित 'अरावली' का प्रकाशन बंद हो जाने के बाद इसके संपादक रहे बंशीधर मिश्र ने 1948 में 'रजनी' नाम से कहानी पत्रिका का प्रकाशन किया।

सन् 1951 में कृष्णचंद्र खंडेलवाल ने मासिक 'महिला जागृति' का प्रकाशन आरंभ किया और लगभग दो वर्ष तक उसका प्रकाशन किया। 1957 ई. में कमलेश जोशी ने 'निशांत' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन किया, जिसका एक ही अंक प्रकाशित हो सका। 1961 में भागीरथ भार्गव ने 'कविता' वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया। 1961-65 में जुगमंदिर तायल ने ओम प्रभाकर के सहयोग से 'शब्द' नामक अनियतकालीन काव्य पत्रिका आरंभ की। इसके पाँच अंक ही प्रकाशित हो सके। राजर्षि कॉलेज के हिंदी विभाग ने 1962 ई. में 'साहित्यिक' वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। इसके दो अंक प्रकाशित हुए।

1951 में ऐशीलाल विद्यार्थी और हरिनारायण सैनी ने 'किसान साथी' का प्रकाशन आरंभ किया। उसके केवल 5-6 अंक प्रकाशित हुए। कुछ समय बाद प्रकाशित 'अपना देश' साप्ताहिक की भी यही नियति रही। प्रथम आम चुनाव 1952 के अवसर पर रंगबिहारी गुप्त ने 'आगे बढ़ो' नामक साप्ताहिक का प्रकाशन किया। हरिनारायण सैनी ने 1956 ई. में किसान सभा और साम्यवादी दल से अपना संबंध विच्छेद करने के बाद 1956 ई. में स्वतंत्र रूप से 'राजदूत' साप्ताहिक का प्रकाशन किया। साम्यवादी दल ने हारूमल तोलानी के संपादन में 'जनवाद' का प्रकाशन किया। ओमप्रकाश भाटिया के संपादन में 'बौछार' नामक साप्ताहिक भी कई वर्ष तक प्रकाशित होता रहा। 1962 में तीसरे आम चुनाव के अवसर पर कैलाश मोदी और हरिनारायण सैनी ने 'हीरा-मोती' साप्ताहिक का प्रकाशन भी आरंभ किया। उसी समय अलवर से एक दैनिक 'राजस्थान टाइम्स' का प्रकाशन भी आरंभ हुआ। 'पहचान' साप्ताहिक का प्रकाशन भी तीसरे आमचुनाव के समय आरंभ हुआ था।

अलवर शहर से सन् 1957 में 'राजस्थान टाइम्स' दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह पत्र हिंदी में प्रकाशित होता था। वर्ष 1959 में 'इनसाफ' नाम से साप्ताहिक हिंदी पत्र की शुरुआत हुई। अलवर शहर से 1960 में 'जनवाद' साप्ताहिक का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह पत्र भी हिंदी में छापा जाता था। अलवर से 1959 में ही 'राजदूत' नाम से साप्ताहिक का प्रकाशन एक शिक्षण संस्था द्वारा शुरू किया गया। अलवर से समाचार पत्रों के संपादन में महिला पत्रकार भी पीछे नहीं रही। यहाँ से वर्ष 1990 में अंजना अनिल ने अपना दैनिक समाचार पत्र 'अलवर विचार टाइम्स' का संपादन एवं प्रकाशन प्रारंभ किया। अंजना अनिल मासिक साहित्यिक पत्रिका 'जगमग द्विप ज्योति' की भी प्रारंभिक संपादिका रहीं। इसके बाद सुमती कुमार जैन ने दिसंबर 1986 में 'जगमग द्विप ज्योति' पत्रिका का प्रकाशन एवं संपादन सँभाला। अलवर से मंजुलता खीची ने पाक्षिक 'महिला टुडे' का संपादन किया।

सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, अलवर से प्राप्त जानकारी के अनुसार वर्तमान में अलवर से प्रादेशिक स्तर के 'राजस्थान पत्रिका' तथा 'दैनिक भास्कर' समाचार पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। इनके अलावा 'अरुणप्रभा', 'राजस्थान टाइम्स', 'सांध्यज्योति दर्पण', 'देश की उड़ान', 'झरोखा' तथा 'राजस्थान की पुकार' दैनिक समाचार पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। इसी प्रकार जिले से नौ पाक्षिक समाचार पत्र छप रहे हैं। पाक्षिक पत्रों में 'बल की आवाज', 'महिला टुडे', 'निराला अलवर', 'राजस्थान लोकवाणी', 'कमर तोड़', 'अशंक', 'धरती का दर्द', 'प्रमाणित' तथा 'पॉपुलर विचार

टाइम्स' प्रमुख हैं। साप्ताहिक पत्रों में 'पब्लिक और प्रकाशन', 'सनील' तथा 'अलवर क्राउन' प्रकाशित हो रहे हैं। वहीं आरएनआई की वेबसाइट के अनुसार अलवर से वर्तमान में 51 पत्र-पत्रिकाएँ रजिस्टर्ड हैं। इनमें 15 दैनिक, 01 दैनिक सांध्य कालीन, 12 साप्ताहिक, 10 पाक्षिक, 12 मासिक और एक त्रैमासिक मासिक पत्र शामिल हैं (आरएनआई, 2024)।

**भरतपुर की पत्रकारिता का इतिहास**

पत्रकारिता के प्रारंभिक इतिहास के क्रम में तत्कालीन भरतपुर रियासत अग्रणी रही है। भरतपुर के तत्कालीन नरेश के कार्यकाल में 1849 में शासन की ओर से उर्दू एवं हिंदी में द्विभाषी मासिक समाचार पत्र 'मजहरूल सरूर' प्रकाशित हुआ। इस पत्र को राजस्थान के पहले समाचार पत्र का गौरव प्राप्त है। इस अखबार में दो कॉलम होते थे। एक कॉलम देवनागरी लिपि और दूसरा कॉलम उर्दू में छापा जाता था। "फ्रेंच लेखक तासी ने अपने 'डिसकोर्सेज' में इसका उल्लेख किया है। अतः इस पत्र के स्वरूप के बारे में प्रामाणिक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। इसके बाद के सात वर्ष की अवधि में राजस्थान से किसी पत्र के प्रकाशित होने का कहीं भी कोई उल्लेख उपलब्ध नहीं होता" (सत्यनारायण, 2018, पृष्ठ 122)।

वरिष्ठ पत्रकार गुलाब बत्रा के अनुसार, "भरतपुर गोलपुरा में जन्मे जगन्नाथ अधिकारी ने लाहौर से विशाखा परीक्षा उत्तीर्ण की। वे बड़ौदा से प्रकाशित मासिक 'साधु' के संपादक रहे। वर्ष 1913 में अखिल भारतीय वैष्णव महासभा के प्रधानमंत्री बने और श्री वैष्णव एवं 'वैदिक सर्वस्व' का संपादन-प्रकाशन किया। उनके निर्देशन में भरतपुर राज्य का 'भारतीय' नामक पत्र निकला। उनके शिष्य सत्यभक्त, शंकरलाल वर्मा, निरंजन शर्मा ने अपनी लेखनी से स्वाधीनता आंदोलन की ज्योति को प्रखर किया। मूलतः ग्वालियर निवासी वर्मा की कर्मभूमि भरतपुर रही। वर्मा ने 'प्रताप' के लिए राजकीय अत्याचारों की खबरें भेजीं। निरंजन ने 'वैभव' तथा 'वेंकटेश्वर समाचार' मुंबई का संपादन किया। जगन्नाथ अधिकारी के प्रयास से भरतपुर में 1912 में हिंदी साहित्य समिति की स्थापना हुई। सन् 1933 में मुंबई के निकट जोगेश्वरी गुफा में उनका निधन हुआ।"

पत्रकार सत्यभक्त का जन्म 11 अप्रैल, 1897 को हुआ। सत्यभक्त ने पंडित सुंदरलाल के समाचार पत्र 'भक्ति' से पत्रकारिता की शुरुआत की। इसके अलावा 'अभ्युदय चाँद' एवं 'प्रणवीर' के लिए कार्य किया। सत्यभक्त का असली नाम जाखनलाल गुप्ता था। क्रांतिकारी गतिविधियों के चलते उन्हें कई नौकरियों से हाथ धोना पड़ा। सत्यभक्त कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में थे। मथुरा में 31 दिसंबर, 1985 को उनका निधन हुआ। तब वे गायत्री परिवार से जुड़ गए थे। स्वतंत्रता सेनानी संवाल प्रसाद चतुर्वेदी ने 1948 में साप्ताहिक 'नवयुग संदेश' और 'कर्मभूमि' समाचार पत्र का संपादन किया। इससे पहले उन्होंने इंदौर में 'मध्यभारत' साप्ताहिक पत्र का 1933 से 1938 तक संपादन किया। 26 दिसंबर, 1971 में उनका निधन हुआ। बाद में उनके पुत्र आदित्येंद्र चतुर्वेदी भी राजस्थान के मूर्धन्य पत्रकार रहे। भरतपुर के यशस्वी पत्रकारों में काशीनाथ गुप्त का नाम भी शामिल है। स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उन्होंने कई बार जेल यात्राएँ कीं। कुम्हेर से विधायक बने। वर्ष 1945 में 2 अक्टूबर से प्रकाशित 'नवयुग संदेश' साप्ताहिक के प्रकाशन का दायित्व लिया। बाद में अपनी जिम्मेदारी मोहनलाल मधुकर को सौंपी।

क्रांतिकारी पत्रकार ठाकुरदास देशराज का जन्म भरतपुर के जगिना गाँव में हुआ था। देशराज का मूल नाम घासीराम था। इनका जन्म श्रावण शुक्ल एकादशी संवत् 1952 में हुआ था। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, आर्यसमाजी, भरतपुर राज्य की निर्वाचित धारा सभा ब्रजभाषा प्रतिनिधि सभा के वाइस प्रेसिडेंट तथा लोकप्रिय मंत्रिमंडल में राजस्व मंत्री रहे। लौह लेखनी के धनी देशराज का 1920 में शाहजहाँपुर से प्रकाशित 'विद्या' नामक मासिक पत्र में पहला लेख छपा। वर्ष 1925 में वे आगरा से प्रकाशित साप्ताहिक 'जाटवीर' के सहकारी संपादक बने। उन्हीं दिनों 'विधवा संसार' मासिक का संपादन किया। वे 1928 में भरतपुर लौट आए। क्रांतिकारी विजय सिंह पथिक ने 1932 में उन्हें अजमेर में 'राजस्थान संदेश' के संपादन का दायित्व सौंपा। ठाकुर देशराज ने आगरा से 1941 में 'जाट जगत्' समाचार शुरू किया, जो अधिक नहीं चला। प्रथम आम चुनाव के समय 1952 में उन्होंने साप्ताहिक 'किसान संदेश' निकाला।

भरतपुर जिले में स्वाधीनता के पश्चात् साप्ताहिक पत्रों के प्रकाशन का विस्तार हुआ। स्वाधीनता से दो वर्ष पहले अक्टूबर 1945 को 'नवयुग संदेश' का प्रकाशन आरंभ हुआ, जो राष्ट्रीय विचार का प्रेरक था। युगल किशोर चतुर्वेदी, श्यामल प्रसाद चतुर्वेदी, काशीनाथ गुप्ता और आखिरी चरण में मोहनलाल मधुकर ने संपादक के रूप में यह मशाल जलाए रखी। इसके विशेषांक संग्रहणीय रहे। दिसंबर 2014 में मधुकर के निधन के बाद इस पत्र का प्रकाशन बंद हो गया। पत्रकार तुलसीराम चतुर्वेदी ने काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च के पब्लिकेशन डिविजन में 'धरती के लाल' पत्रिका का प्रकाशन किया।

वरिष्ठ पत्रकार गुलाब बत्रा की अप्रकाशित डायरी के अनुसार, "राजस्थान के स्वतंत्रता सेनानी पत्रकार युगल किशोर चतुर्वेदी का जन्म 7 नवंबर, 1904 को सोंख मथुरा में हुआ। पालन-पोषण तथा प्रारंभिक शिक्षा भरतपुर में हुई। वे सन् 1935 से 46 तक 'जागृति' मथुरा, 1942 से 45 तक 'नवयुग संदेश' भरतपुर तथा 1953 से 1957 तक जयपुर में 'राष्ट्रदूत' के संपादक रहे। युगल किशोर चतुर्वेदी मत्स्य संघ में मंत्री रहे। वे 1957 तथा 1962 में विधायक बने तथा पीडब्ल्यूडी मंत्री रहे। भरतपुर में जन्मे चंद्रभान भारद्वाज ने 'लालिमा' (भरतपुर- जोधपुर) 1951 का प्रकाशन व संपादन किया।

स्वाधीनता के पश्चात् पहले दशक में भरतपुर जिले में पत्रकारिता की अलख जगाने में अग्रणी मोहनलाल मधुकर का घैरमुई गाँव में 20 नवंबर, 1935 को जन्म हुआ। मधुकर आदर्श शिक्षक, समर्पित पत्रकार और हिंदी ब्रजभाषा के साहित्यकार के रूप में जन-जन में प्रतिष्ठित हुए। वस्तुतः पत्रकार जगत् के दैदीप्यमान नक्षत्र थे। उन्होंने 'नवभारत टाइम्स' दिल्ली के लिए 1956 से 58 एवं 1966 से 1980, 'अमर उजाला' आगरा के लिए 1956 से 1958, 'सैनिक' आगरा के लिए 1970 से 71 तक, 'राष्ट्रदूत' जयपुर के लिए 1971 से 73, 'राजस्थान पत्रिका' के लिए 1973 से 74 तक और 'दैनिक अधिकार' जयपुर के लिए 1981 से 82 तक भरतपुर से संवाद प्रेषण का काम किया। उन्होंने 2 अक्टूबर, 1945 से प्रकाशित साप्ताहिक 'नवयुग संदेश' का 4 फरवरी, 1997 से मृत्युपर्यंत यानी कि 27 दिसंबर, 2014 तक संपादन एवं प्रकाशन किया।

भरतपुर में 1935 में जन्में आचार्य शक्ति त्रिवेदी ने पत्रकारिता में एक मुकाम हासिल किया। कुम्हेर के भगवान दास मारवाड़ी के साप्ताहिक पत्र 'जनता' में उनकी लिखी कविता 'चौराहे का नल' पाठकों ने पसंद की। वे 1951 में साप्ताहिक 'आवाज' तथा 'वीर सैनिक' के भरतपुर संस्करण

से जुड़े। ओजस्वी वक्ता सूरजभान गुप्ता मजदूर आंदोलन में अग्रणी रहे। उन्होंने साप्ताहिक 'लाल निशान' के माध्यम से आवाज बुलंद की। उनकी हत्या के पश्चात् अनुज ब्रजकिशोर गुप्ता और पुत्र विष्णु गुप्ता ने कई वर्षों तक इसका प्रकाशन किया। कामरेड सोहनलाल शर्मा ने 'रेड इंडिया' अखबार निकाला। स्वाधीनता के पश्चात् सहकारिता के आधार पर गठित बहुभाषी संवाद समिति 'हिंदुस्थान समाचार' ने राजस्थान की पत्रकारिता में विशेष योगदान दिया। जिला एवं तहसील मुख्यालय तक इसके संवाददाता समाचार प्रेषण करते थे। भरतपुर से ही गुलाब बत्रा नवगठिज न्यूज एजेंसी समाचार भारती के पहले संवाददाता (1968-1969) बने। आगे चलकर वे 'हिंदुस्थान समाचार' से जुड़े। बाद में 'यूनीवार्ता' में समाचार संपादक पद से सेवानिवृत्त हुए।

कन्हैयालाल शर्मा का पत्र 'वीर सैनिक' अत्यंत चर्चित था। अपनी लेखनी और समाचारों के लिए संघर्षरत इस पत्रकार के लिए कहावत थी–'कह कन्हैया रेल में, कह कन्हैया जेल में'। इस पत्र के मुखपृष्ठ पर एक दोहा अंकित होता था–'पहले घी से सब्जी बनती थी, अब सब्जी से घी बनता है, पहले जननी बच्चा जनती थी, अब सारा आलम जनता है'। कामाँ से जगतराम तरघोतरा (जुरहरा निवासी) का साप्ताहिक 'चौरासी खंबा' अत्यंत लोकप्रिय पत्र था। प्रताप करौला के साप्ताहिक पत्र का शीर्षक था 'मशहूर'। 'दैनिक पूर्व राजस्थान' भरतपुर का प्रथम टैबुलाइट समाचार पत्र था। उन दिनों दिल्ली और जयपुर के समाचार पत्रों के डाक संस्करण भरतपुर आते थे। भारत के समाचार पत्र पंजीयक कार्यालय की वेबसाइट के अनुसार वर्तमान में भरतपुर जिले से 30 समाचार पत्र-पत्रिकाओं के टाइटल रजिस्टर्ड हैं। इनमें दैनिक 09, साप्ताहिक 03, पाक्षिक 10, मासिक 07 और एक वार्षिक पत्र शामिल हैं (आरएनआई, 2024)।

सामाजिक कार्यकर्ता नूर मोहम्मद ने वर्ष 2012 में अलवर से 'सलामे मेवात' का प्रकाशन आरंभ किया। अल्प समय में यह समाचार पत्र मेवात का लोकप्रिय समाचार पत्र बन गया। पहले इसका प्रकाशन मासिक होता था, बाद में इसे पाक्षिक कर दिया गया। इसके संपादक नूर मोहम्मद थे। नूर मोहम्मद बताते हैं—"समाचार पत्र की पहुँच और लोकप्रियता पूरे मेवात में थी। चौपालों पर इसे बड़े ही चाव से पढ़ा जाता था। इसकी दस हजार कापियाँ छपती थीं। पाँच हजार से अधिक इसके आजीवन सदस्य थे। इसकी सामग्री भी उच्चकोटि की होती थी। विशेषकर मेवात क्षेत्र में भाईचारा और सांप्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने वाले समाचारों को प्रमुखता दी जाती थी। अलवर, भरतपुर और हरियाणा के क्षेत्र में यह जाता था। समाचारों द्वारा मेवात क्षेत्र में अकल्पनीय सकारात्मक बदलाव देखने को मिले। इसके माध्यम से सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक धरोहरों और मेवात की शौर्य और बलिदान की कहानियों को एक मंच प्रदान करने की कोशिश की गई। नये बदलाव को मेवात के लोगों तक पहुँचाने का काम इस समाचार पत्र ने किया।" इस तरह के समाचार पत्रों की आवश्यकता वर्तमान में मेवात क्षेत्र में है।

वरिष्ठ पत्रकार हरिशंकर गोयल कहते हैं, "आजकल बड़े समाचार पत्रों के अतिस्थानीय संस्करण होने के कारण राज्य के समाचार एक स्थान पर नहीं मिल पाते हैं। अलवर में भास्कर और पत्रिका के चार-चार संस्करण हैं। ऐसे में कई बार मेवात के समाचार पढ़ने को ही नहीं मिलते हैं। अब मेवात में चीजें काफी तेजी से बदल रही हैं। कट्टरता बढ़ी है। सांस्कृतिक ह्रास भी हो रहा है। मेवाती बोली घट गई है। नई पीढ़ी मेवाती नहीं बोलती है। पहनावे में बहुत परिवर्तन आया है। महिलाएँ अब पठानी सूट पहनने लगी हैं। युवक पैंट-शर्ट पहनने लगे हैं। पहले मेवाती साहित्य खूब लिखा और पढ़ा गया, लेकिन अब यह परंपरा टूटती जा रही है। अब कोई लेखन नहीं हो रहा है। यानी पिछले सात-आठ वर्षों में कोई उल्लेखनीय लेखन नहीं हुआ है। समाचार पत्रों में अपराध और राजनीतिक समाचारों की अधिकता रहती है। ऐसे में मेवात में सौहार्द बढ़ाने की दिशा में पत्रकारों को काम करने की आवश्यकता है। इसके लिए मेवात के गौरवशाली इतिहास और साझा संस्कृति को लेकर आगे बढ़ना होगा।"

## निष्कर्ष

मेवात में पत्रकारिता ने सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अलवर-भरतपुर से प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं ने मेवात के साहित्य और साझा संस्कृति का सरंक्षण कर लोकशिक्षण और जनचेतना का निर्माण किया है। कालांतर में इसका क्षरण हो रहा है। देश विरोधी ताकतें समाज को मजहबी कट्टरता और संकीर्णता की खाई में धकेल रही हैं। ऐसे में अंचल की लोक संस्कृति के सरंक्षण व आधुनिक शिक्षा के प्रसार का गुरुत्तर दायित्व पत्रकारिता पर है। अलवर-भरतपुर की पत्रकारिता के उत्कृष्ट इतिहास की लौ ठेठ मेवात के गाँवों तक भी पहुँचानी होगी। इस समय समाचार पत्रों की मेवात के दूरदराज के इलाकों तक बहुत कम पहुँच है। लेकिन इस कमी को परंपरागत मीडिया के साथ आधुनिक न्यू मीडिया के जरिये पूरा किया जा सकता है।

## संदर्भ


गोयल, एच. (2024). वरिष्ठ पत्रकार. साक्षात्कार-वार्ता, अलवर.

नागरवाल, एस. (2022). राजस्थान में समाचार पत्रों के विकास का इतिहास. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन, मॉडर्न मैनेजमेंट, एप्लाइड साइंसेज & सोशल साइंसेज, वॉल्यूम 04. जयपुर : INSPIRA.

प्रभाकर, एम. (1981). राजस्थान में हिंदी पत्रकारिता. जयपुर : पंचशील प्रकाशन.

पुरोहित पी. (2007). राजस्थान में स्वतंत्रता संग्रामकालीन पत्रकारिता. जयपुर : राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी.

बत्रा, जी. (2024). वरिष्ठ पत्रकार. साक्षात्कार- वार्ता, भरतपुर, जयपुर.

मोहम्मद, एन. (2024). निदेशक, अलवर मेवात इंस्टिट्यूट ऑफ एजुकेशन एंड डवलपमेंट. साक्षात्कार, अलवर.

यादव, पी. (2022). हिंदी पत्रकारिता. कानपुर : समता प्रकाशन.

आरएनआई. (2024). भारत के समाचारपत्रों के पंजीयक की वेबसाइट https://www.rni.nic.in/registerdtitle_search/registeredtitle_ser.aspx से दिनांक 20 जुलाई, 2024 को पुनःप्राप्त.

विद्यालंकार, एस. (2016). आर्यसमाज का इतिहास. दिल्ली : सरस्वती सदन.

सत्यनारायण. (2018). राजस्थान में हिंदी पत्रकारिता और जनचेतना. कोटा : कोटा विश्वविद्यालय में प्रस्तुत शोध प्रबंध.

सिंह, एन. & अदर्स. (2008). 1857 और जनप्रतिरोध. दिल्ली : नवचेतना प्रकाशन.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 69-76, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# वेब सीरीज में प्रस्तुत कलुषित भाषा का अंतर्वस्तु विश्लेषण

मनोज पटेल[1], डॉ. शिवेंद्र मिश्रा[2] और डॉ. गजेंद्र अवास्या[3]

**सारांश**

प्रस्तुत अध्ययन वेब सीरीज की विषयवस्तु पर केंद्रित है। इसमें दो सबसे अधिक देखे जाने वाली एवं फिल्म फेयर द्वारा सर्वश्रेष्ठ वेब सीरीज से सम्मानित 'पाताल लोक' एवं 'द फैमिली मैन-2' में प्रदर्शित कलुषित भाषा के दृश्यों का अंतर्वस्तु विश्लेषण कर अध्ययन किया गया है। वर्तमान में सिनेमा एवं टेलीविजन मनोरंजन के विकल्प के रूप में ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म दर्शकों के मध्य स्थापित हो चुका है, जिसमें वेब सीरीज प्रारूप को विशेष रूप से पसंद किया जा रहा है। दर्शकों के पास अब अलग-अलग ओटीटी प्लेटफार्मों पर प्रसारित विभिन्न शैलियों की वेब सीरीज को देखने की स्वतंत्रता है। उनमें किसी भी प्रकार का ठोस नियमन न होने के कारण आपत्तिजनक/अश्लील विषयवस्तु को सम्मिलित किया जा रहा है। वहीं इस विषयवस्तु को वेब सीरीज में सामान्य रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसका समाज पर गहरा प्रभाव होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में वेब सीरीज में प्रसारित कलुषित भाषा के उपयोग से संबंधित विषयवस्तु एवं भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित दृश्यों से उसका तुलनात्मक अध्ययन कर विश्लेषण किया गया है।

**संकेत शब्द :** वेब सीरीज, पाताल लोक, द फैमली मैन-2, कलुषित भाषा, आपत्तिजनक विषयवस्तु, ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म

**प्रस्तावना**

भारत में विगत कुछ वर्षों से ऑनलाइन मनोरंजन उद्योग ने बड़ी वृद्धि दर्ज की है। इसका सबसे बड़ा कारण भारतीय दर्शकों की बदलती जीवनशैली, कंटेंट के प्रकार में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन एवं विभिन्न ऑनलाइन वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्मों की शुरुआत है, जिन पर कंटेंट को प्रसारित किया जाता है। मोबाइल कनेक्शन और ब्रॉडबैंड सेवाओं की उपलब्धता के रूप में तेज और सस्ती इंटरनेट सेवाओं की शुरुआत के साथ ऑनलाइन कंटेंट तक दर्शक की पहुँच में बड़ी वृद्धि हुई है, विशेषकर ऑनलाइन कंटेंट को देखने वाले लोगों की संख्या और उसे देखने के लिए व्यतीत होने वाले समय में (फिक्की, 2020)। ओटीटी एक एप्लीकेशन है, जिसे इंटरनेट के माध्यम से कंटेंट वितरण के लिए उपयोग किया जाता है। इसमें उपयोगकर्ता को केबल, टेलीविजन सदस्यता या सेटेलाइट की आवश्यकता नहीं होती है। पारंपरिक कंटेंट बाजार को पार करने में सामग्री अनुकूलन सबसे महत्त्वपूर्ण प्रेरक शक्ति है। यह डेटा-संचालित कार्यप्रणाली का उपयोग करके कंटेंट विकसित करता है। हाल के वर्षों में वीडियो और ऑडियो कंटेंट की उपलब्धता में अत्यधिक वृद्धि देखी गई है। केपीएमजी सर्वेक्षण के अनुसार लॉकडाउन के दौरान ओवर-द-टॉप (ओटीटी) और गेमिंग ने भौगोलिक और सामाजिक आर्थिक श्रेणियों में बेहतर प्रदर्शन किया। चार हजार करोड़ रुपये से अधिक बाजार के साथ भारत ओटीटी के लिए दुनिया का दसवाँ सबसे बड़ा बाजार है। वर्ष 2022 में अनुमान लगाया गया था कि वर्ष 2023 तक दुनियाभर में ओटीटी कंटेंट इंडस्ट्री 14 प्रतिशत सीएजीआर से बढ़ते हुए 87 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुँच जाएगी (फॉक्स, 2022)।

इंटरनेट के माध्यम से वीडियो स्ट्रीमिंग सर्विस प्लेटफॉर्मों के नए तकनीकी बदलाव ने सिनेमा देखने का एक अलग अनुभव दर्शकों को दिया है। सिनेमा और धारावाहिक शो देखने का पारंपरिक माध्यम सदैव थिएटर एवं टेलीविजन प्रसारण रहा है, लेकिन प्रौद्योगिकी के विकास से ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म ने लोकप्रियता अर्जित की है। ऑनलाइन स्ट्रीमिंग या ओवर-द-टॉप (ओटीटी) सेवाओं के माध्यम से फिल्म या टीवी सीरीज देखना अब अधिक सुविधाजनक बन गया है। मोबाइल एप्लीकेशन पर इंटरनेट के माध्यम से वीडियो स्ट्रीमिंग करना ओवर-द-टॉप प्लेटफार्म की अवधारणा है। इंटरनेट की मदद से स्मार्टफोन, स्मार्ट टीवी, टैबलेट, डेस्कटॉप कंप्यूटर, लैपटॉप आदि किसी भी उपकरण का प्रयोग करते हुए दर्शक वीडियो तक पहुँच सकते हैं। पारंपरिक वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म ऑडियो-वीडियो विषयवस्तु को दर्शकों के लिए उपलब्ध कराता है, जो सेंसरशिप या बॉक्स ऑफिस द्वारा प्रतिबंधित नहीं हैं। ओटीटी एक स्थिर इंटरनेट के साथ दर्शकों को बेहतर ध्वनि और दृश्य गुणवत्ता के साथ विभिन्न शैली की वीडियो विषयवस्तु देखने का अनुभव देता है। सहज और सुलभ इंटरनेट ब्रॉडबैंड सेवा और स्मार्ट मोबाइल के बाजार, नियमन का अभाव और कोविड महामारी के दौरान हुए लॉकडाउन ने वीडियो स्ट्रीमिंग सर्विस को मनोरंजन के एक सशक्त माध्यम के रूप में स्थापित कर दिया है। इसकी सुलभ उपलब्धता और इसमें प्रसारित मूल हिंदी विषयवस्तु इसकी लोकप्रियता का एक बड़ा कारण है।

वेब सीरीज में एक कहानी को धारावाहिक रूप में प्रस्तुत कर डिजिटल माध्यम से ओटीटी प्लेटफॉर्म्स द्वारा प्रसारित किया जाता है (हिंखोज, 2024)। वर्तमान में वेब सीरीज में उपयोग किए जाने वाले संवाद, पटकथा और दृश्यांकन पारंपरिक सिनेमा और टेलीविजन की तुलना में अधिक हिंसात्मक और नकरात्मक हैं। ओटीटी प्लेटफॉर्मों पर विगत दो से तीन वर्षों में बड़ी संख्या में विभिन्न शैली की वेब सीरीज जैसे क्राइम, हॉरर, कॉमेडी इत्यादि के रूप में प्रसारित की गई हैं। इनमें ड्रामा और क्राइम आधारित वेब सीरीज को दर्शकों द्वारा सबसे ज्यादा पसंद किया गया है (एडिटर्स, 2023)। नियमन के अभाव में इन वेब सीरीज में हिंसा, आपत्तिजनक भाषा

[1]प्रोड्यूसर, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल. ईमेल : manoj@mcu.ac.in
[2]सहायक प्राध्यापक, जेएलयू, भोपाल. ईमेल : shivendra.mishra@jlu.edu.in
[3]सहायक प्राध्यापक, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल. ईमेल : picasso.gajendra@gmail.com

और अनुचित कामुकता का अत्यधिक उपयोग हो रहा है। 'हिंसा का पूर्ण नग्न, वीभत्सतम स्वरूप और बात-बात पर अपशब्द अब विरक्ति नहीं भरता, आनंद देता है'—सेक्रेड गेम्स के बाद मिर्जापुर, द फैमिली मैन, पाताल लोक जैसी वेब सीरीज की महासफलता ने इस कथन को सत्य साबित कर दिया है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता ने धार्मिक भावनाओं को भड़काने वाले, जाति/लिंग पर कटाक्ष करते दृश्यों को भी इन वेब सीरीज में शामिल करने की स्वतंत्रता प्रदान कर दी है, जिन्हें 'तांडव', 'पाताल लोक', 'लीला' इत्यादि वेब सीरीज में प्रमुखता से प्रदर्शित किया गया है।

**भाषा का प्रभाव**

भाषा वह माध्यम है जिसकी सहायता से सूचना संप्रेषित की जाती है। भाषा का चुनाव इस बात पर प्रभाव डाल सकता है कि श्रोता संदेश को कितनी अच्छी तरह समझते हैं। स्पष्ट और संक्षिप्त भाषा का उपयोग करने से दर्शकों के लिए सामग्री को समझना आसान हो जाता है, जबकि जटिल या शब्दजाल से भरी भाषा भ्रम पैदा कर सकती है। साथ ही इस्तेमाल की गई भाषा इस बात को प्रभावित कर सकती है कि श्रोता संदेश के साथ कितने जुड़े हुए हैं। आकर्षक और सम्मोहक भाषा दर्शकों का ध्यान आकर्षित कर सकती है और सामग्री में उनकी रुचि बनाए रख सकती है। यह विज्ञापन, कहानी सुनाने और सार्वजनिक भाषण जैसे क्षेत्रों में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। भाषा में दर्शकों में भावनाएँ जगाने की क्षमता होती है। अलग-अलग शब्द, स्वर और शैलियाँ उत्साह और खुशी से लेकर क्रोध और उदासी तक, भावनात्मक प्रतिक्रियाओं की एक विस्तृत शृंखला उत्पन्न कर सकती हैं। वेब सीरीज में उपयोग की जाने वाली कलुषित भाषा का भी भावनात्मक प्रभाव दर्शकों पर हो सकता है। पटकथा लेखक अक्सर अपने दर्शकों के साथ भावनात्मक संबंध बनाने के लिए स्थानीय भाषा व शब्दों का उपयोग करते हैं। विविध श्रोताओं के साथ संवाद करते समय, इस्तेमाल की जाने वाली भाषा का ध्यान रखना आवश्यक है। कुछ दर्शकों के लिए अश्लील भाषा अत्यधिक आक्रामक हो सकती है, जिससे संभावित रूप से असुविधा हो सकती है, सदमा लग सकता है या गुस्सा आ सकता है। यह दर्शकों के एक हिस्से को अलग-थलग कर सकता है; विशेषकर वे, जिन्हें ऐसी भाषा नैतिक रूप से आपत्तिजनक लगती है। भाषा सांस्कृतिक अर्थ और संवेदनशीलता को वहन कर सकती है। सांस्कृतिक रूप से असंवेदनशील या आपत्तिजनक भाषा का प्रयोग दर्शकों को अलग-थलग या अपमानित कर सकता है, जबकि सांस्कृतिक जागरूकता और सम्मान का प्रदर्शन संचार को बढ़ा सकता है। कलुषित भाषा का प्रयोग लक्षित दर्शकों को सीमित कर सकता है। अत्यधिक अश्लीलता वाली सामग्री बच्चों या कुछ जनसांख्यिकी के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती, जो वेब शृंखला की सामग्री पहुँच और अपील को प्रभावित कर सकती है। साथ ही अश्लील भाषा का उपयोग वेब शृंखला, इसके रचनाकारों और इसे होस्ट करने वाले प्लेटफार्मों के बारे में सार्वजनिक धारणा को प्रभावित कर सकता है। इसे विवादास्पद या अनुचित के रूप में देखा जा सकता है, जिससे इसमें शामिल लोगों की प्रतिष्ठा प्रभावित हो सकती है।

**संवाद**

सिनेमा के जन्म के समय से ही यह कहा जाता रहा है कि फिल्म एक दृश्य माध्यम है। माना जाता है कि फिल्मों को अपनी कहानियों को दृश्य रूप में बताना चाहिए। संपादन, फोकस, प्रकाश व्यवस्था, कैमरा मूवमेंट और विशेष प्रभाव वास्तव में मायने रखते हैं। दूसरी ओर संवाद केवल एक ऐसा तत्त्व है, जिसका हमें सृजन करना है। संवाद एक या अधिक पात्रों के बीच शब्दों का लिखित या मौखिक आदान-प्रदान है। संवाद के विभिन्न उपयोग हैं। हालाँकि यह अक्सर कथानक को कहानी आगे बढ़ाने और चरित्र निर्माण के उद्देश्यों के लिए होता है। उदाहरण के लिए यह दर्शकों को विभिन्न चरित्रों, उनके इतिहास, भावनाओं और दृष्टिकोण के बारे में अधिक जानकारी देता है। सिनेमा में संवाद काल्पनिक पात्रों के बीच शब्दों का आदान-प्रदान है। यह संवाद को अन्य प्रकार की सिनेमाई भाषा से अलग करता है; जैसे वॉयस-ओवर नैरेशन, आंतरिक एकालाप (Internal Monologue); या वृत्तचित्र साक्षात्कार, जिनकी अलग-अलग विशेषताएँ हैं। प्रत्येक फिल्म विशिष्ट रूप से अलग है और विशिष्ट शैली में प्रदर्शित की जाती है, इसीलिए स्क्रिप्ट संवाद के लिए अलग-अलग आवश्यकताएँ और अपेक्षाएँ होती हैं। संवाद फिल्म का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा है, क्योंकि यह फिल्म को ठोस रूप से प्रस्तुत करता है। अच्छे संवाद बेहतर चरित्रों का निर्माण करते हैं, वहीं संवाद में कलुषित भाषा के प्रयोग से दर्शकों पर विपरीत प्रभाव की संभावना रहती है। अतः प्रस्तुत शोध में वेब सीरीज में प्रसारित कलुषित भाषा के उपयोग से संबंधित विषयवस्तु एवं भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित दृश्यों से उसका तुलानात्मक अध्ययन कर विश्लेषण कार्य किया गया है।

**अध्ययन की प्रासंगिकता**

भारतीय वेब सीरीज की पटकथा ताजा व बोल्ड है और शहरी, तकनीक-प्रेमी भारतीय युवाओं के लिए तैयार की गई है। ये वेब सीरीज चरित्रों के आपत्तिजनक दृश्यों का प्रसारण एवं उनकी कलुषित भाषा-शैली को एक उदार रूप में प्रदर्शित कर रही हैं, जिसे वास्तविकता के समीप नहीं माना जा सकता। हालाँकि इन दृश्यों के सामान्यीकरण से शहरी समाज एवं युवाओं के काफी हद तक प्रभावित होने की संभावना रहती है। इनमें शहरी चित्रण अधिक होता है, जिनकी भाषा हिंदी और अँग्रेजी का मिश्रण है। प्रस्तुत अध्ययन में 2020 & 2021 में बेस्ट (ओरिजिनल) वेब सीरीज से सम्मानित लोकप्रिय वेब सीरीज 'पाताल लोक' एवं 'द फैमली मैन-2' में सम्मिलित कलुषित भाषा के उपयोग एवं उससे संबंधित दृश्यों का अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया है। साथ ही भारतीय मूल्यों से संबंधित दृश्यों से तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है।

**साहित्य समीक्षा**

भाव्या नंदा, मोनिका थोंगम, हर्षिता गोयल 'इंपैक्ट ऑफ ओटीटी प्लेटफॉर्म्स ऑन ह्यूमन सोसाइटी : अ कॉम्प्रेहेंसिव रिव्यु' (नंदा, 2024) में समाज पर ओटीटी प्लेटफार्मों के सभी तरह के प्रतिकूल प्रभावों की चर्चा करती है। साथ ही उनके सामाजिक, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक हानिकारक प्रभावों पर जोर देती है। समाज पर ओटीटी प्लेटफार्मों के प्रभाव के बारे में 20 से अधिक शोध अध्ययनों में वर्तमान समाज का हवाला दिया गया, जो एक व्यवस्थित समीक्षा है। इस शोध में कहा गया है कि ओटीटी प्लेटफार्मों का समग्र रूप से समाज पर महत्त्वपूर्ण और वैविध्य भरा प्रभाव पड़ा है। साथ ही यह रोजमर्रा की जिंदगी के कई पहलुओं को प्रभावित कर रहा है, जैसे हिंसा और आपराधिक गतिविधि मानसिक

और शारीरिक स्वास्थ्य। ओटीटी प्लेटफॉर्म के माध्यम से स्क्रीन देखने के समय में भी वृद्धि हो रही है, जिससे स्क्रीन लत के मामलों की संख्या बढ़ सकती है।

डॉ. वर्षा बिहाड़े और डॉ. मृत्युंजय कुमार ने अपने अध्ययन 'कस्टमर प्रिफरेंस टुवर्ड्स ओटीटी प्लेटफार्म इन इंडिया' (बिहाड़े, 2023) में ओटीटी प्लेटफॉर्मों के उपयोगकर्ताओं के प्रोफाइल और वरीयताओं के बारे में बात की है। शोध में आयु और मासिक पारिवारिक आय को निर्भर चर के खिलाफ प्रतिगामी डेटा के विश्लेषण के लिए स्वतंत्र मापदंडों के रूप में शामिल किया गया है; जैसे—ओटीटी प्लेटफार्मों का उद्देश्य, प्रति माह स्क्रीनिंग भुगतान की संख्या, सामग्री तक पहुँचने के लिए उपयोग किया जाने वाला मंच, उपभोग के कारण और पर्याप्त के लिए वरीयता सामग्री में सहसंबंध। शोध का निष्कर्ष है कि ओटीटी प्लेटफॉर्मों के लिए ऊर्जा का मुख्य स्रोत इंटरनेट है, क्योंकि जियो की वजह से कई टेलीकॉम कंपनियाँ भारत में अपने डेटाबेस प्लान के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए संघर्ष कर रही हैं, लेकिन ओटीटी प्लेटफॉर्मों की लागत समान बनी हुई है। सबसे बड़ा मुद्दा यह है कि नई पीढ़ी के लिए अधिक वीडियो विषयवस्तु का उत्पादन करने के लिए हर ओटीटी प्लेटफॉर्म के पास संभवतः वित्तीय क्षमता नहीं है, खासकर नए और छोटे ओटीटी प्लेटफॉर्म के लिए। वीडियो ऑन डिमांड एवं विदेशी विषयवस्तु के कारण दर्शक ओटीटी प्लेटफार्मों की ओर अधिक आकर्षित होता है।

कृतिका शर्मा और पल्लवी मिश्रा ने अपने अध्ययन 'एक्सेसिबिलिटी ऑफ द वेब सीरीज थ्रू ओटीटी प्लेटफॉर्म इन इंडिया' (मिश्र, 2022) में गाँव में मनोरंजन के माध्यम के रूप में ओटीटी का उपयोग और ओटीटी विषयवस्तु का किशोरों पर प्रभाव और उसके कारक के संबंध को खोजने का प्रयास किया है। शोध पत्र उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के तलसपुर और देवसैनी गाँवों के किशोरों की मनोरंजन के अन्य साधनों के लिए ओटीटी प्लेटफॉर्म की अत्यधिक प्राथमिकता से संबंधित है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि ओटीटी प्लेटफॉर्म एक क्रांतिकारी प्लेटफॉर्म है, क्योंकि यह किशोरों को उनकी सुविधा के अनुसार उनके स्वाद और रुचियों को संतुष्ट करने की अनुमति देता है, लेकिन अध्ययन और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से इसे अच्छा नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि किशोर अपनी ऊर्जा ओटीटी कंटेंट, जिसमें एडल्ट कंटेंट की भरमार है, देखने में समाप्त कर रहे हैं और जिसमें शायद ही उन्हें अध्ययन और सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ने के लिए कुछ भी अच्छा मिल रहा हो।

राहुल मित्तल और विपुल प्रताप ने अपनी पुस्तक 'ओटीटी प्लेटफार्म एंड डिजिटल मीडिया' (प्रताप, 2021) में ओवर-द-टॉप वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म एवं उस पर प्रसारित विषयवस्तु से संबंधित विभिन्न आलेखों का संकलन किया है। पुस्तक में ओटीटी प्लेटफार्म एवं वेब सीरीज विषयवस्तु से संबंधित विभिन्न लेख प्रस्तुत किए गए हैं; जैसे—भारतीय वेब सीरीज में महिलाओं का बदलता चित्रण, ओटीटी प्लेटफार्म थिएटर का विकल्प, ओटीटी प्लेटफार्म विजुअल रिप्रजेंटेशन ऑफ हाउस ऑफ सीक्रेट्स इत्यादि। साथ ही पुस्तक में डिजिटल मीडिया एवं उसके प्रभाव पर भी गहन चर्चा की गई है। इनमें पृष्ठ 14 पर अंकित लेख 'ओटीटी प्लेटफार्म मनोरंजन या अश्लीलता' महत्त्वपूर्ण है।

कृतिका शर्मा 'इमर्जिंग जेंडर रोल एंड हेट स्पीच रिप्रजेंटेशन इन इंडियन वेब सीरीज ओटीटी मीडिया कंटेंट' (शर्मा, 2021) में वेब सीरीज के परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाज का मूल्यांकन करती हैं। महिलाओं की रूढ़िवादी छवि, अभद्र भाषा, जिसमें असभ्य और अपमानजनक भाषा शामिल है और जाति और धर्म के आधार पर भेदभाव को वेब सीरीज विषयवस्तु में चित्रित किया जा रहा है। इसमें कहा गया है कि वेब सीरीज और ऑनलाइन स्ट्रीमिंग विषयवस्तु में भारी मात्रा में अभद्र भाषा और लैंगिक भेदभाव का प्रयोग है और इन सबका समाज पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है। यह संस्कृति लोगों को शारीरिक-मानसिक रूप से प्रभावित करती है।

परमवीर सिंह 'न्यू मीडिया एज अ चेंज एजेंट ऑफ इंडियन टेलीविजन एंड सिनेमा : अ स्टडी ऑफ ओवर द टॉप प्लेटफॉर्म्स (सिंह, 2019) में ओवर द टॉप एप्लिकेशन की लोकप्रियता और भारत में इसके दर्शकों की संख्या पर अध्ययन प्रस्तुत करते हैं। साथ ही यह भी बताते हैं कि भारतीय युवा क्या चाहते हैं और इन ओटीटी अनुप्रयोगों में क्या देखना पसंद करते हैं।

प्रमित गुप्ता ने 'द फैक्टर्स एफेक्टिंग शिफ्ट ऑफ इंडियन कस्टमर्स फ्रॉम टीवी सीरीज टू वेब सीरीज : द फ्यूचर ऑफ ओटीटी सर्विस इन इंडिया' (गुप्ता, 2021) में भारतीयों में पारंपरिक टीवी शृंखला से वेब शृंखला की ओर शिफ्ट होने की प्रवृत्ति के कारणों को समझने का प्रयास किया है। प्रस्तुत अध्ययन में 120 उत्तरदाताओं के डाटा का विश्लेषण किया गया है। 120 लोगों में से 76 (63%) वेब सीरीज देखना पसंद करते हैं, जबकि युवा मध्यम आयु वर्ग और वरिष्ठों के विपरीत टीवी सीरीज के मुकाबले वेब सीरीज देखने के लिए उत्सुक रहते हैं। वेब सीरीज और उसके बेहतर कंटेंट की 24X7 उपलब्धता ने लोगों को वेब सीरीज की ओर स्थानांतरित करने के लिए प्रेरित किया।

**अध्ययन के उद्देश्य**

- वेब सीरीज की विषयवस्तु का अध्ययन करना।
- वेब सीरीज में प्रयुक्त कलुषित भाषा-शैली का विश्लेषण करना।
- वेब सीरीज में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित विषयवस्तु का तुलनात्मक अध्ययन करना।

**शोध प्रविधि**

प्रस्तुत अध्ययन वेब सीरीज की विषयवस्तु के विश्लेषण और व्याख्या से संबंधित है। इस विश्लेषण हेतु 2020 (1 अगस्त, 2019 और 31 जुलाई 2020) एवं 2021 (1 अगस्त, 2020 और 31 जुलाई 2021) में ओटीटी प्लेटफार्म पर प्रसारित एक-एक मूल हिंदी वेब सीरीज को फिल्म फेयर अवार्ड द्वारा चुनी गई श्रेष्ठ ओरिजिनल स्टोरी (पाताल लोक एवं द फैमिली मैन 2) के आधार पर चयन कर अध्ययन में शामिल किया गया है। दोनों वेब सीरीज के कुल 9-9 एपिसोड हैं।

- पाताल लोक (06:11:49:18) (535434 फ्रेम)
- द फैमली मैन-2 (06:32:21:13) (564997 फ्रेम)

अतः वेब सीरीज विषयवस्तु की कुल 12 घंटे 44 मिनट 11 सेकंड 07 फ्रेम (कुल 1100431 फ्रेम) की अवधि शोध में अध्ययन हेतु सम्मिलित की गई है। इस अवधि में वेब सीरीज के कुल 620 दृश्यों एवं 272 अनुक्रमों का अध्ययन शोध के दौरान किया गया है। भारत में प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 66ए, 67 और 67बी में दिए गए प्रावधानों (एक्ट, 2024)

और सिनेमा एवं टेलीविजन माध्यम के विषयवस्तु प्रसारण के विनियमन के लिए बने सिनेमेटोग्राफी एक्ट 1952 में प्रस्तावित उद्देश्यों की पूर्ति के अनुसरण में प्रसारित फिल्म, कार्यक्रम और विज्ञापन की ऑडियो/वीडियो विषयवस्तु के आधार पर कलुषित भाषा की परिभाषा निम्नलिखित है (सीबीएफसी, 2024) :

**कलुषित विषयवस्तु :** इसमें 'घोर आपत्तिजनक' भाषा शामिल है, जिसे सार्वजनिक उपद्रव/गाली माना जाता है और ऐसे दोहरे अर्थ वाले शब्द, जो स्पष्ट रूप से मूल प्रवृत्ति को पूरा करते हैं।

**भारतीय सांस्कृतिक मूल्य :** भारतीय सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों, परिवारिक शिष्टाचार, रीति-रिवाज को बढ़ावा देते दृश्य।

## विश्लेषण एवं व्याख्या

प्रस्तुत अध्ययन में प्रत्येक एपिसोड के कुल दृश्य एवं सीक्वेंस में से दर्शाए गए उपर्युक्त परिभाषित आपत्तिजनक दृश्य को टाइमकोड (HH:MM:SS:MM) के आधार पर चिह्नित कर उसका विश्लेषण अडोब प्रीमियर सॉफ्टवेयर के माध्यम से किया गया है। दृश्य आमतौर पर एक शॉट (या शॉट्स की शृंखला), जिसमें एक साथ एक एकल, पूर्ण और एकीकृत नाटकीय घटना, क्रिया, इकाई या फिल्म वर्णन का तत्त्व या फिल्म के भीतर कहानी कहने का ब्लॉक (खंड) एक दृश्य की तरह होता है; एक दृश्य आम तौर पर एक स्थान पर होता है और एक क्रिया से संबंधित होता है; एक दृश्य का अंत अक्सर समय, क्रिया और/या स्थान में परिवर्तन द्वारा इंगित किया जाता है। वेब सीरीज के सभी एपिसोड के अंतर्वस्तु विश्लेषण हेतु उपर्युक्त कोड शीट का अनुसरण करते हुए एपिसोड को विभिन्न मानकों में विभाजित किया गया है। कोड शीट में सम्मलित कलुषित भाषा एवं भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का विश्लेषण शोधकर्ता द्वारा किया गया है।

## 'पाताल लोक' वेब सीरीज

'पाताल लोक' वेब सीरीज का प्रसारण 2020 में अमेजन प्राइम ओटीटी चैनल पर हुआ, जिसका निर्देशन अविनाश अरुण एवं प्रोसित रॉय द्वारा किया गया। वेब सीरीज को सुदीप शर्मा ने सागर हवेली, हार्दिक मेहता एवं गुंजित चोपड़ा के साथ मिलकर लिखा और वेब सीरीज का निर्माण अनुशक शर्मा ने किया है। उक्त वेब सीरीज को फिल्मफेयर 2020 (1 अगस्त 2019 से 31 जुलाई 2020 के बीच) में श्रेष्ठ मूल वेब सीरीज (Original Web Series) की श्रेणी में बेस्ट वेब सीरीज के साथ-साथ चार अन्य वर्गों में (जिसमें श्रेष्ठ निर्देशक, श्रेष्ठ कलाकार (पुरुष), श्रेष्ठ वेब सीरीज, श्रेष्ठ पटकथा) सम्मानित किया गया था। इसके अतिरिक्त यह छह अन्य वर्गों में भी नामांकित हुई थी।

"ये दुनिया न, तीन दुनिया है; सबसे ऊपर स्वर्ग लोक, बीच में धरती लोक, और सबसे नीचे - पाताल लोक"—'पाताल लोक' वेब सीरीज की पटकथा इस एक संवाद का विस्तारित संस्करण है। दिल्ली के एक निराश पुलिस अधिकारी हाथीराम चौधरी (जयदीप अहलावत द्वारा अभिनीत) की कहानी है, जिसे एक प्रमुख पत्रकार पर हत्या के प्रयास से जुड़ा एक हाई-प्रोफाइल मामला सौंपा गया है। जैसे ही वह जाँच करता है, वह भ्रष्टाचार, सत्ता संघर्ष और छिपे हुए एजेंडे के एक जटिल जाल को दर्शाते हुए समाज के भीतर गहरे विभाजन को उजागर करता है।

चित्र क्रमांक – 1 पाताल लोक वेब सीरीज का पोस्टर

## 'पाताल लोक' में प्रदर्शित कलुषित भाषा एवं सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित दृश्यों का अंतर्वस्तु विश्लेषण

पाताल लोक वेब सीरीज के कुल 9 एपिसोड में 301 दृश्यों का दृश्यांकन किया गया है एवं इसकी कुल अवधि 06 घंटे 11 मिनट 49 सेकंड और 18 फ्रेम है (06:11:49:18)। वेब सीरीज के प्रत्येक एपिसोड को एक शीर्षक दिया गया था।

**तालिका एवं ग्राफिक्स 1 - पाताल लोक वेब सीरीज विषयवस्तु में प्रदर्शित कलुषित भाषा के दृश्य**

| कलुषित भाषा | | | |
|---|---|---|---|
| एपिसोड संख्या | कुल अवधि | कुल दृश्य | आवृत्ति |
| एपिसोड-1 | 00:02:32:20 | 13 | 19 |
| एपिसोड-2 | 00:06:09:25 | 13 | 15 |
| एपिसोड-3 | 00:05:02:08 | 12 | 15 |
| एपिसोड-4 | 00:02:03:01 | 9 | 11 |
| एपिसोड-5 | 00:05:02:08 | 4 | 5 |
| एपिसोड-6 | 00:03:19:01 | 12 | 15 |
| एपिसोड-7 | 00:01:51:06 | 10 | 11 |
| एपिसोड-8 | 00:01:15:02 | 5 | 6 |
| एपिसोड-9 | 00:01:26:19 | 9 | 10 |
| | 00:23:50:14 | 79 | 97 |

'पाताल लोक' के नौ एपिसोड के कुल 301 दृश्यों में से 86 दृश्यों में कलुषित भाषा का उपयोग किया गया, जिसकी आवृत्ति 106 बार रही। पाताल लोक में कलुषित भाषा की कुल अवधि 25 मिनट 45 सेकंड और 09 फ्रेम (00:25:45:09) है। सबसे अधिक कलुषित शब्दों का प्रयोग सीरीज के दूसरे एपिसोड के 13 दृश्यों में किया गया है, जिसकी अवधि 00:06:09:25 है। वहीं तीसरे एपिसोड के भी 12 दृश्यों में

**तालिका एवं ग्राफिक्स-2 : पाताल लोक वेबसीरीज की विषयवस्तु में प्रदर्शित भारतीय सांस्कृतिक मूल्य**

| भारतीय सांस्कृतिक मूल्य | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| एपिसोड संख्या | दृश्य संख्या | आरंभ | अंत | अवधि | कुल दृश्य | आवृत्ति |
| एपिसोड-1 | 22 | 00:31:02:00 | 00:31:11:06 | 00:00:09:06 | 2 | 2 |
| | 24 | 00:34:07:00 | 00:34:14:04 | 00:00:07:04 | | |
| एपिसोड-2 | 10 | 00:13:50:04 | 00:15:16:19 | 00:01:26:15 | 1 | 1 |
| एपिसोड-3 | 28 | 00:38:50:01 | 00:39:04:09 | 00:00:14:08 | 1 | 1 |
| एपिसोड-4 | 14 | 00:16:38:10 | 00:17:03:21 | 00:00:25:11 | 1 | 1 |
| एपिसोड-5 | - | - | - | - | - | - |
| एपिसोड-6 | - | - | - | - | - | - |
| एपिसोड-7 | 32 | 00:37:21:05 | 00:38:01:02 | 00:00:39:22 | 1 | 1 |
| एपिसोड-8 | - | - | - | - | - | - |
| एपिसोड-9 | 1 | 00:00:05:07 | 00:01:49:03 | 00:01:43:21 | 2 | 2 |
| | 5 | 00:05:16:02 | 00:06:01:00 | 00:00:41:23 | | |
| | कुल | | | 00:05:28:14 | 8 | 8 |

लगभग 00:05:11:20 तक कलुषित शब्दों का प्रयोग किया गया है। दोनों एपिसोड में कलुषित भाषा के दृश्यों की अवधि 15 रही। सीरीज के पहले एपिसोड के 13 दृश्यों में भी कलुषित भाषा का उपयोग किया गया, जिसकी आवृत्ति 19 रही। इस एपिसोड में कलुषित भाषा वाले दृश्यों की अवधि 00:02:32:20 है।

चौथे एपिसोड में यह अवधि 00:02:03:01 रही, जिसके 9 दृश्यों में कलुषित भाषा का उपयोग किया गया। इस एपिसोड में इन दृश्यों की आवृत्ति 11 रही। एपिसोड पाँच के 4 दृश्यों में कलुषित भाषा का उपयोग किया गया, जिसकी आवृत्ति 5 रही। वहीं इसकी अवधि 00:01:46:11 है। एपिसोड छह के 12 दृश्यों में कलुषित भाषा के दृश्यों की कुल अवधि 00:03:19:01 है, जिसकी आवृत्ति 15 रही। सीरीज के एपिसोड सात में 00:01:51:06 की अवधि के कुल 10 दृश्यों में कलुषित भाषा का उपयोग किया गया, जिसकी आवृत्ति 11 रही। एपिसोड आठ में भी कलुषित भाषा से संबंधित दृश्यों की अवधि 00:01:15:02 तक रही, जिसे 5 दृश्यों में दर्शाया गया। इसकी आवृत्ति 6 बार रही। सीरीज के अंतिम एवं 9वें एपिसोड में यह अवधि 00:01:26:09 रही, जिसे 8 दृश्यों में दृश्यांकित किया गया। वहीं इसकी आवृत्ति 9 बार रही।

भारतीय सांकृतिक मूल्यों से जुड़े दृश्यों की संख्या लगभग 8 है, जिसकी अवधि 00:05:28:14 है। एपिसोड नौ में सबसे अधिक समय तक भारतीय सांस्कृतिक दृश्यों दृश्यांकन हुआ है, जिसकी अवधि 00:02:2:20 है। एपिसोड दो के 1 दृश्य में भी 00:01:26:15 अवधि के उक्त दृश्य प्रसारित किये गए हैं। एपिसोड एक, तीन, चार एवं सात में 00:00:16:10, 00:00:14:08, 00:00:25:11 एवं 00:00:39:22 अवधि तक भारतीय सांस्कृतिक दृश्यों को दर्शाया गया है।

**'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज**

'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज का प्रसारण 2021 में अमेजन प्राइम ओटीटी चैनल पर हुआ, जिसका निर्देशन एवं निर्माण राज निदिमोरू एवं कृष्णा डी.के. द्वारा किया गया। वेब सीरीज को कृष्णा डी.के. एवं सुमन कुमार सुपर्ण वर्मा, सुमित अरोरा एवं मनोज कुमार ने मिलकर लिखा। वेब सीरीज को फिल्मफेयर 2021 (1 अगस्त 2020 से 31 जुलाई 2021 के बीच) में श्रेष्ठ मूल वेब सीरीज (Original Web Series) की श्रेणी में बेस्ट वेब सीरीज के साथ-साथ पाँच अन्य वर्गों में, जिसमें श्रेष्ठ कलाकार (महिला), श्रेष्ठ कलाकार (पुरुष-क्रिटिक), श्रेष्ठ निर्देशक, श्रेष्ठ सहायक

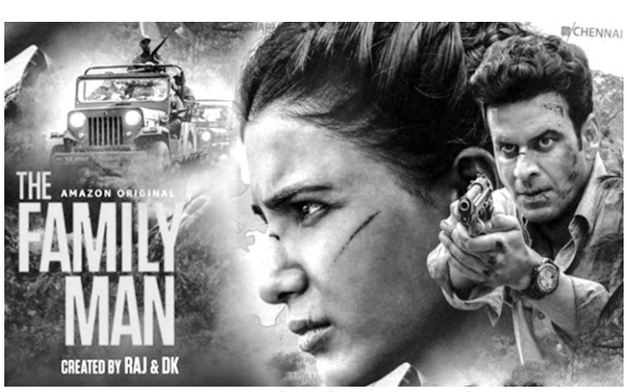


चित्र क्रमांक – 2 'पाताल लोक' वेब सीरीज का पोस्टर

कलाकार (पुरुष), श्रेष्ठ पटकथा से भी सम्मानित किया गया था। इसके अतिरिक्त तीन अन्य वर्गों में नामांकित भी हुई थी। इस खंड में 'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज की संवाद पटकथा एवं दृश्यांकन का विश्लेषण किया गया है।

'द फैमिली मैन-2' 2020 में प्रसारित वेब सीरीज 'द फैमिली मैन' की अगली कड़ी है। 'द फैमिली मैन-2' श्रीकांत तिवारी (मनोज वाजपेयी द्वारा अभिनीत) की कहानी को जारी रखता है, जो एक खुफिया अधिकारी है, जो थ्रेट एनालिसिस एंड सर्विलांस सेल (टीएएससी) के लिए काम करता है और अपनी उच्च तनाव वाली नौकरी और अपने पारिवारिक जीवन के बीच संतुलन बनाए रखने की कोशिश करता है। यह सीरीज अपने खतरनाक पेशे को अपने परिवार से गुप्त रखने के श्रीकांत के संघर्ष और राष्ट्र की रक्षा के लिए काम करते समय उनके सामने आने वाली नैतिक दुविधाओं पर प्रकाश डालती है।

**'फैमिली मैन-2' में प्रदर्शित कलुषित भाषा एवं सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित दृश्यों का अंतर्वस्तु विश्लेषण**

'द फैमिली मैन सीजन-2' वेब सीरीज के कुल 9 एपिसोड 04 जून, 2021 को अमेजन प्राइम ओटीटी वीडियो स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म पर प्रसारित किए गए। वेब सीरीज में कुल 319 दृश्यों का दृश्यांकन किया गया है एवं इसकी कुल अवधि 06:32:21:13 है। वेब सीरीज के प्रत्येक एपिसोड को एक शीर्षक दिया गया था। द फैमिली मैन सीजन 2 वेब सीरीज के प्रत्येक एपिसोड में दृश्यांकित कुल दृश्य, अनुक्रम एवं अवधि निम्न तालिका 6.5 में प्रस्तुत है।

**तालिका एवं ग्राफिक्स 3 – द फैमिली मैन 2 वेब सीरीज विषयवस्तु में प्रदर्शित कलुषित भाषा के दृश्य**

| कलुषित भाषा | | | |
|---|---|---|---|
| एपिसोड संख्या | कुल अवधि | कुल दृश्य | आवृत्ति |
| एपिसोड-1 | 00:02:32:20 | 8 | 14 |
| एपिसोड-2 | 00:00:58:20 | 2 | 3 |
| एपिसोड-3 | 00:01:15:14 | 2 | 3 |
| एपिसोड-4 | 00:01:58:14 | 8 | 8 |
| एपिसोड-5 | 00:00:54:00 | 3 | 4 |
| एपिसोड-6 | 00:00:14:23 | 2 | 2 |
| एपिसोड-7 | 00:00:00:00 | 0 | 0 |
| एपिसोड-8 | 00:00:52:17 | 5 | 5 |
| एपिसोड-9 | 00:00:50:23 | 1 | 2 |
| | 00:09:38:11 | 31 | 41 |

वेब सीरीज के सभी एपिसोड के कुल 31 दृश्यों में (00:09:38:11) कलुषित शब्दों का उपयोग हुआ है, जिसकी आवृत्ति 41 बार रही। वेब सीरीज के पहले एपिसोड के 8 दृश्यों में सबसे अधिक 2 मिनट 32 सेकंड 20 फ्रेम में कलुषित शब्दों का उपयोग हुआ है, जिसकी आवृत्ति 14 बार रही। एपिसोड-एक में सर्वाधिक अवधि (00:02:32:20) तक कलुषित शब्दों एवं वाक्यों का उपयोग किया गया है, जिसको 8 दृश्यों में दर्शाया गया है एवं जिसकी आवृत्ति 14 रही। सीरीज के एपिसोड क्रमांक चार के 8 दृश्यों में (00:01:58:14) अवधि के कलुषित भाषा से संबंधित दृश्य दृश्यांकित किए गए हैं। एपिसोड-तीन के भी 2 दृश्यों में (00:01:15:14) उक्त दृश्य दर्शाए गए हैं, जिसकी आवृत्ति 3 रही। इसके अतिरिक्त सीरीज के अन्य एपिसोड में क्रमांक दो, पाँच, छह, आठ एवं नौ के 13 दृश्यों में क्रमश: 00:00:58:20, 00:00:54:00, 00:00:14:23, 00:00:52:17 एवं 00:00:50:23 अवधि के दृश्य दर्शाए गए हैं। सीरीज के सातवें एपिसोड में कलुषित शब्दों या किसी भी प्रकार के अपशब्दों का उपयोग किसी भी दृश्य में नहीं किया गया है।

**तालिका एवं ग्राफिक्स-4 'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज विषयवस्तु में प्रदर्शित भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के दृश्य**

| भारतीय सांस्कृतिक मूल्य | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| एपिसोड संख्या | दृश्य संख्या | आरंभ | अंत | अवधि | कुल दृश्य | आवृत्ति |
| एपिसोड-1 | 11 | 00:19:25:06 | 00:20:50:17 | 00:01:25:11 | 1 | 1 |
| एपिसोड-2 | - | - | - | - | - | - |
| एपिसोड-3 | 4 | 00:02:10:22 | 00:03:04:09 | 00:00:53:11 | 1 | 1 |
| एपिसोड-4 | 40 | 00:45:52:10 | 00:46:01:04 | 00:00:08:18 | 1 | 1 |
| एपिसोड- 5 | 4 | 00:05:03:23 | 00:05:16:15 | 00:00:12:16 | 1 | 1 |
| एपिसोड- 6 से 9 | - | - | - | - | - | - |
| कुल | | | | 00:02:40:08 | 4 | 4 |

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित कुल 4 दृश्यों को 2 मिनट 40 सेकंड 8 फ्रेम में दर्शाया गया है। एपिसोड-एक के दृश्य संख्या 11 के एक दृश्य में 00:01:25:11 की अवधि तक भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित विषयवस्तु का दृश्यांकन सीरीज में किया गया। एपिसोड-तीन के भी दृश्य संख्या 4 में 00:00:53:11 की अवधि का एक दृश्य भारतीय सांस्कृतिक मूल्य से संबंधित दर्शाया गया है। वहीं भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित एक दृश्य 00:00:08:18 अवधि का सीरीज में प्रसारित किया गया है। एपिसोड-चार के भी एक दृश्य में 00:00:12:16 अवधि का एक दृश्य सीरीज में दर्शाया गया है। एपिसोड दो, छह, सात, आठ एवं नौ में एक भी दृश्य भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से संबंधित नहीं दर्शाया गया है।

## निष्कर्ष

वेब सीरीज प्रारूप में अधिकतर कहानी कुछ भागों (सीजन) में प्रसारित की जाती है। एक फिल्म में शुरुआत, मध्य और अंत स्पष्ट होता है, जबकि वेब सीरीज एपिसोडिक होते हैं और कई शुरुआत, मध्य और अंत के विकल्प होते हैं। प्रत्येक टीवी स्क्रिप्ट एक बड़े आख्यान का हिस्सा है, जिसमें कई पात्र और कहानी कई एपिसोड और सीजन में विभाजित हैं। वेब सीरीज पटकथा में हर एपिसोड का एक निष्कर्ष होता है, परंतु कहानी को वहीं समाप्त करना आवश्यक नहीं होता है। कहानीकार एवं निर्माता क्लीफहेंगर संकल्पना के माध्यम से उसको रोचक बनाकर प्रस्तुत करते हैं, जिसे एक से अधिक सीजन में भी प्रस्तुत किया जा सकता है। वेब सीरीज की पटकथा में भारतीय सामाजिक या राष्ट्रीयता से जुड़े गंभीर मुद्दों को दृढ़ता से शामिल किया जा रहा है।

अध्ययन के निष्कर्षों से स्पष्ट होता है कि दोनों वेब सीरीज में आपत्तिजनक विषयवस्तु है, जिसमें कामुक/अश्लील विषयवस्तु का अत्यधिक प्रयोग किया गया है, जिसमें कुछ दृश्य पटकथा के अनुरूप प्रदर्शित होते हैं, वहीं कुछ दृश्यों का जुड़ाव पटकथा से नहीं दिखता है। 'पाताल लोक' वेब सीरीज की कुल अवधि 06:11:49:18 में से आपत्तिजनक विषयवस्तु की अवधि 00:24:40:03 (लगभग 7 प्रतिशत) रही, वहीं 'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज की कुल अवधि 06:32:21:13 में यह अवधि 00:09:50:16 (लगभग 3 प्रतिशत) रही । वेब सीरीज के प्रस्तुतीकरण में वैविध्य दृष्टिगोचर होता है। कामुक/अश्लील विषयवस्तु दोनों वेब सीरीज में अपेक्षाकृत अधिक प्रसारित की गई है। महिलाओं के चित्रण को भी कुछ महत्त्व मिला है। लिंग/जाति असमानता एवं बाल उत्पीड़न से संबंधित विषयवस्तु काफी कम प्रदर्शित की गई है।

वेब सीरीज में प्रसारित विषयवस्तु के स्वरूपों में से एक वेब सीरीज में उपयोग किए जाने वाले संवाद में कलुषित भाषा के उपयोग के रूप में था। वेब सीरीज में कलुषित भाषा से तात्पर्य द्वि-अर्थीय संवाद, अश्लील शब्द एवं वाक्य इत्यादि से था। दोनों वेब सीरीज में कलुषित भाषा का उपयोग सामान्य रूप से किया गया है, जिससे कलुषित भाषा का वेब सीरीज में सामान्यीकरण करना परिलक्षित होता है। 'पाताल लोक' वेब सीरीज की कुल अवधि 06:11:49:18 में से कुल 00:25:45:09 (लगभग 7 प्रतिशत) समय तक कलुषित भाषा का उपयोग किया गया, वहीं 'द फैमिली मैन-2' की कुल 06:32:21:13 में से कुल 00:09:38:11 (लगभग 3 प्रतिशत) अवधि तक कलुषित भाषा बोली गई। प्रस्तुत अध्ययन में विविध विषयवस्तु से तात्पर्य उन दृश्यों से है, जिनमें वेब सीरीज विषयवस्तु में परिभाषित मानकों के अतिरिक्त किसी भी प्रकार की विषयवस्तु हो, जिससे दर्शक पर नकारात्मक रूप से प्रभाव होता हो। ऐसे दृश्यों की संख्या 'पाताल लोक' एवं 'द फैमिली मैन-2' वेब सीरीज की कुल अवधि की तुलना में सीमित है (लगभग 1 प्रतिशत), जो क्रमशः 00:01:52:14 एवं 00:01:52:20 है।

## संदर्भ


आई.एम.डी.बी. एडिटर्स. (2023). आईएमडीबी. https://www.imdb.com/list/ls568832700/ से 10 फरवरी, 2021 को पुनःप्राप्त.

आई.टी. एक्ट. (2024). इनफार्मेशन टेक्नोलॉजी एक्ट 2000. इंडिया कोड : https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/13116/1/it_act_2000_updated.pdf से पुनःप्राप्त.

एडिटर. (2024). सीक्वेंस & सीन डेफिनिशन . स्क्रीन राइटिंग & साइंस : https://screenwritingscience.com/sequence-and-scene-definition से पुनःप्राप्त.

गुप्ता, पी. (2021). द फैक्टर्स एफेक्टिंग शिफ्ट ऑफ इंडियन कस्टमर्स फ्रॉम टीवी सीरीज टू वेब सीरीज : द फ्यूचर ऑफओटीटी सर्विस इन इंडिया. EPRA इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडीसीप्लिनरी रिसर्च (IJMR).

नंदा, बी., गोयल, एच. & थोंगम, एम. (2024). इम्पैक्ट ऑफ ओटीटी प्लेटफॉर्म्स ऑन ह्यूमन सोसाइटी : अ कॉम्प्रेहेंसिव रिव्यु. द इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन सायकोलोजी.

फिक्की. (2020). फिक्की फ्रेम्स 2020 : हाऊ ओटीटी ट्रांसफॉर्मड इंटू अ मेनस्ट्रीम मीडिया प्लेटफार्म फ्रॉम अ निछ प्लेटफार्म (FICCI).

दिल्ली : फाइनेंसियल एक्सप्रेस.

फॉक्स, जे. (8 11 2022). न्यूज़ . इंडिया ब्रीफिंग : https://www.india-briefing.com/news/indias-ott-media-services-industry-rapid-growth-amid-competition-for-market-share-26375.html/ से पुनःप्राप्त.

बिहाड़े, वी. & कुमार एम. (2023). कस्टमर परेफरेंस टुवर्ड्स ओटीटी प्लेटफार्म इन इंडिया. ग्लोबल मीडिया जर्नल, 21:61.

मिश्रा, पी. & शर्मा, के. (2022). एक्सेसिबिलिटी ऑफ द वेब सीरीज थ्रू ओटीटी प्लेटफॉर्म इन इंडिया (अ स्टडी ऑफ टीनेजर ऑफ तलसपुर & देवसानी विलेज इन अलीगढ डिस्ट्रिक्ट ऑफ यू.पी.)). एस.एस.आर.एन. इलेक्ट्रॉनिक जर्नल, 10.2139/ssrn.4098395. https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=4098395 से, 09 06 2022 को पुनःप्राप्त.

मित्तल, आर. & प्रताप, वी. (2021). ओटीटी प्लेटफार्म एंड डिजिटल मीडिया (1st सं.). दिल्ली : ईशान आर्ट्स एवं प्रोडक्शन.

मेककुईल, डी. (2010). मेककुईल जन संपर्क थ्योरी. सेज पब्लिकेशन.

शर्मा, के. (2021). इमर्जिंग जेंडर रोल एंड हेट स्पीच रिप्रजेंटेशन इन इंडियन वेब सीरीज ओटीटी मीडिया कंटेंट. जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजीस एंड इनोवेटिव रिसर्च.

सिंह, पी. (2019). न्यू मीडिया एज अ चेंज एजेंट ऑफ इंडियन टेलीविजन एंड सिनेमा : अ स्टडी ऑफ ओवर द टॉप प्लेटफॉर्म्स. जर्नल ऑफ कंटेंट, कम्युनिटी एंड कम्युनिकेशन, 9. 131-137. 10.31620/JCCC.06.19/18. https://www.amity.edu/gwalior/JCCC/june2019.html से, 17 feb 2021 को पुनःप्राप्त.

सी.बी.एफ.सी. (2024). सी.बी.एफ.सी. दिशानिर्देश . सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सर्टिफिकेशन : https://cbfcindia.gov.in/cbfcAdmin/guidelines.php से पुनःप्राप्त.

हिंखोज. (2024). शब्दखोज . https://dict.hinkhoj.com/web%20series-meaning-in-hindi.words से पुनःप्राप्त.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 77-84, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# सूचना संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषक महिलाओं का सशक्तीकरण

मीताली[1], डॉ. सुनीता मंगला[2] और डॉ. राजकुमार फलवारिया[3]

**सारांश**

महिलाएँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं और ये ऐसी अदृश्य किसान हैं, जिन्हें अक्सर चर्चा में नजरअंदाज कर दिया जाता है, जबकि वे खेती और विपणन दोनों गतिविधियों में अक्सर सीधे तौर पर शामिल रहती हैं। उन्हें पुरुषों की तुलना में भूमि ऋण, इनपुट, कृषि प्रशिक्षण और जानकारी का केवल एक अंश प्राप्त होता है। उन्हें सशक्त न बनाने का अर्थ है 50 प्रतिशत आबादी और कार्यबल की उपेक्षा करना, जिससे कृषि क्षेत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। छोटे पैमाने पर खेती करने वाली महिलाओं के साथ संवाद करने की जरूरत है, उन तक पहुँचने की जरूरत है और उनकी गतिविधियों का व्यवसायीकरण करने की जरूरत है, क्योंकि वे जमीनी स्तर पर उत्पादकता बढ़ाने के लिए सीधे तौर पर जुड़ी हुई हैं। बदले हुए परिदृश्य में कृषि ज्ञान को कुशलतापूर्वक, शीघ्रता से और लागत प्रभावी तरीके से समाज के विभिन्न वर्गों तक प्रबंधित और प्रसारित करने के लिए नवाचार और पेशेवर दृष्टिकोण की आवश्यकता है। कृषि प्रौद्योगिकियों के प्रसार में महिलाओं को प्रभावी संचारक माना जाता है। कृषि में लगी महिलाओं के माध्यम से खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने के लिए संचार एक शक्तिशाली उपकरण और शक्ति है। प्रभावी संचार से महिलाओं का सशक्तीकरण हो सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र कुछ ऐसे क्षेत्रों पर केंद्रित है, जो कृषक महिलाओं के लिए उपयोगी संचार में प्रभावी उपकरण साबित होंगे; मसलन, कृषक महिलाओं के लिए आवश्यकता आधारित सलाहकार सेवा की शुरुआत, क्षेत्रीय भाषा में जर्नल/न्यूजलेटर प्रकाशित करना और कृषि प्रौद्योगिकी के प्रभावी प्रसार के लिए वितरण करना। इसी तरह कृषक महिलाओं का बेहतर उपयोग, क्षेत्रीय भाषा में किसान मोबाइल संदेश सेवा शुरू करना, महिलाओं द्वारा ई-चौपाल की सेवाओं का उपयोग, मोबाइल संचार का उपयोग और सामुदायिक रेडियो के साथ एसएमएस और मोबाइल प्रौद्योगिकी का एकीकरण, स्थानांतरण में एक प्रभावी आईसीटी उपकरण के रूप में मोबाइल सेवा की भूमिका, कृषि के विकास को मजबूत करने के लिए सुधारात्मक कदमों को लागू करने के लिए नियमित रूप से आईसीटी के अनुप्रयोग के साथ कृषि प्रौद्योगिकी और कृषि-मौसम सलाहकार बुलेटिन का प्रसार।

**संकेत शब्द :** किसान मोबाइल संदेश सेवा, ई-चौपाल, सामुदायिक रेडियो, आईसीटी, इंटरएक्टिव मल्टीमीडिया, लघु संदेश सेवा, संस्थागत रिपोजिटरी

## प्रस्तावना

महिलाएँ परंपरा से ही कृषि के सभी क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। ये भारतीय अर्थव्यवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। पिछले कुछ वर्षों के दौरान कृषि विकास में महिलाओं की भूमिका और कृषि, खाद्य सुरक्षा, बागवानी, प्रसंस्करण, पोषण, रेशम कीट पालन, मात्स्यकी और अन्य संबद्ध क्षेत्रों में उनके महत्त्वपूर्ण योगदान को भी धीरे-धीरे पहचाना गया है। भारत में महिलाएँ कृषि का मेरुदंड हैं और इनमें अधिकतर खेतिहर मजदूर हैं, जो न केवल शारीरिक परिश्रम करती हैं, बल्कि गुणवत्ता और कार्यकुशलता के रूप में भी योगदान देती हैं। कृषक परिवारों में महिलाओं की भूमिका सर्वविदित है। बच्चों को पालने के अलावा महिलाओं से भोजन तैयार करने, घर का रखरखाव करने, फसल तथा पशु उत्पादन में सहायता करने और अपने परिवारों के सामान्य स्वास्थ्य की देखभाल करने की अपेक्षा की जाती है। यह विडंबना है कि अनेक उत्तरदायित्व निभाने के बावजूद कृषिविदों और नीति-निर्माताओं ने उनकी उपेक्षा की है। यह बहुत आसान है कि पुरुषों को तो किसान माना जाए और महिलाओं को उनके बच्चे पालने वाली तथा खाना पकाने वाली ही माना जाए। वास्तविकता यह है कि महिलाएँ फसलों के चुनाव से लेकर भूमि की तैयारी, बीजों के चुनाव, रोपाई, निराई-गुड़ाई, कीट नियंत्रण, कटाई, फसल भंडारण, विपणन और प्रसंस्करण आदि जैसे सभी पहलुओं से जुड़ी रहती हैं। महिलाओं के प्रति इस उपेक्षा का कारण चाहे जो भी हो, उनके लिए प्रासंगिक कृषि प्रौद्योगिकियों के विकास के महत्त्व को अभी हाल ही में समझा गया है। ग्रामीण महिलाएँ भारत सहित सभी विकासशील देशों में अर्थव्यवस्था में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उत्पादक कार्यबल सिद्ध हुई हैं।

पूरे विश्व में कृषि में आर्थिक दृष्टि से सक्रिय जनसंख्या में से महिलाओं का हिस्सा 43 प्रतिशत है। भारत में लगभग 60 प्रतिशत कृषि संबंधी कार्य महिलाओं द्वारा किए जाते हैं। इसके अलावा महिलाएँ पशुपालन व मात्स्यकी जैसे संबद्ध क्षेत्रों में भी अत्यधिक योगदान देती हैं। वे घरेलू कार्य का बोझ भी उठाती हैं। इसके परिणामस्वरूप उन्हें अधिक परिश्रम करना पड़ता है और अधिक तनाव का भी सामना करना पड़ता है।

## साहित्य सर्वेक्षण

कृषि में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण उपस्थिति के बावजूद, विभिन्न डेटा स्रोतों के आँकड़े बताते हैं कि ग्रामीण परिवारों में भूमि का स्वामित्व केवल 6-11 प्रतिशत के बीच है। ग्रामीण महिलाएँ अपने परिवार की सामाजिक-आर्थिक स्थिति और क्षेत्रीय कारकों के आधार पर मुख्य रूप से तीन अलग-अलग तरीकों से कृषि गतिविधियों में लगी हुई हैं। वे अपनी भूमि पर श्रम करने वाले कृषकों के रूप में काम करती हैं और फसल कटाई के बाद के कार्यों में भागीदारी के माध्यम से कृषि उत्पादन के कुछ पहलुओं

[1]वैज्ञानिक, सीएसआईआर-नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस कम्युनिकेशन एंड पालिसी रिसर्च, नई दिल्ली–110012, ईमेल : meetali1119@gmail.com
[2]प्रोफेसर, कालिंदी कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली–110012, ईमेल : sunitamangala@gmail.com
[3]एसोसिएट प्रोफेसर, एसपीएम कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली-110026, ईमेल : rfalwaria@gmail.com

के प्रबंधक और दूसरों के खेतों पर मजदूरों के रूप में भी काम करती हैं।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2020-21 के आँकड़ों से पता चलता है कि पिछले तीन दशकों में कृषि में पुरुषों की संख्या में लगातार गिरावट आई है और महिलाओं की तुलना में उनकी भागीदारी 81 प्रतिशत से घटकर 63 प्रतिशत हो गई है, जबकि इसकी तुलना में, महिलाओं की भागीदारी में 88 प्रतिशत से 79 प्रतिशत तक केवल मामूली गिरावट आई है। इसका सबसे बड़ा कारण, अधिक से अधिक पुरुष औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में गैर-कृषि कार्यों में चले गए हैं, जबकि महिलाएँ कृषि में महत्त्वपूर्ण रूप से अभी भी कार्यरत हैं।

भारत में महिला कृषि का विशिष्ट कार्य, मजदूर या कृषक कम कुशल/दोहराव वाले और कड़ी मेहनत से भरे कार्यों जैसे कि बुआई, रोपाई, निराई और कटाई तक ही सीमित है। कई महिलाएँ अवैतनिक निर्वाह श्रमिक के रूप में कृषि कार्य में भी भाग लेती हैं। संयुक्त राष्ट्र मानव विकास (यूएनडीपी) रिपोर्ट के अनुसार केवल 32.8 प्रतिशत भारतीय महिलाएँ औपचारिक रूप से श्रम शक्ति में भाग लेती हैं, यह दर 2009 के आँकड़ों के बाद से स्थिर बनी हुई है। तुलनात्मक रूप से पुरुष 81.1 प्रतिशत हैं। हालाँकि ये आँकड़े भी जमीनी सच्चाई नहीं दर्शाते हैं।

राष्ट्रीय किसान नीति (एनएफपी 2007) के नीति निर्देशों के अनुरूप, कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए उचित संरचनात्मक, कार्यात्मक और संस्थागत उपाय करना अनिवार्य है। एनपीएफ के अनुसार, 'किसान' का दर्जा उस व्यक्ति को दिया जाना चाहिए जो जमीन जोतता है, जबकि हकीकत में किसान की पहचान करने की मौजूदा प्रथा भूमि के स्वामित्व से जुड़ी है। बटाईदार, नमक किसान और चरवाहे, जो कई तरीकों से कृषि और संबद्ध गतिविधियों में लगे हुए हैं, उनके पास सरकारी योजनाओं, सहायता सेवाओं, मुआवजे और बीमा सुविधाओं की पहुँच नहीं है, जिससे वे विभिन्न सरकारी विकास कार्यक्रमों और कल्याणकारी गतिविधियों से वंचित हैं।

विजन दस्तावेज (महिलाओं के लिए राष्ट्रीय नीति, 2016) एक ऐसे समाज के निर्माण का वर्णन करता है, जिसमें महिलाएँ जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी पूरी क्षमता हासिल करें और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को प्रभावित करें। विजन दस्तावेज स्वास्थ्य पर केंद्रित है, जिसमें खाद्य सुरक्षा और पोषण, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, शासन एवं निर्णय लेना, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, सक्षम वातावरण, और पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन शामिल हैं। नीति में अनौपचारिक क्षेत्र में महिलाओं को अलग करने और बढ़ती शिक्षित महिलाओं के लिए रोजगार/कार्य के अवसरों का विस्तार करने का उल्लेख है। महिलाओं के अवैतनिक कार्यों को स्वीकार करते हुए नीति का उद्देश्य महिलाओं के बोझ को कम करना और उन्हें भुगतान वाले काम करने के लिए मुक्त करना है, साथ ही क्रेच प्रावधानों और अन्य सुविधाओं पर भी प्रकाश डालना है। नीति में कमजोर महिलाओं जैसे विधवाओं, एकल महिलाओं और तलाकशुदा महिलाओं के लिए एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा तंत्र को भी रेखांकित किया गया है।

भारत सरकार ने महिला सशक्तीकरण के लिए एक राष्ट्रीय नीति शुरू की और वर्ष 2021 को महिला सशक्तीकरण वर्ष घोषित किया। इस नीति में जिन नीतिगत दृष्टिकोणों को रेखांकित किया गया, वे लैंगिक समानता से संबंधित थे। नीति में प्रस्तावित किया गया कि कानूनी प्रणाली को महिलाओं की जरूरतों के प्रति उत्तरदायी और लैंगिक रूप से संवेदनशील बनाया जाए। इसमें कहा गया है कि महिलाओं को केंद्रित प्रयासों के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाया जाना चाहिए। भारत में महिला सशक्तीकरण भौगोलिक स्थिति (ग्रामीण/शहरी), सामाजिक स्थिति (जाति और वर्ग), उम्र और शैक्षिक स्थिति से प्रभावित होता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, लिंग आधारित हिंसा, आर्थिक अवसर और राजनीतिक भागीदारी सहित कई बिंदुओं पर महिला सशक्तीकरण से संबंधित नीतियाँ राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय (पंचायत) स्तर पर मौजूद हैं। उनकी मुक्ति के लिए कई नीतियाँ लागू होने के बावजूद, सामुदायिक स्तर पर नीतिगत प्रगति और वास्तविक अभ्यास के बीच महत्त्वपूर्ण अंतर हैं। ऐसी नीतियों के कार्यान्वयन में अंतर का एक प्रमुख कारण भारत में पितृसत्तात्मक संरचना की उपस्थिति है, जो अभी भी मौजूद है। पितृसत्ता की निरंतर चली आई प्रथा ने किशोरों और महिलाओं सहित लड़कियों को गतिशीलता, शिक्षा और आर्थिक अवसरों, स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच से प्रतिबंधित कर दिया है और उन्हें घरों और समुदाय में हिंसा का शिकार बनाया है। हालाँकि शहरी क्षेत्रों में स्थिति धीरे-धीरे बदल रही है, ग्रामीण और जनजाति क्षेत्रों में महिलाओं को अभी भी असमानता और अन्याय का सामना करना पड़ता है।

कृषि में महिलाओं को किसान, श्रमिक और उद्यमी के रूप में देखा जाता है, लेकिन वे सबसे कमजोर समूहों में से एक हैं, क्योंकि वे घरेलू कामों का पूरा बोझ उठाती हैं, पशुधन की देखभाल करती हैं और बच्चों का पालन-पोषण करती हैं। कृषि गतिविधियों में कृषक महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले स्वास्थ्य खतरों की सीमा में शामिल विषय हैं : (i) कृषि गतिविधियों के तहत रोपाई में 50% और कटाई में 26.5%, (ii) कटाई के बाद की गतिविधियों के तहत 50% थ्रेसिंग, 33% सुखाने और 67% हल्का उबालना और (iii) पशुधन प्रबंधन के तहत 47% शेड की सफाई, 23% चारा संग्रहण और 27.5% दूध दुहना (हैंडबुक ऑफ एग्रीकल्चरल एक्सटेंशन, 2020)।

लोकप्रिय सोशल मीडिया टूल यानी फेसबुक, व्हाट्सएप और यूट्यूब का उपयोग भारत में विभिन्न कृषि उपक्षेत्रों (फसलों, बागवानी, डेयरी, बकरी पालन) में सूचना वितरण और साझा करने के लिए किया जा रहा है। उनमें से अधिकतर व्यक्तिगत प्रयासों से हैं। भारत में सार्वजनिक विस्तार प्रणाली से सोशल मीडिया के उपयोग के लिए संगठित प्रयासों की निश्चित रूप से कमी है (ममगैन व अन्य, 2020)।

पांडिचेरी के अंतर्गत पूरनकुप्पम, मनावेली, थवलकुप्पम और नल्लावडु गाँव के अधिकतर किसान उत्पादन से लेकर विपणन और अन्य संबंधित क्षेत्रों में कृषि उद्देश्यों के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। साथ ही उन तक पहुँचने में उन्हें चुनौतियों का सामना करना पड़ा (खोउ व अन्य, 2018)। इसी प्रकार बालकृष्ण व अन्य (2017) ने बताया कि कई संगठनों के सोशल मीडिया पर आधिकारिक पेज, ब्लॉग और समूह हैं। इनमें प्रश्नों का त्वरित उत्तर दिया जा रहा है। इससे किसानों का समय और लागत बचती है और इसके द्वारा किसानों को सही समय पर सही जानकारी मिल रही है।

इसी प्रकार ग्लेनडेनिंग व अन्य (2010) ने बताया है कि अनेक आईसीटी दृष्टिकोणों के प्रभावों का दस्तावेजीकरण नहीं किया गया है, इसलिए ये अभी भी छोटे समुदायों में काम कर रहे हैं। नवप्रवर्तन प्रणाली में किसानों और अन्य हितधारकों के साथ बातचीत करने वाले विभिन्न

एजेंटों और मध्यस्थों का उपयोग करने की आवश्यकता है। तदनुसार, किसानों को नवप्रवर्तन के लिए आवश्यक ज्ञान और जानकारी प्रदान की जा सकती है और उचित संबंध विकसित किए जा सकते हैं।

ठाकुर व अन्य (2010) ने बताया कि किसानों को फसल और पशुधन के नुकसान को कम करने, कई रूपों में जानकारी की आसान उपलब्धता, नियमित शिक्षा, मल्टीमॉडल सूचना वितरण और सामाजिक पूँजी के निर्माण के समाधान का उल्लेखनीय लाभ उनकी इन विषयों पर लगातार माँग का ही नतीजा था। अध्ययन में यह भी पाया गया कि उपयोगकर्ता उपयोग में सुविधा, गोपनीयता की सुविधा के साथ-साथ कम इंटरनेट डेटा आवश्यकताओं के कारण फेसबुक के बजाय व्हाट्सएप को प्राथमिकता देते हैं। इसके अलावा, फेसबुक का कम उपयोग, कृषि विस्तार में इसके उपयोग को समझने में कठिनाई, कृषि संबंधी जानकारी प्राप्त करने और साझा करने की दृष्टि से अन्य बाधाएँ बताई गईं। भारत के विभिन्न हिस्सों में खेती-आधारित विविध जानकारी साझा करने के लिए अब फेसबुक, व्हाट्सएप और यूट्यूब का उपयोग किया जा रहा है। विभिन्न कृषि उपक्षेत्रों (फसलें, डेयरी, बकरी और मुर्गी पालन) और उत्पादन, निवारक प्रबंधन और विपणन के विभिन्न पहलुओं पर विभिन्न प्रकार की जानकारी साझा की जा रही है। उनमें से अधिकतर व्यक्तिगत प्रयास हैं।

## शोध उद्देश्य

1. खेती में संलग्न महिलाओं के लिए मास मीडिया और आईसीटी समर्थन की उपलब्धता का अध्ययन करना।
2. कृषक महिलाओं के सामने आने वाली बाधाओं की जाँच करना।
3. खेती में लगी महिलाओं के लिए उपलब्ध विभिन्न योजनाओं को खोजना।
4. कृषक महिलाओं के लिए सभी सहायता योजनाओं, बाजार और मंच की समीक्षा के बाद सुझाव और सिफारिशें देना।

## शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन विभिन्न प्लेटफार्मों और रिपोर्टों पर उपलब्ध अनुभवजन्य डेटा, विशेष रूप से भारत सरकार की प्रामाणिक रिपोर्टों पर आधारित है।

## कृषक महिलाओं के लिए बाधाएँ

**लिंग पूर्वग्रह :** महिलाएँ पर्दा प्रथा से पीड़ित हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनके योगदान को मान्यता नहीं दी जाती है। उन पर अक्सर पुरुषों की तुलना में अधिक काम का बोझ होता है और वे परिवार कल्याण और घरेलू प्रबंधन की एकमात्र जिम्मेदारी उठाती हैं। भूमि और पशुधन प्रबंधन में उनकी भूमिका की कम पहचान के साथ, कृषि और कृषि कार्यबल में बढ़ते महिलाकरण का मतलब है कि महिलाएँ कृषि नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों और बजट के साथ-साथ औपचारिक सहायता प्रणाली के मामले में सरकार के लिए काफी हद तक अदृश्य बनी हुई हैं। विशेष रूप से ऋण, विस्तार, बीमा और विपणन सेवाओं के रूप में।

कानून और रीति-रिवाज में निहित लिंग भेदभाव व्यापक है और सामाजिक-आर्थिक विकास में बाधा डालता है। अनेक व्यस्तताओं के कारण ग्रामीण महिलाएँ पुरुषों की तुलना में काम के बोझ से कहीं अधिक दबी होती हैं। कृषि क्षेत्र में महिलाओं पर शोधकर्ताओं ने खुलासा किया है कि महिलाएँ औसतन प्रतिदिन 15-16 घंटे काम करती हैं। अध्ययन आगे दर्शाते हैं कि कृषि गतिविधियाँ, जो समय और श्रम गहन, नीरस, संबंधित और अधिक कठिन परिश्रम वाली हैं, आम तौर पर महिलाओं को सौंपी जाती हैं। चूँकि ये काम हाथ से किए जाते हैं, इसलिए ये काफी शारीरिक और मानसिक थकान और स्वास्थ्य समस्याएँ पैदा करते हैं।

**विकास पूर्वग्रह :** उत्पादन प्रक्रिया में महिलाओं के योगदान के बावजूद, विकास योजनाकारों द्वारा उन्हें उत्पादक के बजाय मुख्य रूप से सामाजिक सेवाओं के उपभोक्ता के रूप में मानने के लगातार पूर्वग्रह ने उन्हें कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों से दूर रखा। बताया गया है कि कुछ नई कृषि प्रौद्योगिकियों ने कृषक महिलाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। हरित क्रांति के कारण छोटी महिला भूमिधारकों को बेदखल कर दिया गया, जिससे उन्हें मजदूरी करने वालों की श्रेणी में शामिल होने के लिए मजबूर होना पड़ा। जहाँ भी नई कृषि तकनीक के कारण बहुफसली खेती को बढ़ावा मिला है, वहाँ महिलाओं पर काम का बोझ भी बढ़ गया है, जबकि पुरुषों द्वारा किए जाने वाले कई कार्यों को मशीनीकृत कर दिया गया है। आमतौर पर महिलाओं को आवंटित कार्य अभी भी मैनुअल हैं और कठिनता से ग्रस्त हैं। यहाँ तक कि जहाँ महिलाओं की गतिविधियों के लिए बेहतर तकनीकें पाई गई हैं, वहाँ ऐसी तकनीकों के प्रशिक्षण की कमी है।

**संसाधनों तक सीमित पहुँच :** ग्रामीण महिलाओं को जिन कई बाधाओं का सामना करना पड़ता है, वे उन बाधाओं के समान हैं, जिनका सामना सभी संसाधनहीन किसानों को करना पड़ता है; जैसे–भूमि, ऋण, प्रशिक्षण, विस्तार और विपणन सुविधाओं तक पहुँच की कमी। लेकिन, सामाजिक और आर्थिक कारणों से महिलाओं की बाधाएँ अधिक स्पष्ट हैं; और सामान्य तौर पर गरीब किसानों की बाधाओं को दूर करने के लिए किए जाने वाले विकास हस्तक्षेप महिलाओं तक नहीं पहुँच पाते हैं। नतीजतन, विशेष रूप से महिला-केंद्रित व्यवसायों के लिए तैयार प्रौद्योगिकियों के विकास और प्रौद्योगिकी विकास और हस्तांतरण में महिलाओं की भागीदारी पर सरकारों के वैज्ञानिक और प्रशासनिक, दोनों विभागों से अपर्याप्त ध्यान दिया गया है।

जब महिलाओं के पास भूमि तक पहुँच होती है, तो उनके पास अक्सर सुरक्षित किरायेदारी नहीं होती है और पुरुषों की तुलना में उनके पास छोटे और कम उत्पादक भूखंड होते हैं। महिलाओं को आम तौर पर बजटीय बाधाओं के साथ-साथ ऋण संबंधी जोखिमों का भी सामना करना पड़ता है। महिलाओं की ऋण तक पहुँच के संबंध में उन स्थानों पर, जहाँ महिलाएँ कानूनी रूप से वित्तीय संस्थानों तक पहुँच की हकदार हैं, उन्हें ऋण प्राप्त करने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है, क्योंकि वे अक्सर ग्रामीण आबादी के सबसे गरीब वर्ग से संबंधित होती हैं। ग्रामीण वित्तीय संस्थान भी अक्सर महिला ग्राहकों को स्वीकार करने में झिझकते हैं, क्योंकि वे संपार्श्विक आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं और अनुभवहीन हैं।

**बाजारों तक अपर्याप्त पहुँच :** कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन में लगी महिलाएँ कम मात्रा में उत्पादन करती हैं और संगठित विपणन और सहकारी समितियों तक उनकी पहुँच कम है। इसलिए, महिलाएँ मुख्य रूप से निजी व्यापारियों को सामान बेचती हैं और उनकी सौदेबाजी की क्षमता कम होती है। महिला समूहों की बाजार तक पहुँच को बढ़ावा देने वाली

संस्थाओं को मजबूत करने की जरूरत है। सेवा, ग्रामीण बैंक, एसएचजी फेडरेशन आदि इसके सफल उदाहरण हैं।

**महिलाओं के लिए प्रौद्योगिकी परिशोधन का अभाव :** महिलाओं को कृषि सहायता कार्यक्रमों से केवल तभी लाभ होता है जब प्रदान की गई जानकारी, प्रौद्योगिकी और तरीके उनकी उत्पादन गतिविधियों के लिए प्रासंगिक हों। हालाँकि, कृषि अनुसंधान आमतौर पर महिलाओं की शारीरिक स्थिति के अनुसार प्रौद्योगिकियों को अपनाने या उनके कार्यों को संबोधित करने की दिशा में बहुत कम उन्मुख हैं। महिलाओं की कम उत्पादकता मुख्य रूप से उनके काम के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकियों की कमी के कारण उत्पन्न होती है।

**अपर्याप्त विस्तार समर्थन :** महिला किसान भी सामग्री उपयुक्तता और पहुँच के संदर्भ में प्रयासों की अपर्याप्तता से पीड़ित हैं। महिला किसानों के लिए विस्तार कार्यक्रमों में परिवर्तनों की आवश्यकता महसूस की जा रही है। कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग तथा ग्रामीण विकास मंत्रालय की महिला किसान सशक्तीकरण परियोजना द्वारा केंद्रीय क्षेत्र की योजना 'कृषि में महिलाएँ' और विभिन्न बाहरी सहायता प्राप्त कार्यक्रमों को लागू करने का अनुभव उत्साहजनक रहा है।

### महिला उन्मुख मास मीडिया और आईसीटी सपोर्ट

कृषि क्षेत्र में सूचना प्रसार की प्रक्रिया सहित मानव जीवन के सभी क्षेत्र आईसीटी से काफी हद तक प्रभावित हुए हैं। हालाँकि, आईसीटी के नेतृत्व वाली विस्तार प्रणालियाँ एक बटन के क्लिक के माध्यम से जानकारी तक पहुँच में सुधार और ज्ञान साझा करके किसानों के जीवन को बदलने में सक्षम हैं। वे उन महिला किसानों के लिए कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक हैं, जो अत्यधिक बोझ से दबी हुई हैं और कठिन समय का सामना कर रही हैं।

महिलाओं द्वारा महत्त्वपूर्ण योगदान देने के बावजूद कभी भी उन्हें किसान के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है और महिला किसानों को राज्य के स्वामित्व वाले प्रायोजित मास मीडिया में शायद ही कभी पर्याप्त और उचित प्रतिनिधित्व मिला है, चाहे वे प्रिंट या टीवी और रेडियो कार्यक्रम हों। 'किसान पोर्टल' लैंगिक समावेशन एजेंडे के लिए ऐसे नीति विकल्पों के प्रतिकूल प्रभावों को प्रदर्शित करता है। डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चरल कोऑपरेशन एंड फार्मर्स वेलफेयर का किसान पोर्टल, किसानों और अन्य हितधारकों को कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से संबंधित सभी सूचनात्मक आवश्यकताएँ प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है। विशाल डेटा में खेती से संबंधित सभी पहलुओं को शामिल किया गया है। विशाल डेटा बीमा, भंडारण, विस्तार गतिविधियों, बीज, कीटनाशक, कृषि मशीनरी, उर्वरक, बाजार मूल्य, पैकेज और प्रथाओं, कार्यक्रमों, कल्याण योजनाओं, मिट्टी की उर्वरता, प्रशिक्षण आदि सहित खेती से संबंधित सभी पहलुओं को कवर करता है और यह एक इंटरैक्टिव मानचित्र के रूप में भी उपलब्ध है। किसान ज्ञान प्रबंधन प्रणाली और किसान कॉल सेंटर (2014) और अखिल भारतीय एगमार्कनेट जैसी प्रासंगिक बाहरी वेबसाइटों के लिए 'लिंक' प्रदान किए गए हैं। उत्तर प्रदेश राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन (यूपीएसआरएलएम) ने संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) के साथ साझेदारी में जुलाई 2020 में कृषक परिवारों की महिलाओं को एक समूह में संगठित करने और उन्हें बाजार में कुशल आपूर्ति के लिए खेत विकसित करने के कौशल से लैस सप्लाई चैन परियोजना शुरू की। यह मार्च 2021 तक चला, जो कि कोविड-19 सामाजिक-आर्थिक सुधार पहल का हिस्सा था और इसका उद्देश्य महिलाओं को कृषि-व्यवसाय उद्योग में सबसे आगे लाना था।

किसानों के पोर्टल के साथ एक प्रमुख मुद्दा यह है कि जब महिलाओं के नजरिये से देखा जाता है, तो यह माना जाता है कि भूमि का मालिक पुरुष ही किसान है। इस नजरिये को अधिक समावेशी तरीके से प्रस्तुत करने की आवश्यकता है। ऑनलाइन पंजीकरण के समय बड़े, छोटे, सीमांत और अन्य किसानों के साथ आवेदक श्रेणी में 'महिला' को भी जोड़ा जाता है। इसमें इस बात को नजरअंदाज किया गया है कि महिलाएँ भी बड़े, छोटे या सीमांत श्रेणी की किसान हो सकती हैं, इसलिए विकल्पों को तदनुसार रखा जाना चाहिए। यह कृषक महिलाओं की स्थिति को पहचानने की दृष्टि से नीति निर्माण और कार्यान्वयन के स्तर पर एक आदर्श परिवर्तन का सुझाव देने वाला एक उदाहरण है।

किसान अब टोल-फ्री नंबर के माध्यम से पूरे देश में 14 स्टेशनों पर स्थित किसान कॉल सेंटर (केसीसी) से संपर्क करके जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। यह नंबर 1800-180-1551 है। कृषक महिलाओं के प्रश्नों का उत्तर देने और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए विशिष्ट घंटे निर्धारित करके केसीसी की सेवाओं को परिष्कृत किया जाना है। किसानों की असुरक्षा का निर्धारण करने में, भूमि जोत और सामाजिक वर्ग जैसे मापदंडों के अलावा, शारीरिक बाधाओं और महिलाओं की एकल स्थिति से जुड़े अन्य कारकों को भी उचित महत्त्व दिया जा सकता है। किसानों और विशेषकर महिला किसानों के लिए 'सहकर्मी शिक्षण' सीखने का सबसे प्रभावी तरीका है। किसान क्षेत्र स्कूल/फार्म स्कूल, मौखिक सीखने के तरीके और उपकरण जैसे सहकर्मी शिक्षण के रूपों को भी पोर्टल के लिए महिला किसानों द्वारा स्वयं सामग्री का निर्माण करना चाहिए। साक्षरता भी सीखने में एक बाधा है और इसे महिला समूहों के स्तर पर भौतिक इंटरफेस सामूहिक स्थानों के साथ पोर्टल के उपयोग के संयोजन से संबोधित किया जा सकता है। पोर्टलों में सार्थक रूप से भाग लेने के लिए प्रत्येक कृषि विज्ञान केंद्र और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में महिला किसानों के बीच सीखने और साझा करने के लिए समर्पित स्थान और कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता है। अन्य विभिन्न सार्वजनिक पोर्टल जैसे एम-किसान पोर्टल, किसान ज्ञान प्रबंधन प्रणाली, फसल बीमा योजना पर पोर्टल, मृदा स्वास्थ्य कार्ड पर पोर्टल और शृंखला में नवीनतम राष्ट्रीय कृषि बाजार पोर्टल में अलग महिला कॉर्नर हो सकते हैं, जिसके तहत राज्य विशिष्ट लिंग हस्तक्षेप, महिलाओं के पक्ष में प्रौद्योगिकी में सुधार, महिलाओं की सफलता की कहानियाँ और कृषि में लिंग निर्धारण के लिए बेस्ट प्रैक्टिसेज का उल्लेख किया जा सकता है।

ग्रामीण भारत में मोबाइल फोन (फीचर और स्मार्ट दोनों) की पहुँच तेजी से बढ़ रही है (1995 में प्रति 100 लोगों पर 1.4 यूनिट से बढ़कर 51 यूनिट, या वर्तमान में प्रति दो व्यक्ति पर एक फोन)। यह विस्तार के एक तरीके के रूप में डिजिटल कृषि पैमाने और विस्तार में दक्षता ला सकती है। कृषि में आईसीटी के कुछ अच्छे मॉडल जैसे एनईजीपी-ए, डिजिटल कृषि; टीएन-एफसीएमएस, भू चेतना, मैत्रीकथा; आरएमएल एजी टेक; एमकिसान आदि शामिल हैं । कृषक महिलाओं की आवश्यकता को पूरा करने के लिए इनमें और सुधार किया जा सकता है।

### आईसीटी के माध्यम से कृषि में महिलाओं को सशक्त बनाने में आईसीएआर की भूमिका

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) के निर्माण के लिए योजना आयोग द्वारा गठित कृषि अनुसंधान और शिक्षा पर कार्य समूह ने कृषि में महिलाओं के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र (एनआरसीडब्ल्यूए) की स्थापना की सिफारिश की। उसके अनुसार भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने अप्रैल 1996 में भुवनेश्वर में एनआरसीडब्ल्यूए की स्थापना की और वर्ष 2008 से इसे कृषि में महिलाओं पर अनुसंधान निदेशालय (डीआरडब्ल्यूए) के रूप में स्थापित किया गया। डीआरडब्ल्यूए ने ज्ञान संसाधन केंद्र भी स्थापित किया, जिसका उद्देश्य अनुसंधान कार्यकर्ताओं, प्रशासकों और नीति निर्माताओं के लिए कृषि में लिंग के लिए एक संसाधन केंद्र के रूप में कार्य करना है।

### महिला वैज्ञानिक के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार की स्थापना

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने महिला वैज्ञानिकों द्वारा किए गए उत्कृष्ट अनुसंधान/विस्तार कार्यों को मान्यता देने और महिला वैज्ञानिकों को कृषि अनुसंधान और विस्तार में उत्कृष्टता के लिए प्रयास करने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु पंजाब राव देशमुख उत्कृष्ट महिला वैज्ञानिक पुरस्कार का गठन किया। इस पुरस्कार में महिला वैज्ञानिकों और छात्राओं को प्रोत्साहित करने के लिए एक लाख रु. नकद राशि और प्रशस्ति पत्र का प्रावधान है।

### सुझावित गतिविधियाँ

1. **कृषि प्रौद्योगिकियों के हस्तांतरण के लिए जिला स्तर पर टेलीकांफ्रेंसिंग सुविधाओं का निर्माण :** टेलीकांफ्रेंस एक दूरसंचार प्रणाली के माध्यम से कई व्यक्तियों के बीच सूचनाओं का जीवंत आदान-प्रदान और प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। टेलीकांफ्रेंसिंग लोगों को एक साथ एक छत पर ला सकती है, भले ही वे सैकड़ों किलोमीटर तक किसी भी स्थान पर क्यों न फैले हुए हों। यह किसानों की बैठकों के माध्यम से व्यापक पहुँच प्रदान करता है और साथ ही सार्वजनिक भागीदारी की सीमा को बढ़ाता है, संबंधित मुद्दों या समस्याओं पर तत्काल प्रतिक्रिया प्रदान करता है, और विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में कई बैठकें आयोजित करने से बचाता है।
2. **महिला किसानों को सशक्त बनाने के लिए ई-चौपाल का विकास करना :** आईटीसी लिमिटेड के बिजनेस डिवीजन (एबीडी) ने ग्रामीण विकास के उद्देश्य से 'ई-चौपाल' नाम से दुनिया की सबसे बड़ी कंप्यूटर-आधारित इंटरनेट आधारित प्रणाली स्थापित की है। 6,500 से अधिक इंटरनेट से जुड़े कंप्यूटर से सुसज्जित कियोस्क लगभग 40,000 गाँवों को कवर करते हुए नौ राज्यों (एमपी, यूपी, महाराष्ट्र कर्नाटक, एपी, राजस्थान, उत्तराखंड आदि) के लगभग 4 मिलियन किसानों तक पहुँचते हैं।
3. **आईसीटी आधारित इंटरैक्टिव मल्टीमीडिया कृषि सलाहकार प्रणाली विकसित करना :** कृषि कॉल-सेंटर जनवरी 2011 से आईआईटी मद्रास में चार भागीदारों—तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, नेशनल एग्रो फाउंडेशन, इरोड प्रिसिजन फार्म प्रोड्यूसर्स कंपनी लिमिटेड और धर्मपुरी प्रिसिजन फार्मर्स एग्रो सर्विसेज लिमिटेड—द्वारा प्रदान की गई सेवा सहायता के साथ चालू है। सलाहकार सेवाएँ शुरुआत में तमिलनाडु के कांचीपुरम, इरोड और धर्मपुरी के 3 जिलों में फैले 1200 किसानों को 9 फसलों धान, मूँगफली, बैंगन, हल्दी, टैपिओका, आम, गन्ना, नारियल और टमाटर के लिए की जा रही हैं। इस पहल के द्वारा अब तक 1000 से अधिक किसानों के विवरण एकत्र किए गए हैं, 700 से अधिक सलाह प्रदान की गई हैं और 300 से अधिक किसान बार-बार कॉल कर रहे हैं।
4. **सूचना कियोस्क के माध्यम से महिला किसानों का ज्ञान सशक्तीकरण :** ग्रामीण समुदायों का ज्ञान सशक्तीकरण और आवश्यक सूचना पहुँच छोटे, सीमांत किसानों के दरवाजे तक खुला बाजार लाने के सिद्धांत पर आधारित है। इस कियोस्क से उन्हें सेवाओं की एक शृंखला प्रदान की जाती है और बहुत आवश्यक बाजार संपर्क प्रदान किया जाता है। आंध्र प्रदेश में सार्वजनिक, निजी और एनजीओ क्षेत्रों के संस्थानों के एक संघ को शामिल करते हुए सबसे एकीकृत तरीके से तकनीकी अपडेट देने के लिए लागत प्रभावी, आवश्यकता आधारित, समय पर, आभासी विशेषज्ञ निर्देशित प्रसार प्रणाली बनाने का अवसर प्रदान किया गया। सूचना कियोस्क, जो कि टच स्क्रीन वाला एक आईसीटी उपकरण है, संसाधनहीन वर्षा आधारित किसानों के उपयोग के लिए डिजाइन किया गया है। यह उन लोगों को भी सेवा प्रदान करता है, जिनके पास वर्षा आधारित कृषि के नवीनतम उपकरणों और प्रौद्योगिकियों, वर्षा, तापमान जैसे स्थानीय मौसम मापदंडों पर जानकारी की कमी है।
5. **महिला सूचना उपकरण के रूप में लघु संदेश सेवा (एसएमएस) :** सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का लक्ष्य कृषि दक्षता, कृषि उत्पादकता और किसानों की आय को बढ़ाकर ग्रामीण जनता को इसका लाभ प्रदान करना है। आजकल, मोबाइल फोन न केवल शहरी समुदाय के बीच, बल्कि ग्रामीण समुदाय के बीच भी संचार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मोबाइल फोन की लोकप्रिय और उपयोगी सुविधाओं में से एक लघु संदेश सेवा (एसएमएस) के रूप में संदेश सेवा है। यह किसानों और कृषि सूचना सामर्थ्य के बीच अंतर को पाटता है। एसएमएस ने ग्रामीण क्षेत्र में कृषि संबंधी जानकारी प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। किसान क्लबों के सदस्यों को महत्त्वपूर्ण प्रशिक्षणों और अन्य कार्यक्रमों की जानकारी भेजने के लिए एसएमएस सेवा एक माध्यम के रूप में भी उपयोग की जा सकती है।
6. **आईसीटी के माध्यम से महिला किसानों के लाभ के लिए कृषि-मौसम सलाहकार बुलेटिन का प्रसार :** मौसम और जलवायु कृषि प्रदर्शन और प्रबंधन पर प्रभाव डालने वाले सबसे बड़े जोखिम कारकों में से कुछ हैं। अत्यधिक मौसम और जलवायु संबंधी घटनाएँ जैसे गंभीर सूखा, बाढ़ या तापमान अक्सर कृषक समुदाय को झटका देती हैं। इससे कृषि उत्पादन में गिरावट आती है, खासकर शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में। आईएमडी ने फसलों पर प्रतिकूल मौसम की स्थिति के प्रभाव को कम करने और कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने हेतु अनुकूल मौसम का उपयोग करने के लिए कृषि-मौसम सलाहकार सेवाएँ शुरू की हैं। कंप्यूटर आधारित

सूचना प्रौद्योगिकी और मोबाइल फोन सेवाओं का लाभ उठाने के लिए आईएमडी ने इन बुलेटिनों को अपनी वेबसाइट (http://www.imd.gov.in) के माध्यम से अपलोड करना शुरू कर दिया है, जिसका उपयोग विभिन्न एजेंसियाँ और किसान सीधे करते हैं। निजी सेवा प्रदाताओं के सहयोग से किसानों तक सीधे एग्रो मेट बुलेटिन के प्रसार के लिए इंटरैक्टिव वॉयस रिस्पांस (आईवीआर) और शॉर्ट मैसेजिंग सर्विस (एसएमएस) का उपयोग किया जाता है। श्रीगंगानगर और हनुमानगढ़, दोनों जिलों के कृषि मौसम बुलेटिन का संक्षिप्त सारांश तैयार किया गया है और इसे इफको किसान संचार लिमिटेड द्वारा मोबाइल एसएमएस के माध्यम से ध्वनि संदेश के रूप में क्षेत्र के किसानों तक पहुँचाया जाता है। सदस्य किसानों को एसएमएस के रूप में कृषि-मेट बुलेटिन प्रसारित करने के लिए गाँवों में मोबाइल क्लब बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

7. **किसान मोबाइल सलाहकार सेवाएँ :** सूचना प्रौद्योगिकी में इस क्रांति ने ग्रामीण जनता के लिए सूचना तक पहुँच को आसान और लागत प्रभावी बना दिया है। भारतीय कृषि में आईसीटी के कई मॉडल हैं, जिन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में सेवाओं के वितरण में महत्त्वपूर्ण अंतर लाया है। किसान मोबाइल संदेश (केएमएस) पंजाब, हरियाणा, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश राज्य में नवीनतम जानकारी के प्रसार के लिए सफलतापूर्वक काम कर रहा है। किसानों को नवीनतम कृषि जानकारी अपडेट करने के लिए विभिन्न केवीके द्वारा फसल उत्पादन, पौध संरक्षण, मौसम पूर्वानुमान और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, बागवानी, पशु चिकित्सा विज्ञान, गृह विज्ञान, कृषि विस्तार और मशीनरी आदि के संबंध में अलग-अलग एसएमएस किसानों को भेजे जाते हैं।
8. **महिलाओं को कृषि प्रौद्योगिकियों के हस्तांतरण के लिए मोबाइल का उपयोग :** सूचना और संचार प्रौद्योगिकियाँ (आईसीटी) नई चुनौतियों का समाधान करने और इलेक्ट्रॉनिक मैसेजिंग के माध्यम से आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ प्रदान करके ग्रामीण गरीबों की आजीविका को ऊपर उठाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आजकल, मोबाइल सेवाओं के माध्यम से कृषि प्रौद्योगिकियों का संदेश प्रचलन में है। ये सेवाएँ बड़ी संख्या में ग्राहकों तक पहुँचने में अधिक प्रभावी साबित हुई हैं और अधिक लाभदायक भी हैं, क्योंकि मोबाइल सेवाएँ न केवल शहरी क्षेत्रों में बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से पहुँच गई हैं। वर्तमान परिस्थिति में मोबाइल नेटवर्किंग का लाभ महिला किसान संगठित होकर उठा सकती हैं। मोबाइल संचार सभी श्रेणियों के किसानों के लिए अपेक्षाकृत सस्ता और किफायती है और लक्षित दर्शकों तक अधिक गति से सूचना प्रसारित करने की सुविधा प्रदान करता है।
9. **ज्ञान प्रसार में वीडियो कॉम्पैक्ट डिस्क (वीसीडी) का उपयोग :** सूचना और संचार प्रौद्योगिकी दुनिया भर में कृषि प्रणालियों में क्रांति ला रही है। बातचीत उत्पन्न करने के लिए वीडियो सबसे उपयुक्त माध्यम है। दृश्यों के माध्यम से अनपढ़ और अनजान ग्रामीण लोगों तक संदेश आसानी से और प्रभावी ढंग से पहुँचाया जा सकता है। ऑडियो-विजुअल की अपनी अनूठी गुणवत्ता के साथ वीडियो ग्रामीण विस्तार कार्य के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में कार्य करता है। कृषक महिलाएँ खेती के उत्पादन और कटाई के बाद के चरण, दोनों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

**कुछ संबंधित क्षेत्र जहाँ महिलाओं को सशक्त बनाने की आवश्यकता है**

- **खेती के रिकॉर्ड में महिला कृषकों को दर्ज करना :** महिला किसानों के काम को मान्यता देने और उन्हें भूमि उपयोग/कृषि में निर्णय लेने की आवाज देने का एक तरीका भूमि रिकॉर्ड में कृषक के रूप में महिलाओं का नाम शामिल करना होगा (संबंधित कॉलम में)। खेती के रिकॉर्ड में (जिन्हें खाता, पानी पत्रक, पिहानी आदि कहा जाता है) अलग से, जहाँ भी वे अपनी जमीन पर या किराये की जमीन पर खेती कर रहे हों। वर्तमान में यह प्रथा केवल भूमि मालिक का नाम दर्ज करने की है। खेती के रिकॉर्ड में महिला कृषकों या अपने परिवार के खेतों में मजदूरी करने वालों का नाम दर्ज करना उनके लिए ऋण, इनपुट, बीमा और मुआवजे के लाभ के लिए पात्र बनने का आधार बन सकता है।
- **महिला किसानों की विभिन्न श्रेणियों की गणना/पंजीकरण :** राज्य स्तर पर भू-राजस्व, कृषि और ग्रामीण विकास विभाग समयबद्ध तरीके से राजस्व गाँव से ऊपर तक महिला किसानों की विभिन्न श्रेणियों की पहचान और गणना/पंजीकरण करने के लिए मिलकर काम कर सकते हैं। केंद्रीय स्तर पर भूमि संसाधन विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय सहित संबंधित मंत्रालयों से इस उद्देश्य के लिए दिशानिर्देश जारी किए गए हैं। पंजीकरण अभियान को व्यापक प्रचार और आवश्यक बजट द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए, ताकि सभी श्रेणियों की महिला किसान स्वयं को पंजीकृत कर सकें और किसान के रूप में पहचान पत्र प्राप्त कर सकें। यह नीति दिशानिर्देशों (एनएफसी, 2007) के अनुसार किसानों की समावेशी परिभाषा को क्रियान्वित करने में एक ठोस कदम हो सकता है।
- **महिला किसान सशक्तीकरण परियोजना :** सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के सभी गाँवों में कृषक महिलाओं को इष्टतम समग्र समर्थन और अधिकतम सेवाओं का प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए 'तमिलनाडु के सभी गाँवों में सीमांत लोगों के लिए सुनिश्चित अधिकतम सेवाएँ' योजना के तहत पैटर्न का पालन किया गया। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम, 2016) के तहत आजीविका सृजन के लिए प्रोजेक्ट मोड में यह कार्यान्वित की जा रही है।
- **केवल महिला सहकारी :** सहकारी समितियों को लंबे समय से एक सामाजिक संस्था के रूप में देखा जाता है, जो महिला किसानों को साझेदारी, एकजुटता और संसाधन प्रदान करने के साथ-साथ लैंगिक असमानताओं से निपटने और लड़ने में भी मदद करती हैं। डेयरी, बैंक, स्टोर, खाद्य विक्रेता जैसे क्षेत्रों में 'केवल महिला सहकारी समितियाँ' न केवल महिलाओं को सशक्त बनाने और शिक्षित करने में महत्त्वपूर्ण रही हैं, बल्कि वे अपने सदस्यों को सेवाओं की एक पूरी शृंखला प्रदान करने में भी काफी अच्छा काम कर रही हैं। इसके बावजूद, सहकारी समितियों में महिलाओं की भागीदारी अभी भी अपेक्षाकृत कम है (पीआईबी 2023)। कुछ अध्ययनों से पता

चलता है कि 92.5 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में केवल 7.5 प्रतिशत महिलाएँ सहकारी समितियों में भाग लेती हैं।

- **स्व-रोजगार महिला संघ :** सहकारी समितियों सहित स्थानीय स्वशासी निकायों में निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं को शामिल करने की दृष्टि से, सभी राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों में सभी निदेशक मंडलों में महिलाओं के साथ कम-से-कम 33 प्रतिशत प्रतिनिधित्व स्थापित किया जाना चाहिए। स्व-रोजगार महिला संघ (SEWA) जैसे संगठन भारत में 1.24 मिलियन महिलाओं की सदस्यता बनाने के लिए भागीदारों के साथ बहुत सफलतापूर्वक काम कर रहे हैं। 54 प्रतिशत सदस्य कृषि श्रमिक हैं। इनपुट डिलीवरी सेवाएँ, उत्पादन और फसल कटाई के बाद सहायता सेवाएँ प्रदान करने वाली कृषि विस्तार प्रणाली को व्यक्तिगत मूल्य-शृंखलाओं, विशेष रूप से महिला किसानों को शामिल करने वाली शृंखलाओं को एकीकृत करने के लिए बाजार अनुकूल दृष्टिकोण का पालन करने पर जोर देने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, मिट्टी और जल संरक्षण, मछली तालाबों, बागवानी, रेशम उत्पादन आदि को बढ़ावा देने के लिए मनरेगा, वाटरशेड विकास और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन कार्यक्रमों के साथ महिलाओं के स्वामित्व वाली व्यक्तिगत भूमि का विकास; जनजाति क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देने के साथ, जहाँ महिला किसानों ने भूमि हासिल की है, वन अधिकार अधिनियम के तहत स्वामित्व—इस पहल को और अधिक गति दे सकता है।
- **पोषण और स्वास्थ्य के लिए कृषि :** 'पोषण और स्वास्थ्य के लिए कृषि' (आईएफपीआरआई, सीजीआईएआर) परियोजनाओं में मुर्गी पालन, डेयरी, सुअर पालन, बकरी और भेड़ पालन आदि के माध्यम से महिला सशक्तीकरण और आय सृजन करने का उचित माध्यम उभरा है, जिसे संकल्पित और कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। आजीविका समर्थन में वृद्धि के अलावा, इन गतिविधियों में ग्रामीण परिवारों, विशेषकर महिला नेतृत्व वाले परिवारों की पोषण सुरक्षा को बढ़ाने की भी क्षमता है।
- **स्वयं सहायता समूह को बढ़ावा देना :** फसल नर्सरी तैयार करना, वर्मी कंपोस्टिंग, कृषि-इनपुट डीलरशिप, टोकरी बुनाई, कीट-विकर्षक अगरबत्ती बनाना आदि जैसे ऑन-फार्म और ऑफ-फार्म सूक्ष्म उद्यमों के संचालन में महिला एसएचजी को उचित ढंग से बढ़ावा देना महत्त्वपूर्ण है। बाजारों के लिए जुड़ाव और समर्थन, किसानों की आय बढ़ाने में काफी मददगार साबित हो सकता है। हालाँकि, ऐसे सभी प्रयासों के लिए राष्ट्रीय किसान नीति (एनपीएफ, 2007) के प्रावधानों के अनुरूप महिलाओं को 'किसान' माना जाता है। इसके अलावा, प्रबंधकीय पहलुओं के साथ-साथ विषयवस्तु क्षेत्रों में महिला एसएचजी का प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, ग्राम-सभा की बैठकों में प्रभावी योगदान के माध्यम से ग्रामीण सुशासन में भाग लेने में उनकी मदद करने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।
- कृषि में राष्ट्रीय लिंग संसाधन केंद्र (एनजीआरसीए) को मजबूत करना और इसकी गतिविधियों को तेज करना आवश्यक है। कृषि क्षेत्र में क्षेत्रीय भाषाओं में कृषि उपकरणों और प्रौद्योगिकियों का संग्रह और कृषि में महिलाओं से संबंधित महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में वृहद् और सूक्ष्म स्तर का अध्ययन और कार्रवाई अनुसंधान करना भी किसानों की आय बढ़ाने हेतु महिला किसानों के संसाधन आधार का दोहन करने के लिए बहुत आवश्यक है। महिला किसानों की विस्तार सेवाओं तक पहुँच में सुधार और कृषि में उन्हें लैंगिक मुख्यधारा में लाने की योजनाओं पर एनजीआरसीए अध्ययन (एनजीआरसीए अध्ययन, 2015-17) की सिफारिशों को संस्थागत बनाना महत्त्वपूर्ण है।
- **पर्याप्त बजट आवंटन :** कृषक महिलाओं से संबंधित योजनाओं पर बजटीय आवंटन में वृद्धि से कठिन परिश्रम को कम करने में मदद मिलेगी। पंचायत स्तर पर ग्रामीण महिला समूहों के माध्यम से छोटे, सीमांत और निर्वाह किसानों के लिए बैंकों को बढ़ावा देने के माध्यम से महिला किसानों की दक्षता में वृद्धि होगी।
- **प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण :** अधिकारियों (राष्ट्रीय, राज्य, जिला स्तर पर) के लिए स्पष्ट प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण प्रक्रिया और योजना का अभाव एक प्रमुख मुद्दा प्रतीत होता है। कृषि क्षेत्र में लैंगिक चिंताओं को मुख्यधारा में लाने के लिए जेंडर बजटिंग एक प्रभावी उपकरण बन सके, इसके लिए इस क्षेत्र में सभी स्तरों पर अधिकारियों की निरंतर क्षमता निर्माण और लैंगिक संवेदीकरण कराना अति आवश्यक है।

## निष्कर्ष

ग्रामीण महिलाएँ ऐसी गतिविधियों में शामिल होती हैं, जिनमें आम तौर पर कृषि फसलों का उत्पादन करना, जानवरों की देखभाल करना, भोजन का प्रसंस्करण और तैयारी करना, कृषि या अन्य ग्रामीण उद्यमों में मजदूरी के लिए काम करना, व्यापार और विपणन में शामिल होना तथा साथ ही परिवार के सदस्यों की देखभाल करना और उनके घरों को बनाए रखना शामिल है। महिलाएँ जलवायु और आर्थिक व्यवधानों के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं, क्योंकि वे जटिल कृषि स्थितियों और काम के बोझ के साथ अपनी जिम्मेदारियाँ निभाती रहती हैं, जबकि पुरुष रोजगार के लिए अन्य स्थानों पर चले जाते हैं। उनमें परिवर्तन के उत्प्रेरक के रूप में कार्य करने और जलवायु परिवर्तन से संबंधित मुकाबला करने और अनुकूलन उपायों में सक्रिय भूमिका निभाने और पोषण सुरक्षा में योगदान देने की भी क्षमता है। कृषि अर्थव्यवस्था में सक्रिय होने के बावजूद, किसानों, भूमिहीन कृषि मजदूरों, पशुधन, प्रबंधकों, मछुआरों, वन उपज इकट्ठा करने वालों के रूप में महिलाओं के महत्त्वपूर्ण योगदान के बावजूद महिलाओं को किसान के समान अधिकार नहीं दिए गए हैं। कानूनी तौर पर बहुत कम महिला किसान ही भूमि की मालिक हैं। इसमें तत्काल सुधार की आवश्यकता है। यह न केवल उनके वास्तविक योगदान को पहचानने और उन्हें वह सम्मान प्रदान करने के लिए आवश्यक है, जिसकी वे हकदार हैं, बल्कि उन्हें अपनी उत्पादन दक्षता में सुधार करने का अवसर भी प्रदान करता है। महत्त्वपूर्ण कौशल और प्रौद्योगिकी प्रदान करने के लिए हमें अधिक से अधिक महिला किसान क्लबों का आयोजन करना चाहिए। एक अन्य मुद्दा कृषि में महिलाओं के सार्थक योगदान को बढ़ाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी की क्षमता का लाभ उठाना है, जिससे कृषि क्षेत्र का समग्र विकास हो सके।

महिलाओं के उपयोग के लिए वेब-आधारित सूचना पोर्टल का निर्माण और विकास, भारत में महिला अनुसंधान का डेटाबेस विकसित करना, कृषि प्रौद्योगिकी के प्रसार के लिए इंटरनेट-आधारित यूट्यूब का

उपयोग कृषक महिलाओं के लिए उपयोगी होगा। इसके अलावा, सोशल मीडिया के माध्यम से महिला कृषि-उद्यमियों की सफलता की कहानियों को उजागर करने, युवा महिलाओं के बीच कृषि-उद्यम की अवधारणा को लोकप्रिय बनाने, इच्छुक महिला उद्यमियों को विभिन्न प्रौद्योगिकी और बिजनेस इनक्यूबेटरों (टीबीआई) से जोड़ने और सलाह देने की सख्त जरूरत है। कृषक महिलाओं के लिए उनकी रणनीतिक आवश्यकताओं और उनकी रुचि के क्षेत्रों में एक्सपोजर विजिट विशेष रूप से आयोजित किए जा सकते हैं। आईसीटी के उपयोग सहित महिला किसानों के प्रशिक्षण और विस्तार गतिविधियों के लिए अलग बजट मद से धन आवंटित, उपयोग और रिपोर्ट किया जाना चाहिए। कृषक महिलाओं के बेहतर उपयोग के लिए कृषि प्रौद्योगिकी के प्रभावी प्रसार हेतु क्षेत्रीय भाषा में जर्नल/न्यूजलेटर का प्रकाशन और वितरण होना चाहिए।

आज अधिकतर वैज्ञानिक ज्ञान और प्रौद्योगिकियाँ विभिन्न कारणों से ग्रामीण महिलाओं तक नहीं पहुँच पाती हैं। इसमें सुधार की जरूरत है। अनुसंधान प्रणालियों को महिलाओं के इनपुट भी लेने चाहिए, क्योंकि वे ऐतिहासिक रूप से जमीनी स्तर पर बहुत से पारंपरिक ज्ञान और नवाचारों का स्रोत रही हैं। महिलाओं को कृषि और संबंधित गतिविधियों के विभिन्न पहलुओं पर शिक्षित करने के लिए सरकारी अधिकारियों को हर गाँव में महिला किसान मंडल बनाने चाहिए। उपयुक्त प्रौद्योगिकियों के साथ कौशल को परिष्कृत करने के लिए कृषि में महिलाओं के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम विकसित करने की भी आवश्यकता है। कृषक महिलाओं के कठिन परिश्रम को कम करने के लिए कृषि उपकरणों और मशीनों को एर्गोनॉमिक रूप से डिजाइन किया जाना चाहिए और उन्हें दूरस्थ शिक्षा, सामुदायिक रेडियो और अन्य प्रभावी माध्यमों के जरिये कृषि ज्ञान के साथ सशक्त बनाया जाना चाहिए।

## संदर्भ


इंटरनेशनल कांफ्रेंस ऑन इनोवेटिव एप्रोचिस फॉर एग्रीकल्चरल नॉलेज मैनेजमेंट, इंडियन कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च एंड इंटरनेशनल सोसाइटी ऑफ एक्सटेंशन एजुकेशन, 12-9 नवंबर, 2011.

एग्रीकल्चर सेंसस (2010). मैन्युअल ऑफ शीडूल एंड इंस्ट्रक्शन फॉर डाटा कलेक्शन (लैंड रिकॉर्ड स्टेट्स) भारत सरकार, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर, डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर एंड कॉपरेशन, एग्रीकल्चर सेंसस डिवीजन, भारत सरकार.

एग्रीकल्चर फॉर न्यूट्रीशन एंड हेल्थ प्रोजेक्ट्स, आईएफपीआरआई, सीजीआईएआर रिसर्च प्रोग्राम ऑन एग्रीकल्चर फॉर न्यूट्रीशन एंड हेल्थ.

किसान कॉल सेंटर. (2004). डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर एंड कॉपरेशन, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर, भारत सरकार

खोउ, ए. & सुरेश, के. आर. (2018). ए स्टडी ऑन द रोल ऑफ सोशल मीडिया मोबाइल एप्लीकेशन एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन एग्रीकल्चर मार्केटिंग इन पुडुचेरी, जर्नल ऑफ मैनेजमेंट, वॉल्यूम 5, इशू 6, नवंबर-दिसंबर 2018, पीपी.35-28.

ग्लोबल कांफ्रेंस ऑन वीमन इन एग्रीकल्चर, इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च एंड एशिया पसिफिक एसोसिएशन ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीटयुशंस,15-13 मार्च 2012, नई दिल्ली.

ग्लेनडेनिंग, के. जे., चंद्रा, बी.एस. & ओकेरे, के. ए. (2010). रिव्यु ऑफ एग्रीकल्चरल एक्सटेंशन इन इंडिया: आर फार्मर्स इनफार्मेशन नीड्स बीइंग मेट? इंटरनेशनल फूड पालिसी रिसर्च इंस्टिट्यूट : आईएफपीआरआई डिस्कशन पेपर 01048, दिसंबर 2010.

जेंडर, टेक्नोलॉजी एंड न्यूट्रीशनल एक्सटेंशन इन इंडिया. (2020). हेंड बुक ऑफ एग्रीकल्चरल एक्सटेंशन इंडियन कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च, नई दिल्ली.

ट्रेनिंग ऑफ वीमन इन एग्रीकल्चर. (2021). मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड फार्मर्स वेलफेयर, भारत सरकार, https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1982792 से पुनःप्राप्त.

ठाकुर, डी. & चंदर, एम. (2018). सोशल मीडिया इन एग्रीकल्चर एक्सटेंशन: बेनिफिट्स एंड चेलेनजिस अंडर इंडियन कॉन्टेक्स्ट, एशियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चर एक्सटेंशन, इकोनॉमिक्स एंड सोशियोलॉजी, 27(2): 2018 ,8-1.

ठाकुर, डी. & चंदर, एम. (2018). यूज ऑफ सोशल मीडिया इन एग्रीकल्चर एक्सटेंशन, सम एवीडेन्सिस फ्रॉम इंडिया, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस, एनवायरनमेंट एंड टेक्नोलॉजी, वॉल्यूम. 7, नंबर 2018 ,4.

नेशनल पालिसी फॉर फार्मर्स (एनएफसी). (2007). डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर एंड कॉपरेशन, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर, भारत सरकार.

नेशनल रूरल लाइवलीहुड मिशन (एनआरएलएम): दीनदयाल अंत्योदय योजना. (2016). मिनिस्ट्री ऑफ रूरल डेवलपमेंट, भारत सरकार.

नेशनल सैंपल सर्वे रिपोर्ट. (21-2020). मिनिस्ट्री ऑफ स्टेटटिक्स एंड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन, भारत सरकार.

9th एग्रीकल्चरल साइंस कांग्रेस ऑन टेक्नोलॉजिकल एंड इंस्टीटयुशनल इनोवेशन फॉर एन्हान्सिंग एग्रीकल्चर इनकम. (2009). नेशनल अकादमी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज एंड शेरे-कश्मीर यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज एंड टेक्नोलॉजी ऑफ कश्मीर, श्रीनगर.

फार्मर्स पोर्टल, डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर एंड कॉपरेशन एंड फार्मर्स वेलफेयर, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर, भारत सरकार.

बालकृष्ण, बी. देशमुख, ए. ए. (2017). ए स्टडी ऑन रोल ऑफ सोशल मीडिया इन एग्रीकल्चर मार्केटिंग एंड इट्स स्कोप, ग्लोबल जर्नल ऑफ मैनेजमेंट एंड बिजनेस रिसर्च : ई मार्केटिंग वॉल्यूम 17, इशू 1, वर्जन 2017 ,1.0.

ममगैन, ए., जोशी, यू. & चौहान, जे. (2020). इम्पैक्ट ऑफ सोशल मीडिया इन एन्हान्सिंग एग्रीकल्चर एक्सटेंसन, एग्रीकल्चर एंड फूड ई-न्यूजलेटर, वॉल्यूम 2– इशू 2020 ,9.

रिपोर्ट ऑफ द कमेटी फॉर डबलिंग फार्मर्स इनकम, वॉल्यूम XI. (2017). मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड फार्मर्स वेलफेयर, भारत सरकार.

रोल ऑफ वीमन इन एग्रीकल्चर. (2023). मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड फार्मर्स वेलफेयर, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर, भारत सरकार, https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1982792 से पुनःप्राप्त.

वीमेन लीड द वे: फ्रॉम फार्म तो मार्किट. (2022). यूएनडीपी रिपोर्ट, अगस्त 2022.

http://www.sewa.org

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 85-88, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# जल संरक्षण के लिए स्वचालित जल स्तर नियंत्रक के प्रति लोगों में जागरूकता का अध्ययन

**रंजीत कुमार[1] और डॉ. लोकनाथ[2]**

**सारांश**

प्रस्तुत शोधपत्र घर में पानी की टंकी से 'ओवरफ्लो' होकर बर्बाद होने वाले जल के संरक्षण हेतु स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म उपकरण के प्रति लोगों में जागरूकता के अध्ययन पर आधारित है। शोध विश्लेषणात्मक प्रकृति का है, जिसमें गैर-संभाव्यता नमूने तकनीक के तहत उद्देश्यात्मक नमूना विधि का प्रयोग करते हुए अयोध्या जनपद के डायट (जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान, अयोध्या) पर प्रशिक्षित विद्यार्थियों को उत्तरदाताओं के रूप में चुना गया। प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण के आधार पर केवल 23% घर ऐसे हैं, जहाँ वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक उपकरण का प्रयोग किया जाता है। शेष 77% घरों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। वहीं वाटर टैंक ओवरफ्लो होने पर अगर जल स्रोत समर्सिबल है तो 50 लीटर और मोटर है तो 27 लीटर जल प्रति मिनट बर्बाद होता है।

**संकेत शब्द :** ऑटोमैटिक वाटर लेवल कंट्रोलर, ओवरफ्लो वाटर कंट्रोल, भूजल संरक्षण, भूजल संकट, जल संरक्षण, स्वचालित जल स्तर नियंत्रक

## प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति एवं परंपराओं में जल का महत्त्व प्राचीन काल से ही रहा है। भारतीयों के सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन पर जल का सदैव एक व्यापक प्रभाव रहा है। प्रारंभिक भारतीय संस्कृति नदी क्षेत्रों के निकट विकसित हुई। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नामक सात नदियाँ सांस्कृतिक आधार पर महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं। ऐसे श्लोक हैं, जिनमें जल को भगवान् के रूप में पूजते हुए उच्चारित किया जाता है (प्राचीन भारत में जलविज्ञानीय ज्ञान, दिसंबर 2022)। जैसे :

आपो हिष्ठा मयोभुवस्था न ऊर्जे दधातन महे रणाथ चक्षसे।

(हे जल! आपकी उपस्थिति से वायुमंडल बहुत तरोताजा है और यह हमें उत्साह और शक्ति प्रदान करता है। आपका शुद्ध सार हमें प्रसन्न करता है, इसके लिए हम आपको आदर देते हैं।)

उपर्युक्त श्लोक सिद्ध करता है कि प्राचीन काल से ही भारत में जल के प्रति आदर व सम्मान के भाव की बात की गई है। इसलिए जल संरक्षण हमारी नैतिक जिम्मेदारी है, क्योंकि पूरी दुनिया जल संकट का सामना कर रही है। फिर भी हम अपने आसपास प्रतिदिन जल की बर्बादी देखते हैं। बढ़ती आबादी, अनियंत्रित जल उपयोग और जल प्रदूषण के कारण नदियाँ, झीलें और अंतर्देशीय जल संरचनाएँ प्रदूषित हो रही हैं। मानव लापरवाही के कारण घरों में भी हजारों लीटर जल बर्बाद होता है। इससे पृथ्वी की जल संसाधनों की गुणवत्ता पर असर पड़ा है साथ ही भूजल स्तर भी नीचे गया है। 2021 और 2022 के भूजल स्तर के आँकड़ों से पता चलता है कि देश में जल स्तर की सामान्य गहराई 5 से 10 एम.बी.जी.एल (मीटर जमीनी स्तर नीचे) के बीच है (भूजल संसाधन, 2022)। कई क्षेत्रों में भूजल नमकीन या अधिक प्रदूषण के कारण पीने योग्य नहीं बचा है। लगभग 70% भू-जल निकासी का उपयोग कृषि के लिए किया जाता है। दुनिया के आधे से अधिक प्रमुख जल स्रोत प्राकृतिक रूप से फिर से भरने की तुलना में तेजी से कम हो रहे हैं (ग्राउंड वाटर रिसोर्सेज इन इंडिया, 2023)। वर्तमान में बढ़ते जल संकट के लिए अनेक कारक प्रभावी हैं, परंतु इनकी पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालें तो इसके लिए मानव की जिम्मेदारी मुख्य है। इसमें जनसंख्या वृद्धि, वृक्षों की अंधाधुंध कटाई, बढ़ता औद्योगीकरण, जलवायु परिवर्तन, बढ़ता शहरीकरण, विलासिता, आधुनिकतावादी एवं भोगवादी प्रवृत्ति, स्वार्थी प्रवृत्ति एवं जल के प्रति संवेदनहीनता, भूजल पर बढ़ती निर्भरता एवं अत्यधिक दोहन, जल के अपव्यय की बढ़ती प्रवृत्ति, परंपरागत जल सग्रंहण तकनीकों की उपेक्षा, समाज की सरकार पर बढ़ती निर्भरता, कृषि में बढ़ता जल का उपभोग, जल शिक्षा का अभाव आदि शामिल हैं (ओझा, 2011)। घरेलू स्तर पर व्यर्थ होते जल की बात करें तो जिन घरों में पानी की टंकी है और वाटर अलार्म अथवा स्वचालित जल स्तर नियंत्रक (ऑटोमैटिक वाटर लेवल कंट्रोलर) उपकरण का प्रयोग नहीं होता है, वहाँ प्रतिदिन जल बर्बाद होता है। अनेकानेक घरों में स्थापित टैंकों के ओवरफ्लो होने के कारण पानी की काफी बर्बादी होती है।

स्वचालित जल स्तर नियंत्रक इस समस्या का समाधान प्रदान करने वाला एक उपकरण है। यह एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है, जो जल संरक्षण में सहायक है। जल स्तर नियंत्रक (वाटर लेवल कंट्रोलर) का संचालन इस तथ्य पर आधारित है कि जैसे पानी का स्तर टंकी के सेंसर लेवल तक पहुँचता है मोटर स्वतः बंद हो जाती है, और इसी तरह टैंक के नीचे हिस्से में लगे सेंसर से नीचे जैसे ही पानी का स्तर जाता है मोटर स्वतः चालू हो जाती है, जैसा चित्र-1 में समझाया गया है। इस तरह ओवरफ्लो होकर जल की बर्बादी नहीं होती है और भूजल पर दबाव कम पड़ता है। इसका उपयोग करके भविष्य के लिए भूजल स्रोतों को संरक्षित किया जा सकता है।

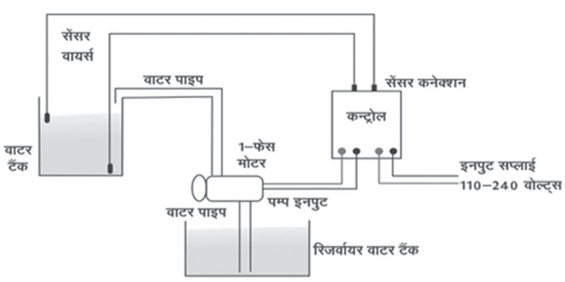


चित्र 1 : स्वचालित जल स्तर नियंत्रक

[1]शोधार्थी, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, बाबसाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश. ईमेल : ranjeet.rbl@gmail.com
[2]सहायक आचार्य, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, बाबसाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश. ईमेल : loknath.vns@gmail.com

**शोध समस्या**

आज पेयजल संकट गहराता जा रहा है। जलस्तर तेजी से नीचे की ओर खिसकने लगा है, जिसके परिणामस्वरूप गर्मियों में पेयजल संकट बढ़ जाता है, हैंडपंप पानी देना बंद कर देते हैं। वहीं अधिकतर घरों में गहरे बोरवेल समर्सिबल वाटर टैंक आदि का उपयोग होने लगा है। ऐसे समय में जल संरक्षण के लिए लोगों का व्यवहार क्या है? और वे वाटर ओवरफ्लो से बर्बाद होते जल के संरक्षण के लिए 'स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या ऑटो अलार्म' उपकरण का प्रयोग करते हैं नहीं, इसका आकलन प्रस्तुत शोध पत्र में किया गया है।

**शोध उद्देश्य**

- भू-जल उपयोगकर्ताओं में जल संरक्षण के लिए वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक के प्रति जागरूकता का अध्ययन।
- वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक उपकरण के प्रयोग से जल संरक्षण का आकलन करना।

**साहित्य समीक्षा**

भूजल एक अति महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। यह प्रकृति की ओर से दिया गया निःशुल्क उपहार है। आज भारत सहित विश्व के अनेक देश जल संकट का सामना कर रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार अनुमान है कि पूरे उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में 2025 तक गंभीर रूप से भू-जल संकट गहरा सकता है (संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन, 2023)। जलवायु परिवर्तन के कारण यह स्थिति और भी बदतर हो गई है, साथ ही गर्मियों में उत्तर भारत की नदियों का जल स्तर और प्रभाव कम हो जाता है। भूजल की कमी से पर्यावरणीय प्रवाह का असर केवल मानव पर ही नहीं, बल्कि अन्य जलीय जीवों पर भी पड़ता है। भूजल हमारी नदियों में पर्यावरणीय प्रवाह का एक प्रमुख स्रोत है। जल स्तर में गिरावट के साथ कई सदाबहार नदियाँ मौसमी होती जा रही हैं। पिछले 50 वर्षों में गंगा की कई सहायक नदियों के प्रवाह में 30 से 60 प्रतिशत की गिरावट आई है (दत्ता, 2020)। इसका मुख्य कारण अंधाधुंध दोहन और जल प्रबंधन की अनदेखी है। परिणाम की बात करें तो सामने है। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार 2016 में 9.33 करोड़ आबादी पानी के संकट से जूझ रही थी। 2023 से पहले संयुक्त राष्ट्र संघ ने 'संयुक्त राष्ट्र विश्व जल रिपोर्ट 2023' जारी की, जिसके अनुसार एशिया में करीब 80 फीसदी आबादी जल संकट से जूझ रही है (वैश्विक जल संकट के प्रति जागरूकता प्रसार के लिए, मैराथन दौड़ के जरिये मुहिम, 2023)। पूर्वोत्तर चीन, भारत और पाकिस्तान पर यह संकट सबसे ज्यादा है। भारत में कई कारणों से भूजल दूषित हो रहा है, जो चिंताजनक है। साथ ही कई जिलों में भूजल स्तर 8 मीटर से नीचे तक पहुँच गया है, वहाँ गरीबी दर 9-10 % बढ़ सकती है, जिसका प्रभाव छोटे किसानों की आर्थिक स्थिति पर पड़ा है (रूमे, 2022 )। अगर मौजूदा स्थिति के नियंत्रण के लिए जल्द ही कोई कदम नहीं उठाए जाते हैं तो भारत की कम-से-कम 25 प्रतिशत कृषि खतरे में होगी।

साल 2018 में नीति आयोग द्वारा किए गए एक अध्ययन में 122 देशों के जल संकट की सूची में भारत 120वें स्थान पर खड़ा था (प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो, 2018)। विश्व स्वाथ्य संगठन के मुताबिक एक व्यक्ति को अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए हर दिन करीब 25 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। भारत के बड़े शहरों जैसे दिल्ली, मुंबई में नगर निगम द्वारा निर्धारण 150 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से भी ज्यादा पानी दिया जाता है। बेहतर जल प्रबंधन से ही जल संकट से उबरा जा सकता है। इसमें मानव इच्छाशक्ति सबसे महत्त्वपूर्ण है। सूरज (2018) वायरलेस स्वचालित जल स्तर नियंत्रक नामक शोध पत्र में लिखते हैं कि अब कृषि और बहुमंजिला भवनों में लगे वाटर पंप को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है, जिसके लिए स्वचालन में मानवीय हस्तक्षेप को कम करके किसी भी सिस्टम को स्मार्ट बनाने की अवधारणाओं से परिवर्तित किया जा सकता है। यह स्वचालित जल स्तर नियंत्रक वायर्ड (तार) के संबंध में बेहतर है (एस. सूरज, 2018)।

इस जल स्तर नियंत्रक के कार्यान्वयन से पानी को अधिकतम सीमा तक संरक्षित करने में मदद मिलती है, जो अप्रत्यक्ष रूप से पानी की कमी को कम करने में मदद कर सकता है। स्वचालित जल स्तर नियंत्रक प्रणाली का उपयोग घर, कार्यालय क्षेत्रों, स्विमिंग पूल और यहाँ तक कि औद्योगिक क्षेत्रों में भी किया जा सकता है, क्योंकि यहाँ अधिक जल बर्बाद होता है। कर्मचारी ध्यान नहीं देते हैं पानी की टंकियाँ अक्सर बहा करती हैं। कई बार यह स्विच दूर होता है, जिसके कारण इन्हें बंद करने में लापरवाही होती है, क्योंकि इस तकनीक में पानी का उपयोग संचालन मीडिया के रूप में किया जाता है, जिसमें (जीएसएम मोड्यूल) सेल फोन का प्रतिस्थापन हो सकता है, जिसे दूर से या समय सेट करके बंद या चालू किया जा सकता है।

**शोध प्रविधि**

प्रस्तुत शोध विश्लेषणात्मक प्रकृति का है, जिसमें गैर-संभाव्यता नमूने तकनीक के तहत उद्देश्यात्मक नमूना विधि का प्रयोग करते हुए अयोध्या जनपद के डायट (जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान, अयोध्या) प्रशिक्षुओं को उत्तरदाताओं के रूप में चुना गया। उद्देश्यात्मक नमूने के तहत प्रशिक्षित विद्यार्थियों में जो नगरीय/शहरीय क्षेत्र में रहने वाले हैं और जिनके घर में जल पूर्ति के लिए भू-जल का प्रयोग साथ ही वाटर टैंक, मोटर का प्रयोग होता है, उन्हें चुना गया, जिनकी कुल संख्या 44 है। डेटा संग्रह के लिए साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया है, जिसका विश्लेषण सांख्यकीय रीतियों व नियमों से किया गया है।

**तथ्य विश्लेषण**

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उत्तरदाताओं की शैक्षणिक पृष्ठभूमि के आकलन के अनुसार 97% बैचलर और 3% मास्टर डिग्री प्राप्त करने के बाद डायट पर डी.एल.एड. प्रशिक्षण प्राप्त करने वालों को उत्तरदाताओं के रूप में चुना गया। इसमें 46.5% कला 46.5% विज्ञान एवं 7% प्रौद्योगिकी क्षेत्र से हैं अर्थात् विज्ञान और कला दोनों वर्ग का प्रतिनिधित्व सामान्य है।

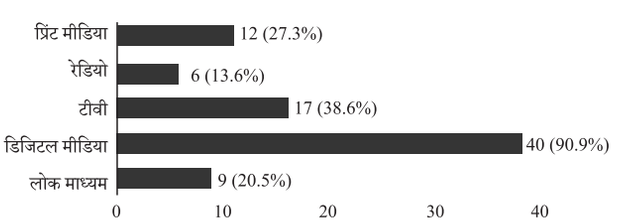

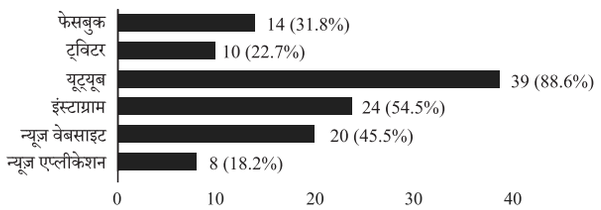


चित्र 2

**सूचना प्राप्त करने के स्रोत**

लोगों में सूचना प्राप्त करने के संसाधन की बात करें तो वर्तमान समय में डिजिटल मीडिया प्रथम स्थान पर है। उसके बाद दूसरे नंबर पर टेलीविजन और तीसरे नंबर पर समाचार पत्र (न्यूज पेपर) हैं। चौथे स्थान

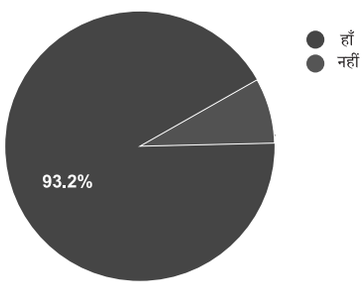


चित्र 3

पर लोकमाध्यम और पाँचवें स्थान पर रेडियो है। इनका प्रतिशत चित्र-2 में दिया गया है, जिसके लिए (एकाधिक) प्रतिक्रिया ली गई है।

इसी प्रकार चित्र 3 में डिजिटल मीडिया प्रयोग करने वालों की संख्या 93.2% है। 6.8% संख्या ऐसे लोगों की है, जो सोशल मीडिया उपयोग करते थे, लेकिन पढ़ाई या तैयारी के लिए अब सोशल मीडिया प्लेटफार्म प्रयोग नहीं करते हैं, वेब ब्राउजिंग करते हैं। इसके अध्ययन के लिए चित्र 3 प्रस्तुत किया गया है। एकाधिक प्रतिक्रिया से प्राप्त आँकड़ों के अनुसार सबसे अधिक सूचना और जानकारी प्राप्त करने के लिए यूट्यूब का प्रयोग किया जाता है, जो प्रथम स्थान पर है। दूसरे नंबर पर इंस्टग्राम है, जिसका प्रयोग लोग संक्षेप में सूचना प्राप्त करने के लिए करते हैं। तीसरे स्थान पर न्यूज वेबसाइट, चौथे पर स्थान पर फेसबुक, पाँचवें पर ट्विटर और इस प्रकार छठे पर न्यूज एप्लीकेशन है, जिसकी क्रमवार प्राथमिकता चित्र 2 में प्रस्तुत है।

| उत्तरदाताओं से पूछे गए प्रश्न | हाँ | नहीं | अन्य |
|---|---|---|---|
| क्या आप स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म जैसे उपकरण के बारे में जानते हैं? | 90% | 7% | 3% |
| क्या जहाँ से आपने वाटर टंकी, मोटर या समर्सिबल खरीदा, वहाँ से स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म लगवाने का सुझाव दिया गया है? | 20% | 80% | जल स्रोत |

भू-जल संरक्षण के लिए घरों में लगी जल टंकी भरने के लिए स्रोतों की जानकारी अति आवश्यक है, क्योंकि कितने घर भू-जल पर निर्भर हैं, इन आँकड़ों का विश्लेषण आवश्यक है। उत्तरदाताओं से प्राप्त आँकड़ों के अनुसार 57% घरों में निजी समर्सिबल पंप द्वारा जल पूर्ति की जाती है, जबकि 43% घरों में नगर निगम द्वारा जल पूर्ति का स्रोत है। चित्र 4 में दिए गए आँकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त परिणाम के अनुसार केवल 23% घर ऐसे हैं, जहाँ वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक उपकरण का प्रयोग जल संरक्षण के लिए किया जाता है। शेष 77% घरों में वाटर टंकी भरने पर पानी बहने पर अंदाजे से मोटर या समर्सिबल बंद किया जाता है।

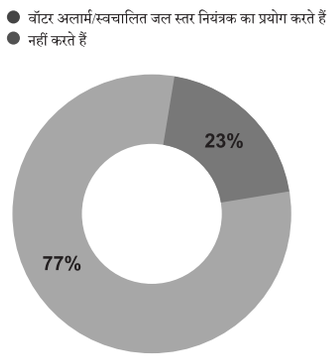


चित्र 4

**स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म के प्रति जागरूकता**

जल संरक्षण के लिए उपयोगी स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म जैसे उपकरण की जानकारी 23% लोग सोशल मीडिया से प्राप्त करते हैं, 11% लोग डिजिटल मीडिया से प्राप्त करते हैं, जबकि 66% लोग अन्य माध्यमों से प्राप्त करते हैं, जिनमें मित्र मंडली, रिश्तेदार या पहले से इन उपकरणों का उपयोग करने वालों के साझा अनुभव शामिल हैं।

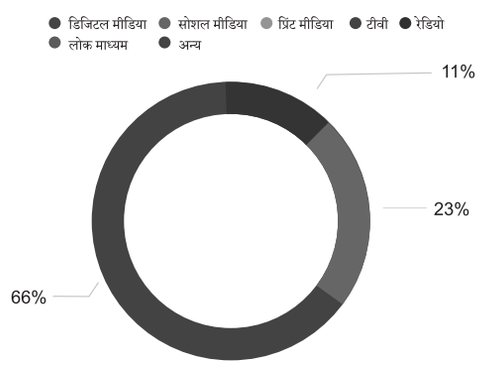


चित्र 5

**जल संरक्षण का आकलन**

शोधार्थियों ने प्रति मिनट जल या भू-जल दोहन का आकलन किया, जिसके परिणाम निम्न हैं :

- वाटर मोटर (1 एच पी) - 1 एचपी वाटर मोटर, जो नगर पालिका जल पूर्ति वाले जल से टंकी को भरती है, औसतन 25 से 30 लीटर (औसतन 27 लीटर) जल प्रति मिनट खींचती है।
- समर्सिबल पंप (1 एच पी) - 1 एचपी समर्सिबल पंप प्रति मिनट गहराई के आधार पर (45, 50 और 54 ली) औसतन 50 लीटर प्रति मिनट भूजल खींचता है।

इस प्रकार जिन घरों में स्वचालित जल स्तर नियंत्रक या वाटर अलार्म जैसे उपकरण का प्रयोग नहीं होता है, वहाँ टंकी भरने के बाद जितने समय

तक समर्सिबल पंप या मोटर चालू पाई जाती है, प्रति मिनट के हिसाब से भूजल की बर्बादी होती है। उपर्युक्त आँकड़ों के अनुसार जिन घरों में समर्सिबल पंप से जल पूर्ति होती है, वहाँ प्रति मिनट 50 लीटर और जिन घरों में नगर निगम या वाटर मोटर का प्रयोग होता है, वहाँ 27 लीटर प्रति मिनट जल व्यर्थ होता है।

### टंकी भरने के बाद बंद करने में लगने वाला औसत समय

वाटर टंकी भरने के बाद मोटर या समर्सिबल पंप बंद करने में लगने वाले समय को जानने के लिए घरों को दो प्रकार में विभाजित किया गया। एक, अति सतर्क एवं दूसरा, सामान्य।

**अति सतर्क :** इस श्रेणी में ऐसे परिवारों को रखा गया, जिनके घरों में टंकी से ओवरफ्लो (जल निकासी) वाला पाइप घर के आँगन या किचन में आता है, जिससे उन्हें टंकी भरने पर तुरंत पता चलता है।

**सामान्य :** इस श्रेणी में उन परिवारों को रखा गया, जिनके घरों में टंकी भरने पर जल बहने या अंदाजे से पानी को बंद करते हैं। प्राप्त आँकड़ों के अनुसार आकलन के अति सतर्क श्रेणी वाले परिवारों में औसतन समय 1 मिनट और सामान्य परिवारों में 3 मिनट अधिक समय तक जल मोटर या समर्सिबल पंप चलता है।

### निष्कर्ष

उपर्युक्त आँकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त परिणाम के अनुसार लोगों के पास सूचना प्राप्त करने के सभी संसाधन हैं और वे अपनी सुविधा के अनुसार सूचना और जानकारी प्राप्त भी कर रहे हैं। लोग जल संरक्षण के लिए वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक जैसे उपकरण के बारे में जानकारी उन लोगों से अधिक प्राप्त कर रहे हैं, जो पहले से इन उपकरणों का प्रयोग कर रहे हैं। उत्तरदाताओं का मानना है कि सोशल मीडिया यूट्यूब के माध्यम से ऐसे उपकरणों से जुड़े वीडियो उन्होंने देखे हैं। लेकिन प्राप्त आँकड़ों के अनुसार ऐसे उपकरणों का उपयोग मात्र 23% घरों में ही हो रहा है, जबकि 77% घरों में लोग इन उपकरणों के नाम से परिचित जरूर हैं, लेकिन इनका उपयोग नहीं होता है। ऐसे घर, जहाँ इन उपकरणों का उपयोग नहीं होता है। वहाँ वाटर टैंक ओवरफ्लो होने पर अगर जल स्रोत स्मार्सिबल है तो 50 लीटर और मोटर है तो 27 लीटर जल प्रति मिनट बर्बाद होता है। अतः हम कह सकते हैं कि लोगों के बीच जागरूकता के अलावा उन्हें इन उपकरणों के उपयोग के लिए प्रेरित करना होगा।

### सुझाव

उपर्युक्त आँकड़ों और निष्कर्ष के आधार पर निम्नलिखित सुझाव सामने आए हैं, जो जल संरक्षण में सहायक साबित होंगे :

1. जिन घरों में वाटर टैंक लगे हैं, उन्हें वाटर अलार्म या स्वचालित जल स्तर नियंत्रक उपकरण लगाने के लिए प्रेरित करना होगा।
2. मुख्यधारा के मीडिया में इन उपकरणों के बारे में जानकारी देने के साथ इनके सेवा प्रदाताओं के बारे में भी जानकारी देनी चाहिए।
3. भूजल पर निर्भर घरों में स्वचालित जल स्तर नियंत्रक उपकरण की अनिवार्यता के लिए कानून बने।
4. वाटर प्रोडक्ट उपकरण वाले विज्ञापनों में जल संरक्षण से जुड़ी जानकारी की अनिवार्यता के लिए कंपनियों को सरकार की तरफ से निर्देशित किया जाना चाहिए।

### संदर्भ


ओझा, डी. डी. (2011). भूजल प्रबंधन-वर्तमान एवं भविष्य की महती आवश्यकता. चतुर्थ राष्ट्रीय जल संगोष्ठी. (2011). रुड़की, उत्तराखण्ड : राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रुड़की.

एस, सूरज., वी, भारत. और श्रीधर, एन. के. (2018). वायरलेस आटोमेटिक वाटर लेवल कंट्रोलर. इंटरनेशनल कॉनफ्रेंस ऑन इलेक्ट्रॉनिकल, इलेक्ट्रॉनिक्स कम्युनकेशन, कंप्यूटर एंड ऑप्टिमिजेशन टेक्नीक्स (ICEECCOT) मैसूर इंडिया, पृष्ठ 495-500, doi:10.1109/ICEECCOT43722.2018.9001551

कला, जी. (2023). 2025 तक भारत में गंभीर जल संकट, संयुक्त राष्ट्र का खुलासा, उत्तर पश्चिम राज्यों का बुरा हाल, हिंदुस्तान समाचार पत्र से.

ग्राउंड वाटर रिसोर्सेज इन इंडिया. (2023, मार्च). डब्लूओटीआर वेबसाइट : https://wotr.org/2023/03/29/groundwater-resources-in-india/ से पुन:प्राप्त.

दत्ता, डी. वी. (2020, दिसंबर). संकट में हैं भूजल और नदियों का रिश्ता. डाउन टू अर्थ वेबसाइट : https://www.downtoearth.org.in/hindistory/river/ganga/relations-of-ground-water-and-rivers-are-in-crisis-74775 से पुन:प्राप्त.

प्राचीन भारत में जलविज्ञानीय ज्ञान (वोल्यूम-तीन). (दिसंबर, 2022). जल विज्ञान भवन, रुड़की : राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान.

प्रेस इनफॉर्मेशन ब्यूरो. (2018). समग्र जल प्रबंधन सूचकांक' (सीडब्ल्यूएमआई). नई दिल्ली : नीति आयोग, भारत सरकार.

भूजल संसाधन. (2022). मेरी सरकार : https://blog.mygov.in/ से पुन:प्राप्त.

रूमे, जे. (2022). भारत में भूजल की खतरनाक गिरावट को रोकना के प्रयास. वर्ल्ड बैंक ब्लॉग्स. https://blogs.worldbank.org/hi/endpovertyinsouthasia/bhaarata-maen-bhauujala-kai-khataranaaka-gairaavata-kao-raokanaa-kae से पुन:प्राप्त.

वैश्विक जल संकट के प्रति जागरूकता प्रसार के लिए मैराथन दौड़ के जरिये मुहिम. (2023, मार्च), वेबसाइट संयुक्त राष्ट्र : https://news.un.org/hi/story/2023/03/1067157 से पुन:प्राप्त.

संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन, 2023. (2023, अप्रैल), वेबसाइट संस्कृति आईएएस. https://www.sanskritiias.com/hindi/news-articles/united-nations-water-conference-2023 से पुन:प्राप्त.

*संचार माध्यम* | खंड 36(3) : 89-94, अक्टूबर-दिसंबर 2024
यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका, आईएसएसएन: 2321-2608

# आंचलिक पत्रकारों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन

**अंकिता पटेल**[1]

**सारांश**

लोकतांत्रिक देशों में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के क्रियाकलापों पर नजर रखने और सामान्य जन के प्रबोधन हेतु मीडिया को 'चौथे स्तंभ' के रूप में स्वीकार किया गया है। 18वीं शताब्दी के बाद से, खासकर अमेरिकी स्वतंत्रता आंदोलन और फ्रांसीसी क्रांति के समय से जनता को जागरूक करने में मीडिया ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मीडिया की सकारात्मक भूमिका किसी भी देश को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक रूप से समृद्ध बनाती है। वर्तमान भौतिकतावादी युग में पत्रकारिता एक व्यवसाय बन गई है। ऐसे में मानवीय और नैतिक मूल्यों तथा भौतिकता के बीच संतुलन साधते हुए तथ्यों पर आधारित पत्रकारिता करना एक बड़ी चुनौती है। वर्तमान डिजिटल युग में अनेक युवा इस व्यवसाय में सुनहरा भविष्य तलाश रहे हैं, परंतु पत्रकारिता में जमीनी हकीकत वैसी नहीं है जैसी वह बाहर से दिखाई देती है। सामाजिक सरोकारों से संपन्न और सकारात्मक सोच का पत्रकार होने के लिए आवश्यक है कि पत्रकार का व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन स्वस्थ हो। यह तभी संभव है जब एक पत्रकार की सेवा शर्तें, कार्यस्थल का वातावरण और उसकी आर्थिक स्थिति बेहतर हो। आजादी के बाद से अब तक भारत सरकार द्वारा अनेक वेज बोर्ड गठित कर देने के बाद भी भारत में आंचलिक स्तर पर काम करने वाले हजारों पत्रकार ऐसे हैं, जिनके परिवार की आर्थिक आय का कोई निश्चित स्रोत नहीं है और वे तरह-तरह की पीड़ा, वंचना और अवमानना के शिकार हैं। इस कारण पत्रकारिता आंचलिक स्तर पर भयावह रूप से असुरक्षित हो गई है। प्रस्तुत शोध में भारत के आंचलिक पत्रकारों की कठिनाइयों को समझने का प्रयास किया गया है। शोध पत्र उत्तर प्रदेश के महराजगंज जिले में कार्यरत आंचलिक पत्रकारों की कठिनाइयों की पड़ताल करता है। शोध हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्रोतों से तथ्य संकलित किए गए हैं।

**संकेत शब्द :** आंचलिक पत्रकार, पत्रकारिता, वेज बोर्ड, पत्रकारों की आर्थिक स्थिति

## प्रस्तावना

आंचलिक पत्रकारों से अभिप्राय ऐसे पत्रकारों से है, जो दूर-दराज के क्षेत्रों में काम करते हैं। ये जिला स्तर पर भी कार्यरत हो सकते हैं या फिर तहसील स्तर पर भी। ये मुख्यधारा के सभी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, टीवी चैनलों और डिजिटल प्लेटफॉर्मों की रीढ़ होते हैं, क्योंकि ये ही स्थानीय स्तर की घटनाओं की रिपोर्टिंग करते हैं। इनके सहयोग के बगैर कोई भी मीडिया हाउस काम नहीं कर सकता, परंतु जब पत्रकारों के कल्याण की बात आती है तो इनकी तरफ न तो मीडिया हाउस के मालिकों और न ही सरकारों का ध्यान जाता है। इनके बारे में सामान्यत: यह धारणा बना ली गई है कि आंचलिक पत्रकार 'वसूली पत्रकारिता' करते हैं, परंतु यह बात सभी आंचलिक पत्रकारों के बारे में सच नहीं है। आंचलिक स्तर पर अनेक पत्रकार आज भी मूल्यों के साथ आदर्श पत्रकारिता करते हुए दिखाई देते हैं। वास्तव में ऐसे पत्रकारों के कारण ही आंचलिक पत्रकारिता अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह कर पा रही है। लेकिन इस हकीकत से भी मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि भारत में लाखों ऐसे आंचलिक पत्रकार हैं, जिनके परिवार की आय का कोई निश्चित स्रोत नहीं है, क्योंकि बड़े मीडिया संस्थान भी उन्हें पर्याप्त मात्रा में और समय पर वेतन नहीं देते। ये लोग अनेक तरह की प्रताड़ना का शिकार होते हैं। दुखद बात यह है कि आंचलिक पत्रकारों की समस्याओं को लेकर न मीडिया संस्थानों के मालिक और न ही केंद्र और राज्य सरकारें गंभीर हैं।

## पत्रकारिता में बढ़ती असुरक्षा

कहने के लिए तो भारत में पत्रकारिता का प्रभाव लगातार बढ़ रहा है। इसके बावजूद पत्रकारिता का पेशा संकटों से घिरकर लगातार असुरक्षित होता जा रहा है। मीडिया की चमक-दमक से मुग्ध होकर अनेक युवा इसमें आने के लिए आतुर हैं। इनमें से अधिकतर नवांकुर पत्रकार अपने आर्थिक भविष्य का मूल्यांकन किए बगैर ही इस पेशे में आ जाते हैं। जब हकीकत उनकी समझ में आती है तो वे इसे छोड़कर दूसरे पेशे की तरफ रुख करते हैं, परंतु इस बीच उनकी युवावस्था के अनेक वर्ष बर्बाद हो जाते हैं। वर्ष 2018 में यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट ऑफ लेबर की 'ऑक्यूपेशनल आउटलुक हैंडबुक' में बताया गया कि वर्ष 2016 से 2026 के बीच 'रिपोर्टर्स, कॉरेस्पॉण्डेट्स और ब्रॉडकास्ट न्यूज एनालिस्ट' श्रेणी के लिए रोजगार में 9 प्रतिशत की गिरावट आएगी। पत्रकार अक्सर खुद को खतरे में डालते हैं, खासकर जब वे सशस्त्र संघर्ष के क्षेत्रों में या उन राज्यों में रिपोर्टिंग करते हैं, जहाँ जोखिम अधिक है। 'कमेटी टू प्रोटेक्ट जर्नलिस्ट्स' तथा 'रिपोर्टर्स विदाउट बॉर्डर्स' भी पत्रकारों की बिगड़ती स्थिति पर आँकड़े प्रकाशित करते रहते हैं। प्रेस की स्वतंत्रता की रक्षा और पत्रकारिता के उच्च मानकों को बनाए रखने के लिए भारत में प्रेस परिषद् की स्थापना की गई। 'श्रमजीवी और अन्य समाचार पत्र कर्मचारी (सेवा की शर्तें) विविध प्रावधान अधिनियम, 1955' श्रमजीवी पत्रकारों और गैर-पत्रकार समाचारपत्र कर्मचारियों की सेवा शर्तों के लिए विनियमन प्रदान करता है। इस अधिनियम की धारा 9 और 13सी श्रमजीवी पत्रकार और गैर-पत्रकार समाचारपत्र कर्मचारियों के संबंध में वेतन दरों के निर्धारण अथवा सुधार हेतु वेतन बोर्डों के गठन के लिए कानून का प्रावधान मुहैया कराती हैं। फिर भी आंचलिक पत्रकारों को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उन्हें नियम के अनुसार वेतन प्राप्त नहीं हो पाता है।

## साहित्य पुनरावलोकन

प्रो. आर. एस. जोशी 'डायनामिक्स ऑफ मीडिया' में लिखते हैं

[1]पीएच.डी. शोधार्थी, संस्कृति और मीडिया अध्ययन विभाग, राजस्थान केंद्रीय विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान. ईमेल : ankitapatelmgcub@gmail.com

कि भारत का क्षेत्रीय मीडिया आज आर्थिक बदलावों की प्रक्रियाओं के गहरे दबावों में है (जोशी, 2002)। खबरों के बहुमूल्य स्थान को अति उपभोक्तावादी ढंग से संचालित किया जा रहा है और असंगत व अनावश्यक खबरों से भरा जा रहा है। स्थानीय मानवीय घटनाओं और मुद्दों का हाशियाकरण किया जा रहा है। यह एक सचेत और प्रबुद्ध-मालिक, संपादक और पाठक तीनों को समान रूप से कष्ट पहुँचाने वाली बात है। कुलदीप कुमार पत्रकारों को बेहतर कामकाजी और आर्थिक सुरक्षा उपलब्ध कराने की वकालत करते हैं। वरिष्ठ पत्रकार आलोक मेहता (2006) अपनी पुस्तक 'भारत में पत्रकारिता' में पत्रकारों की आर्थिक स्थिति, कार्य सुरक्षा और पेशेवर चुनौतियों पर प्रकाश डालते हैं। वे विस्तार से चर्चा करते हैं कि पत्रकारों को अक्सर अनियमित आय, अनुबंधित कार्य और अस्थायी नौकरियों का सामना करना पड़ता है और वे सदैव वित्तीय अनियमितता का शिकार रहते हैं। मीडिया में निरंतर बदलाव के कारण पत्रकारों की नौकरी की सुरक्षा पर भी खतरा बना रहता है। उन पर संपादकीय दबाव भी रहता है। विज्ञापन और राजनीतिक दबाव के कारण संपादकीय स्वतंत्रता पर असर पड़ता है। जाँची-परखी रिपोर्टिंग के लिए पत्रकारों को कभी-कभी मुकदमे और कानूनी धमकियों का सामना करना पड़ता है। खतरनाक क्षेत्रों में रिपोर्टिंग और लंबे कार्य समय के कारण पत्रकारों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। ये जोखिम पत्रकारों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित करते हैं और उनके पेशेवर जीवन में स्थिरता और सुरक्षा की कमी को दर्शाते हैं।

रामशरण जोशी (2002) अपनी पुस्तक 'मीडिया विमर्श' में एक तरफ जहाँ पत्रकारों की खराब आर्थिक परिस्थितियों पर चिंता व्यक्त करते हैं और संपादकों की नियुक्ति में व्याप्त राजनीतिक दबावों के खेल का खुलासा करते हैं, वहीं वे पत्रकारों और संपादकों पर बढ़ते 'लाइजनिंग' के दबाव को पत्रकारिता के विषाक्त होने का ठोस कारण मानते हैं। कृपाशंकर चौबे (2003) अपनी पुस्तक 'पत्रकारिता के उत्तर आधुनिक चरण' में पत्रकारों को अपने नैतिक दायित्वों का निवर्हन करने के लिए प्रेरित करते हैं। वे कहते हैं कि पत्रकारों के लिए कोई ठोस आचार संहिता नहीं है। हालाँकि पत्रकार संगठनों ने इस विषय को संजीदगी से लेते हुए अपने इस व्यवसाय के लिए कुछ आचार संहिताएँ बनाई हैं, लेकिन आचार संहिता और आत्मानुशासन की आवश्यकता का बराबर एहसास किया जाता रहा है। वे पत्रकारों की नौकरी, काम के घंटे, ग्रेच्युटी भुगतान व अन्य सेवा शर्तों के संबंध में भी विस्तृत बात करते हैं। वे मानते हैं कि पत्रकारों की सेवा शर्तों, वेतन आदि में सुधार तो हुआ है, पर कई समाचारपत्र श्रमजीवी कानून से बचने के रास्ते ढूँढ़ लेते हैं। समाचार पत्रों के मालिक देश में व्याप्त बेरोजगारी का फायदा उठाते हैं और श्रम कानूनों की धज्जियाँ उड़ाते हैं। कुछ जगह तो नौकरी देने के साथ इस्तीफे भी लिखवाकर ले लिए जाते हैं, ताकि कोई समस्या आने पर पत्रकार को बिना किसी बाधा के संस्थान से निकाला जा सके। ऐसे में संस्थान और पत्रकार का कोई निजी और बेहतर रिश्ता बनना मुश्किल होता है।

डॉ. प्रशांत राजावत, संपादक, 'मीडिया मिरर' पत्रकारों की आपबीती के बारे में लिखते हैं कि मैं कोविड के दौर में लगातार पत्रकारों की आर्थिक स्थिति को लेकर चिंतन करता रहा। इसमें अलग-अलग आयु वर्ग के पत्रकार शामिल हैं। पत्रकारिता के छात्रों से लेकर प्रशिक्षु पत्रकार, वरिष्ठ पत्रकार और पत्रकारिता कर चुके पत्रकार शामिल हैं। कोविड के दौर में लगातार हमने देखा कि मीडिया संस्थानों ने बड़ी संख्या में पत्रकारों को बाहर का रास्ता दिखाया, जिनको नहीं निकाला उन पर काम का बोझ कई गुना बढ़ाकर तनख्वाह में कमी कर दी गई। फिर भी ऐसे लोग खुद को खुशनसीब कह सकते हैं जिनकी नौकरी आखिरकार बची रही। पर मेरे जेहन में यह सवाल हमेशा रहता है कि रोजगारपरक शिक्षा की श्रेणी में आने वाली पत्रकारिता में वस्तुतः रोजगार है कितना और कितने काम का है। मसलन, जो भी कानून पत्रकारों के पक्ष में बनते हैं उनसे आर्थिक स्थिति को ऊँचा करने के लिए उन पर कितना अमल हो पाता है। उसके लिए कौन लोग किस स्तर तक लड़ाई लड़ते हैं! क्या पत्रकारिता को व्यावसायिक पाठ्यक्रम बताने वाले शिक्षा संस्थानों को ये प्रयास नहीं करने चाहिए कि कैसे पत्रकारिता ज्यादा से ज्यादा रोजगारोन्मुखी बने? आखिर पत्रकारों की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने की लड़ाई कौन लड़ेगा? पत्रकारिता को सुरक्षित पेशा बनाने की दिशा में काम कौन करेगा?

वरिष्ठ पत्रकार डॉ. वेद प्रताप वैदिक कहते थे कि प्रजातंत्र में प्रेस सरकार एवं लोगों के मध्य एक सेतु का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। सरकार द्वारा चलाई जा रही विकास तथा जन कल्याणकारी योजनाओं को लोगों तक पहुँचाने तथा जन-साधारण की समस्याएँ सरकार तक पहुँचाने का कार्य भी मीडिया ही करता है। पत्रकारों को समावेशी सोच के साथ आपस में संगठित होना है और एक पेशेवर के रूप में एक-दूसरे के हितों के लिए काम करना है। इससे सरकार व प्रशासनिक व्यवस्था भी मीडिया के प्रति संवेदनशील होगी। माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. के.जी. सुरेश कहते हैं, "सवाल यह है कि देश में पत्रकारों के हितों की सुरक्षा कैसे हो? देश में इस तरह की कोई संस्था नहीं बची है। जो हैं, वे खेमों में बँटी हैं, वहाँ पत्रकारों की सुरक्षा के नाम पर बस प्रेस रिलीज जारी कर निंदा कर दी जाती है" (सुरेश, 2023)। वे आगे कहते हैं, "पहले वर्किंग जर्नलिस्ट एक्ट और वेज बोर्ड पत्रकारों के लिए दो स्तंभ हुआ करते थे, जो मीडियाकर्मियों की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करते थे, लेकिन आज के समय में वेज बोर्ड को समाप्त कर दिया गया, वर्किंग जर्नलिस्ट एक्ट को मर्ज कर दिया गया है। हमारी हालत मनरेगा मजदूरों से भी खराब है, मनरेगा मजदूरों के पास कम-से-कम 'सिक्योरिटी' तो है, लेकिन पत्रकारों के पास वह भी नहीं है" (सुरेश, 2023)। श्री सुरेश मानते हैं कि वैचारिक असमानता एक वजह है, जिसके चलते पत्रकारों के हित की बात आने पर भी सभी मीडियाकर्मी ही साथ खड़े नहीं हो पाते। वे कहते हैं, "आज के समय में मीडियाकर्मियों में बहुत ध्रुवीकरण हो गया है। हम वैचारिक स्तर पर इतने बँट गए हैं कि अपने मुद्दों के लिए साथ आने तक को तैयार नहीं हैं" (सुरेश, 2023)। पत्रकारों की कटती तनख्वाह और जाती नौकरियों के बीच देश में पत्रकारों के हितों के लिए काम कर रही संस्था 'नेशनल यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स' (इंडिया) पत्रकारों को आर्थिक सुरक्षा दिए जाने की माँग करती रही है, लेकिन उसकी माँग पर कहीं कोई कार्रवाई होती दिखाई नहीं देती। वर्ष 2020 में पत्रकारों के खिलाफ अपराधों के मामलों में दंड निडरता की दर में मामूली गिरावट तो आई है, लेकिन अब भी विश्व भर में ऐसे 87 फीसदी मामले अनसुलझे हैं। यूनेस्को की रिपोर्ट में यह बात सामने आई है।

**शोध प्रश्न**

- उत्तर प्रदेश के महराजगंज जिले में कार्यरत आंचलिक पत्रकारों की

आर्थिक स्थिति कैसी है?

- आंचलिक पत्रकारों के लिए समाचार पत्रों के दफ्तरों में क्या सुविधाएँ उपलब्ध हैं?
- आंचलिक पत्रकारों को प्रदान की जाने वाली आर्थिक सुविधाओं की वास्तविकता क्या है?

**शोध उद्देश्य**

- उत्तर प्रदेश के महराजगंज जिले में कार्यरत आंचलिक पत्रकारों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
- आंचलिक पत्रकारों के लिए समाचार पत्रों के दफ्तरों में उपलब्ध सुविधाओं का अध्ययन करना।
- आंचलिक पत्रकारों को प्रदान की जाने वाली आर्थिक सुविधाओं की वास्तविकता का अध्ययन करना।

**शोध प्रविधि**

प्रस्तुत शोध अध्ययन की प्रकृति गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों है। अध्ययन में आँकड़ों का संकलन सर्वे विधि से किया गया है। प्राथमिक आँकड़ों के संग्रहण हेतु संरचित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। प्रश्नावली में संवृत्तोत्तर (क्लोज एंडेड) प्रश्नों का समावेश किया गया है, जिसमें शोध के उद्देश्य के आधार पर कुल 6 प्रश्न शामिल हैं। प्रश्नावली सिर्फ उन्हीं लोगों से भरवाई गई है, जो शोध संबंधी जानकारी देने में सक्षम हैं। प्रश्नावली को गूगल डाक्स की सहायता से बनाया गया है, जिसे ई-मेल और व्हाट्सएप के माध्यम से भेजकर डेटा संकलित किया गया है। प्रश्नावली कुल 80 पत्रकारों को जनवरी 2024 में विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से भेजी गई, जिसमें से 60 पत्रकारों द्वारा प्रश्नावली भरी गई। इसमें 'आंचलिक पत्रकारों की आर्थिक स्थिति : महराजगंज जिले के विशेष संदर्भ में' से संबंधित प्रश्नों को सम्मिलित किया गया। प्रश्नावली में बहुवैकल्पिक प्रश्नों का उपयोग किया गया। कुछ पत्रकारों से प्रत्यक्ष व कुछ से टेलीफोन के माध्यम से भी साक्षात्कार किया गया। द्वितीयक आँकड़ों के रूप में रिपोर्ट, पुस्तकों, शोध प्रबंध, शोध-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और इंटरनेट सुविधाओं, बुलेटिनों, समाचार पत्रों और अनुसंधान विषय से संबंधित प्रकाशनों को शामिल किया गया है।

**शोध अध्ययन का क्षेत्र**

अध्ययन हेतु उत्तर प्रदेश के महाराजगंज जिले को लिया गया है। भारत के संचार पत्र पंजीयक द्वारा जारी आँकड़ों के अनुसार महराजगंज जिले में दैनिक, साप्ताहिक, मासिक को मिलाकर 65 पत्र-पत्रिकाएँ हैं (आरएनआई, 2023)। महाराजगंज जिला 2 अक्टूबर, 1989 को बना। इस जिले का क्षेत्रफल 2952 वर्ग किमी है। महराजगंज जिले के पूर्व में कुशीनगर, पश्चिम में सिद्धार्थ नगर, उत्तर की ओर नेपाल तथा दक्षिण की ओर गोरखपुर जिला व संतकबीर नगर स्थित है। महाराजगंज जिले की कुल जनसंख्या 26,85,292 है, जिसमें से 13,82,000 पुरुषों की संख्या तथा 13,03,000 महिलाओं की संख्या है। महाराजगंज जिले को पहले कारापथ के नाम से जाना जाता था। बाद में इसका नाम बदलकर महाराजगंज कर दिया गया। महाराजगंज जिले की अधिकतर आबादी हिंदी भाषी है। जनसंख्या के अनुसार, शहरी क्षेत्र में 1,34,730 लोग रहते हैं, जो कुल जनसंख्या का 5.02% हैं। ग्रामीण क्षेत्र में बाकी जनसंख्या निवास करती है। जनगणना 2011 के अनुसार महाराजगंज जिले में 1262 गाँव हैं, जिनमें रहने वाली ग्रामीण जनसंख्या 25,49,973 है।

**पत्रकार संगठनों की भूमिका**

महाराजगंज में कार्यरत पत्रकार आजाद मिश्र ने बताया कि महाराजगंज में पत्रकार संगठन के नाम पर संस्थाएँ हैं—जर्नलिस्ट प्रेस क्लब और प्रेस क्लब ऑफ महाराजगंज। उन्होंने बताया कि पत्रकार संगठनों द्वारा मदद होती तो है, लेकिन कई मामलों में पत्रकार की समस्या पत्रकारिता से कम और निजी जीवन से ज्यादा जुड़ी होती है। ऐसे में संगठनों को उनकी मदद में कई बार समस्याएँ होती हैं। यह पूछने पर कि क्या आंचलिक पत्रकारों की आवाज राष्ट्रीय स्तर तक पहुँच पाती है, वे कहते हैं, "वर्तमान पत्रकारिता कुछ खास घरानों और पूँजी की होकर रह गई है। ऐसे में पत्रकारों की आवाज राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचना दूर की बात है। आज तो जमीनी सच्चाई ही राष्ट्रीय स्तर तक पहुँच जाए तो बहुत बड़ी बात है। क्षेत्रीय मीडिया और स्थानीय समुदायों के बीच घनिष्ठता होती है। क्षेत्रीय पत्रकारिता क्षेत्रीय राजनीति और मुद्दों की सार्वजनिक चर्चा और उनके साथ जुड़ाव को भी बढ़ावा देती है। क्षेत्रीय मीडिया क्षेत्रीय पहचान और भाषाओं को बढ़ावा देती है। यह लोगों को अपने आसपास के लोगों में से ही रोल मॉडल चुनने के विकल्प प्रदान करती है" (जीआईआईएन, 2013)। यह पूछने पर कि आंचलिक पत्रकारों को किस प्रकार की आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, श्री मिश्र कहते हैं, "वर्तमान समय में पत्रकारों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। कुछ गिने-चुने अखबारों को छोड़कर किसी भी संस्थान में पत्रकारों को वेतन नहीं मिलता है। जहाँ पर मिल भी रहा है, वहाँ भी काफी न्यून है। इससे पत्रकारों को आए दिन आर्थिक समस्याओं से जूझना पड़ता है।"

**कानूनी प्रावधानों का अभाव**

अध्ययन के दौरान कुछ और भी पत्रकारों से बात की गई, लेकिन उन्होंने अपना नाम उजागर न करने का अनुरोध किया। उन्होंने बताया कि वर्तमान में पत्रकारों के लिए वेतन और भत्तों से संबंधित कोई विशेष कानूनी प्रावधान नहीं है, जो सीधे पत्रकारों के वेतन और भत्तों को नियंत्रित करता हो। हालाँकि, पत्रकारिता से संबंधित कुछ मुख्य कानून हैं, जो पत्रकारों के अधिकारों और कर्तव्यों को परिभाषित करते हैं। इनमें शामिल हैं : प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 जो समाचार पत्रों और समाचार समितियों के स्तर में सुधार और विकास के साथ-साथ प्रेस की स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिए है। भारतीय दंड संहिता, 1860 में मानहानि से संबंधित प्रावधान है, जो पत्रकारों को रिपोर्टिंग के दौरान सचेत रहने की आवश्यकता पर बल देता है। न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 न्याय प्रणाली की पवित्रता और विश्वसनीयता को बनाए रखने के लिए है। इसके अलावा, पत्रकारों के लिए विभिन्न संगठनों और यूनियनों द्वारा वेतन और कार्य संबंधी मानकों की सिफारिशें की जाती हैं, लेकिन ये कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं होतीं। पत्रकारों के लिए वेतन और भत्तों के मामले में अधिकतर नियम उनके नियोक्ता और उद्योग के मानकों पर निर्भर करते हैं।

इन मानदंडों के कारण पत्रकारों को काफी शोषण का सामना करना पड़ता है। वर्किंग जर्नलिस्ट एक्ट श्रमजीवी पत्रकारों और समाचार पत्रों के अन्य कर्मचारियों के लिए है, लेकिन वह भी लाभकारी नहीं है। मजीठिया वेज बोर्ड सकारात्मक और पत्रकारों के आर्थिक पक्ष में था, लेकिन उसके लिए अभी भी लड़ाई जारी है। आंचलिक पत्रकार दूसरों के शोषण को लेकर मुखर रहते हैं तथा मीडिया के माध्यम से उस समस्या को उजागर कर उसके समाधान की दिशा में योगदान देते हैं, परंतु पत्रकार अपनी समस्याओं और सेवा शर्तों तथा वेतन संबंधी विसंगतियों के बारे में कुछ नहीं लिख पाते। इसके कई पहलू हैं। अगर पत्रकार अपनी आर्थिक स्थिति के लिए लड़ते हैं तो उन पर आंतरिक दबाव बनाया जाता है। कई बार तो जिला प्रेस क्लब या वरिष्ठ कर्मचारियों से भी शोषण झेलना पड़ता है। आंतरिक के साथ-साथ सामाजिक, राजनैतिक और व्यावहारिक रूप से दबाव के साथ पद-प्रतिष्ठा जाने का डर बना रहता है। इस वजह से पत्रकार अपने लिए मुखर नहीं हो पाते।

### आंचलिक पत्रकारों को कमतर मानने के कारण

आंचलिक पत्रकारों को कमतर देखे जाने के पीछे कई कारण हैं। अक्सर यह धारणा है कि राष्ट्रीय मीडिया अधिक प्रभावशाली और व्यापक होता है। यह इस विचार को जन्म देता है कि आंचलिक पत्रकारिता कम महत्त्वपूर्ण है। हालाँकि आंचलिक पत्रकारिता स्थानीय समुदायों के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है और उनकी आवाज को राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाने में सहायक होती है। हालाँकि आंचलिक पत्रकारिता को कमतर देखे जाने के पीछे कुछ और भी कारण हैं। एक है संसाधनों की कमी। आंचलिक पत्रकारों के पास वे संसाधन और पहुँच नहीं होती, जो राष्ट्रीय मीडिया के पास होती है। दूसरा कारण है प्रशिक्षण और विकास के अवसर। आंचलिक पत्रकारों को अक्सर प्रशिक्षण और करियर विकास के वे अवसर नहीं मिलते, जो बड़े शहरों में काम करने वाले पत्रकारों को मिलते हैं। तीसरा है दृश्यता और पहचान। राष्ट्रीय मीडिया के पत्रकारों को अधिक दृश्यता और पहचान मिलती है, जबकि आंचलिक पत्रकारों का काम अक्सर उनके स्थानीय क्षेत्र तक ही सीमित रह जाता है। चौथा कारण है वित्तीय समर्थन में भेदभाव। राष्ट्रीय मीडिया संस्थानों को अधिक वित्तीय समर्थन मिलता है, जिससे वे अधिक गहन और व्यापक रिपोर्टिंग कर सकते हैं। इन कारणों के बावजूद आंचलिक पत्रकारिता का अपना एक अनूठा महत्त्व है। यह स्थानीय समुदायों की आवाज उठाती है और उनके मुद्दों को राष्ट्रीय स्तर पर लाने में मदद करती है। आंचलिक पत्रकारिता स्थानीय संस्कृति, रीति-रिवाजों और समस्याओं को समझने और उन्हें उजागर करने में अपरिहार्य है। इसलिए इसे कमतर नहीं देखा जाना चाहिए।

### आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण एवं तथ्यों का विश्लेषण

प्रस्तुत शोध आंचलिक पत्रकारों की आर्थिक स्थिति के अध्ययन पर आधारित है। प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण और उनका विश्लेषण कई महत्त्वपूर्ण तथ्यों को उजागर करता है। यह विश्लेषण केवल महाराजगंज के पत्रकारों से संबंधित है। इसमें यह देखा गया है कि महाराजगंज के पत्रकारों की आर्थिक स्थिति कैसी है?

**प्रश्न-1 : पत्रकार के रूप में आपको अपने संगठन से क्या-क्या उपलब्ध है ?**

इस प्रश्न के उत्तर में 81.8% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें अपने संगठन से वाहन की सुविधा, मोबाइल फोन/लैपटाप/कंप्यूटर आदि कुछ नहीं मिलता। वहीं 18.2% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें अपने संगठन से मोबाइल फोन/लैपटाप/कंप्यूटर मिलता है। प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि आंचलिक पत्रकारों को उनके संगठन से इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस के नाम पर कुछ उपलब्ध नहीं है।

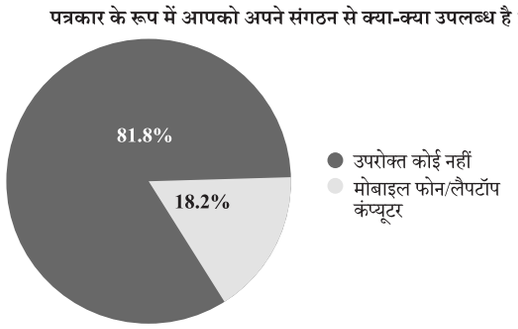


**प्रश्न क्र. 2 : आपके परिवार में कुल कितने सदस्य हैं ?**

इस प्रश्न के उत्तर में 68.2% पत्रकारों का कहना है कि उनके परिवार में छह सदस्य हैं। 22.7% पत्रकारों का कहना है कि उनके परिवार में चार सदस्य हैं। 9.1% पत्रकारों का कहना है कि उनके परिवार में सिर्फ दो सदस्य हैं। प्राप्त आँकड़ों से पता चलता है कि पत्रकारों के परिवार विस्तारित हैं और उनकी आवश्यकताएँ व्यापक हैं।

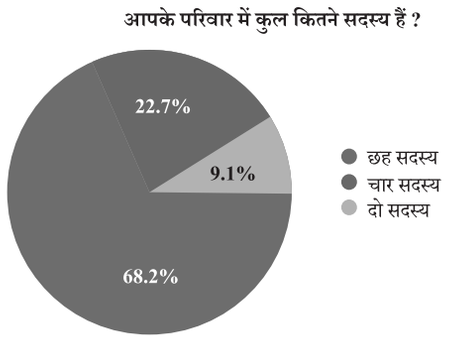


**प्रश्न-3 : आपके परिवार पालन/घर चलाने के लिए आर्थिक स्रोत क्या है?**

इस प्रश्न के उत्तर में 45.5% पत्रकारों का कहना है कि उनके पास परिवार चलाने के लिए आर्थिक स्रोत के रूप में खेती है। वहीं 22.7% पत्रकारों का कहना है कि उनके पास घर चलाने के लिए आर्थिक स्रोत के रूप में व्यवसाय-दुकानदारी है।

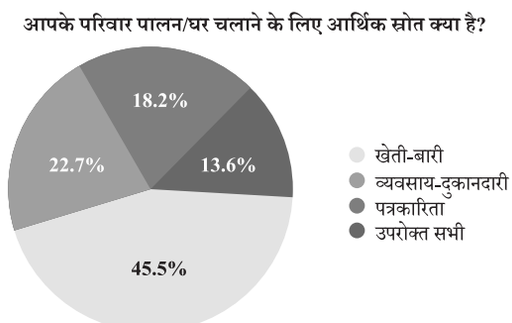


18.2% पत्रकारों का कहना है कि उनके पास घर चलाने के लिए

आर्थिक स्रोत पत्रकारिता ही है। 13.6% पत्रकारों के पास परिवार चलाने के लिए आर्थिक स्रोत उपरोक्त सभी हैं। प्राप्त आँकड़ों से पता चलता है कि अधिकतर आंचलिक पत्रकारों के लिए परिवार चलाने का सबसे बड़ा स्रोत पत्रकारिता के अलावा दूसरे साधन हैं।

**प्रश्न-4 : आपको परिवार चलाने में प्रति महीने लगभग कितनी धनराशि की आवश्यकता पड़ती है ?**

इस प्रश्न के उत्तर में 45.5% पत्रकारों का कहना है कि परिवार चलाने के लिए प्रति माह बीस हजार से अधिक धनराशि की आवश्यकता पड़ती है। वहीं 45.5% पत्रकारों का कहना है कि परिवार चलाने के लिए प्रति माह लगभग दस हजार धनराशि की आश्यकता पड़ती है।

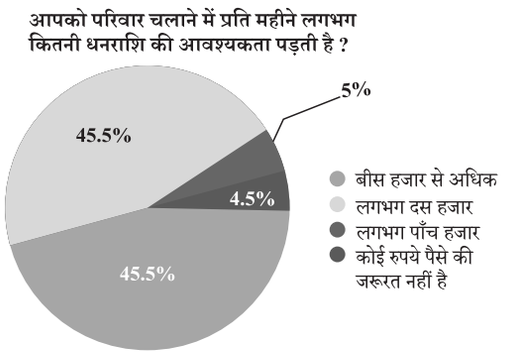


**प्रश्न-5 : आपको पत्रकारिता के अलावा अन्य स्रोतों से प्रति माह कितना आर्थिक लाभ होता है?**

इस प्रश्न के उत्तर में 50% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता के अलावा अन्य स्रोतों से प्रति माह लगभग दस हजार का आर्थिक लाभ होता है। वहीं 27.3% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता के अलावा अन्य स्रोतों से लगभग बीस हजार से अधिक आर्थिक लाभ होता है। 13.6% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें अन्य स्रोतों से कुछ लाभ नहीं होता। 9.1% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता के अलावा अन्य स्रोतों से पाँच हजार रुपये का लाभ होता है।

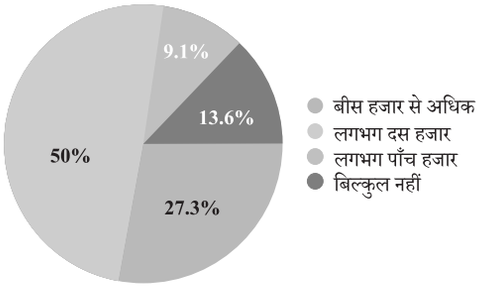


**प्रश्न-6 : आपको पत्रकारिता से प्रतिमाह कितना वेतन/धनलाभ होता है?**

इस प्रश्न के उत्तर में 50% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता से प्रतिमाह कोई धन लाभ नहीं होता। वहीं 27.3% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता से प्रतिमाह लगभग दस हजार रुपये का धनलाभ होता है। 18.2% पत्रकारों का कहना है कि उन्हें पत्रकारिता से प्रतिमाह लगभग पाँच हजार रुपये तक का धनलाभ होता है।

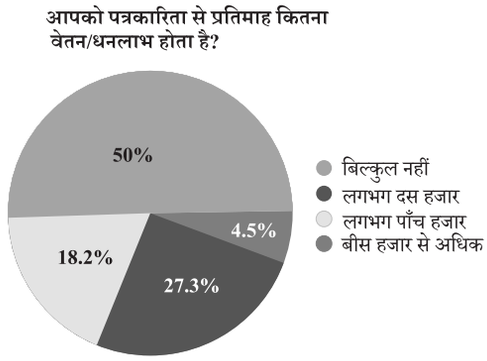


## निष्कर्ष

अध्ययन से स्पष्ट है कि आंचलिक पत्रकारों की खराब आर्थिक स्थिति का प्रमुख कारण वे मीडिया संस्थान हैं, जिनमें वे काम करते हैं। इसमें कुछ हिस्सेदारी पत्रकारों के लिए बेहतर नीति-नियम न होने की भी है। आंचलिक पत्रकारों के कार्यालयों में कंप्यूटर, प्रिंटर, इंटरनेट, कुर्सी, मेज, अलमारी, टेलीफोन, चाय-नाश्ता आदि सारी सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं, परंतु इनमें से कुछ भी उन्हें अपने संबंधित मीडिया हाउस से नहीं मिलता। यह सब व्यवस्था उन्हें स्वयं करनी पड़ती है। आंचलिक पत्रकारों को न तो अपने मीडिया संस्थान से पर्याप्त वेतन मिलता है और न ही आवश्यक सुविधाएँ। इसलिए इन सभी सुविधाओं की व्यवस्था करने के लिए उन्हें उन रास्तों पर चलना पड़ता है, जिनके कारण पत्रकार और पत्रकारिता दोनों बदनाम होते हैं। यह शर्म की बात है कि आंचलिक पत्रकारों को अपना परिवार चलाने के लिए दूसरे स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। आज जब महँगाई आसमान छू रही है तब आंचलिक पत्रकारों को परिवार चलाने के लिए प्रतिमाह दस से बीस हजार रुपये भी समय पर नहीं मिलते। कुछ पत्रकारों को तो सिर्फ मीडिया हाउस का पहचान पत्र पकड़ा दिया जाता है और उसके बाद उन्हें प्रतिमाह वेतन देने के बजाय उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे प्रतिमाह कुछ पैसा विज्ञापन के रूप में अखबार को और उसके संपादक/मालिक को भी देते रहें। कुछ पत्रकार संगठनों की इकाइयाँ जिला स्तर पर हैं, परंतु वे पत्रकारों की आवाज बुलंद करने में पूरी तरह असफल हैं।

## सुझाव

इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि आंचलिक पत्रकारों के लिए सम्मानजनक वेतन और सुविधाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए। सभी आंचलिक पत्रकारों को उनके मीडिया संस्थान की ओर से वाहन, मोबाइल फोन, लैपटॉप/कंप्यूटर, इंटरनेट आदि की सुविधा मिलनी चाहिए। आंचलिक पत्रकारों के लिए सम्मानजनक वेतन निर्धारण होना चाहिए, ताकि उन्हें आर्थिक संकटों का सामना न करना पड़े। आंचलिक पत्रकारों को अपनी नौकरी जाने का भय हमेशा बना रहता है। इसलिए उनके लिए नौकरी की सुरक्षा निश्चित की जानी चाहिए। आंचलिक पत्रकारों को उचित मुआवजा, नौकरी की सुरक्षा और मनमाने ढंग से छँटनी या वेतन कटौती के खिलाफ सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कानूनी सुरक्षा को मजबूत करना जरूरी है। आंचलिक पत्रकारों को अपने कौशल को बढ़ाने और बदलते मीडिया परिदृश्य के अनुकूल ढलने के लिए निरंतर प्रशिक्षण और

व्यावसायिक विकास के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए।

इन सुझावों को लागू करने से पत्रकारों के सामने आने वाली आर्थिक चुनौतियों का समाधान करने में मदद मिल सकती है।

**संदर्भ**

चंद्रा, आर. (2004). एनालिसिस ऑफ मीडिया कम्युनिकेशन ट्रेंड्स. दिल्ली : ईशा बुक्स.

चौबे, के.एस. (2003). पत्रकारिता के उत्तर आधुनिक चरण. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन.

जीआईआईएन. (2013). सेफ्टी एन सिक्यूरिटी--ग्लोबल इन्वेस्टीगेटिव जर्नलिज्म नेटवर्क. https://gijn.org/resource/safety-and-security/ से पुन:प्राप्त.

जोशी, आर. (2002). मीडिया विमर्श. नई दिल्ली : सामाजिक प्रकाशन.

जोशी, आर. एस. (2002). द मीडिया सिविल सोसाइटी एंड चैलेंज : डायनामिक्स ऑफ मीडिया. दिल्ली : जेबीडी बुक्स डिस्ट्रीब्यूटर.

जोस, वी.के. (2020). पत्रकारिता की पाँच आधारशिलाएँ. https://caravanmagazine.in/media/the-five-cornerstones-of-journalistic-work-hindi से पुन:प्राप्त.

जोसेफ, जो.सी. (2019). भारतीय मीडिया में खोजी पत्रकारिता का दुखांत. https://caravanmagazine.in/media/indian-newsrooms-morgues-investigative-journalism-hindi से पुन:प्राप्त.

मेहता, ए. (2006). भारत में पत्रकारिता. नई दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट.

सुरेश, के.जी. (2023). कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल. दूरभाष पर साक्षात्कार.

आरएनआई. (2023). https://egov.rni.nic.in/Webforms/ReportRegdLanguageandState.aspx से पुन:प्राप्त.

# लोक की चिंता में पत्रकारिता से राजनीति तक

**संत समीर**

"थोरो 19वीं सदी के चिंतक थे। उन्हें ट्रांससींडेंटलिस्ट कहा गया। अपने निबंध 'सिविल सहयोग' के लिए वे प्रख्यात थे। गांधीजी इस अमेरिकी विचारक से प्रभावित रहे। थोरो का निष्कर्ष था कि संसार में स्वविवेक ही अंतिम कानून है। ईश्वर ने मनुष्य को शक्ति दी है कि वह स्वविवेक का इस्तेमाल करे। थोरो का यही दर्शन गांधीजी के लिए सत्याग्रह का आधार बना। थोरो की प्रार्थना को गांधीजी ने 'प्रार्थनाओं की प्रार्थना' माना, "हे प्रभो! मुझे इतनी शक्ति दे दो कि मैं अपने को अपनी करनी से कभी निराश न करूँ। मेरे हस्त, मेरी दृढ़ता, श्रद्धा का कभी अनादर न करें। मेरा प्रेम मेरे मित्रों के प्रेम से घटिया न रहे। मेरी वाणी जितना कहे—जीवन उससे ज्यादा करता चले। तेरी मंगलमय सृष्टि का हर अमंगल पचा सकूँ, इतनी शक्ति मुझमें बनी रहे।"

यह उद्धरण है एक लेख 'मेरा गाँव' से, जिसे वेब पोर्टल 'पंचायत खबर' की 'मेरा गाँव सीरीज' के लिए प्रख्यात पत्रकार और राज्यसभा के उपसभापति हरिवंश जी ने सन् 2020 में लिखा था। यह गांधीजी की प्रेरणा के बारे में है, पर पत्रकार से राजनेता बने हरिवंश जी के व्यक्तित्व को समझने की कोशिश करें तो थोरो की यह प्रार्थना उन पर भी वैसे ही ठीक बैठती है। पत्रकारिता और राजनीति के साधारण से शीर्ष तक की आड़ी-टेढ़ी यात्राएँ करते हुए आज वे जिस मुकाम पर हैं, वहाँ भी उनकी पूर्व प्रकृति जस-की-तस बनी हुई है। एकदम सहज-चित्त सरलमना। पद और कद का जैसे आभास नहीं, कोई अहंकार नहीं। सबके प्रति यथायोग्य प्रेमिल-स्नेहिल। जिस काम में लगे, उसके प्रति उनकी प्रतिबद्धता सदा अनुकरणीय रही। आत्मप्रचार की प्रवृत्ति उनमें नहीं दिखती। पत्रकारिता का स्थायी भाव आज भी उनमें कमजोर नहीं है। हर जरूरी अद्यतन जानकारी से वे आज भी लैस दिखाई देते हैं। उनकी अध्ययनशीलता अद्भुत है। किसी मुद्दे पर जब वे अपनी बात रखते हैं तो पूरे होमवर्क के साथ एक सजग पत्रकार और वक्ता का उनका व्यक्तित्व सामने वाले को बाँधकर रखता है। मतलब कि थोरो की प्रार्थना—'हे प्रभो! मुझे इतनी शक्ति दे दो कि मैं अपने को अपनी करनी से कभी निराश न करूँ'—हरिवंश जी पर भी चरितार्थ होती है।

इस मायने में पत्रकार से राजनेता तक की हरिवंश जी की यात्रा का लेखा-जोखा अनेक आयामों में बयान करती किताब 'हरिवंश : पत्रकारिता का लोकधर्म' एक महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति है। शीर्षक के ही हिसाब से कह सकते हैं कि हरिवंश जी का चरित्र और पत्रकारिता के क्षेत्र में उनका किया-धरा पत्रकारिता के लोकधर्म को बनाए और बचाए रखने का एक उदात्त उदाहरण है। 636 पृष्ठ का यह एक विशालकाय ग्रंथ है। प्रलेक प्रकाशन की 'व्यक्तित्व शृंखला' के तहत इसे प्रकाशित किया गया है, जिसके संपादन का दायित्व जानेमाने लेखक-पत्रकार डॉ. कृपाशंकर चौबे ने सँभाला है। अपने संपादकीय में कृपाशंकर जी ने हरिवंश जी की पत्रकारीय यात्रा के साथ उनके कृतित्व, विशेष रूप से उनकी लिखी किताबों पर विस्तार से चर्चा की है। 'कलश', 'पथ के प्रकाश पुंज', 'सृष्टि का मुकुट : कैलास मानसरोवर', 'दिल से मैंने दुनिया देखी', 'गणेश मंत्री : आधुनिक हिंदी पत्रकारिता के यशस्वी स्तंभ' जैसी पुस्तकों से उन्होंने

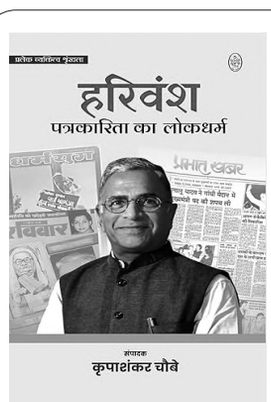


**पुस्तक :** हरिवंश : पत्रकारिता का लोकधर्म
**संपादक :** कृपाशंकर चौबे
**प्रकाशक :** प्रलेक प्रकाशन, 702, जे-50, ग्लोबल सिटी, विरार (वेस्ट), मुंबई, महाराष्ट्र-401303
**मूल्य :** रु. 899/-

कुछ जरूरी उद्धरण दिए हैं। संपादकीय पढ़ते हुए 'प्रभात खबर' के संपादक के तौर पर हरिवंश जी के किए कुछ कामों की भी संक्षिप्त, पर अच्छी जानकारी मिलती है। इसके बाद पूरी पुस्तक में देश के तीन दर्जन नामचीन बुद्धिजीवियों, लेखकों, पत्रकारों ने अपने-अपने ढंग से हरिवंश जी के व्यक्तित्व और कृतित्व का आकलन किया है।

'प्रभात खबर' जैसे मृतप्राय अखबार को हरिवंश जी ने कैसे पुनर्जीवन दिया, इसका बयान करते हुए 'संपादक से संसदीय राजनीति और आगे' शीर्षक अपने लेख में अच्युतानंद मिश्र लिखते हैं—"भारतीय मीडिया का यह वही दौर था, जब समाचार पत्रों को चैनलों से उपग्रह संचार की टेक्नोलॉजी, विदेशी पूँजी निवेश और बाजारवाद के भारी दबाव से चुनौती मिल रही थी। संपादकों की उपेक्षा और विज्ञापनों का वर्चस्व बढ़ रहा था। उस दौर में एक टूटे-बिखरे समाचार पत्र को पुनर्जीवित करना सबसे बड़ी चुनौती थी। हरिवंश ने सभी चुनौतियों का सामना करते हुए नए-नए संस्करण निकालने का काम किया। यह बड़े मीडिया समूहों के लिए भी एक चुनौती थी।...हरिवंश ने मध्यम वर्ग के संकट और हाशिये पर रहने वाले लोगों की समस्याओं को उठाने का काम बड़े गर्व और गौरव से स्वीकार किया था और पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा। ...हरिवंश, एक बहुप्रतिभा संपन्न पुरुष हैं। एक कुशल और समर्पित संपादक तथा संवेदनशीलता में रचे-बसे मनुष्य भी। यही उनका संस्कार है, यही उनका आचरण और यही उनकी पूँजी भी।"

'धर्मयुग', 'रविवार' और 'प्रभात खबर' से होते हुए राज्यसभा तक की हरिवंश जी की यात्रा बहुआयामी है। संपूर्ण क्रांति के नायक जेपी के गाँव सिताबदियरा की सांस्कृतिक विरासत लेकर हरिवंश जी जब पत्रकारिता की दुनिया में पहुँचे तो पत्रकारिता के लोकधर्म की रक्षा के खयाल के साथ आगे बढ़ना जैसे उनका स्वभाव बन गया। 'कलश' से लेकर 'चंद्रशेखर के विचार' तक उनकी लगभग दो दर्जन कृतियों के पन्नों से गुजरते हुए इसे महसूस किया जा सकता है। शांत और आत्मकेंद्रित से रहने वाले हरिवंश जी का काम ही ऐसा था कि 'इंडिया टुडे', 'तहलका' और अँग्रेजी पत्रिका 'सिविल सोसायटी' वगैरह ने कवर स्टोरी छापकर उनके किए-धरे की शिनाख्त की। रामबहादुर राय ने 'क्षेत्रीय पत्रकारिता को

एक नई दिशा दी' शीर्षक लेखक में ठीक ही लिखा है—"सप्रे संग्रहालय के रजत जयंती वर्ष की बात है। 'प्रभात खबर' के संपादक हरिवंश को सम्मानित किया गया तो यह सम्मान उस पत्रकारिता का था, जिसने संघर्ष, त्याग और सरोकार की एक शृंखला कायम की।"

हरिवंश अपनी बिना पर बने व्यक्तित्व हैं। जीवन को उन्होंने अपने तरीके की मेहनत, लगन और पत्रकारीय प्रतिबद्धता के साथ जिया है।

**'हरिवंश : पत्रकारिता का लोकधर्म' के रूप में हरिवंश जी को समझने का एक महत्त्वपूर्ण साधन हिंदी के पाठकों को मिला ही है, साथ ही यह पुस्तक हिंदी पत्रकारिता के चारित्रिक बदलावों और उसकी बेहतरी के लिए संघर्ष करने वालों की शिनाख्त करने में भी सहायता करती है। पत्रकारिता में नए प्रयोगों का अर्थ और उनकी सीमा क्या है, इसकी भी इस पुस्तक के जरिये एक बेहतर समझ बनती है। पत्रकारिता से जुड़े लोगों के लिए तो यह संग्रहणीय है ही, सामान्य पाठक भी इसके पृष्ठ पलटते हुए एक सकारात्मक ऊर्जा का अनुभव करेंगे।**

अपने कर्म से उन्होंने साफ-सुथरी और जिम्मेदार पत्रकारिता का मानक तो गढ़ा ही, लोकोन्मुखी जिम्मेदारियों के प्रति सचेत पत्रकारों की एक पूरी पीढ़ी भी तैयार की। देश के एक पिछड़े इलाके में जाकर संपादक का दायित्व लेना और पत्रकारिता की दुनिया में अपना अस्तित्व बचाने को जूझ रहे एक अखबार को अपनी सूझ-बूझ और दूरदर्शिता से अगली पंक्ति में लाकर खड़ा करने का असंभव-सा काम कर दिखाना, उनकी संघर्ष में धैर्य के साथ टिके रहने की साधना का स्पष्ट पता देता है। पूँजी प्रवाह का दबाव महसूस करते हुए भी संतुलन साधना कोई आसान काम नहीं था, पर हरिवंश जी ने लोक की खातिर लोक को ही साक्षी मानकर इसे कर दिखाया। हरिवंश जी उस दौर और उस इलाके से निकलकर आए हैं, जिसका साबका सबसे ज्यादा अगर किसी से रहा है, तो वे हैं भाँति-भाँति की चुनौतियाँ। घर से बोरा लेकर स्कूल जाना और उसे ही टाट की तरह बिछाकर पढ़ाई करना और हर साल एक बार बाढ़ से घिर जाना। गरीबी हर तरफ पसरी हुई थी। बिजली-पानी की सुविधा नहीं, तो बीमार पड़ने पर अस्पताल जाकर इलाज करवा पाना भी नामुमकिन जैसा। कहीं जाना हो तो नदी पार करके 8-10 किलोमीटर पैदल चलना होता था। समझा जा सकता है कि कितना कठिन रहा होगा वहाँ से यहाँ तक पहुँचना। बड़ी बात यही थी कि सिताबदियरा की सांस्कृतिक-पारंपरिक थाती हरिवंश जी के व्यक्तित्व को समृद्ध कर रही थी और बड़े-बुजुर्गों की सीख ने उन्हें नैतिक बल दिया था। हरिवंश जी ने गरीबी के उस माहौल पर टिप्पणी करते हुए सिताबदियरा की नैतिक परंपरा को 'मेरा गाँव' लेख में कुछ इस तरह याद किया है—"अनैतिक ढंग से महत्त्वपूर्ण बन जाने वालों या धनी हो जाने वालों के प्रति समाज का सम्मान या स्वीकृति नहीं थी।"

वास्तव में यह किताब भले ही अलग-अलग लेखकों के लेखों का संग्रह हो, पर बड़ी तरतीब से हरिवंश जी के व्यक्तित्व और कृतित्व के अनेकानेक आयामों को खोलती है। लेखकों-पत्रकारों-बुद्धिजीवियों ने हरिवंश जी के व्यक्तित्व, पत्रकारिता-कर्म और उनके साथ अपने रिश्तों पर इत्मीनान से अपनी बात रखी है। अच्युतानंद मिश्र, बलबीर दत्त, रामबहादुर राय, विजयदत्त श्रीधर, सुरेंद्र किशोर, महुआ माजी, अनुराग चतुर्वेदी, अतुल कुमार, परमानंद पांडेय, कमलेश मिश्र, केके गोयनका, एएन सिंह, सुरेश शर्मा, प्रो. प्रमोद कुमार, डॉ. लालबहादुर ओझा आदि को पढ़ना रोचक और ज्ञानवर्धक है।

औरों के साथ हरिवंश जी के खुद के विचार भी पुस्तक में सहेजे गए हैं। खंड-2 हरिवंश जी के आलेखों से एक चयन का है। इसमें उनके दर्जन भर लेख संग्रहीत हैं, जिनमें उन्होंने अपने बारे में बात की है और औरों के बारे में भी। समाचार संसार में उनकी विचार-सरणी कैसी थी, इसे समझना हो तो 'प्रभात खबर' में उन्होंने जो पहला संपादकीय लिखा, उसकी कुछ पंक्तियों का उदाहरण लिया जा सकता है—"हमारी विनम्र चेष्टा है कि पत्रकारिता के मूल सत्त्व और मापदंड निष्पक्षता और तथ्यों के प्रति प्रतिबद्धता के तहत ही हम इस पत्र को सजाएँ-सवारें और प्रो-पीपुल यानी जनोन्मुख अखबार निकालें। हालाँकि अखबार की सामग्री और विषयवस्तु में यह परिवर्तन अचानक नहीं, बल्कि धीरे-धीरे संभव है।...दरअसल, 'प्रभात खबर' शब्दशः पाठकों का अखबार बने, यही हमारी सर्वोपरि कोशिश होगी। मौजूदा उपभोक्ता समाज में कुछ हद तक बाजार के दबाव के कारण भी अखबारों की दृष्टि में पाठक महज क्रेता रह गए हैं। अखबार अधिक से अधिक मुनाफा अर्जित करने की प्रक्रिया में पाठकों की सुधि नहीं ले पा रहे, इस प्रवृत्ति के खिलाफ जूझना हमारा संकल्प है।"

खंड-3 में हरिवंश जी का लंबा साक्षात्कार है। यह साक्षात्कार पिछले दो दशकों में अलग-अलग मौकों पर, अलग-अलग विषयों पर या कभी यों भी अनौपचारिक ढंग से की गई चर्चाओं का सारांश है। इस लंबे साक्षात्कार को उनके व्यक्तित्व और कृतित्व को समझने की दृष्टि से एक संक्षिप्त, पर मुकम्मल जैसा दस्तावेज कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। पूरी पुस्तक पढ़ने का समय न हो तो जल्दी में इस साक्षात्कार को पढ़कर हरिवंश जी के व्यक्तित्व के विविध आयामों की कुछ समझ बनाई जा सकती है। खंड-4 में कुछ महत्त्वपूर्ण लोगों से उनका पत्र-व्यवहार है, जो संक्षिप्त होते हुए भी इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इन पत्रों के जरिये भी उनके व्यक्तित्व को समझने में मदद मिलती है।

कुल मिलाकर कहें तो 'हरिवंश : पत्रकारिता का लोकधर्म' के रूप में हरिवंश जी को समझने का एक महत्त्वपूर्ण साधन हिंदी के पाठकों को मिला ही है, साथ ही यह पुस्तक हिंदी पत्रकारिता के चारित्रिक बदलावों और उसकी बेहतरी के लिए संघर्ष करने वालों की शिनाख्त करने में भी सहायता करती है। पत्रकारिता में नए प्रयोगों का अर्थ और उनकी सीमा क्या है, इसकी भी इस पुस्तक के जरिये एक बेहतर समझ बनती है। पत्रकारिता से जुड़े लोगों के लिए तो यह संग्रहणीय है ही, सामान्य पाठक भी इसके पृष्ठ पलटते हुए एक सकारात्मक ऊर्जा का अनुभव करेंगे।

# हिंदी पत्रकारिता का अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

**प्रतिभा सिन्हा**

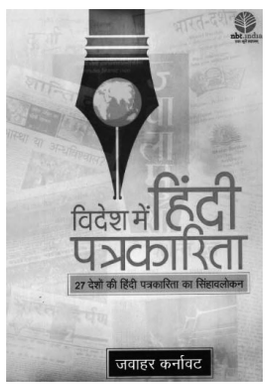


**पुस्तक :** विदेश में हिंदी पत्रकारिता : 27 देशों की हिंदी पत्रकारिता का सिंहावलोकन
**लेखक :** जवाहर कर्नावट
**प्रकाशक :** राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण : 2024
**पृष्ठ संख्या :** 299
**मूल्य :** चार सौ रुपये

भारतीय प्रवासन का इतिहास 175 वर्ष से भी पहले का है। भारतवंशी फीजी, मॉरीशस, त्रिनिदाद, सूरीनाम आदि देशों में मजदूर के रूप में गए, जो गिरमिटिया कहलाए। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् नौकरी के लिए इंग्लैंड, अमेरिका एवं ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में बड़ी संख्या में भारतीयों का प्रवासन हुआ। प्रवासित भारतीयों ने अपनी भाषा एवं संस्कृति को जीवित रखने के लिए हिंदी पत्रकारिता को माध्यम बनाया। जवाहर कर्नावट की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'विदेश में हिंदी पत्रकारिता' विश्व के 27 देशों की हिंदी पत्रकारिता के समृद्ध इतिहास पर प्रकाश डालती है। यह पुस्तक हिंदी पत्रकारिता के अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य को इस तरह प्रस्तुत करती है कि हिंदी पत्रकारिता की वैश्विक प्रासंगिकता स्वतः उभर आए। इस पुस्तक की सामग्री को लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड्स 2023 में भी स्थान प्राप्त हुआ है।

जवाहर कर्नावट ने इस पुस्तक को चार अध्यायों में विभाजित किया है। पहले अध्याय में लेखक ने गिरमिटिया देशों–मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, फीजी, सूरीनाम, गयाना और त्रिनिदाद-टुबैगो की हिंदी पत्रकारिता के इतिहास पर प्रकाश डाला है। मॉरीशस और फीजी की हिंदी पत्रकारिता व्यापक स्तर पर है। महात्मा गांधी की प्रेरणा से मणिलाल ने मॉरीशस में 'हिंदुस्तानी' समाचार पत्र की शुरुआत 15 मार्च, 1909 को थी। चार पृष्ठों वाले 'हिंदुस्तानी' का प्रकाशन शुरू में गुजराती और अँग्रेजी भाषाओं में हुआ, लेकिन एक वर्ष बाद इसका प्रकाशन हिंदी भाषा में होने लगा। इसका ध्येय घोष था–"व्यक्ति की स्वतंत्रता! मनुष्य की समानता! जातियों का भाईचारा!" भारतीयों का नवजागरण इसका हेतु था। मॉरीशस की हिंदी पत्रकारिता में हस्तलिखित पत्रिका 'दुर्गा' ने भी एक नया इतिहास रचा। 'दुर्गा' की भाषा, साहित्य के प्रति आस्था और प्रतिबद्धता ने मॉरीशस में हिंदी साहित्य को विशेष पहचान दिलाई। इस पुस्तक में मॉरीशस से निकलने वाली दूसरी पत्र-पत्रिकाओं जैसे कि–आर्य पत्रिका, आर्य वीर, मॉरीशस इंडिया टाइम्स, जनता, जमाना, जनवाणी, आक्रोश, सुमन, विश्व हिंदी पत्रिका आदि के बारे में भी विस्तार से बताया गया है।

गिरमिटिया देशों में दक्षिण अफ्रीका की हिंदी पत्रकारिता का इतिहास भारतवंशियों की संघर्ष गाथा का दस्तावेज है। अप्रवासी भारतीय जब अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए तब हिंदी भाषा की पताका लहराने एवं भारतीयों को संगठित करने के उद्देश्य से 'इंडियन ओपिनियन' समाचार पत्र का प्रकाशन 1903 में शुरू हुआ। यह अखबार अँग्रेजी, गुजराती, हिंदी एवं तमिल में प्रकाशित होता था। इस समाचार पत्र में महात्मा गांधी का विशेष योगदान रहा। एम. एल. नाजर के संपादन में शुरू हुए 'इंडियन ओपिनियन' ने भारतीयों की आवाज को बुलंद करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। जवाहर कर्नावट बताते हैं कि दक्षिण अफ्रीका में भवानीदयाल सन्न्यासी ने 'धर्मवीर' साप्ताहिक पत्र की शुरुआत की। इस द्विभाषी (हिंदी और अँग्रेजी) समाचार पत्र का उद्देश्य वैश्विक धर्म का प्रचार-प्रसार एवं हिंदू नागरिकों को संगठित करना था। 'धर्मवीर' के प्रकाशन के साथ-साथ ही भवानीदयाल सन्न्यासी ने द्विभाषी समाचार पत्र 'हिंदी' की भी शुरुआत की। भवानीदयाल सन्न्यासी ने इस उद्देश्य से यह समाचार पत्र निकाला कि यह पत्र संपूर्ण विश्व में फैले प्रवासी भारतीयों की आवाज बन सके।

**दक्षिण अफ्रीका में भवानीदयाल सन्न्यासी ने 'धर्मवीर' साप्ताहिक पत्र की शुरुआत की। इस द्विभाषी (हिंदी और अँग्रेजी) समाचार पत्र का उद्देश्य वैश्विक धर्म का प्रचार-प्रसार एवं हिंदू नागरिकों को संगठित करना था। 'धर्मवीर' के प्रकाशन के साथ-साथ ही भवानीदयाल सन्न्यासी ने द्विभाषी समाचार पत्र 'हिंदी' की भी शुरुआत की।**

जवाहर कर्नावट लिखते हैं कि मॉरीशस की तरह फीजी में भी पत्रकारिता की शुरुआत का श्रेय डॉ. मणिलाल को जाता है। डॉ. मणिलाल ने 'द सेटलर' समाचार पत्र निकाला। उसके साथ ही फीजी में पत्रकारिता की शुरुआत हुई। शुरुआत में यह अँग्रेजी भाषा में प्रकाशित होता था। बाद में इस समाचार पत्र का हिंदी संस्करण भी प्रकाशित होने लगा। 'द सेटलर' के बाद फीजी समाचार, वृद्धि, शांतिदूत, जागृति, उदयाचल और फीजी संदेश जैसे महत्त्वपूर्ण समाचार पत्रों के प्रकाशन से फीजी की हिंदी पत्रकारिता समृद्ध हुई। सूरीनाम के समाचार पत्रों में 'सूरीनाम दर्पण' का नाम सबसे पहले आता है। उसका प्रकाशन सूरीनाम हिंदी परिषद् की ओर से 1985 में शुरू हुआ। उसका ध्येय वाक्य था—'हिंदी पढ़ो ही नहीं, वरन लिखो भी'। उस समाचार पत्र ने प्रथम अंक में स्पष्ट लिखा था–"सूरीनाम दर्पण' प्रथम पत्र है, जिसमें रचनात्मक साहित्य जैसे कविता, कहानी, नाटक, निबंध, संस्मरण को प्रकाशित करने की योजना है। इसमें सूरीनाम के समस्त साहित्यकारों को प्रकाश में आने का सुअवसर तो मिलेगा ही, साथ ही उनकी लेखनी और वाणी से विश्व हिंदी जगत्

भी परिचित हो सकेगा। सूरीनाम दर्पण में अपनी राजभाषा डच एवं व्यवहृत सरनामी हिंदी में भी रचनाएँ प्रकाशित करने की योजना है, जिससे इन सभी वर्गों एवं व्यक्तियों से अपना साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संबंध अक्षुण्ण रखा जा सके।" 'सूरीनाम दर्पण' के अलावा 'शब्द शक्ति' पत्रिका में भी सूरीनाम के रचनाकारों की कविताएँ, कहानी और लेख प्रकाशित होते रहे। जवाहर कर्नावट ने गयाना की हिंदी पत्रिका 'ज्ञानदा', 'भारत समाचार' पत्रिका और गयाना के हिंदी रेडियो का विवरण भी विस्तार से दिया है।

पुस्तक के दूसरे अध्याय 'उत्तरी अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता' में जवाहर कर्नावट ने अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड की हिंदी पत्रकारिता के इतिहास को प्रस्तुत किया है। अमेरिका के हिंदी समाचार पत्रों में 'गदर', 'सिमांतिका', 'सौरभ', 'बाल हिंदी जगत्', 'नमस्ते यू.एस. ए.', 'हिंदू टाइम्स' और 'यादें' प्रमुख हैं। अँग्रेजों की गुलामी के विरुद्ध आवाज उठाने वाले समाचार 'गदर' में 'गदरी रिसाला' शृंखला के अंतर्गत 'अंकों की गवाही–अँग्रेजी राज्य में प्रजा के दुःख की कहानी', 'देशभक्ति के गीत' जैसी रचनाएँ छपीं। देशभक्ति के गीतों की पुस्तिकाओं में मुखपृष्ठ पर लिखा होता था—"हिंद जवानो! ऐ मर्दानो! जल्दी लो हथियार। एक हाथ में विद्या बल, लो दूजे में तलवार।।"

कनाडा के प्रमुख हिंदी पत्र एवं पत्रिकाएँ हैं—भारती, अंकुर, हिंदी चेतना, वसुधा, नमस्ते कनाडा, हिंदी टाइम्स, और उदगार पत्रिका। आँकड़ों के अनुसार ऑस्ट्रेलिया में चीन के बाद भारतीय प्रवासियों का स्थान है। ऑस्ट्रेलिया में भारतीयों की संख्या बढ़ने के साथ ही अपने देश की सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने के लिए हिंदी शिक्षण एवं हिंदी पत्रकारिता का प्रारंभ हुआ। लेखक ने ऑस्ट्रेलिया की पत्र-पत्रिकाओं में 'चेतना', 'देवनागरी', 'हिंदी समाचार पत्रिका', 'हिंदी एक्सप्रेस', 'हिंदी गौरव', 'भारत-भारती पत्रिका', 'ऑस्ट्रेलियांचल ई पत्रिका' का विस्तार से वर्णन किया है। जवाहर कर्नावट ने लिखा है कि न्यूजीलैंड की हिंदी पत्रकारिता हस्तलिखित 'भारत-दर्शन' से 1996 में शुरू हुई। 'भारत-दर्शन का प्रवेशांक आठ पृष्ठों का श्वेत-श्याम था। इस पत्रिका के अंतिम पृष्ठ पर एक अनुरोध प्रकाशित किया गया था–"कृपया इस पत्रिका को पढ़ने के बाद फेंके नहीं, बल्कि किसी और हिंदीप्रेमी को पढ़ने को दे दें। पत्रिका के प्रचार-प्रसार में आपके योगदान के लिए आभार।" इस अनुरोध से यह समझा जा सकता है कि इस पत्रिका का उद्देश्य ज्यादा से ज्यादा हिंदी पाठकों तक पहुँचना रहा। न्यूजीलैंड की अन्य पत्र-पत्रिकाओं में 'शांति सरोवर', 'महिके वतन न्यूजीलैंड', 'कूक', 'धनक', 'हिंदी वाणी', 'गुलदस्ता', 'इंडियंस एक्सप्रेस', 'अपना भारत', 'संगम' पत्रिका का भी विवरण लेखक ने दिया है।

पुस्तक के तीसरे अध्याय में यूरोप महाद्वीप के देशों की हिंदी पत्रकारिता का वर्णन है। लेखक ने ब्रिटेन, नीदरलैंड, जर्मनी, नार्वे, हंगरी, बुल्गारिया और रूस में हिंदी पत्रकारिता का इतिहास बताया है। ब्रिटेन की 'तस्वीरी', 'नैवेद्य' और 'प्रवासिनी' जैसी हस्तलिखित पत्रिका, 'चेतक', 'पुरवाई', 'जगत् वाणी' और 'भारत भवन' जैसी प्रमुख पत्रिकाओं का वृत्तांत है, तो नीदरलैंड की सरनामी पत्रिका, भाषा पत्रिका, आसन संदेश पत्रिका, हिंदी पत्रिका, विश्व ज्योति पत्रिका जैसी पमुख पत्रिकाओं का भी। चौथे अध्याय में एशिया महाद्वीप के देशों—जापान, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत, कतर, चीन, तिब्बत, सिंगापुर, म्याँमार, श्रीलंका, थाईलैंड और नेपाल की हिंदी पत्रकारिता का विवरण दिया गया है। जापान की 'इंडो बुका', 'सर्वोदय', 'अंक पत्रिका', 'ज्वालामुखी'; संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत और कतर की 'अभिव्यक्ति' और 'अनुभूति' (वेब पत्रिका), 'निकट पत्रिका', 'कुवैत समाचार', 'नवचेतना'; चीन और तिब्बत की 'चीन सचित्र पत्रिका', 'आज का चीन', 'चीन-भारत संवाद', 'समन्वय हिंची', 'तिब्बत देश पत्रिका' और 'तिब्बत बुलेटिन' का विवरण दिया गया है। सिंगापुर की पत्र-पत्रिकाओं में 'सिंगापुरी अखबार', 'जवान', 'साधना पत्रिका', 'दृष्टि पत्रिका' आदि शामिल हैं। भारत के पड़ोसी देश नेपाल की हिंदी ही नहीं बल्कि नेपाली पत्रकारिता की शुरुआत भारत के वाराणसी शहर से हुई। नेपाल की हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में 'सुधा-सागर', 'तरंग', 'जय सोपान', 'साहित्य लोक पत्रिका', 'नव नेपाल', 'लोकमत', 'हिमालिनी पत्रिका', 'हिम किरण', 'द पब्लिक' और 'विविध भारत' प्रमुख हैं।

**श्री कर्नावट न केवल ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हिंदी पत्रकारिता का अध्ययन करते हैं, बल्कि वर्तमान समय में उसकी चुनौतियों और संभावनाओं पर भी विचार करते हैं। लेखक ने विभिन्न देशों में हिंदी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और डिजिटल मीडिया के माध्यम से हिंदी भाषा की सजीवता और प्रासंगिकता को बखूबी प्रस्तुत किया है। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें लेखक ने न केवल तथ्यों और आँकड़ों का उपयोग किया है, बल्कि व्यक्तिगत अनुभवों से भी उसे पुष्ट किया है।**

जवाहर कर्नावट ने अपनी पुस्तक में प्रवासी भारतीय समुदाय के बीच हिंदी पत्रकारिता की स्थिति और उसकी भूमिका का व्यापक विवेचन किया है। श्री कर्नावट न केवल ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हिंदी पत्रकारिता का अध्ययन करते हैं, बल्कि वर्तमान समय में उसकी चुनौतियों और संभावनाओं पर भी विचार करते हैं। लेखक ने विभिन्न देशों में हिंदी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और डिजिटल मीडिया के माध्यम से हिंदी भाषा की सजीवता और प्रासंगिकता को बखूबी प्रस्तुत किया है। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें लेखक ने न केवल तथ्यों और आँकड़ों का उपयोग किया है, बल्कि व्यक्तिगत अनुभवों से भी उसे पुष्ट किया है। जवाहर कर्नावट की शोध और लेखन शैली ने इसे एक उत्कृष्ट और पठनीय पुस्तक बना दिया है। यह पुस्तक पाठकों को हिंदी पत्रकारिता की वैश्विक यात्रा की एक स्पष्ट और समग्र दृष्टि प्रदान करती है। यह पुस्तक न केवल हिंदी पत्रकारिता के अध्ययन की दृष्टि से, बल्कि भाषा और संस्कृति के अंतरराष्ट्रीय प्रसार और उसकी चुनौतियों को समझने के लिए भी अत्यंत उपयोगी है।

*(समीक्षक महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा में पीएच.डी. शोधार्थी हैं)*

# वर्तमान संचारीय परिदृश्य बनाम नारदीय संचार नीति

**संत समीर**

संचार जैसे मुद्दे पर विमर्श की बात हो तो सामान्य चलन यही है कि हमारा बुद्धिजीवी समाज इसके भारतीय परिदृश्य पर भी विभिन्न कोणों से पश्चिमी आधारबिंदुओं के सहारे ही अपना आकलन प्रस्तुत करता है। यह अवश्य है कि संचार की आधुनिक संकल्पना चूँकि पश्चिम से निकलती हुई दिखाई देती है, इसलिए पश्चिमी सोच को प्रस्थानबिंदु बनाना स्वाभाविक है, परंतु इसका नुकसान यह हुआ है कि भारत में संचार की समृद्ध और मूल्यनिष्ठ जो परंपरा प्राचीन समय से चली आई है, उस पर हमारा ध्यान जा ही नहीं पाता। इस मायने में डॉ. जयप्रकाश सिंह ने 'नारदीय संचार नीति' पुस्तक लिखकर एक महत्त्वपूर्ण काम किया है। इस पुस्तक की विशिष्टता और प्रामाणिकता यह है कि यह एक गहन शोधकार्य का प्रतिफल है।

देवर्षि नारद को आधार बनाकर यह पुस्तक संचार के प्राचीन प्रसंगों को आधुनिक संदर्भों के साथ प्रासंगिक बनाती है। पुस्तक किसी भी तरह के ऐतिहासिक विवेचन के विवाद से दूरी बनाकर चलती है और देवर्षि नारद से जुड़े संवादों, कथा-कहानियों के जरिये भारतीय परिदृश्य को प्रस्तुत करती है। यह ठीक भी है, क्योंकि पौराणिक पात्रों की ऐतिहासिकता का प्रश्न अक्सर उठाया जाता है और यह हमेशा अनुत्तरित ही रहता है। मूल बात यह है कि संचार परिदृश्य के आकलन के लिए यदि हम नारद को आधार बनाते हैं तो नारद की ऐतिहासिकता नहीं, बल्कि उनके नाम पर दर्ज उनके क्रिया-कलाप, उनके संवाद, उनके वक्तव्यों को अपने विश्लेषण की परिधि में लाना होगा। लेखक ने यही किया है।

नारदीय संचार नीति की प्रासंगिकता इसलिए भी बढ़ जाती है, क्योंकि वर्तमान में हमारे संचार माध्यमों या कहें मीडिया ने अपनी ताकत तो बहुत बढ़ा ली है, नीति निर्धारक की भूमिका तक इसकी पहुँच हो चुकी है, पर इसकी खुद की नैतिकता और मूल्यनिष्ठा कई बार उच्छृंखलता की हद पर पहुँचती हुई दिखाई देती है। सोशल मीडिया के अन्यान्य रूप इसे और उच्छृंखल बनाते हैं। तकनीकी प्रगति ने सच की तलाश के मजबूत हथियार दिए हैं और इस दिशा में आगे बढ़ने की त्वरा दी है, पर लोक के प्रति दायित्वबोध अगर कमजोर पड़ने लगे तो समूची संचार प्रविधि प्रश्नों के घेरे में आने लगती है। ऐसे में संचार के नारदीय मूल्य महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

देवर्षि नारद अपनी शर्त पर लोक-लोकांतर में आवागमन करते हैं। वे सत्य के अन्वेषक और प्रसारक हैं। किसी की मुँहदेखी नहीं करते। लोककल्याण का उद्देश्य साथ लेकर चलते हैं और ठीक समय पर सत्य को सही जगह तक पहुँचा देते हैं। उनकी पहुँच असाधारण रूप से हर क्षेत्र में है। विरोधी-समर्थक की कोई बात नहीं, हर कहीं उनकी स्वीकार्यता असंदिग्ध है। उनका पूरा व्यक्तित्व अद्भुत रोचकता से भरा हुआ है। उनकी संचार शैली ऐसी है कि उनका सत्य-उवाच कभी नीरस नहीं होता। उनके संचार का कोई भी तौर-तरीका बेवजह नहीं होता, बल्कि बतौर लेखक लोककल्याण और सत्य को स्थापित करने के लिए वे भाँति-भाँति की भाव-भंगिमाओं में प्रस्तुत होते हैं। और इस तरह, नारद सार्वकालिक संचारक के रूप में दिखाई देते हैं। यह अजीब बात है कि हमारी प्रगतिशील

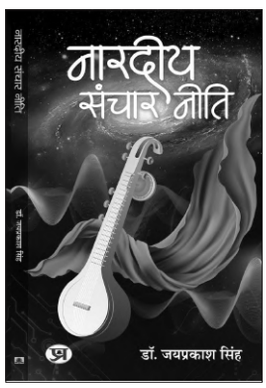


**पुस्तक :** नारदीय संचार नीति
**लेखक :** डॉ. जयप्रकाश सिंह
**प्रकाशक :** प्रभात प्रकाशन प्रा. लि., 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
**मूल्य :** 300 रुपये

बुद्धिजीविता ने देवर्षि नारद पर ऐसी दृष्टि डाली कि उनका चरित्र निरंतर हास्यास्पद और नकारात्मक बनता गया। यहाँ तक कि हमारी फिल्मों में भी यदि नारद का चरित्र-चित्रण कहीं दिखाई देता है तो वह अपनी सूचनाओं के जरिये दूसरों के घरों में आग लगाने वाले व्यक्तित्व के आसपास पहुँचा दिया जाता है। इसके उलट पुराणों के पन्ने पलटें तो नारद परम प्रभुभक्त हैं, बल्कि भगवान् के सर्वश्रेष्ठ भक्तों में से एक। ब्रह्मा जी की गोद में पैदा हुए। ब्रह्मा जी ने उन्हें सृष्टि का कार्य करने की जिम्मेदारी दी, पर नारद जी ने उनका आदेश मानने से इनकार कर दिया। वे परम ज्ञानी थे और उन्होंने ज्ञान के प्रचार-प्रसार और लोक कल्याण के लिए जीवन समर्पित किया। इस तरह देवर्षि नारद सत्य सूचना के अन्वेषक, प्रसारक और सर्वाधिक त्वरावान् संवाहक बने। उनकी निष्पक्षता ऐसी थी कि उन्हें देव और दानव, दोनों ओर से मान मिला। आधुनिक संदर्भों में किसी अच्छे पत्रकार की इससे अच्छी विशिष्टता और क्या हो सकती है? जाहिर है, देवर्षि नारद के लिए संसार के पहले पत्रकार की संज्ञा सटीक है।

166 पृष्ठ की पूरी पुस्तक में वर्तमान के चलते और बदलते परिदृश्य में संचारीय क्षेत्र का आकलन करते हुए इसके लिए नारदीय मूल्यों की प्रासंगिकता सिद्ध की गई है। लेखक की चिंता है—"संचारीय तकनीक को संचालित करने वाले मूल्यों के परंपराजन्य नहीं होने के कारण, संचारीय प्रक्रिया राष्ट्रीय कल्पनाओं को संवेदित नहीं कर पा रही है।" जाहिर है, ऐसे में परंपरा में मौजूद संचार मूल्यों को उभारना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। लेखक ने 'शील ही संदेश है' की भारतीयता के इर्दगिर्द अपनी बात रखी है और नारद से जुड़ी कथाओं के माध्यम से संचार मूल्यों की रोचक व्याख्या की है। लेखक इस बात को बेहतर ढंग से स्थापित करता है कि संचार की तात्कालिक सफलता भले ही सूचना, तथ्य, परिप्रेक्ष्य का सटीक संप्रेषण कर सही-गलत का विवेक पैदा करना होता है, पर संचार की अंतिम सफलता स्मृति बनाने में है और देवर्षि नारद की संचार नीति में स्मृति-सर्जना केंद्रीय तत्त्व है।

कुल मिलाकर 'नारदीय संचार नीति' पठनीय है और इसकी स्थापनाएँ आधुनिक संचार क्षेत्र के लिए अनुकरणीय हैं।

# अज्ञेय-सहाय-भारती का पत्रकारीय अवदान

**संत समीर**

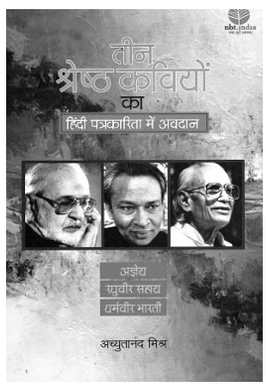


**पुस्तक :** तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान
**लेखक :** अच्युतानंद मिश्र
**प्रकाशक :** राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नेहरू भवन, 5, इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070
**मूल्य :** 225 रुपये

यह उस अवदान की यात्रा-कथा है, जिसे अब तक अच्छे से पहचान लिया जाना चाहिए था, पर किसी ने ऐसा करने की जहमत उठाने की जरूरत नहीं समझी थी। अब जाकर वयोवृद्ध पत्रकार अच्युतानंद मिश्र ने यह काम किया है। उनकी कृति की प्रकृति देखकर लगता है कि यह उनके जैसे ही किसी गहन अनुभव के धनी व्यक्ति के बूते की बात थी। 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' अच्युतानंद जी की बहुप्रतीक्षित नई पुस्तक है। अच्युतानंद जी ने संख्यात्मक रूप से इफरात में नहीं लिखा है। शायद इसलिए भी कि छपने की लालसा जैसे उनमें कभी रही ही नहीं। दूसरों को छापकर नामचीन बनाना उनकी फितरत का हिस्सा रहा है। यही कारण भी है कि समीक्ष्य कृति की पांडुलिपि वर्षों से बस आलमारी की शोभा बढ़ा रही थी। उनके चाहने वालों को इस कृति की भनक न मिलती और कृष्ण बिहारी मिश्र जैसे विद्वान् ने इसको प्रकाशित करने का जोर-दबाव न बनाया होता, तो शायद यह अब तक घर के किसी कोने में ही दबी पड़ी रहती। वास्तव में इस पुस्तक के प्रकाश में आने से हिंदी पत्रकारिता और साहित्य, दोनों विधाएँ समृद्ध हुई हैं। अपने कथ्य में यह अनूठी पुस्तक है। प्रकाशित होते ही इसने साहित्य और पत्रकारिता जगत् में जैसी हलचल पैदा कर दी है, वह ध्यान देने लायक है।

अच्युतानंद जी ने इस पुस्तक के बहाने हिंदी के तीन श्रेष्ठ कवियों—सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती—के व्यक्तित्व के उस पहलू की गहन पड़ताल की है, जिस पर अब तक कुछ फुटकर बातें ही की गई थीं, या कह सकते हैं कि ज्यादा ध्यान देने की जरूरत नहीं समझी गई थी। इन तीनों ही कवियों की लोकप्रियता कवि के रूप में निर्विवाद रूप से बहुत बड़ी है, पर अच्युतानंद जी द्वारा प्रस्तुत विमर्श के बाद अब पत्रकारिता में भी उनके योगदान का स्थान निर्धारित करने में सहायता मिलेगी।

पुस्तक के पहले अध्याय के पन्ने पलटते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि कैसे आजादी के बाद के कुछ दशकों तक साहित्य और पत्रकारिता एक-दूसरे से पोषण लेकर पुष्पित-पल्लवित होते रहे हैं। प्रारंभ में लेखक लिखते हैं—"स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी साहित्य और हिंदी पत्रकारिता के बीच विभाजक रेखा अदृश्य थी। प्रस्तुति की शैली और अनुशासन अलग-अलग थे, लेकिन दोनों के सामजिक सरोकार, राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति निष्ठा और राष्ट्रीयता की दृष्टि समान थी।" हम समझ सकते हैं कि इसी पृष्ठभूमि से ये तीनों कवि भी निकले थे और आजादी के कुछ बाद तक जीवित रहे साहित्य और पत्रकारिता के प्रेरणा पुरुषों का आशीर्वाद इन्हें प्राप्त था। अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती—तीनों ने अपनी विरासत को सँजोया, उसमें अपनी मौलिकता भरी, उसे आगे बढ़ाया और साहित्य व पत्रकारिता के बीच मजबूत संतुलन के साथ काम किया। दुर्भाग्य ही रहा कि इन तीनों के साहित्यिक पहलू पर तो खूब बातें की गईं, पर इनका पत्रकारीय अवदान कहीं हाशिये पर पड़ा रहा। अच्युतानंद जी लिखते हैं—"सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती को साहित्य से भरपूर सम्मान और पत्रकारिता से अभूतपूर्व लोकप्रियता मिली थी। तीनों ने अपना-अपना साहित्यिक और पत्रकारीय लेखन लगभग साथ-साथ शुरू किया था। तीनों के पत्रकारीय अवदान पर न तो साहित्य में और न पत्रकारिता में कभी कोई बौद्धिक हलचल हुई।...सच यह है कि साहित्य से काटकर उनकी पत्रकारिता का आकलन करना मुश्किल है।"

अच्युतानंद जी ने तीनों कवियों में समानताओं और वैचारिक अंतर्विरोधों पर गहन विमर्श किया है। पुस्तक तीनों कवियों की पत्रकारीय यात्रा का परिचय तो देती ही है, उनकी भाषा, कहन, चुनौतियों को स्वीकारने और उनसे निपटने के संघर्ष का भी बयान करती है। इसे पढ़ते हुए समझ में आता है कि कैसे इन तीनों ने साहित्य के साथ-साथ पत्रकारिता के एक पूरे दौर और पत्रकारों की एक पूरी पीढ़ी को प्रभावित-संस्कारित किया। पुस्तक में कुल छह अध्याय हैं। पहले अध्याय में अच्युतानंद जी ने साहित्य के इन तीन महानायकों की पत्रकारिता पर बात करते हुए स्वतंत्रता संग्राम के दौर की पत्रकारीय विरासत और मूल्यों को याद किया है और इन तीनों का जिस वातावरण में पत्रकारिता जगत् में प्रवेश हुआ, उसकी बुनियादी प्रवृत्तियों का संक्षिप्त आकलन प्रस्तुत किया है। अगले तीन अध्यायों में अज्ञेय, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती के पत्रकारीय अवदान का अलग-अलग विश्लेषण किया गया है। पाँचवाँ अध्याय साक्षात्कारों का संग्रह है, इस नाते इन तीनों महान् रचनाकारों को उनके खुद के नजरिये से भी समझने का अच्छा साधन देता है। आखिरी छठे अध्याय में तीनों की रचनाओं का एक चयन प्रस्तुत किया गया है, जिसके तहत अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', रघुवीय सहाय की 'आत्महत्या के विरुद्ध' और धर्मवीर भारती की 'मुनादी' को पढ़ना किसी रोचक अनुभव से गुजरने जैसा है। निष्कर्ष रूप में कहें तो 'तीन श्रेष्ठ कवियों का हिंदी पत्रकारिता में अवदान' महज एक बार पढ़कर बुकसेल्फ में रख दी जाने वाली पुस्तक नहीं है। इन तीन रचनाकारों के अलावा तत्कालीन प्रवृत्तियों को भी गहराई से समझने लिए एकाधिक बार इसके पन्ने पलटने की जरूरत पड़ेगी। वास्तव में सधी हुई भाषा में गंभीर विषय पर एक रोचक और जरूरी पुस्तक है यह।

# लेखन कर्म पर कुछ जरूरी साक्षात्कार

**संत समीर**

‘सवालों के अक्स में’ उमेश चतुर्वेदी की साक्षात्कारों की किताब है। 26 नामचीन रचनाधर्मियों-पत्रकारों के साथ साहित्य और पत्रकारिता के इर्दगिर्द की बातचीत। साहित्यिक वातावरण विशेष रूप से प्रभावी है। हिंदी भाषा का प्रश्न भी प्रमुखता से उभरा है। दो-तीन दशक पहले के ये साक्षात्कार हैं, तो जाहिर है कई बड़े-बुजुर्ग कलमकार अब हमारे बीच में नहीं हैं। ऐसे में, किताब के 133 पृष्ठों के लिए यह भी कह सकते हैं कि अतीत की यादों के सुनहरे पन्ने हैं ये। साक्षात्कर्ता उमेश चतुर्वेदी का अपना खुला व्यक्तित्व अपनी बेबाक शैली है, इसलिए इन साक्षात्कारों में भी खुले मन की खुली बातें पृष्ठ-दर-पृष्ठ देखी और महसूस की जा सकती हैं। सहज सवालों की विशिष्टता है कि वे विद्वान्, जो बोलने में किंचित संकोची संस्कार के रहे हैं, वे भी खुले मन से अपनी बात कह गए हैं। ऐसे में, पाठक को उन तमाम जानकारियों से भी रूबरू होने का मौका मिलता है, जो प्रचलित साक्षात्कारों में आमतौर पर ओझल-से दिखाई देते हैं। साक्षात्कारों की प्रकृति ऐसी है कि ये लंबी उम्र तय करने वाले हैं, स्थायी महत्त्व के बन पड़े हैं।

सबसे बड़ी बात कि इन साक्षात्कारों में कई ऐसे मुद्दे हैं, जो इनकी प्रकृति को आत्मश्लाघा और वायवी होने से बचाते हैं। गाँवों के सवाल पर जब विवेकी राय अपनी बात रखते हैं, तो समझा जा सकता है कि उनका यथार्थबोध रूपायित हुआ है और वे ग्राम-वंदना की छलना में पड़ने के बजाय गाँवों की बदलती या बदली जा रही प्रकृति की समस्या के कड़वे सच की शिनाख्त करते हैं। मसलन, वे कहते हैं—“गाँव के बारे में इतना लिख दिया गया कि ऐसा लगता है कि गाँव के लिए सिर्फ कहा ही जाता है—बोल दिया जाता है; हकीकत में चाहे हो या न हो। गाँवों में टेढ़ी-मेढ़ी समस्याएँ हो गई हैं। बड़ी समस्या यह है कि...जिसे हम गाँव कहते हैं, वह गाँव है भी या नहीं। मेरी समझ से गाँव भूगोल नहीं, जमीन की चौहद्दी नहीं, बल्कि गाँव एक भाव है, जिसमें लोगों की सामूहिकता, भाईचारा, भाईबंदी, सहयोग, सहकार, संस्कार ये सब होते हैं। लेकिन आज के गाँव में ये सब संस्कार खत्म हो गए हैं। हमारे लोकगीत हमारे गाँव के भाव-संसार की रीढ़ थे।...लेकिन अब उन्हें गाया नहीं जा रहा। आधुनिक लड़कियों को इसकी जानकारी नहीं है। गाँवों में सेवा-संस्कार की भावना समाप्त हो गई।...गाँव का आदमी अब ऊब गया है, उखड़ा हुआ है, ऐसे माहौल से भागकर वह कहाँ जा सकता है? लिहाजा वह नजदीकी शहर की ओर भागा। सामर्थ्य नहीं हुआ तो गाँव से सटी सड़क पर आ गया—चट्टियाँ बन गई। यानी, गाँव भी अपने नजदीकी सड़क के पास शहरी बनने की कोशिश में जुट गया है।”

निर्मल वर्मा साक्षात्कर्ता के प्रश्नों के उत्तर में साफगोई और निश्छल मन से विचारधारा के प्रभाव में आने और उससे छूटने पर सोचने पर बाध्य करने वाली बात करते हैं। मार्क्सवाद के दिखते लक्ष्य और फिर उसमें भी मौजूद उसकी पूँजीवादी सोच जैसी ही कमियों के प्रति उनका एहसास तार्किक विमर्श पैदा करता है। निर्मल वर्मा कहते हैं—“एक जमाने में

**पुस्तक :** सवालों के अक्स में
**साक्षात्कर्ता :** उमेश चतुर्वेदी
**प्रकाशक :** पुस्तकनामा, डी-77/एसएप-202, शौर्यपुरम, नजदीक जिंदल पब्लिक स्कूल, एनएच-24, बम्हेटा, कविनगर, गाजियाबाद, उ.प्र.
**मूल्य :** 250 रुपये

मार्क्सवादी दर्शन ने मुझे आकर्षित भी किया था और इसलिए किया था कि मुझे लगा था कि मनुष्य अपनी यातना से तभी मुक्ति पा सकता है, जब एक अच्छी-अधिक न्यायोचित एवं मानववादी व्यवस्था का निर्माण हो सके।...मैं यूरोप में नौ साल रहा। वापस आने पर मैंने देखा कि भारत की स्थिति काफी बदल चुकी है। स्वतंत्रता के बाद हम जिस अंधाधुंध औद्योगीकरण की लपेट में आ गए, उससे न केवल हम, बल्कि हमारा परिवेश भी दूषित होता जा रहा था। भौतिकवादी दर्शन से प्रभावित हमारे परिवेश ने मुझे चिंतन करने पर बाध्य कर दिया और मेरा मार्क्सवाद से लगभग मोहभंग ही हो गया।”

भोजपुरी, राजस्थानी वगैरह को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने या हरियाणवी, पंजाबी जैसी बोलियों के बढ़ते प्रचार को जो लोग हिंदी के हस्र के रूप में देखते हैं, उनको कृष्ण बिहारी मिश्र एक सवाल पर अच्छा जवाब देते हैं—“क्या हिंदी इतनी कमजोर है कि भोजपुरी या राजस्थानी को संवैधानिक मान्यता मिलने के बाद टूट सकती है? हिंदी पर कितने हमले हुए, उसे कई बार साम्राज्यवादी ताकतों ने निशाना बनाया, लेकिन हिंदी बढ़ती ही रही। हिंदी के विकास को कोई रोक नहीं पाया। मुझे लगता है कि अगर भोजपुरी और राजस्थानी जैसी बोलियों को संवैधानिक मान्यता मिलेगी तो उसे और ताकत ही हासिल होगी।...परिवार का कोई सदस्य ताकतवर बनता है तो पूरे परिवार की ताकत बढ़ती है।”

इसी तरह से राजेंद्र यादव, रमेश उपाध्याय, नरेंद्र कोहली, नित्यानंद तिवारी, भालचंद्र निमाड़े, कमलेश एस. प्रकाश, हिमांशु जोशी, उदय प्रकाश, कमलेश्वर, देवदत्त, मैनेजर पांडेय, केदारनाथ सिंह आदि के साक्षात्कार व्यक्तिगत जीवन के साथ लेखन कर्म के अन्यान्य पहलुओं पर कई नए आयामों का परिचय देते हुए किन्हीं नए सिरों पर विमर्श का आह्वान करते हैं। इन साक्षात्कारों का आंतरिक सौंदर्य यही है कि ये सीमित बिंदुओं को पकड़ने के बजाय बहुआयामी प्रकृति के हैं। जीवन, समाज, अर्थतंत्र, संस्कृति-सभ्यता, साहित्य, सिनेमा, पत्रकारिता के संक्षिप्त, परंतु अन्यान्य पहलू इनमें समाए हुए हैं। पुस्तक की भाषा सहज-सरल, साफ-सुथरी और रोचक है।

# भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
## प्रकाशन विभाग

नवीन सदस्यता | नवीनीकरण प्रपत्र

# संचार माध्यम | अब त्रैमासिक उपलब्ध है

सेवा में
प्रमुख, प्रकाशन विभाग, भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
नया जेएनयू परिसर, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली–110 067

महोदय / महोदया
मैं / हम 'संचार माध्यम' शोध पत्रिका की सदस्यता लेना चाहते हैं :

**संचार माध्यम रु. 200.00 प्रति अंक (रु. 800.00 वार्षिक शुल्क)**

कैलेंडर वर्ष (जनवरी–दिसंबर) के लिए.....
डिमांड ड्राफ्ट / चेक संख्या / ऑनलाइन लेनदेन संख्या .....
दिनांक..... के नाम आहरित ..... के लिए
₹..... सदस्यता राशि के रूप में संलग्न है।

पत्रिका निम्नलिखित पते पर भेजी जाए :

नाम .....

पता .....

दूरभाष .....

(हस्ताक्षर दिनांक सहित)

**टिप्पणी :**

- डिमांड ड्राफ्ट भारतीय जन संचार संस्थान के पक्ष में दिल्ली में देय होना चाहिए।
- व्यक्तियों से प्राप्त चेक स्वीकार नहीं किए जाएँगे; तथापि, संस्थानों / विश्वविद्यालयों द्वारा स्थापित फर्मों से प्राप्त चेक स्वीकार किए जा सकते हैं।

**ऑनलाइन फंड ट्रांसफर विवरण :**

| | | |
|---|---|---|
| खाताधारक का नाम | : | **IIMC REVENUE** |
| पता | : | Aruna Asaf Ali Marg, New Delhi-110 067 |
| बैंक का नाम एवं शाखा | : | **State Bank of India**, R K Puram, New Delhi - 110022 |
| आईएफएससी कोड | : | **SBIN0001076** |
| खाता संख्या | : | **40321700410** |
| बैंक का प्रकार | : | SB |

**SCAN & PAY**
UPI ID: 9773601002@SBI

BHIM UPI

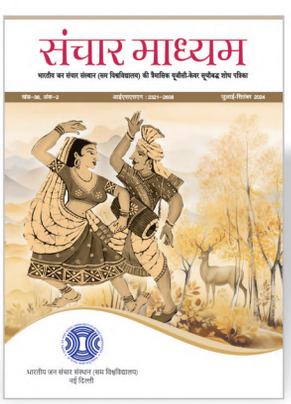


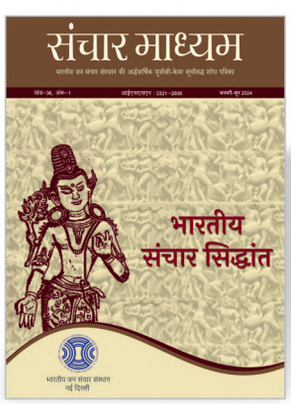

# संचार माध्यम

'संचार माध्यम' (ISSN : 2321-2608) भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय), नई दिल्ली की संचार, मीडिया, पत्रकारिता और उससे संबंधित मुद्दों पर केंद्रित हिंदी में प्रकाशित होने वाली अग्रणी 'पीयर रिव्यूड' और यूजीसी-केयर सूचीबद्ध शोध पत्रिका है। इसका प्रकाशन 1980 में आरंभ हुआ और आज यह हिंदी भाषा में संचार, मीडिया और पत्रकारिता से संबंधित विषयों पर विभिन्न प्रकार के विचारों, टिप्पणियों, पुस्तक समीक्षा और मौलिक शोध-पत्रों के प्रकाशन का प्रतिष्ठित मंच है। इसमें मीडिया से संबंधित सभी प्रकार के विषयों पर मौलिक अकादमिक शोध और विश्लेषण प्रकाशित किए जाते हैं। अकादमिक शोध के उच्चतर मूल्यों का पालन करते हुए 'संचार माध्यम' में प्रकाशन से पूर्व सभी शोध पत्रों /आलेखों की बहुस्तरीय निष्पक्ष समीक्षा (ब्लाइंड पीयर रिव्यू) कराई जाती है। भारतीय जन संचार संस्थान के प्रकाशन विभाग द्वारा इसका प्रकाशन किया जाता है। अब पत्रिका का प्रकाशन त्रैमासिक हो रहा है।

**'संचार माध्यम' में निम्नलिखित श्रेणी के शोध-पत्र प्रकाशित किए जाते हैं :**

1. **मौलिक शोध पर आधारित शोध-पत्र:** इस प्रकार के शोध-पत्र की शब्द सीमा 4000 से 5000 शब्द होनी चाहिए, जो डबल स्पेस में टाइप किया गया हो। साथ ही अधिकतम 250 शब्दों में शोध सारांश भी शामिल होना चाहिए। शोध-पत्र सिर्फ यूनिकोड फॉण्ट में ही टाइप होना चाहिए और उसमें संबंधित शोध की पूर्ण तस्वीर दृष्टिगोचर होनी चाहिए। शोध-पत्र से जुड़े छायाचित्र/ग्राफ/टेबल, यदि कोई हों, तो वे भी अपनी मूल प्रति के साथ (एक्सेल फाइल इत्यादि) संलग्न किए जाने चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि छायाचित्रों का रिजॉल्यूशन उच्च स्तर का हो ताकि प्रिंटिंग के समय गुणवत्ता प्रभवित न हो। पीडीएफ फाइल में शोध पत्र स्वीकार्य नहीं होंगे।

2. **लघु शोध आधारित शोध-पत्र:** लघु शोध आधारित आलेख 2000 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिए, यानी लगभग 4-5 पृष्ठ, डबल स्पेस में टाइप किया गया हो। यह भी यूनिकोड फॉण्ट में ही टंकित होना चाहिए। ऐसे शोध-पत्र भी पूर्ण हो चुके शोध/अध्ययनों पर ही आधारित होने चाहिए। इसमें ऐसे तथ्यपूर्ण शोध-पत्र भी शामिल हो सकते हैं, जिनका संबंध किसी नवीन तकनीक के विकास से है। ऐसे शोध-पत्रों का शोध सारांश 80 से 100 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिए।

3. **शोध समीक्षा:** इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले समीक्षात्मक आलेखों में प्रस्तावना, साहित्य समीक्षा, शोध परिणाम आदि के अलावा संबंधित शोध में मौजूद कमियों और उन कमियों के सुधार हेतु सुझावों का भी समावेश होना चाहिए, ताकि भविष्य में अन्य शोधकर्ता उन कमियों को दूर करने की दिशा में प्रयास कर सकें।

4. **पुस्तक समीक्षा:** 'संचार माध्यम' में पत्रकारिता और जनसंचार पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा (शब्द सीमा: 1500) भी प्रकाशित की जाती है। अन्य विषयों जैसे सामाजिक ज्ञान, सामाजिक कार्य, एंथ्रोपोलोजी, कला आदि पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा भी भेजी जा सकती है बशर्ते उनका शीर्षक मीडिया अध्ययन से जुड़ा हो या उनकी सामग्री में कम-से-कम 40 प्रतिशत अध्याय मीडिया, जनसंचार या पत्रकारिता से जुड़े हों। पुस्तक समीक्षाएँ उनके पूर्ण विवरण जैसे प्रकाशक, वर्ष, संस्करण, पृष्ठ संख्या, मूल्य व पुस्तक के छायाचित्र के साथ भेजी जानी चाहिए।

**प्रकाशन नैतिकता और साहित्यिक चोरी**

- संचार माध्यम के लिए जो शोध आलेख भेजे जाएँ उन्हें अन्य पत्रिकाओं को नहीं भेजना चाहिए और न ही शोध आलेखों को पूरी तरह से या आंशिक रूप से उसी सामग्री के साथ किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशित किया जाना चाहिए। लेखकों को सुनिश्चित करना चाहिए कि 'संचार माध्यम' में प्रकाशन के लिए भेजे जाने वाले आलेख किसी भी रूप में या मिलती-जुलती सामग्री के रूप में पहले प्रकाशित न हुए हों।
- किसी भी तरह की साहित्यिक चोरी किसी भी परिस्थिति में स्वीकार्य नहीं है। आलेख के साथ मूल कार्य का घोषणापत्र प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य है, जिसके बिना आलेखों पर कोई विचार नहीं किया जाएगा। लेखकों को आलेखों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करनी चाहिए। कोई भी अनैतिक व्यवहार (साहित्यिक चोरी, गलत डेटा आदि) किसी भी स्तर पर (पीयर रिव्यू या संपादन स्तर पर भी) आलेख की अस्वीकृति का कारण बन सकता है। किसी भी समय साहित्यिक चोरी और तथ्यों, निष्कर्षों के स्वनिर्मित आदि पाए जाने पर प्रकाशित आलेख वापस लिए जा सकते हैं।

**बहुस्तरीय समीक्षा (पीयर रिव्यू) प्रक्रिया**

'संचार माध्यम' में प्रकाशनार्थ प्राप्त सभी आलेख दोहरी या बहुस्तरीय निष्पक्ष समीक्षा (डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यू) प्रक्रिया के अधीन हैं। शोध आलेखों को विशेषज्ञों के पास बिना उनके लेखक/लेखकों का नाम बताए समीक्षा के लिए भेजा जाता है। उनकी टिप्पणी, सुझावों और अनुशंसा के आधार पर ही शोध-पत्रों के प्रकाशन का निर्णय लिया जाता है। संपादन-परिषद् के संतुष्ट होने पर ही शोध-पत्र प्रकाशित किया जाता है। इस प्रक्रिया में आमतौर पर 4-6 सप्ताह लगते हैं। समीक्षा प्रक्रिया पाँच चरणों पर आधारित है:-

क) जस के तस स्वीकार करने लायक
ख) मामूली सुधार की आवश्यकता
ग) मध्यम सुधार की आवश्यकता
घ) अधिक सुधार की आवश्यकता
ङ) अस्वीकृत
'संचार माध्यम' तीव्र समीक्षा प्रक्रिया का पालन नहीं करता है

**लेखों का संपादन**

यदि प्रकाशन के लिए लेख स्वीकार किया जाता है, तो उसे कम-से-कम दो संपादन चरणों से गुजरना पड़ता है। लेखकों को ध्यान रखना चाहिए कि सभी स्वीकृत लेख संपादन के किसी भी स्तर पर संपादकों द्वारा आवश्यक संशोधनों व परिवर्तनों के अधीन हैं।

अक्टूबर-दिसंबर 2024, खंड-36, अंक-3
आईएसएसएन : 2321-2608

टाइटल कोड : DELHIN28999
सदस्यता शुल्क : ₹ 200 प्रति अंक
(वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹ 800)

# भारतीय जन संचार संस्थान

सम विश्वविद्यालय

## भारत का नंबर एक मीडिया संस्थान

### स्नातकोत्तर डिग्री पाठ्यक्रम

- एम.ए. स्ट्रैटिजिक कम्युनिकेशन
- एम.ए. मीडिया बिजनेस स्टडीज

### स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम

- अँग्रेजी पत्रकारिता • हिंदी पत्रकारिता • रेडियो और टीवी पत्रकारिता
- विज्ञापन एवं जनसंपर्क • उड़िया पत्रकारिता • मलयालम पत्रकारिता
- उर्दू पत्रकारिता • मराठी पत्रकारिता • डिजिटल मीडिया

### नवीनतम और सुसज्जित सुविधाएँ

- साउंड और टीवी स्टूडियो तथा ऑडियो विजुअल सेटअप
- डिजिटल इलेक्ट्रॉनिक कैमरों के साथ टीवी और वीडियो प्रोडक्शन
- मल्टी कैमरा स्टूडियो सेटअप • नॉन-लीनियर वीडियो एडिटिंग
- एडिटिंग कंसोल • डिजिटल साउंड रिकॉर्डिंग • डीएसएलआर कैमरा
- 4K वीडियो कैमरा • प्रोजेक्टर और वातानुकूलित कक्षाएँ
- कंप्यूटर लैब • मल्टीमीडिया सिस्टम
- वॉयस रिकार्डर, ग्राफिक और लेआउट डिजाइनिंग
- अपना रेडियो 96.9 एफएम

### छात्रों को व्यावहारिक शिक्षा

- सीखने के मजबूत और व्यावहारिक तरीके
- नवीनतम तकनीक और सॉफ्टवेयर के साथ ज्ञान को बढ़ाना
- विशेष बीट रिपोर्टिंग सत्र
- मीडिया उद्योग के विशेषज्ञों के व्याख्यान

भारतीय जन संचार संस्थान (सम विश्वविद्यालय)
(सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार)

जेएनयू न्यू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110067
फोनः 011-26742920/296 | वेबसाइटः www.iimc.gov.in
ईमेलः iimc1965@gmail.com

मुद्रक और प्रकाशक प्रो. (डॉ.) वीरेंद्र कुमार भारती, प्रमुख-प्रकाशन विभाग, द्वारा भारतीय जन संचार संस्थान के लिए जे.के. ऑफसेट ग्राफिक्स प्रा. लि., B-278, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित तथा भारतीय जन संचार संस्थान, नया जेएनयू कैंपस, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली-110067 से प्रकाशित । संपादक : प्रो. (डॉ.) प्रमोद कुमार